ॐ

स्वामी शरण कृत

सामवेद भाष्य

सरल पाठ, मन्त्रार्थ, भावार्थ, पदार्थ सहित

(सामवेद पूर्वार्चिकः अध्याय 1-6)

प्रकाशक

पालीवाल प्रकाशन

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

ईमेल - swamivedayan@gmail.com

बेवसाईट - vedayan.simplesite.com

संस्करण : प्रथम, मकर संक्रान्ति, पौष, 2075 वि., 5120 युगाब्द (ई. 2019)

सर्वाधिकार : स्वामी शरण

मूल्य : दो हजार रुपये (दोनों भाग)

ॐ यो असौ आदित्ये पुरुषः, सो असौ अहम्, ॐ खम् ब्रह्म॥

जो आदित्य पुरुष (ईश्वर) है, वह मैं हूँ। ओम् सर्वव्यापक ब्रह्म है॥

पुस्तक : **सामवेद भाष्य**

लेखक : स्वामी शरण

सर्वाधिकार : लेखकाधीन

संस्करण : प्रथम 2019

सहयोग राशि : रु. 2000/–

प्रकाशक : **पालीवाल प्रकाशन**

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

ईमेल - **swamivedayan@gmail.com**

बेवसाईट - **vedayan.simplesite.com**

मुद्रक : **पालीवाल प्रकाशन**

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

ईमेल - **swamivedayan@gmail.com**

बेवसाईट - **vedayan.simplesite.com**

SAMVED BHASHYA
BY SWAMI SHARAN

सहयोग राशि : दो हजार रुपये (दोनों भाग)

ॐ यो असौ आदित्ये पुरुषः, सो असौ अहम्, ॐ खम् ब्रह्म॥

जो आदित्य पुरुष (ईश्वर) है, वह मैं हूँ। ओम् सर्वव्यापक ब्रह्म है॥

ॐ

स्वामी शरण कृत

सामवेद भाष्य

सरल पाठ, मन्त्रार्थ, भावार्थ, पदार्थ सहित

विषय सूची

(सामवेद पूर्वार्चिकः अध्याय 1-6)

प्रथमो अध्यायः	7-60
द्वितीयः अध्यायः	61-105
तृतीयो अध्यायः	106-166
चतुर्थो अध्यायः	167-220
पञ्चमो अध्यायः	221-278
षष्ठो अध्यायः	279-308

ॐ

निवेदन

हमारी मान्यता है कि वेद भगवान् ही हमारे गुरु हैं। वेद ही परमात्मा का शब्द-शरीर तथा प्रत्यक्ष रूप है। वेद विश्व का प्राचीनतम साहित्य तथा भारतीय धर्म - संस्कृति का मूल स्रोत है। वेद का पाठ तथा स्वाध्याय करना हमारा परम धर्म है। हमारी मान्यताएँ, चिन्तन तथा आचार - विचार वेद के अनुकूल होना चाहिए। वेद में सूक्त का गठन महत्वपूर्ण है। अतः भाव, विचार, सन्देश को स्पष्ट रूप से समझने के लिए सम्पूर्ण सूक्त को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है। मात्र एक मन्त्र को लेकर विचार करने पर भ्रम भी हो सकता है। यद्यपि बहुधा एक मन्त्र अथवा उसका कोई अंश भी अत्यन्त महत्वपूर्ण सन्देश या मार्गदर्शन दे सकता है।

हमने वेद भाष्य में मन्त्रों का सरल पाठ देने के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया है। इसका स्वाध्याय कर लें तो धात्वादि कोश, सरल संस्कृत व्याकरण तथा वैदिक शब्दकोश का उपयोग कर विचारशील परिजन सम्पूर्ण वेद का इसी रूप में प्रामाणिक अर्थ करने में समर्थ हो सकते हैं। सरल पाठ में मन्त्र का सन्धियों से मुक्त पाठ प्रस्तुत किया जाता है। इसका अर्थ है कि पदान्त में अन्य पद की सन्धि नहीं होती है। सरल पाठ में क्रिया विभक्ति अथवा नामिक विभक्ति के पश्चात् कोई शब्द या पद सन्धि के द्वारा नहीं मिलाया जाता है। इसी प्रकार अव्यय आदि शब्दों में जहाँ विभक्ति का लोप होता है, उनके अन्त में भी किसी पद या शब्द या शब्दांश की सन्धि नहीं होती है। इस प्रकार सरल पाठ में सभी पद पृथक् तथा स्पष्ट होते हैं। वेद मन्त्रों का सरल पाठ जनसाधारण के लिए, विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिए वेद पाठ तथा अर्थ समझने के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

मन्त्रार्थ में हमने मन्त्र का यथासम्भव शाब्दिक अनुवाद देने का प्रयास किया है। वेदमन्त्र के किस पद के लिए भाषा में किस पद का प्रयोग किया गया है, यह भी पूर्णतः स्पष्ट है। मन्त्र का पद यथावत् देकर भाषा में अर्थ दिया गया है। संस्कृत में बहुधा वर्तमान काल की सहायक क्रियाएं अस्ति (है) आदि का लोप होता है, अर्थात् इनके विना वाक्य पूर्ण हो जाता है। भाषा में इनका प्रयोग आवश्यक होता है। हमने प्रयास किया है कि उनको भी कोष्ठक में दिया जाये जिससे यह स्पष्ठ रहे कि यह शब्द वेदमन्त्र में नहीं है तथा वाक्य पूरा करने के लिए भाषा में लिखना पड़ा है। इसी प्रकार संयोजक शब्दों (अथवा, तथा आदि) भी वाक्य पूर्ण करने के लिए इसी रूप में दिये गये हैं। इस प्रकार हमने मन्त्रार्थ में तटस्थता, निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता तथा प्रामाणिकता का ध्यान रखने का पूर्ण प्रयास किया है। फिर भी यदि कोई भूल-चूक रह गयी होगी तो विद्वानों के मार्गदर्शन के अनुसार भविष्य में संशोधन-परिष्कार किया जा सकता है।

भावार्थ में मन्त्र के भाव तथा सन्देश को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यह वेदार्थ नहीं है, भावार्थ है। इसमें हमारे विवेक की सीमा है तथा मतभेद के लिए पर्याप्त अवकाश भी है। इससे वेदमन्त्र तथा वेदार्थ की प्रामाणिकता प्रभावित नहीं होती है। प्रवचनकर्ता इसमें अपने विवेक के अनुसार परिवर्तन-परिष्कार के लिए स्वतन्त्र हैं।

पदार्थ में मुख्यतः धातुज शब्दों में धातु स्पष्ट करना आवश्यक माना गया है। अन्य पदों सर्वनाम, अव्यय, संख्या, उपसर्ग आदि के अर्थ को लेकर कोई मतभेद नहीं है। संज्ञा, विशेषण तथा क्रियाएं धातुज हैं। उनमें धातु स्पष्ट कर देने से वास्तविक शाब्दिक अर्थ स्पष्ट हो जाता है। कुछ धातुएं अनेकार्थी भी होती हैं। मन्त्र में जिस अर्थ की उपयोगिता हो, उसे ग्रहण कर सकते हैं। धातु के एक से अधिक अर्थों के अनुसार भी यदि मन्त्र का अर्थ हो सकता है तो श्लेष के रूप में स्वीकार्य है। इसमें विचारधारा को लेकर कोई दुराग्रह नहीं होना चाहिए। हमें वेद के विचारों

को महत्व देना चाहिए, वेदमन्त्रों का अर्थ अपने विचार के अनुसार करने का दुराग्रह उचित नहीं है। वेदमन्त्रों का सरल स्वाभाविक शाब्दिक अर्थ सभी अध्येता सहज रूप से जानें तथा उसका चिन्तन-मनन कर स्वयम् अपने विवेक के अनुसार विचार विकसित करें। इसके पश्चात् भावार्थ तथा व्याख्या प्रत्येक व्यक्ति अपने विवेक के अनुसार स्वतन्त्र रूप से कर सकता है।

वैदिक भाषा और संस्कृत की संरचना में सूक्ष्म अन्तर मिलता है। वेद में उपसर्ग और धातुएँ संस्कृत से अधिक हैं। विभक्तियों में बहुलता है तथा विकल्प भी स्वीकार्य हैं।

कुछ उपसर्ग और अव्ययों में त्य आदि प्रत्यय जुड़कर नामिक शब्द बन जाते हैं। फिर उनमें नामिक विभक्ति लग जाती है। महर्षि पाणिनि ने एक सूत्र में इस नियम का उल्लेख किया है। इस प्रकार के शब्दों को अपवाद ही कहा जा सकता है। इस प्रकार नि उपसर्ग में त्य प्रत्यय जुड़कर नित्य शब्द बना। जिसका बहुवचन नित्यासः बना। इस शब्द का अर्थ नि उपसर्ग के अर्थ से लिया जायेगा। अतः नित्यासः शब्द का अर्थ निरन्तर बने रहना ही है।

उपसर्ग तथा अन्य अव्यय शब्दों में प्रत्यय जोड़कर नामिक शब्द बनते हैं। ऐसे अव्ययज अथवा निपातज शब्द संज्ञा और विशेषण बन जाते हैं परन्तु उनसे क्रियाएँ नहीं बनतीं अर्थात् उनमें आख्यातिक अथवा क्रिया विभक्तियाँ नहीं जुड़ती हैं। इस प्रकार नामिक अर्थात् संज्ञा विशेषण शब्द दो प्रकार के हो जाते हैं - धातुज तथा अधातुज अथवा अव्ययज या निपातज। कुछ शब्द ध्वनि के अनुसार होते हैं, जिनकी कोई धातु नहीं होती है। उन्हें ध्वन्यानुसारी शब्द कहते हैं। जैसे - चिश्चा।

वैदिक भाषा और संस्कृत में उपसर्ग और धातुएँ लगभग समान हैं, परन्तु प्रत्यय और विभक्तियाँ में अन्तर मिलता है। वेद में उपसर्ग और धातुएँ संस्कृत से अधिक हैं। विभक्तियों में बहुलता है तथा विकल्प भी स्वीकार्य हैं। जिन शब्दों के क्रिया रूप मिल जाते हैं, उनकी धातु निश्चित है। (सिच्यते - सिच - यजु. 19/15)। हिंसा के भाव वाली धातुओं में गति का भाव निहित होता है तथा गत्यर्थक धातुओं में जानना, पाना का भाव निहित होता है। वेद को श्रुति भी कहते हैं। प्राचीनकाल में गुरु से सुनकर ही शिष्य ज्ञान प्राप्त करते थे अतः वेद में श्रु-श्रवण धातु का अर्थ जानना, विद्वान होना भी स्वाभाविक रूप से माना जाना चाहिए। श्रवस्यवः आदि शब्द विद्वान्, सुनाने वाले, सुनने वाले के लिए प्रयोग किये गये हैं।

धातु अथवा शब्द के प्रथम स्वर से पूर्व अ लगता है तथा सन्धि हो जाती है। इसे परम्परागत व्याकरण में सन्धि प्रकरण में गुण कहा गया है। इस प्रकार अ जुड़ने को प्रत्यय भी माना जाता है। यदि पहले से अ, आ है तो दोनों मिलकर दीर्घ आ हो जायेंगे, इसी प्रकार इ होने पर ए, उ होने पर ओ हो जाते हैं। उदाहरण के लिए रम् से राम, कम् से काम शब्द बनते हैं। इक प्रयय लगने पर भी ऐसा होता है। वेद में इक प्रत्यय जुड़ने पर वैदिक शब्द बनेगा। वैदिक शब्द का अर्थ है - वेद से उत्पन्न, वेद से सम्बन्धित, वेद से युक्त। यह प्रत्यय स्वार्थ अर्थात् स्वयम् के अर्थ में भी लगता है। इसका अर्थ है कि कम तथा काम शब्द के अर्थ समान होंगे।

अग्नि शब्द का अर्थ ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् आदि होता है। वेद में इसी अर्थ में यह शब्द परमात्मा के लिए सर्वाधिक प्रयुक्त है। शब्दार्थ के अनुसार समाज के ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् भी अभिप्रेत हैं। इसी प्रकार वेदमन्त्रों के अनेक अर्थ होते हैं।

लोकभाषा में पञ्चमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार (ं) का प्रयोग अधिक होने लगा है। यह अनुचित है। इससे उच्चारण अशुद्ध होता है तथा अर्थ भी अस्पष्ट हो सकता है। हमने अनुस्वार (ं) के स्थान पर क से म तक पञ्चमाक्षर का प्रयोग करने का प्रयास किया है। य, र, ल, व, श, ष, स के पहले आने वाले अनुस्वार (ं) को तालव्य, मूर्धन्य और दन्त्य स्थान के अनुसार शब्द क्रम में रखा गया है। इसी प्रकार ह से पहले आने वाला अनुस्वार (ं) स्वाभाविक रूप से ङ के स्थान पर है। ङ के स्थान पर अनुस्वार (ं) को स्वीकार किया गया है। इससे सभी को

सरलता होती है। विसर्ग (:) का उच्चारण स् (सूक्ष्म) अथवा ह् (सूक्ष्म) के रूप में है। अतः इसको शब्दकोश में इसी क्रम में स्थान दिया गया है।

वेदार्थ करने में अनेक विद्वान् अपने विचार को वेद में दर्शाने का प्रयास करते हैं। इसके लिए अनेक शब्द ही नहीं, वाक्यांश तथा कई वाक्य तक वेदमन्त्र का अर्थ करते समय जोड़ देते हैं जिनके लिए कोई शब्द या पद वेदमन्त्र में होता ही नहीं है। इसे अध्याहार कहा जाता है। कहा जाता है कि अध्याहार मन्त्र का अर्थ स्पष्ट करने के लिए दिया जाता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार विद्वान् मन्त्रार्थ के स्थान पर भावार्थ करते हैं। कई विद्वान् तो पदार्थ में भी अध्याहार के नाम पर ऐसी टिप्पणियां तक दे देते हैं जिनको उचित नहीं माना जा सकता है। हम उनकी आलोचना नहीं करना चाहते हैं। उन्होंने जो भी प्रयास किये, उससे ही वेद के अध्ययन को दिशा मिली तथा हम इस प्रकार निष्पक्ष प्रामाणिक वेदार्थ करने का प्रयास कर पा रहे हैं। भविष्य में विद्वान् अधिक उत्तम, निष्पक्ष तथा प्रामाणिक वेदार्थ प्रस्तुत करेंगे, ऐसी आशा - अपेक्षा करना स्वाभाविक है। आशा है कि हमारे सहयोगी इस कार्य को पूर्ण करेंगे। शेष जीवन काल में हमसे जो कुछ बन पड़ेगा, सेवा करने का प्रयास करते रहेंगे।

मकर संक्रान्ति, पौष, 2075 वि. **स्वामी शरण**

पाण्डु नगर, कानपुर

ॐ

स्वामी शरण कृत

सामवेद भाष्य

सरल पाठ, मन्त्रार्थ, भावार्थ, पदार्थ सहित

पूर्वार्चिकः (छन्द आर्चिकः)

अथ प्रथमो अध्यायः

आग्नेयम् पर्वम् काण्डम् वा

(1) सूक्त 1

1. अग्ने आ-याहि वीतये, गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ 01 ॥ 6-16-10

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे गतिस्वरूप परमात्मन् अग्नि, **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **गृणानो =** वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले **वीतये =** व्याप्त होने के लिए **आ -याहि =** आयें, आइए **बर्हिषि =** बर्हिष् में, वृद्धि में **हव्यदातये =** हव्यदाता के लिए **नि =** निश्चित, निरन्तर **सत्सि =** जाते हो, प्राप्त होते हो **॥ 01 ॥**

भवार्थ- हम गति स्वरूप परमात्मा अग्नि से आने की प्रार्थना करते हैं। परमात्मा सर्वव्यापी है उसके आवागमन का अर्थ व्याप्त होने की अनुभूति ही है, अतः कहा गया है कि व्याप्त होने के लिए आइए। वह तो सर्वव्यापक है, उसे कहीं आना-जाना है ही नहीं। वी धातु का अर्थ व्याप्त होने के साथ ही गर्भ धारण भी है। ईश्वरीय दिव्य प्रकाश हमारे भीतर स्थिर हो जाये। वह शब्दकर्ता है, सम्पूर्ण शब्द अर्थात् ध्वनि का स्रोत है। परमात्मा सबका मूल स्रोत है, तो ध्वनि या शब्द का भी है, अतः यहाँ शब्द का अर्थ शब्द ब्रह्म वेद है। हमें वेद का ज्ञान परमात्मा से प्राप्त होता है तथा हम वेद मन्त्रों से उसकी स्तुति करते हैं, गृणानो शब्द के ये दोनों अर्थ हैं। जो उच्चारण करने योग्य शब्द हैं, वे वेदमन्त्र के रूप में देने के लिए ही तो हम परमात्मा का आह्वान करते हैं, शेष सब कुछ तो वेद के ज्ञान से हम स्वतः प्राप्त कर लेंगे। वह निश्चित रूप से होता अर्थात् आदान-प्रदान करने वाला है। बर्हिषि अर्थात् वेदमन्त्र पाठ की वृद्धि में, जहाँ पर वेद मन्त्रों का उच्चारण तथा वेद विद्या की वृद्धि की जाती है, वहाँ पर परमात्मा निश्चित रूप से आदान-प्रदान करने के लिए उपस्थित रहता है। वेद मन्त्रों के सामूहिक पाठ तथा व्याख्यान अनिवार्य तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण यज्ञ कर्म हैं, अतः विद्वानों ने बर्हिषि का अर्थ यज्ञ भी किया है **॥ 01 ॥**

पदार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि =** जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **वीतये =** व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **गृणानो =** वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **हव्यदातये =** हव्यदाता के लिए (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, दा - दान करना, देना)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सत्सि = जाते हो** (सद् - बैठना, जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **बर्हिषि =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **॥ 01 ॥**

2. त्वम् अग्ने यज्ञानाम् होता, विश्वेषाम् हितः। देवेभिः मानुषे जने॥ 02॥ 6-16-1

मन्त्रार्थ - **त्वम् =** तुम **अग्ने =** हे अग्नि **यज्ञानाम् =** यजन के **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले, **देवेभिः =** देवों द्वारा **मानुषे =** मानुष, मनन के लिए **जने =** जन के लिए **विश्वेषाम् =** सभी का, विश्व का **हितः =** हित, गति, वृद्धि करने वाले हो॥ **02॥**

भवार्थ- परमात्मा यज्ञ अर्थात् देवपूजा, सङ्गतिकरण तथा दान के कायों में होता अर्थात् आदान-प्रदान करने वाला है। देव अर्थात् दिव्य गुणों तथा विद्या से युक्त। ऐसे देवों अर्थात् विद्वान् लोगों तथा प्राकृतिक शक्तियों के माध्यम् से परमात्मा ही सभी मनुष्यों का हित करने वाला है। जब हम यज्ञ अर्थात् विद्वानों की सेवा-सहायता तथा प्राकृतिक शक्तियों भूमि, जल, वायु आदि का संरक्षण पोषण करते हैं तथा सामूहिक प्रयास करते हुए इनके लिए कुछ दान करते हैं तो इस यज्ञ में हमें भी अनेक लाभ स्वास्थ्य, सद्गुण आदि प्राप्त होते हैं। यह भावना रखनी चाहिए कि इस प्रकार आदान-प्रदान करने वाला परमात्मा ही है तथा उसकी ऋत व्यवस्था के अनुकूल ही हमें लाभ प्राप्त होता है। परमात्मा ही विद्वानों के माध्यम से मनुष्य समुदाय को प्रेरणा देता है। यहाँ स्पष्ट है कि देव का अर्थ वैदिक विद्वान ही है। परमात्मा वेद विद्या के माध्यम से विद्वानों को ज्ञान तथा समाज हित की प्रेरणा देता है।

पदार्थ - **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यज्ञानाम् =** यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **विश्वेषाम् =** सभी का, विश्व का (सर्वनाम)। **हितः =** हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **देवेभिः =** देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मानुषे =** मानुष, मनन के लिए (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **जने =** जन (जन = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)॥ **2॥**

3. अग्निम् दूतम् वृणीमहे, होतारम् विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम्॥ 03॥ 1-12-1

मन्त्रार्थ - **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **दूतम् =** प्रगतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखी **होतारम् =** हवन करने वाले **विश्ववेदसम् =** सर्वज्ञ, **अस्य =** इसका **यज्ञस्य =** यजन का **सुक्रतुम् =** अच्छा करने वाला को, सत्कर्म कर्ता को **वृणीमहे =** वरण करते हैं, स्वीकार करते हैं॥ **03॥**

भवार्थ- दु तथा दू धातुओं का अर्थ गति करना तथा दुःखी होना या करना है। अतः दूत का अर्थ है प्रगतिशील या दुःखी। हम परमात्मा का वरण करते हैं। उसका स्वरूप इस मंत्र में दूत वर्णित किया गया है अर्थात् प्रगतिशील तथा दुःखी, पीड़ित लोगों का वरण करें, उनको अपनायें अपना बनायें। परमात्मा का वरण तभी सम्भव है। परमात्मा विश्ववेद का आदान-प्रदान तथा तृप्त करने वाला है। होतारम् शब्द हु धातु से बना है, जिसका अर्थ है, देना, आदान-प्रदान-तृप्त करना। परमात्मा विश्ववेद का दान करता है, आदान-प्रदान करता है तथा उसके द्वारा तृप्त भी करता है। हमें परमात्मा से विश्ववेद प्राप्त होता है। हम वेद का पाठ तथा स्वाध्याय करते हैं तथा उसका प्रचार-प्रसार करते हैं। इस प्रकार आदान-प्रदान होता है तथा इससे विश्व तृप्त होता है। विश्ववेद का अर्थ है सम्पूर्ण वेद अर्थात् सभी वेद मन्त्र। परमात्मा तथा विश्ववेद से जीवन यज्ञ को सुन्दर, श्रेष्ठ बनाने वाले हैं। यज्ञ अर्थात् देवपूजा, सङ्गतिकरण, दान अर्थात् सामूहिक रूप से विश्वहित का प्रयास।

पदार्थ - **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दूतम् =** गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **वृणीमहे =** वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **होतारम् =** हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **विश्ववेदसम् =** सर्वज्ञ (विद् = जानना)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **यज्ञस्य =** यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण,

दान करना)। **सुक्रतुम् =** अच्छा करने वाला को, सत्कर्म कर्ता को (कृ - करना) **॥ 03 ॥**

4. अग्निः वृत्राणि जङ्घनत्, द्रविणस्युः विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः ॥ 04 ॥

मन्त्रार्थ - समिद्धः सम्यक प्रकाशवान् **शुक्र** पवित्र **आहुतः** आह्वान किये, बुलाये हुए **द्रविणस्युः** प्रवाहकामी **अग्निः** अग्नि ने **वृत्राणि** वृत्रों को **विपन्यया** विशेष अर्चना से **जङ्घनत्** हनन किया **॥ 04 ॥**

भावार्थ - परमात्मा ने सृष्टि से पूर्व व्याप्त अन्धकार तथा शून्य से युद्ध किया तथा गतिकामी उद्यमशील प्रकाशवान् पवित्र सृष्टि का सृजन-विस्तार किया। वह परमात्मा आहुत है। वेदमन्त्रों से स्तुतियों द्वारा हम उसका आह्वान करते हैं तथा वेद का स्वाध्याय कर, वेद मार्ग को अपना कर सब कुछ प्राप्त करते हैं, इस प्रकार आहुति अर्थात् सम्यक् आदान-प्रदान का क्रम चलता रहता है **॥ 04 ॥**

पदार्थ - अग्निः अग्नि (अग् - जाना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना),**वृत्राणि** वृत्रों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् -वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना), **जङ्घनत्** हनन किया (हन्-वध् - वध करना, मारना, चलना, गति करना, हिंसा करना) **द्रविणस्युः** प्रवाहकामी (द्रु - जाना, अनुसरण करना), **विपन्यया** विशेष अर्चना से (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना), **समिद्धः** सम्यक प्रकाशवान् (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना), **शुक्र** पवित्र (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना,पवित्र होना,जाना), **आहुतः** आह्वान किये, बुलाये हुए (हु -ह्वे - आह्वान करना, दान करना, आदान-प्रदान करना) **॥ 04 ॥**

5. प्रेष्ठम् वो अतिथिम् स्तुषे, मित्रम् इव प्रियम्। अग्ने रथम् न वेद्यम् ॥ 5 ॥ 8-73-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **वो =** तुम **प्रेष्ठम् =** भेजने वाले, **अतिथिम् =** सतत गतिशील, अतिथि, **मित्रम् =** मित्र **इव =** के समान **प्रियम् =** प्रिय को **स्तुषे =** स्तुत करते हैं। **रथम् =** रथ को **न =** नहीं, समान **वेद्यम् =** वेद-योग्य, ज्ञान-योग्य, जानने योग्य (है) **॥ 05 ॥**

भावार्थ - गतिस्वरूप अग्रणी तेजस्वी परमात्मा अग्नि हमारे लिए मित्र के समान प्रिय हितैषी तो है ही, वह सर्वाधिक प्रिय अतिथि भी है। वह एकमात्र सत्ता है, एकमात्र सत्य है, एकमात्र उसका ही अस्तित्व है। उसकी कोई तिथि नहीं है, न आदि की तिथि है और न कहीं आने-जाने की तिथि है, क्योंकि वह अनादि, अजन्मा तथा सर्वव्यापक है, सदा सर्वत्र उपस्थित है **॥ 05 ॥**

पदार्थ - प्रेष्ठम् = भेजने वालों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इष्-ईष् - जाना, जानना, पाना, देना, प्रेष् - जाना, जानना, पाना, आना, भेजना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अतिथिम् =** सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। **स्तुषे =** स्तुष के लिए, स्तुति के लिए। (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **मित्रम् =** मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्रियम् =** प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथम् =** रथ को (रथ् = जाना, ले जाना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वेद्यम् =** वेद-योग्य, ज्ञान-योग्य, जानने योग्य को (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **॥ 05 ॥**

6. त्वम् नो अग्ने महोभिः, पाहि विश्वस्या अरातेः। उत द्विषो मर्त्यस्य ॥ 06 ॥ 8-60-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **त्वम् =** तुम **नो =** हमको **महोभिः =** महत्ताओं द्वारा **विश्वस्या =** विश्व, सभी **अरातेः =** अराति से, अदानी से, **उत =** और, तथा, वैसे ही **मर्त्यस्य =** मरणशील के **द्विषो =** द्वेषी से **पाहि =** रक्षा करो **॥ 06 ॥**

भावार्थ - परमात्मा को गुणवाचक अग्नि सम्बोधन देते हुए प्राणिमात्र से द्वेष करने वाले तथा सबको दुःख देने वाले लोगों से रक्षा करने की प्रार्थना की गयी है। जिनका स्वभाव दुःख देने तथा द्वेष करने का है, वे सबके लिए दुःखदायी हैं तथा सभी से द्वेष करने वाले हैं। ऐसे लोग कभी-कभी स्वयम् को किसी का हितैषी बताते हैं, परन्तु वे किसी के भी हितैषी नहीं हो सकते हैं। मर्त्य का अर्थ है मरणशील। सम्पूर्ण सृष्टि मरणशील है, विशेष रूप से प्राणी। जीवों का जीवन अत्यल्प

होता है तथा मनुष्य भी उनमें एक है। व्यापक अर्थ में मर्त्य का अर्थ सम्पूर्ण सृष्टि तथा सामान्यतः समस्त प्राणी होता है, विशेष रूप से मनुष्य के लिए मर्त्य शब्द का प्रयोग होता है। यहाँ मर्त्य अर्थात् मरणशील शब्द का प्रयोग द्वेषी लोगों के लिए निन्दार्थक भी है। जो द्वेष भाव के कारण मर्त्य अर्थात् समाप्त होने योग्य हैं, उन्हें न जीवन का अधिकार है और न उनका नाम ही जीवित रहना चाहिए अर्थात् उनका स्मरण भी नहीं किया जाना चाहिए।

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महोभिः** = महान् द्वारा (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **विश्वस्या** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **अरातेः** = अदानी के लिए (रा = देना।)। **उत** = ही (अव्यय)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **मर्त्यस्य** = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना) **॥ 6 ॥**

7. एहि ऊ षु ब्रवाणि ते, अग्ने इत्थेतरा गिरः। एभिः वर्धासि इन्दुभिः ॥ 07 ॥ 6-16-16

मन्त्रार्थ :- **अग्ने** = हे अग्नि, **एहि** = आओ, जानो। **ते** = तुम्हारे लिए **ऊ** = ही **सु** = अच्छा **इत्था** = इस प्रकार **इतराः** = अन्य **गिरः** = वाणियाँ, बोध **ब्रवाणि** = बोलें। **एभिः** = इन **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा **वर्धासे** = बढ़ो **॥ 07 ॥**

भावार्थ :- वह अग्नि स्वरूप परमात्मा सर्वतः अग्रणी तथा सभी विद्याओं एवम् शक्तियों का स्रोत है। हम उसको बुलाते हैं तथा प्रार्थना करते हैं कि जो वेदवाणी आपने हमें प्रदान की है, हम उसका समुचित उच्चारण कर सकें, उससे शक्ति प्राप्त कर प्रत्येक उच्चारण शुद्ध और भलीभाँति कर सकें। वेदों द्वारा, वेद-मन्त्रों द्वारा ही परमात्मा हमें उन्नति का मार्ग दिखाकर जीवन में आगे बढ़ाता है, सफलता प्रदान करता है **॥ 07 ॥**

पदार्थ- **एहि** = आओ, जानो (**आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। **इहि** = जाओ, जानों, इ = जाना, जानना, पाना)। **ऊ** = ही (अव्यय)। **सु** - **सु** = अच्छा (उपसर्ग)। **ब्रवाणि** – **ब्रवाणि** = बोलें (ब्रू - कहना, बोलना)। **ते** - **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने** – **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **इतराः** = अन्य (अव्यय)। **गिरः** - **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **एभिः** = इनके द्वारा (सर्वनाम)। **वर्धासे** = बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) **॥ 07 ॥**

8. आ ते वत्सो मनो यमत्, परमात् चित् सधस्थात्। अग्ने त्वाम् कामये गिरा ॥ 08 ॥8-11-7

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **ते** = तुम्हारा, तुम्हारे लिए **वत्सो** = वत्स, वाणी, **मनो** = मन **परमात्** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम **चित्** = चेतन **सधस्थात्** = सहस्थान से **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **यमत्** = यमन करता है। **त्वाम्** = तुमको **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ **कामये** = कामना करते हैं, इच्छा करते हैं, चाहते हैं **॥ 08 ॥**

भावार्थ :- परमात्मा की वेदवाणी का सम्यक् उच्चारण या पाठ तथा स्वाध्याय करने वाले का मन सशक्त होता है॥ मन ही सभी कार्यों तथा विचारों का वाहक-सञ्चालक है, अतः व्यक्ति का मन सशक्त होने से विचार शक्ति, कार्यशक्ति तथा मनोबल, आत्मबल बढ़ता है। अतः हम इस वेदवाणी के माध्यम् से अर्थात् वेदमन्त्रों से परमात्मा की कामना करने तथा उसे पाने में समर्थ हो जाते हैं।

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वत्सो** = वत्स (वद् = कहना, बोलना, सृ - चलना, सरकना)। **मनो** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **यमत्** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **परमात्** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। **चित्** = चेतन (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **सधस्थात्** = सहस्थान, सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **त्वाम्** = तुमको,

तुम्हारी (सर्वनाम)। **कामया =** कामना करना, इच्छा करना (कम - चाहना, इच्छा करना)। **गिरा =** स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) **॥ 8 ॥**

9. त्वाम् अग्ने पुष्करात् अधि, अथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥ 09 ॥ 1-164-20

मन्त्रार्थ- अग्ने = हे अग्नि, **त्वाम् =** तुमको, तुम्हारा **अथर्वा =** अविचलित-अहिंसक ने **पुष्करात् =** पुष्कर से **विश्वस्य =** विश्व का, सभी का **मूर्ध्नो =** उच्च **वाघतः =** उत्थान से **अधि =** अधिगत, उच्च **निः =** निरन्तर, निश्चित **अमन्थत =** मथा, मन्थन किया। **॥ 09 ॥**

भावार्थ -परमात्मा की वेदवाणी किसी देश या समुदाय के लिए नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए है। विश्व के पोषण की भावना से कुटिलता, हिंसा तथा विचलित होने जैसे दुर्गुणों तथा दुर्बलताओं से मुक्त होकर वेद का स्वाध्याय करना चाहिए। **॥ 09 ॥**

पदार्थ - त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुष्करात् =** पुष्कर से (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना, कृ = करना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **अथर्वा =** अविचलित-अहिंसक! (अ - नहीं, थर्व - अस्थिर होना, हिंसा करना)। **निः =** बिना, बाहर, निश्चित (अव्यय)। **अमन्थत =** मथा, मन्थन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मथ् मथना, मन्थन करना)। **मूर्ध्नो =** उच्च (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्द्ध- उच्च होना)। **विश्वस्य =** विश्व का, सभी का। **वाघतः =** उत्थान से (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना)। **॥ 09 ॥**

10. अग्ने विवस्वत् आ भर, अस्मभ्यम् ऊतये महे। देवो हि असि नो दृशे ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **विवस्वत् =** विशेष वासयुक्त, विशेष वास देने वाले, **अस्मभ्यम् =** हमारे लिए **ऊतये =** रक्षा के लिए **महे =** पूजा करने के लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **नो =** हमको, हमारे **दृशे =** देखने के लिए **देवो =** देव **हि =** ही **असि =** हो **॥ 10 ॥**

भावार्थ - इसमें प्रार्थना की गयी है कि हे परमात्मन् हम वेदवाणी का समुचित उच्चारण तथा संरक्षाण करना चाहते हैं। इसके लिए विशेष वासस्थान तथा आच्छादन प्रदान करो, जिससे वेद ग्रन्थ तथा हमारी सुरक्षा हो सके। हमारे लिए वेद ज्ञान का प्रकाश देने वाले आप ही देव हैं, कोई अन्य नहीं। अथवा हमारी दृष्टि में आप ही एक मात्र देव हैं, अतः हम आप से ही प्रार्थना कर रहे हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **विवस्वत् =** विशेष वास (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **अस्मभ्यम् =** हमारे लिए (सर्वनाम)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **देवो =** देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **असि =** हो (अस् - होना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **दृशे =** देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। **॥ 10 ॥**

(2) सूक्त 2

11. नमः ते अग्ने ओजसे, गृणन्ति देव कृष्टयः। अमैः अमित्रम् अर्दय ॥ 01 ॥ 8-64-11

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, **ओजसे =** ओज के लिए **ते =** तुम्हारे लिए **नमः =** नमन। **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप, **कृष्टयः =** कृष्टि, आकर्षित **गृणन्ति =** वाणी, बोध, सिञ्चन करते हैं। **अमैः =** सेवाभावी, विद्वानों द्वारा **अमित्रम् =** अमित्र, अस्नेही को **अर्दय =** मार दिया, अर्दित किया **॥ 01 ॥**

पदार्थ - **नमः** = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **ओजसे** = ओज के लिए (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **गृणन्ति** = वाणी, बोध, सिञ्चन करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **कृष्टयः** = कृष्टय (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अमैः** = सेवाभावी, विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना,)। **अमित्रम्** = अमित्र, अस्नेही को (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। **अर्दय** = मार दिया, अर्दित किया (अर्द – मारना, बध करना) **॥ 01 ॥**

12. दूतम् वो विश्ववेदसम्, हव्यवाहम् अमर्त्यम्। यजिष्ठम् ऋञ्जसे गिरा ॥ 02 ॥ 4-8-1

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम्हारे **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखी, **विश्ववेदसम्** = सर्वज्ञ, **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाले **अमर्त्यम्** = अमर्त्य, अमर **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, अत्यन्त यजन करने वाले को **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ **ऋञ्जसे** = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् करती हैं **॥ 02 ॥**

पदार्थ - **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **विश्ववेदसम्** = सर्वज्ञ (विद् = जानना)। **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले को, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाले को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, वह् - वहन करना, ले जाना)। **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। **ऋञ्जसे** = ऋञ्जस के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) **॥ 02 ॥**

13. उप त्वा जामयो गिरो, देदिशतीः हविष्कृतः। वायोः अनीके अस्थिरन् ॥ 03 ॥ 8-91-13

त्वा = तुम्हारे **उप** = समीप **जामयो** = पोषण करने वाली **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **हविष्कृतः** = हविकृत, दानी **देदिशतीः** = दिशा देते हैं। **वायोः** = वायु का, गतिशील, रचनाशील का **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में **अस्थिरन्** = स्थित हों **॥ 03 ॥**

पदार्थ - **उप** = समीप (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **जामयो** = पोषण करने वाली (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **देदिशतीः** = दिशा देते हें (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **हविष्कृतः** = हविकर्ता (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, कृ - करना)। **वायोः** = वायु का, गतिशील, रचनाशील का (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **अस्थिरन्** = स्थित हों (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना) **॥ 03 ॥**

14. उप त्वा अग्ने दिवेदिवे, दोषावस्तः धिया वयम्। नमो भरन्तः एमसि ॥ 04 ॥ 1-1-7

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **वयम्** = हम **त्वा** = तुम्हारे **उप** = समीप **दिवेदिवे** = प्रतिदिन **दोषावस्तः** = प्रातः तथा सायम् अथवा दिन तथा रात्रि में **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **नमो** = नमन **भरन्तः** = भरण करने वाले (हैं)। **एमसि** = सम्यक् गति करते हो, प्रेरित करते हो, प्राप्त करते हो, जानते हो **॥ 04 ॥**

पदार्थ - **उप** = समीप (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दिवेदिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **दोषावस्तः** = प्रातः तथा सायम् अथवा दिन तथा रात्रि में (अव्यय)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **नमो** = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **भरन्तः** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **एमसि** = जाते हो, प्रेरित करते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना) **॥ 04 ॥**

15. जराबोध तत् विविड्ढि, विशेविशे यज्ञियाय। स्तोमम् रुद्राय दृशीकम् ॥ 05 ॥ 1-27-10

मन्त्रार्थ - **जराबोध** = हे जराबोध, **तत्** = वह, उस को **विशेविशे** = प्रत्येक विश में, प्रतिष्ठित, प्रवेशी में **यज्ञियाय** = यजनीय के लिए **रुद्राय** = रुद्र के लिए **स्तोमम्** = स्तोम को **दृशीकम्** = दृष्टा को, देखने वाले को, दर्शनीय को **विविड्ढि** = शब्द करो, प्रवेश करो, जानो **॥ 05 ॥**

पदार्थ - **जराबोध** = जराबोध (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना, बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **विविड्ढि** = शब्द करो, प्रवेश करो, जानो (वि - विशेष, विड्-विट् = शब्द करना, परिहास करना, शाप देना, **विद** - समझना, जानना, विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **विशेविशे** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **यज्ञियाय** = यजनीय के लिए, (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **स्तोमम्** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **रुद्राय** = रुद्र के लिए (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। **दृशीकम्** = देखने को, **दृशीक को** (दृश्-पश्य -देखना)। **॥ 05 ॥**

16. प्रति त्यम् चारुम् अध्वरम्, गोपीथाय प्र हूयसे। मरुद्भिः अग्ने आ गहि ॥ 06 ॥ 1-19-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **प्रति** = प्रत्येक **त्यम्** = उस **चारुम्** = चारु **अध्वरम्** = अहिंसक, अवर्णनीय को **गोपीथाय** = रक्षक के लिए, गो के, शब्द करने वालों के लिए, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक के लिए **प्र** = प्रकृष्ट **हूयसे** = आह्वान के लिए, दान, आदान-प्रदान, तृप्ति के लिए **मरुद्भिः** = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि** = प्रगति करें, जाने, घना करें **॥ 06 ॥**

पदार्थ - **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **चारुम्** = चारु को (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **अध्वरम्** = अहिंसक, अवर्णनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **गोपीथाय** = रक्षक के लिए , गो के, शब्द करने वालों के लिए , मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **हूयसे** = हूयस के लिए, आह्वान के लिए, दान, आदान-प्रदान, तृप्ति के लिए (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मरुद्भिः** = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अग्न** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) **॥ 06 ॥**

17. अश्वम् न त्वा वारवन्तम्, वन्दध्या अग्निम् नमोभिः। सम्राजन्तम् अध्वराणाम् ॥ 07 ॥ 1-27-1

मन्त्रार्थ -**अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = के समान **त्वा** = तुम **वारवन्तम्** = वारवन्त को, वरणीय, वरण युक्त को **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का

सम्राजन्तम् = सम्यक् प्रकाशमान को **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा **वन्दध्या** = वन्दना करते हैं **॥ 07 ॥**

पदार्थ - **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वारवन्तम्** = वारवन्त को, वरणों को, वरणीय, वरण करने वालों को(वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वन्दध्या** = वन्दना करता है (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **सम्राजन्तम्** = सम्यक् प्रकाशमान को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना) **॥ 07 ॥**

18. और्वभृगुवत् शुचिम्, अप्नवानवत् आ हुवे। अग्निम् समुद्रवाससम् ॥ 08 ॥ 8-102-4

मन्त्रार्थ - **और्वभृगुवत्** = और्वभृगु के समान, सहनशील, हिंसा को भूँजने वाले के समान **शुचिम्** = पवित्र को **समुद्रवाससम्** = समुद्र में रहने वाले **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **अप्नवानवत्** = अप्नवान के समान, पालन-रक्षण करने वाले के समान **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **॥ 08 ॥**

पदार्थ - **और्वभृगुवत्** = और्वभृगु के समान, सहनशील, हिंसा को भूँजने वाले के समान (उर्व - हिंसा करना, सहन करना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, उर् = जाना, चलना, भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भृज् - भूँजना, तलना, सेंकना, भृज् = चमकना, भूँजना, जानना)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **अप्नवानवत्** = अप्नवान के समान, पालन-रक्षण करने वाले के समान (अप् - पालन करना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **समुद्रवाससम्** = समुद्र में रहने वाला (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना, वस् = रहना, निवास करना) **॥ 08 ॥**

19. अग्निम् इन्धानो मनसा, धियम् सचेत मर्त्यः। अग्निम् इन्धे विवस्वभिः ॥ 09 ॥ 8-91-22

मन्त्रार्थ - **इन्धानो** = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करनें वाले **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **मनसा** = मन से, मन द्वारा **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को **सचेत** = सिञ्चन करे। **मर्त्यः** = मरणशील **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **विवस्वभिः** = विशेष वास द्वारा **इन्धे** = प्रकाशित करें **॥ 09 ॥**

पदार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इन्धानो** = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करनें वाले (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **मनसा** = मन से, मन द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **सचेत** = समान चित्त वाले (चित - विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना,

लेना, ग्रहण करना)। **इन्धे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **विवस्वभिः** = विशेष वास द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) **॥ 09 ॥**

20. आत् इत् प्रत्नस्य रेतसो, ज्योतिः पश्यन्ति वासरम्। परो यत् इध्यते दिवि ॥ 10 ॥ 8-6-30

मन्त्रार्थ - **आत्** = चिरन्तन, नित्य **इत्** = ही **प्रत्नस्य** = प्रसिद्ध **रेतसो** = रेतस् के **ज्योतिः** = प्रकाश को, **वासरम्** = वासर को, निवास को **पश्यन्ति** = देखते हैं। **यत्** = जो **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **परो** = परे **इध्यते** = गति, ज्ञान, प्रकाश करता है **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **आत्** = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **प्रत्नस्य** = प्रसिद्ध का, प्रकृष्टता को, (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **रेतसो** = रेतस् (रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **पश्यन्ति** = देखते हैं (पश् - देखना)। **वासरम्** = घर, निवास को (वस् = रहना, निवास करना)। **परो** = पराया, परे (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इध्यते** = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) **॥ 10 ॥**

(3) सूक्त 3

21. अग्निम् वो वृधन्तम्, अध्वराणाम् पुरूतमम्। अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥ 01 ॥ 8-91-7

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **वृधन्तम्** = वृद्धिशील को **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का **पुरूतमम्** = अग्रगामी, अग्रणी को **नप्त्रे** = प्राप्त किया, ज्ञानियों में **सहस्वते** = सहनशील, समर्थ के लिए **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ करो **॥ 01 ॥**

पदार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वृधन्तम्** = वृद्धि को (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **पुरूतमम्** = अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **नप्त्रे** = प्राप्त किया, ज्ञानियों में (नप् - जाना, पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **सहस्वते** = सहनशील, समर्थ के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना) **॥ 01 ॥**

22. अग्निः तिग्मेन शोचिषा, यंसद् विश्वम् नि अत्रिणम्। अग्निः नो वंसते रयिम् ॥ 02 ॥ 6-16-28

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **तिग्मेन** = तिग्म द्वारा, ज्ञानी, कूटचाल द्वारा **शोचिषा** = शुचि द्वारा, शुद्धता, पवित्रता द्वारा **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को **नि** = निश्चित, निरन्तर **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को **यंसद्** = नियमन करते हैं। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **नो** = हमको, हमारे लिए, **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **वंसते** = वसता है, बढ़ता है, शब्द करता है **॥ 02 ॥**

पदार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तिग्मेन** = तिग्म द्वारा, ज्ञानी, कूटचाल द्वारा (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल चलना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **यंसद्** = यंस, नियमन करते हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **नि** = निश्चित,

निरन्तर (उपसर्ग)। **अत्रिणम् =** अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वंसते =** वसता है, बढ़ता है, शब्द करता है (वस् वसना, वास करना, वंश - शब्द करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, बढ़ना)। **रयिम् =** विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना) **॥ 02 ॥**

23. अग्ने मृड महान् असि, अयः आ देव-युञ्जनम्। इयेथ बर्हिः आ सदम् ॥ 03 ॥ 5-9-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् **मृड =** सुख **असि =** हो। **अयः =** गतिशील, विद्वान् **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **बर्हिः =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सदम् =** सदन, स्थान को **देव-युञ्जनम् =** देव-युञ्जन को, देवत्व के सुयोग को **इयेथ =** जाता है **॥ 03 ॥**

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मृड =** सुख (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **असि =** हो (अस् - होना)। **अयः =** गतिशील, विद्वान् (अय् = जाना, जानना, पाना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देव-युञ्जनम् =** देव-युञ्जन को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना, वद् बोलना)। **इयेथ =** जाता है (इ = जाना, जानना पाना)। **बर्हिः =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सदम् =** सदन, स्थान को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) **॥ 03 ॥**

24. अग्ने रक्षा णो अंहसः, प्रति स्म देव रीषतः। तपिष्ठैः अजरो दह ॥ 04 ॥ 7-15-13

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **णो =** हमारे लिए **अंहसः =** प्रकाशमान की **प्रति =** प्रत्येक **रीषतः =** हिंसक से **रक्षा =** रक्षा करने वाले **स्म =** हो। **तपिष्ठैः =** तपिष्ठों द्वारा, अत्यन्त तपस्वियों द्वारा **अजरो =** जरा-हीन **दह =** जलाओ **॥ 04 ॥**

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रक्षा =** रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **णो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अंहसः =** प्रकाशमान (अंह् = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)। **प्रति =** सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **स्म =** है (अस् - होना)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **रीषतः =** हिंसक से (रिष - मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **तपिष्ठैः =** तपिष्ठ के लिए (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **अजरो =** जरा-हीन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **दह =** जलाओ (दह् - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना) **॥ 04 ॥**

25. अग्ने युङ्क्ष्वा हि ये तव, अश्वासो देव साधवः। अरम् वहन्ति आशवः ॥ 05 ॥ 6-16-43

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **युङ्क्ष्वा =** युक्त कीजिये **हि =** ही, निश्चय **ये =** जो **तव =** तुम्हारा **अश्वासो =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **साधवः =** साधु, समर्थ, कुशल **आशवः =** तीव्रगामी **अरम् =** पर्याप्त, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त को **वहन्ति =** वहन करते है **॥ 05 ॥**

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **युङ्क्ष्वा =** युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **ये =** जो। **तव =** तुम्हारा (सर्वनाम)।

अश्वासो = अश्व, तीव्र गति युक्त, तीव्रगामी, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **साधवः =** साधु के लिए (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **अरम् =** पर्याप्त (अव्यय), गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **वहन्ति =** वहन करते हैं (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **आशवः =** तीव्रगामी (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना) **॥ 5 ॥**

26. नि त्वा नक्ष्य विश्पते, द्युमन्तम् धीमहे वयम्। सुवीरम् अग्न आहुत ॥ 6 ॥ 7-15-7

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, **नक्ष्य =** हे गति, ज्ञान, प्राप्ति योग्य, **आहुत =** आदान-प्रदान किया हुआ, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त, **विश्पते** = हे विश्पति, प्रवेशियों के स्वामी, पालक-रक्षक, **नि =** निश्चित, निरन्तर **त्वा =** तुमको **द्युमन्तम् =** द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को, **सुवीरम् =** उत्तम वीर को **वयम् =** हम लोग **धीमहे =** धारण करते हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ - नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **नक्ष्य =** गति, ज्ञान, प्राप्ति योग्य (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **विश्पते** = विश्पत के लिए (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **द्युमन्तम् =** द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **धीमहे =** धारण करते हैं (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **वयम् =** हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **सुवीरम् =** उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अग्न =** हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **आहुत =** आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना) **॥ 6 ॥**

27. अग्निः मूर्द्धा दिवः ककुत्, पतिः पृथिव्या अयम्। अपाम् रेतांसि जिन्वति ॥ 07 ॥ 8-44-16

मन्त्रार्थ : अयम् यह **अग्निः** अग्नि **दिवः** दिव्य, प्रकाशमान **मूर्द्धा** उच्च, **पृथिव्याः** पृथिवी का **ककुत्** गर्व योग्य, महान् **पतिः** स्वामी, ऐश्वर्यवान् **रेतांसि** विद्या, गतिशीलता का **जिन्वति** सन्तुष्ट करता है, प्रकाशित होता है **॥ 07 ॥**

भावार्थ : अग्नि का भाव परमात्मा तथा उपासक विद्वान् दोनो है। दोनों ही सृष्टि तथा समाज में उच्च और उपयोगी स्थान रखते हैं ॥ 07 ॥

पदार्थ : अग्निः = ऊर्ध्वगामी (अग् = गति करना, आगे जाना)। **मूर्द्धा** = उच्च, (मूर्द्ध = उच्च होना)। **दिवः** = प्रकाशमानों में (दिव् = तेजस्वी होना, स्तुति करना)। **ककुत्** = गर्व योग्य, महान् (कक् = गर्व करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान् स्वामी (पत् = ऐश्वर्य होना)। **पृथिव्याः** = पृथ्वी का (पृथृ - व्याप्त होना, विस्तार करना, फैलना)। **अयम्** = यह। **अपाम्** = जलों का, प्राणों का (अप -पालन करना)। **रेतांसि** = विद्या, गतिशीलता (रि = जाना, जानना, पाना)। **जिन्वति** = सन्तुष्ट करता है, प्रकाशित होता है (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रकाशित होना, बोलना) ॥ 07 ॥

28. इमम् ऊ षु त्वम् अस्माकम्, सनिम् गायत्रम् नव्यांसम्। अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥ 8 ॥ 1-27-4

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **त्वम् =** तुम **इमम् =** इसको **ऊ =** निश्चय ही **षु =** उत्तम **अस्माकम् =** हमारा **सनिम् =** दानी **गायत्रम् =** गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को **नव्यांसम् =** नवीन को, स्तुतियोग्य को **देवेषु =** देवों में **प्र**

= प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वोचः** = बोलो ॥ **8** ॥

पदार्थ - **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **ऊ** = निश्चय ही, भी। **षु** = अच्छा। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **सनिम्** = दानी (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **गायत्रम्** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **नव्यांसम्** = नवीनता को, स्तुतियोग्य को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वोचः** = वाणी, बोलो (वच् - बोलना, कहना) ॥ **8** ॥

29. तम् त्वा गोपवनो गिरा, जनिष्ठत् अग्ने अङ्गिरः। स पावक श्रुधी हवम् ॥ 9 ॥ 8-63-11

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **तम्** = उस **त्वा** = तुमको **गोपवनो** = रक्षक वन, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक **अङ्गिरः** = विद्वान्, प्रगतिशील **गिरा** = स्तुतियों, वाणियों द्वारा **जनिष्ठत्** = उत्पन्न करता है। **स** = वह, उसने **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य को **श्रुधी** = सुनता है ॥ **9** ॥

पदार्थ - **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गोपवनो** = रक्षक वन, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **जनिष्ठत्** = जनों में निष्ठा रखने वाले, लोगों का ध्यान रखने वाले, श्रेष्ठ जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **स** = वह, उसने। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **श्रुधी** = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। ॥ **9** ॥

30. परि वाजपतिः कविः, अग्निः हव्यानि अक्रमीत्। दधत् रत्नानि दाशुषे ॥ 10 ॥ 4-15-3

मन्त्रार्थ :- **परि** = सभी ओर **वाज-पतिः** = वाजपति **कविः** = ज्ञानी, कवि, चित्रकार **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् ने **हव्यानि** = दान योग्य, देयों को **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की। **रत्नानि** = रत्नों को **दाशुषे** = दानी के लिए **दधत्** = धारण किया, प्रदान किया ॥ **10** ॥

भावार्थ :- परमात्मा सुयोग्य दानी को ही मूल्यवान् प्रिय रत्न प्रदान करता है। यहाँ परमात्मा को ज्ञानी, कवि, चित्रकार, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् कहकर सम्बोधित किया गया है। अतः यहाँ मूल्यवान् प्रिय रत्न का अर्थ भी विद्या ही प्रमुख है।

पदार्थ - **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **वाज-पतिः** = वाजपति (वाज् = जानना, जाना, पहुँचना, पाना, तैयार करना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **हव्यानि** = दान योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रत्नानि** =

मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना) **॥ 25 ॥**

31. उत् उ त्यम् जातवेदसम्, देवम् वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ 11 ॥ 1-50-1

मन्त्रार्थ :- केतवः - केतुगण, विद्वान्, ज्ञानीजन, **उ** - ही, **त्यम्** - तुम, **जातवेदसम्** - जातवेद, जिससे वेद, ज्ञान उत्पन्न हुआ, वेद को उत्पन्न करने वाला, **देवम्** - देव, **सूर्यम्** - सूर्य को,उत्पन्न करने वाले को, ऐश्वर्यवान् को **विश्वाय** - विश्व के लिए, सबके लिए **दृशे** - देखने के लिए, **उत्** - उच्च, उत्तम **वहन्ति** - वहन करते हैं॥ 11॥

भावार्थ :- परमात्मा जातवेद है अर्थात् वेद तथा ज्ञान को उत्पन्न करने वाला है। उस देव को केतवः अर्थात् ज्ञानी ही वहन करते हैं। सूर्य का अर्थ है उत्पन्न करने वाला तथा ऐश्वर्यवान्। जातवेद, देव, सूर्य मूलतः परमात्मा के ही विशेषण हैं। इन गुणों को आत्मसात् करने वाले उपासक को भी इन विशेषणों से भूषित किया जाता है।

पदार्थ :- उत् - उच्च (उपसर्ग)। **उ** = ही। **त्यम्** = उस को। **जातवेदसम्** = जातवेद, जिससे वेद, ज्ञान उत्पन्न हुआ, वेद को उत्पन्न करने वाला (जन् = उत्पन्न होना, विद् = जानना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना)। **वहन्ति** = वहन करने वाले (वह् = वहन करना ले जाना)। **केतवः** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। **विश्वाय** = विश्व के लिए, सबके लिए, विश्व से अलग। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना) **॥ 11 ॥**

32. कविम् अग्निम् उप स्तुहि, सत्यधर्माणम् अध्वरे। देवम् अमीवचातनम् ॥ 12 ॥ 1-12-7

मन्त्रार्थ - कविम् = कवि को **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को, **सत्यधर्माणम्** = सत्य धर्म को **देवम्** = देव को **अमीवचातनम्** = शब्द, गति, सेवा को **अध्वरे** = अहिंसक में **उप** = समीप **स्तुहि** = स्तुति करो **॥ 12 ॥**

पदार्थ - कविम् = कवि को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **स्तुहि** = स्तुत, स्तुह (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **सत्यधर्माणम्** = सत्य धर्म को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, खेलना)। **अमीवचातनम्** = शब्द, गति, सेवा युक्त वाणी (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ + मा, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना, वच् - बोलना, कहना) **॥ 12 ॥**

33. शम् नो देवीः अभिष्टये, शम् नो भवन्तु पीतये। शम् योः अभि स्त्रवन्तु नः ॥ 13 ॥ 10-9-4

मन्त्रार्थ :- देवीः देवी, दिव्यगुणयुक्त **नो** हमारे **अभिष्टये** अभीष्ट के लिए **शम्** सुखद, कल्याणकारी, **पीतये** पीने के लिए **शम्** सुखद, कल्याणकारी **भवन्तु** हों। **नः** हमारे लिए **शम्** सुखद, कल्याणकारी, **योः** मिलाने वाला **अभि-स्त्रवन्तु** अभिसिञ्चन करें **॥ 13 ॥**

भावार्थ :- इसमें हमारे लिए प्रकृति के कल्याणकारी होने की भावना है।

पदार्थ :- शम् = सुखद, कल्याणकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा। **देवीः** = दिव्यगुणयुक्त (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना)। **अभिष्टये** = अभीष्ट के लिए (इष- इच्छा करना, चाहना, जाना)। **शम्** = सुखद, कल्याणकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **भवन्तु** = हों, हो जायें (भू - होना)। **पीतये** = पान के लिए (पी - पीना, प्राशन करना)। **योः** = मिलने वाला (यु - मिलना, मिलाना, अलग करना)। **अभि** = सभी ओर। **स्त्रवन्तु** = अभिसिञ्चन करें (सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **॥ 13 ॥**

34. कस्य नूनम् परीणसि, धियो जिन्वसि सत्पते। गोषाता यस्य ते गिरः ॥ 14 ॥ 8-73-7

मन्त्रार्थ - **सत्पते** = हे सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक, **कस्य** = किसका **नूनम्** = निश्चय ही **परीणसि** = सब ओर से गति, व्याप्ति, प्रेरणा करते हो, **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि **जिन्वसि** = प्रसन्न करते हो। **यस्य** = जिसका **ते** = तुम्हारे **गोषाता** = शब्द करने वालें, मननशील, उपदेशक **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (हैं) ॥ 14 ॥

पदार्थ - **कस्य** = किसका (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **परीणसि** = सब ओर से व्याप्त (परि - सब ओर, ई - जाना, व्याप्त होना, प्रेरणा करना)। **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **जिन्वसि** = प्रसन्न करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **गोषाता** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 14 ॥

(4) सूक्त 4

35. यज्ञा यज्ञा वो अग्नये, गिरा गिरा च दक्षसे।
प्र प्र वयम् अमृतम्, जातवेदसम् प्रियम्, मित्रम् न शंसिषम् ॥ 1 ॥ 6-48-1

मन्त्रार्थ :- **वः** = तुम्हारा **यज्ञा-यज्ञा** = सभी यजन **अग्नये** = अग्नि के लिए, **च** = और **गिरा-गिरा** = सभी स्तुतियां, वाणियाँ **दक्षसे** = दक्षता के लिए (है)। **वयम्** = हम **प्र-प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर **जातवेदसम्** = जातवेद को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को **प्रियम्** = प्रिय **मित्रम्** = मित्र **न** = के समान **शंसिषम्** = स्तुति करने वाले, प्रशंसा करने वाले (हैं) ॥ 1 ॥

भावार्थ :- प्रत्येक यजन अर्थात् देवपूजा, संगतिकरण, दान आदि सत्कर्मों में तथा प्रत्येक वाणी में हम दक्षता के लिए अमृत जातवेद परमात्मा का स्मरण करते हैं। वह हमारे लिए मित्र के समान प्रशंसित है ॥ 1 ॥

पदार्थ - **यज्ञा** = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **च** = और। **दक्षसे** = दक्षता के लिए (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **प्र – प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर (अ - नहीं, मृ = मरना)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **प्रियम्** - **प्रियम्** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **मित्रम्** - **मित्रम्** = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शंसिषम्** = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 1 ॥

36. पाहि नो अग्ने एकया, पाहि उत द्वितीयया।
पाहि गीर्भिः तिसृभिः, ऊर्जाम् पते पाहि, चतसृभिः वसो ॥ 2 ॥ 6-49-9

मन्त्रार्थ :- **अग्ने** = हे अग्नि, **नो** (**नः**) = हमारा **एकया** = एक द्वारा, **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो, **उत** = उसी भाँति **द्वितीयया** = द्वितीय द्वारा **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो, **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **तिसृभिः** =

तीन द्वारा **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो, **वसो =** हे वसु, **ऊर्जाम् =** ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना के **पते =** हे पति, **चतसृभिः =** चार द्वारा **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो **॥ 43 ॥**

भावार्थ :- एक वाणी से रक्षा करो, दूसरी वाणी से रक्षा करो, तीसरी वाणी से रक्षा करो, चौथी वाणी से रक्षा करो। हम परमात्मा से प्रार्थना कर रहे हैं कि एक, दो, तीन, चार वाणियों से रक्षा करो। वेद को हम परमात्मा की वाणी मानते हैं। अतः चार वाणियों का भावार्थ चार वेदों को प्रमुखता से माना जाता है **॥ 43 ॥**

पदार्थ - **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **एकया =** एक द्वारा (एक = एक, एक - विचार करना)। **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **उत =** ही (अव्यय)। **द्वितीयया =** द्वित या दो के लिए (द्वि = दो, संख्या)। **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तिसृभिः** = तीन (संख्या)। **ऊर्जाम् =** ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **पते =** पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पाहि =** पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **चतसृभिः =** चार। **वसो =** वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) **॥ 43 ॥**

37. बृहद्भिः अग्ने अर्चिभिः, शुक्रेण देव शोचिषा।
भरद्वाजे समिधानो, यविष्ठ्य रेवत्, पावक दीदिहि ॥ 3 ॥ 6-48-9

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **बृहद्भिः =** बृहत् द्वारा, **अर्चिभिः =** अर्चना, सेवा, मान द्वारा, **शुक्रेण =** शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, शीघ्रकारी द्वारा, **शोचिषा =** शोचमान द्वारा, **भरद्वाजे =** भरण करने वाले विद्वान् में **समिधानो =** सम्यक् प्रकाशित होता हुआ **यविष्ठ्य =** सर्वाधिक मिलाने व अलग करने योग्य **रेवत् =** प्रवाहयुक्त **पावक =** पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **दीदिहि =** रूप बनाओ **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **बृहद्भिः =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अर्चिभिः =** अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **शुक्रेण =** शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शोचिषा =** शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **भरद्वाजे =** भरण करने वाले विद्वान् (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना, वज् - जाना, चलना, गति करना, जानना, पाना, संस्कार करना, शस्त्र बनाना)। **समिधानो =** सम्यक् प्रकाशित होता हुआ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **यविष्ठ्य =** सर्वाधिक मिलाने व अलग करने योग्य (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **रेवत् =** प्रवाह (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **पावक =** पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **दीदिहि** = रूप बनाओ (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना) **॥ 3 ॥**

38. त्वे अग्ने स्वाहुत, प्रियासः सन्तु सूरयः।
यन्तारो ये मघवानो, जनानाम् ऊर्वम्, दयन्त गोनाम् ॥ 4 ॥ 7-16-7

मन्त्रार्थ - **स्वाहुत** अच्छे प्रकार से आह्वान किये गये, **अग्ने** हे अग्नि, **त्वे** तुम्हारे **प्रियासः** प्रिय **सूरयः** उत्पन्न करने,

गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् लोग **सन्तु** हों। **ये** जो **मघवानो** ऐश्वर्यवान् **जनानाम्** जनों के **गोनाम्** वाणियों के **यन्तारो** नियमन-नियन्त्रण करने वाले **ऊर्वान्** ऊर्वों को **दयन्त** देते हैं॥ **14**॥

भावार्थ - जो मघवान् अर्थात् ऐश्वर्यवान् हैं, वे ही लोगों का नियमन-नियन्त्रण करते हैं। उर धातुका अर्थ जाना, उर्व धातु का अर्थ हिंसा करना, सहना होता है। उन ऊर्वो अर्थात् गतिशील, ज्ञानी, सहनशील को देते हैं। नियन्ता लोगों का कर्तव्य है कि जो लोग विद्वान् हैं, कर्मशील हैं, जिन्हें अनेक कारणों बहुत कुछ अनुचित भी सहना पड़ता है, उनको सहयोग देते रहें॥ **14**॥

पदार्थ- त्वे = तुम्हारे **अग्ने =** हे अग्नि, (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना), **स्वाहुत =** अच्छे प्रकार से आह्वान किये गये (सु - अच्छा, सुन्दर, आ - समन्तात्, भलीभाँति, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना), **प्रियासः =** प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना), **सन्तु =** हों (अस् - होना), **सूरयः =** उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **ये =** जो, **मघवानो =** ऐश्वर्यवान् (मघ् - ऐश्वर्य होनाा) **जनानाम् =** जनों के (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना) **गोनाम् =** गो के (गु - शब्द करना, बोलना, मनन करना) **यन्तारो =** नियमन-नियन्त्रण करने वाले (यम - आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना) **ऊर्वान् =** ऊर्वों को (ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना, विश्वास करना) **दयन्त =** देते हैं (दय - दान करना, पालन करना)॥ **14**॥

39. अग्ने जरितः विश्पतिः, तपानो देव रक्षसः।
अप्रोषिवान् गृहपते महान् असि, दिवः पायुः दुरोणयुः॥ 5॥ 8-49-19

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप, **जरितः =** जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व **विश्पतिः =** विश के स्वामी, रक्षक अर्थात् सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी **तपानो =** तपते हुए, तप करते हुए **रक्षसः =** रक्षा करने वाले, रक्षस् गण, **अप्रोषिवान् =** पूर्ण, सौम्य, स्निग्ध, प्रोक्षण, पूर्ण किया। **गृहपते =** हे गृहपति ! **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का **पायुः =** गति, पालन, रक्षण करने वाला **दुरोणयुः =** दूर ले गया, ज्ञान, गमन, प्रप्ति **असि =** हो॥ **5**॥

पदार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जरितः =** जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **विश्पतिः =** विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। **तपानो =** तपते हुए, तप करते हुए (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **रक्षसः =** रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **अप्रोषिवान् =** पूर्ण, सौम्य किया (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, प्रुष = सौम्य होना, स्निग्ध होना, प्रोक्षण करना, सींचना, पूर्ण करना, भरना)। **गृहपते =** हे गृहपति! (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **असि =** हो (अस् - होना)। **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पायुः =** पायु, गति, पालन, रक्षण (पय् - चलना, जाना, रक्षा करना, पालन करना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **दुरोणयुः =** दूर ले गया, ज्ञान, गमन, प्रप्ति हुआ (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, ओण् - दूर ले जाना, द्रू-द्रूण - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, हिंसा करना)॥ **5**॥

40. अग्ने विवस्वत् उषसः, चित्रम् राधो अमर्त्य।
आ दाशुषे जातवेदो वहा, त्वम् अद्य आ देवान् उषर्बुधः॥ 6॥ 1-44-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **विवस्वत् =** हे विवस्वत्, विशेष वासयुक्त, **अमर्त्य =** हे अमर, **जातवेदो =** उत्पन्न को

जानने वाले, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **उषर्बुधः** = प्रभात में बोध करने वाले **दाशुषे** = दानी के लिए **त्वम्** = तुम **अद्य** = आज **उषसः** = उषा का, प्रभात के **चित्रम्** = अद्भुत, चेतन **राधो** = वृद्धिकर्ता **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवों को **आ** = समन्तात्, सम्यक् **वहा** = वहन करो, ले जाओ ॥ 6 ॥

पदार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **विवस्वत्** = विवस्वत्, विशेष वास (वि = विशेष, विना, विलोम, वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निदोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **अमर्त्य** = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **जातवेदो** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **वहा** = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **उषर्बुधः**= प्रभात को समझने जानने वाले, प्रभात बोध, हिंसको को समझने वाले (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना, बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ 6 ॥

41. त्वम् नः चित्रः ऊत्या वसो, राधांसि चोदय।
अस्य रायः त्वम् अग्ने रथीः असि, विदा गाधम् तुचे तु नः ॥ 7 ॥ 6-48-9

मन्त्रार्थ - **वसो** = हे वसु, **त्वम्** = तुम **नः** = हमारे लिए **चित्रः** = चित्र, आश्चर्य, चेतन **ऊत्या** = वाणी द्वारा **राधांसि** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि को **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो। **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वम्** = तुम **अस्य** = इसका **रायः** = गति, विद्या, वाणी, **रथीः** = रथी **असि** = हो। **विदा** = विद्वान् **गाधम्** = गान, गायक को **तु** = तो **नः** = हमारे लिए **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **चित्र** = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **ऊत्या** = वाणी द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **राधांसि** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि हो (रध - शुद्ध होना, निदोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रायः** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रम् = रमना, क्रीडा करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **विदा** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **गाधम्** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 7 ॥

42. त्वम् इत् सप्रथा असि, अग्ने त्रातः ऋतः कविः।

त्वाम् विप्रासः समिधान, दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥ 8 ॥ 8-49-5

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वम्** = तुम **इत्** = ही **सप्रथा** = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत **त्रातः** = रक्षक, पालक, पोषक **ऋतः** = ऋत, सञ्चालन नियम **कविः** = ज्ञानी, कवि **असि** = हो। **समिधान** = हे सम्यक् प्रकाशमान, **दीदिव** = हे तेजस्वी! **त्वाम्** = तुमको **विप्रासः** = विप्रगण **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वेधसः** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए **विवासन्ति** = विशेष वास करते हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सप्रथा** = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **त्रातः** = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **ऋतः** = ऋत, सञ्चालन नियम (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **विप्रासः** = विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। **समिधान** = सम्यक् प्रकाश, प्रकाशित होता हुआ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **दीदिव** = तेजस्वी! (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **विवासन्ति** = विशेष वास करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **वेधसः** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) **॥ 8 ॥**

43. आ नो अग्ने वयोवृधम्, रयिम् पावक शंस्यम्।
रास्वा च नः उपमाते, पुरुस्पृहम् सुनीती सुयशस्तरम् ॥ 9 ॥ 8-49-14

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **पावक** = हे पावक, पवित्रकर्ता, **उपमाते** = हे उपमान, **सुनीती** = हे उत्तम नीतियुक्त **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नो** = हमारे लिए **वयोवृधम्** = वयोवृध को, **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **शंस्यम्** = स्तुत्य को, **च** = और **नः** = हमारे लिए **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को **सुयशस्तरम्** = उत्तम यश, कीर्ति को **रास्वा** = प्रदान करो **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वयोवृधम्** = वयोवृध को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **शंस्यम्** = स्तुत्य को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)।। **रास्वा** = दान दो (रा- देना, लेना, ग्रहण करना, रस्, रास् = शब्द करना, रस् = रस होना, स्वाद लेना, प्रीति करना, प्यार करना, शब्द करना, रस लेना)। **च** = और। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **उपमाते** = उपमान, निकट मान-मापन के लिए (उप- सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **सुनीती** = अच्छी नीति (सु - सुन्दर, अच्छा, नी = ले जाना)। **सुयशस्तरम्** = उत्तम यश, कीर्ति वाले (सु - सुन्दर, अच्छा, यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) **॥ 9 ॥**

44. ये विश्वा दयते वसु, होता मन्द्रो जनानाम्।

मधोः न पात्रा प्रथमानि, अस्मै प्र स्तोमा यन्तु अग्नये ॥ 10 ॥ 8-92-6

मन्त्रार्थ - **वसु =** हे वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, **ये =** जो **विश्वा =** विश्व, सभी **जनानाम् =** जनों के **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले, **मन्द्रो =** स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, **दयते =** देते हैं। **स्तोमा =** स्तोम, स्तुतियाँ, स्तुतिकर्ता **अग्नये =** अग्नि के लिए **मधोः =** मधु **न =** के समान **पात्रा =** पात्र, पालन, रक्षा साधन **प्रथमानि =** प्रथम **अस्मै =** हमारे लिए **प्र =** प्रकृष्ट **यन्तु =** पोषण, नियमन-नियन्त्रण करें ॥ 10 ॥

पदार्थ - **ये =** जो। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दयते =** देते हैं (दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वसु =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्द्रो =** स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **जनानाम् =** जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मधोः =** मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पात्रा =** पात्र, पालन, रक्षा साधन (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **प्रथमानि =** प्रथम, विस्तार (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, विस्तार करना, फैलना, फैलाना)। **अस्मै =** हमारे लिए (सर्वनाम)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **स्तोमा =** स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **यन्तु =** पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **अग्नये =** अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 10 ॥

(5) सूक्त 5

45. एना वो अग्निम् नमसा, ऊर्जो नपातम् आ हुवे।
प्रियम् चेतिष्ठम् अरतिम्, स्वध्वरम् विश्वस्य दूतम् अमृतम् ॥ 1 ॥ 7-16-1

मन्त्रार्थ - **एना =** इस, प्रकाशित करने वाले **ऊर्जो =** ऊर्जावान् ने **नमसा =** नमन द्वारा **वो =** तुमको **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **नपातम् =** अपतित, प्रकाशमान, शब्दकृत को, **प्रियम् =** प्रिय **चेतिष्ठम् =** अत्यन्त चेतन, एकत्र, विचार करने वाले **अरतिम् =** प्रगतिशील, रतिहीन, प्राप्त **स्वध्वरम् =** उत्तम अहिंसक को **विश्वस्य =** विश्व का, सभी का **दूतम् =** गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **अमृतम् =** अमृत को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **हुवे =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - **एना =** इनके द्वारा (सर्वनाम) **एना =** प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नमसा =** नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **ऊर्जो =** ऊर्जा (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **नपातम् =** नपात को, अपतित को, प्राप्त को, प्रकाशमान को, शब्दकृत को (न - नहीं, पत् - गिरना, उड़ना, ऐश्वर्य होना। पा - पलन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **हुवे =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **प्रियम् =** प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **चेतिष्ठम् =** अत्यन्त चेतन, एकत्र, विचार करने वाले (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना,

सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **अरतिम् =** गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **स्वध्वरम् =** उत्तम अहिंसक को (सु = उत्तम, अ - नहीं (उपसर्ग), ध्वृ = हिंसा करना)। **विश्वस्य =** विश्व का, सभी का। **दूतम् =** गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **अमृतम् =** न मरने वाला, अमर (अ - नहीं (उपसर्ग), मृ = मरना) **॥ 1 ॥**

46. शेषे वनेषु मातृषु, सम् त्वा मर्त्तासः इन्धते।
अतन्द्रो हव्यम् वहसि, हविष्कृतः आत् इत् देवेषु राजसि ॥ 2 ॥ 8-7-60

मन्त्रार्थ - त्वा = तुम **वनेषु =** वाणियों में, **मातृषु =** माताओं में **शेषे =** शयन करते हो। **मर्त्तासः =** मरणशील **सम् =** सम्यक् रूप से, भलीभाँति **इन्धते =** प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं। **अतन्द्रो =** तन्द्राहीन, आलस्यहीन होकर **हव्यम् =** आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को **वहसि =** वहन करते हो। **हविष्कृतः =** हविकर्ता **आत् =** चिरन्तन, नित्य **इत् =** ही **देवेषु =** देवों में **राजसि =** प्रकाशित होते हो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - शेषे = शेष में, शयन करता है (शि - तीक्ष्ण करना, सुनना, शी - शयन करना, निवास करना। शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **वनेषु =** वाणियों में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **मातृषु =** माताओं में (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **सम् =** सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **मर्त्तासः =** मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इन्धते =** प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **अतन्द्रो =** तन्द्राहीन, आलस्यहीन (तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, सहाय करना, शब्द करना, पीड़ा करना, दुःख देना, तन्त्र = विस्तार करना, आलस्य होना, तन्द्रा होना, देखना, दिखाना)। **हव्यम् =** आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **वहसि =** वहन करते हो (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **हविष्कृत =** हविकर्ता (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, कृ - करना)। **आत् =** चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **देवेषु =** देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **राजसि =** प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) **॥ 2 ॥**

47. अदर्शि गातुवित्तमो, यस्मिन् व्रतानि आ दधुः।
उप उ षु जातम् आर्यस्य वर्धनम्, अग्निम् नक्षन्तु नो गिरः ॥ 3 ॥ 8-103-1

मन्त्रार्थ - यस्मिन् = जिसमें **गातुवित्तमो =** अत्यन्त स्तुति जानने वाले, गायन जानने वाले ने **अदर्शि =** देखा, **व्रतानि =** व्रतों को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **दधुः =** धारण किया, **उप =** समीप, निकट **उ =** ही **षु =** उत्तम **जातम् =** उत्पन्न **आर्यस्य =** आर्य, प्रगतिशील की **वर्धनम् =** वृद्धि करने वाले **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **नो =** हमारी **गिरः =** वाणियाँ **नक्षन्तु =** प्राप्त करें **॥ 3 ॥**

पदार्थ - अदर्शि = देखा हुआ (दृश्-पश्य -देखना)। **गातुवित्तमो =** स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, विद् = जानना)। **यस्मिन् =** जिसमें (सर्वनाम)। **व्रतानि =** व्रतों को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दधुः =** धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **उपो =** समीप, निकट

(उपसर्ग, सर्वनाम)। **षु** = अच्छा। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **आर्यस्य** = आर्य, सम्यक् वचन, वाणी, गति, प्राप्ति का (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अर् - ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना)। **वर्धनम्** = वृद्धि को (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नक्षन्तु** = प्राप्त करते हुए (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 3 ॥

48. अग्निः उक्थे पुरोहितो, ग्रावाणो बर्हिः अध्वरे।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पते, देवाः अवो वरेण्यम् ॥ 4 ॥ 8-27-1

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **पुरोहितो** = पुरोहित **ग्रावाणो** = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, महान् **अध्वरे** = अहिंसक में **उक्थे** = कहते हैं, एकत्र होते हैं। **ब्रह्मणस्पते** = हे बृहमणस्पति **देवाः** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, **ऋचा** = ऋचा द्वारा **मरुतो** = मरणशीलों के **अवो** = रक्षक, विद्वान् **वरेण्यम्** = वरण योग्य को **यामि** = जाता हूँ, प्राप्त करता हूँ ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उक्थे** = कहते हैं, एकत्र होते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **पुरोहितो** = पुरोहित (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। **ग्रावाणो** = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले (गृ = सींचना, समझना, जानना,खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **ऋचा** = ऋचायें (ऋच् - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **यामि** = जाता हूँ (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **मरुतो** = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **ब्रह्मणस्पते** = विराट, महान्, बृहमणस्पति (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अवो** = रक्षक, विद्वान् (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वरेण्यम्** = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 4 ॥

49. अग्निम् ईडिष्व अवसे, गाथाभिः शीरशोचिषम्।
अग्निम् राये पुरुमीढ श्रुतम्, नरो अग्निः सुदीतये छर्दिः ॥ 5 ॥ 8-71-14

मन्त्रार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **शीर–शोचिषम्** = शीर–शोचिष को **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो **गाथाभिः** = गान, गाय, गायक द्वारा **ईडिष्व** = स्तुति करो। **पुरुमीढ** = हे पुरुमीढ, अग्रगामी विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले, **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को **नरो** = नर, ले जाने वाला **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **सुदीतये** = उत्तम दानी के लिए **छर्दिः** = प्रकाश, कथन (है) ॥ 5 ॥

पदार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ईडिष्व** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अवसे** = रक्षा के

लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **गाथाभिः =** गान, गाय, गायक द्वारा (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **शीर–शोचिषम् =** शीर–शोचिष को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिर = शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **राये =** विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुमीढ =** पुरुमीढ, अग्रगामी विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मी = समझना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **श्रुतम् =** श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **नरो =** नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुदीतये** = उत्तम दानी के लिए (सु - अच्छा, सुन्दर, दी = ह्रास (ह्रास) होना, झरना, नष्ट होना। दा -देना, सौंपना, लौटाना, रखना। दो - दान करना, दया करना, कतरना, विभाग करना)। **छर्दिः =** प्रकाश, कथन (छर्द = सन्दीपे - कहना, प्रकाश करना, उद्गार करना, वमन करना) **॥ 5 ॥**

50. श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिः, देवैः अग्ने सयावभिः।
आ सीदतु बर्हिषि, मित्रो अर्यमा प्रातः यावभिः अध्वरे ॥ 6 ॥ 1-3-30

मन्त्रार्थ- अग्ने हे अग्नि, **श्रुत्कर्ण** हे सुनने वाले कर्ण, **वह्निभिः** वहन करने वालों द्वारा, **सयावभिः** साथ चलने वाले **देवैः** विद्वानों के साथ **श्रुधि** सुनिये। **बर्हिषि** आच्छादन में **मित्रो** मित्र, **अर्यमा** अर्यमा **प्रातः** प्रातःकाल **यावभिः** गति, ज्ञान, प्राप्ति, चलने द्वारा **अध्वरे** - अहिंसक में **आ** सीदन्तु अच्छे प्रकार बैठें **॥ 6 ॥**

भावार्थ - सयावभिः पद का अर्थ सहगामी तथा सन्धि-विग्रह करने वाले हो सकता है। इसमें या धातु मानकर इसका अर्थ साथ चलने वाले किया गया है। यु धातु मानने पर इसका अर्थ मिलाना तथा अलग करना भी हो सकता है। बृह धातु का अर्थ बढ़ना, शब्द करना, बृ धातु का अर्थ आवरण करना, ढकना, वरण करना होता है। बर्हिषि पद का अर्थ सामान्यतः आच्छादन लेकर उसका भावार्थ गृह या सभामण्डप किया गया है। इस अर्थों को समाहित करते हुए बर्हिषि पद का अर्थ वृद्धि की चर्चा करने वाला सभागृह मानना उचित है। अर्यमा पद का अर्थ ऋ धातु के अनुसार अर्थ गति, ज्ञान, प्राप्ति करने वाले होगा। प्रातर्यावाणः का अर्थ भी या धातु मानकर प्रातः ज्ञान, गति, प्राप्ति करने वाले तथा यु धातु मानकर सन्धि-विग्रह करने वाले हो सकता है। अध्वरम् अर्थात् अहिंसक भावना को ध्यान में रखते हुए सभी तर्कसंगत अर्थ ग्राह्य हैं **॥ 6 ॥**

विशेष - श्रुत्कर्ण सुनने वाले कर्ण अथवा सुने हुए को कर्णगत करने वाले। श्रु धातु का अर्थ सुनना है तथा कर्ण धातु का अर्थ सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना, परित्याग करना है। इस प्रकार जो लोग श्रुत् या श्रुति को कर्ण करते हैं, अर्थात् सुनते हैं, उसे बेधते हैं, अर्थात् उसे गहनता से समझते हैं, चिन्तन - मनन कर आत्मसात् करते हैं तथा उस ज्ञान को दूर तक ले जाते हैं, साथ ही उसे त्याग भावना से सबको वितरित करते हैं, वे विद्वान् श्रुत्कर्ण हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ - श्रुत्कर्ण - सुनने वाले कर्ण (श्रु - सुनना, कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना) **अग्ने** - अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना), **वह्निभिः** - वहन करने वाले (वह् - वहन करना, ले जाना), **सयावभिः** - साथ चलने वाले (स - सहित, साथ, या - जाना) **देवैः** - देवों के साथ (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), **श्रुधि** - सुनिये (श्रु - सुनना)। **बर्हिषि**- श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **मित्रो** - मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना), **अर्यमा** - अर्यमा (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **प्रातः** - प्रातःकाल **यावभिः** - गति, ज्ञान, प्राप्ति, चलने द्वारा (या - जाना, जानना, पाना)। **अध्वरे** - अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **आ** - अच्छे प्रकार **सीदन्तु** - बैठें (सीद् - बैठना) **॥ 6 ॥**

51. प्र दैवोदासो अग्निः, देवः इन्द्रो न मज्मना।
अनु मातरम् पृथिवीम्, वि वावृते तस्थौ नाकस्य शर्मणि॥ 7॥ 8-103-2

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट **दैवोदासो** = दिव्यदानी **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी **देवः** = देव **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **न** = के समान **मज्मना** = शब्दकर्ता द्वारा **अनु** = अनुकूल **मातरम्** = माता **पृथिवीम्** = पृथिवी को **वि** = विशेष **वावृते** = आवृत करता है। **नाकस्य** = अकुटिल, अविचल का **शर्मणि** = सुख में **तस्थौ** = स्थित है॥ 7॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **दैवोदासो** = दिव्यदास (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **देव** = देव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, के समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मज्मना** = शब्दकर्ता द्वारा (मज् - शब्द करना, ध्वनि करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **मातरम्** = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वावृते** = आवृत करता है (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, आवृत करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **तस्थौ** = स्थित किया है, स्थित हैं (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **नाकस्य** = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल का (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क -नाश होना)। **शर्मणि** = सुख में (शर्म - सुख होना)॥ 7॥

52. अध ज्मो अध वा दिवो, बृहतो रोचनात् अधि।
अया वर्धस्व तन्वा गिरा मम, आ जाता सुक्रतो पृण॥ 8॥ 8-1-18

मन्त्रार्थ - **अध** = अब **अध** = अब **ज्मो** = प्रगतिशील **वा** = अथवा **दिवो** = दिव्य, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **बृहतो** = बृहत् **रोचनात्** = प्रकाश से **अया** = इसके द्वारा **अधि** = अधिक, पूर्णतः, **वर्धस्व** = बोलो, बढ़ो। **सुक्रतो** = उत्तम कर्म करने वाला, सत्कर्म कर्ता **मम** = मेरा **आ** = समन्तात्, सम्यक् **जाता** = उत्पन्न करने वाला **तन्वा** = विस्तार, वृद्धि **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ **पृण** = पूर्ण करे॥ 8॥

पदार्थ - **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **ज्मो** = प्रगतिशील, भोजन (जम् = खाना, निगलना, गति करना, जाना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **रोचनात्** = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **अया** = इसके द्वारा (सर्वनाम)। **वर्धस्व** = बोलो, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **तन्वा** = विस्तार, वृद्धि (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **जाता** = उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सुक्रतो** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **पृण** = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)॥ 8॥

53. कायमानो वना त्वम्, यत् मातृः अजगन् अपः।
न तत् ते अग्ने प्र मृषे, निवर्त्तनम् यत् दूरे सन्, इह आभुवः॥ 9॥ 3-9-2

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वम्** = तुम **अपः** = पालन करने वाले **कायमानो** = स्तोता, स्तुति करते हुए **वना** =

शब्द **यत्** = जो **मातृः** = माता को **अजगन्** = गये, प्राप्त हुए, **तत्** = वह **ते** = तुम्हारे लिए **न** = नहीं **प्र** = प्रकृष्ट, अधिक **मृषे** = सहन होते हैं। **यत्** = जो **दूरे** = दूर **सन्** = ही **निवर्त्तनम्** = वर्तमान **इह** = यहाँ **आभुवः** = हो गया **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **कायमानो** = स्तुति, प्रशंसा, स्तोता, स्तुति करने वाला (कै-काय् - शब्द करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **वना** = शब्द (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **मातृः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अजगन्** = गया, प्राप्त हुआ (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **अपः** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मृषे** = सहन करते हैं, विचार करते हैं, क्षमा करते हैं, सहनशील, क्षमाशील, विचारशील के लिए (मृष - सहन करना, क्षमा करना, मृश - विचार करना, स्पर्श करना, देखना)। **निवर्त्तनम्** = वरण को (निः - विना, बाहर, निश्चित, वृत् = रहना, होना, वर्ताव करना, चमकना, बोलना, वरण करना, सेवा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दूरे** = दूर (अव्यय)। **सन्** = ही। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **आभुवः** = हो गया (आ - समन्तात्, पूर्णतः, भू - होना) **॥ 9 ॥**

54. नि त्वाम् अग्ने मनुः दधे, ज्योतिः जनाय शश्वते।
दीदेथ कण्वे ऋतजातः, उक्षितो यम् नमस्यन्ति कृष्टयः ॥ 10 ॥ 1-36-19

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वाम्** = तुमको **मनुः** = विचारशील **ज्योतिः** = प्रकाश **जनाय** = जन के लिए **शश्वते** = शश्वत के लिए **नि** = निश्चित, निरन्तर **दधे** = धारण करते हैं। **कण्वे** = कण्व में **ऋतजातः** = ऋत से उत्पन्न **उक्षितो** = प्रोक्षण किया हुआ, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया हुआ **दीदेथ** = दिया, **यम्** = जिसको **कृष्टयः** = कृषक, कर्षण करने वाले **नमस्यन्ति** = नमन करते हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मनुः** = विचारशील का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **जनाय** = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **शश्वते** = शश्वत के लिए (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **दीदेथ** = दिया (दा = देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **कण्व** = कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **ऋतजात** = ऋत से उत्पन्न (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **उक्षितो** = प्रोक्षण किया हुआ, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया हुआ (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **यम्** = जिसे, जिसको = जहाँ (सर्वनाम)। **नमस्यन्ति** = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **कृष्टयः** = कृष्टय (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना) **॥ 10 ॥**

(6) सूक्त 6

55. देवो वो द्रविणोदाः, पूर्णाम् विवष्टु आसिचम्।
उत् वा सिञ्चध्वम्, उप वा पृणध्वम्, आत् इत् वो देवः ओहते ॥ 1 ॥ 7-16-11

मन्त्रार्थ - **देवो** = देव **वो** = तुम सबके लिए **द्रविणोदाः** = द्रविण-दाता, ज्ञान-दाता (है)। **पूर्णाम्** = पूर्ण **आसिचम्** = सिञ्चन कर्ता को **विवष्टु** = चाहो। **वा** = अथवा **उत्** = उत्कृष्ट **सिञ्चध्वम्** = सिञ्चन करो। **वा** = अथवा **उप** = समीप **पृणध्वम्** = पूर्ण करो, पालन करो। **आत्** = चिरन्तन, नित्य **इत्** = ही **वो** = तुम सबके लिए **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **ओहते** = वहन करता है **॥ 1 ॥**

पदार्थ - देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **द्रविणोदाः =** द्रविण-दाता, ज्ञान-दाता (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **पूर्णाम् =** पूर्ण (पृ - पूर् - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **विवष्टु =** विशेष चाहने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, वश - इच्छा करना, चाहना)। **आसिचम् =** सिञ्चन करो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, पूर्णतः, सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **उत् =** ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वा =** अथवा (अव्यय)। **सिञ्चध्वम् =** सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **वा =** अथवा (अव्यय)। **पृणध्वम् =** पूर्ण करो, पालन करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **आत् =** चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ओहते =** ऊह के लिए (ऊह् = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) **॥ 1 ॥**

56. प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः, प्र देवी एतु सूनृता।
अच्छा वीरम् नर्यम्, पंक्तिराधसम् देवा, यज्ञम् नयन्तु नः ॥ 2 ॥ 1-40-3

मन्त्रार्थ :- ब्रह्मणः ब्रह्म का **पतिः** पालक, रक्षक, स्वामी **प्र एतु** आयें। **सूनृता** सुनृता **देवी** देवी **प्र एतु** आयें। **अच्छा** अच्छे **वीरम्** वीर, **नर्यम्** नरयोग्य, ले जाने योग्य **पंक्तिराधसम्** पंक्तिराधन में समर्थ **देवा** देवगण **नः** हमको **यज्ञम्** यजन में **नयन्तु** ले चलें **॥ 2 ॥**

भावार्थ :- गुणवान् तथा समर्थ नर-नारी यजन को सफल बनायें।

पदार्थ :- प्र एतु = प्राप्त हो, आयें (आ + इतु (इ - जाना, जानना, पाना)। **ब्रह्मणः =** ब्रह्मा का (बृह् = बढ़ना, बड़ा होना, जानना)। **देवी =** देवी (दिव्, देव् = चमकना, जानना)। **सूनृता =** सुनृता (नृ = ले जाना)। **अच्छा =** अच्छा (अच्छ = श्रेष्ठ)। **वीरम् =** वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **नर्यम् =** नर्य (नृ = ले जाना)। **पंक्तिराधसम् =** पंक्तिराधन में समर्थ (पचि -पञ्च् - फैलाना, पसारना, राध - सिद्ध होना, बढ़ना)। **देवा =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (देव, दिव् = खेलना, तेजस्वी होना, चमकना, यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **यज्ञम् =** यज्ञ में, यजन को (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **नयन्तु =** ले चलें (नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा **॥ 2 ॥**

57. ऊर्ध्वः ऊ षु णः ऊतये, तिष्ठा देवो न सविता।
ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता, यत् अञ्जिभिः वाघद्भिः, वि ह्वायामहे ॥ 3 ॥ 1-36-3

मन्त्रार्थ :- सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान्, ऐश्वर्य देने वाला **देवो** = देव **न** = के समान **ऊर्ध्व** = उच्च, ऊर्ध्व **ऊ** = निश्चय ही **षु** = अच्छा **णः** = हमारे **ऊतये** = रक्षा, शब्द, विश्वास के लिए **तिष्ठा** = स्थित हो। **ऊर्ध्वो** = उच्च, ऊर्ध्व **वाजस्य** = विद्या का, गति का **सनिता** = सेवन करने वाला **यत** = जो **अञ्जिभिः** = स्वच्छता, प्रकाश द्वारा **वाघद्भिः** = उत्थान द्वारा **विह्वयामहे** = विशेष आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **॥ 3 ॥**

भावार्थ :- सविता अर्थात् सृष्टिकर्ता परमात्मा हमारी रक्षा के लिए ऊपर स्थित है। भाव है कि हमारे ऊपर सृष्टिकर्ता का हाथ है। वही हमारा रक्षक है, अतः भय का कोई कारण नहीं है। वह विद्या सेवित है। हम उच्च भावना से दिव्य प्रकाश से परमात्मा का आह्वान करते हैं।

पदार्थ - ऊर्ध्व = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी। **षु =** अच्छा। **ण =** हमारा, हमारे लिए, हमको (सर्वनाम)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **तिष्ठा =** ठहरो, स्थित हो, ठहरो, खड़े हो (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। **देवो =** देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सविता =** सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला,

ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **ऊर्ध्वो =** उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **वाजस्य =** विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सनिता =** सेवित (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **यत =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **अञ्जिभिः =** स्वच्छता से, प्रकाश द्वारा (अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना)। **वाघद्भिः =** उत्थान द्वारा (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना)। **विह्वयामहे =** विशेष आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम उपसर्ग, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) **॥ 3 ॥**

58. प्र यो राये निनीषति, मर्त्तो यः ते वसो दाशत्।
स वीरम् धत्ते अग्ने, उक्थशंसिनम् त्मना सहस्त्रपोषिणम् ॥ 4 ॥ 8-103-4

मन्त्रार्थ - वसो = हे वसु, **यो =** जो **राये =** विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द में, वाणी में **प्र** - प्रकृष्ट, अधिक **निनीषति =** ले जाने की इच्छा करता है **यः =** जो **मर्त्तो =** मरणशील **ते =** तुम्हारे लिए **दाशत् =** दान करता है, **अग्न =** हे अग्नि, अग्रणी, विद्वान् **स =** वह **वीरम् =** पराक्रमी, वीर को **उक्थशंसिनम् =** उक्ति, कथन की स्तुति करने वाले **सहस्त्रपोषिणम् =** हजारों का पोषण करने वाले को **त्मना =** आत्मा द्वारा **धत्ते =** धारण करता है **॥ 4 ॥**

पदार्थ - प्र - प्रकृष्ट, अधिक। **यो =** जो। **राये =** विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **निनीषति =** ले जाता है (नि - निरन्तर, निश्चित, नी - ले जाना)। **मर्त्तो =** मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वसो =** वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **दाशत् =** दाश अर्थात् दान करने वाले (दश् = देना)। **स =** सहित, साथ (उपसर्ग)। **वीरम् =** पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **धत्ते =** धारण करने के लिए (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **अग्न =** हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **उक्थशंसिनम् =** उक्ति, कथन की स्तुति करने वाले (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **त्मना =** आत्मा द्वारा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में आ का लोप हो सकता है)। **सहस्त्रपोषिणम् =** हजारों का पोषण करने वाले को (सहस्त्र = हजार, पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना) **॥ 4 ॥**

59. प्र वो यह्वम् पुरूणाम्, विशाम् देवयतीनाम्।
अग्निम् सूक्तेभिः वचोभिः वृणीमहे, यम् सम् इत् अन्य इन्धते ॥ 5 ॥ 1-36-1

मन्त्रार्थ - वो = तुम **पुरूणाम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी जनों के **विशाम् =** विशों के, प्रतिष्ठित, प्रवेशी जनो के **देवयतीनाम् =** देवयतियों के **यह्वम् =** महान् को **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **सूक्तेभिः =** सूक्त द्वारा **वचोभिः =** वचन द्वारा **प्र =** प्रकृष्ट, अधिक **वृणीमहे =** वरण करते हैं, **यम् =** जिसको **अन्य =** अन्य **सम् =** सम्यक् रूप से, भलीभाँति **इत् =** ही **इन्धते =** प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **यह्वम् =** महान् को (यह्व्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **पुरूणाम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **विशाम् =** विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना)। **देवयतीनाम् =** देवयत्न का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना,

आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यत -यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सूक्तेभिः =** सूक्त द्वारा (सु - अच्छा, सुन्दर, उक्-वच्-वद् - कहना, बोलना)। **वचोभिः =** वचन द्वारा (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **वृणीमहे =** वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **सम् =** सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **इत् =** ही (अव्यय)। **अन्य =** कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम)। **इन्धते =** प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) **॥ 5 ॥**

60. अयम् अग्निः सुवीर्यस्य, ईशे हि सौभगस्य।
रायः ईशे स्वपत्यस्य, गोमतः ईशे वृत्रहथानाम् ॥ 6 ॥ 3-16-1

मन्त्रार्थ - अयम् = यह **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **सुवीर्यस्य =** उत्तम वीरता का **हि =** ही, निश्चय **सौभगस्य =** सौभाग्य का **ईशे =** शासन करता है। **रायः =** गति, विद्या, वाणी **स्वपत्यस्य =** स्वपति **ईशे =** शासन करता है। **गोमतः =** गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले **वृत्रहथानाम् =** वृत्रहन्ताओं का **ईशे =** शासन करता है **॥ 6 ॥**

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुवीर्यस्य =** उत्तम वीरता का (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **ईशे =** अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **सौभगस्य =** सौभाग्य का (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् -भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। **राय =** गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **ईशे =** अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **स्वपत्यस्य =** स्वपति (सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम, स्व = अपना, अप् - पालन करना) पत् - ऐश्वर्य होना)। **गोमत =** गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **ईशे =** अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **वृत्रहथानाम् =** वृत्रहथा का (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना) **॥ 6 ॥**

61. त्वम् अग्ने गृहपतिः, त्वम् होता नो अध्वरे।
त्वम् पोता विश्ववार प्रचेता, यक्षि यासि च वार्यम् ॥ 7 ॥ 7-16-5

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **त्वम् =** तुम **गृहपतिः =** गृहपति (हो), **त्वम् =** तुम **नो =** हमारे लिए **अध्वरे =** अहिंसक में **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हो), **त्वम् =** तुम **पोता =** पवित्र करने वाले (हो), **विश्ववार =** हे सबके लिए वरणीय **प्रचेता =** प्रकृष्ट विचार वाले, **यक्षि =** पूजा करो, **च =** और **वार्यम् =** वार्य, वरणीयों को, वरण को **यासि =** प्राप्त होते हो, जाते हो, जानते हो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **गृहपतिः =** गृहपति (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत- श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अध्वरे =** अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **पोता =** पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **विश्ववार =** सबके लिए वरणीय (विश्व - सब, वृ - वरण करना)। **प्रचेता =** प्रकृष्ट विचार वाले (चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **यक्षि =** पूजा करो (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। **यासि =** प्राप्त होते हो, जाते हो, जानते

हो (यस् - प्रयास करना, या - जाना, जानना, पाना)। **च =** और। **वार्यम् =** वार्य, वरणीयों को, वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)।।

62. सखायः त्वा ववृमहे, देवम् मर्त्तासः ऊतये।
अपाम् नपातम् सुभगम्, सुदंससम् सुप्रतूर्त्तिम् अनेहसम्॥ 8॥ 3-9-1

मन्त्रार्थ - सखायः = मित्र **मर्त्तासः =** मरणशील **त्वा =** तुमको **ऊतये =** रक्षा के लिए **देवम् =** देव को, **अपाम् =** अपा को, रक्षण, पालन को **नपातम् =** नहीं गिराने वाले को, **सुभगम् =** अच्छी सेवा, भजन को, **सुदंससम् =** देखने, बोलने को **सुप्रतूर्त्तिम् =** अच्छी तीव्रगति को, **अनेहसम् =** इच्छा-चेष्टा-हीन, प्रयत्न न करने वाले को **ववृमहे =** वरण करते हैं॥ 8॥

पदार्थ - सखायः = मित्र (सख् = मित्र होना)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **ववृमहे =** वरण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **देवम् =** देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मर्त्तास =** मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **अपाम् =** अपा को, रक्षण, पालन को (अप = रक्षा करना, पालन करना)। **नपातम् =** नहीं गिराने वाले को (न - नहीं, पत् = गिरना, पतन होना, उड़ना, ऐश्वर्य होना)। **सुभगम् =** अच्छी सेवा, भजन को (सु - सुन्दर, अच्छा, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **सुदंससम् =** डसने, देखने, बोलने को (सु - सुन्दर, अच्छा, दंस् - डसना, काटना, देखना, शब्द करना)। **सुप्रतूर्त्तिम् =** अच्छी तीव्रगति को (सु - सुन्दर, अच्छा, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना, तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना)। **अनेहसम् =** इच्छा-चेष्टा-हीन, प्रयत्न न करने वाला (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, ईह - चेष्टा, इच्छा, प्रयत्न करना)॥ 8॥

(7) सूक्त 7

63. आ जुहोता हविषा मर्जयध्वम्, नि होतारम् गृहपतिम् दधिध्वम्।
इडः पदे नमसा रातहव्यम्, सपर्यता यजतम् पस्त्यानाम्॥ 1॥ 6-3-133

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **जुहोता =** दान करो, आदान-प्रदान करो **हविषा =** हविष द्वारा, दान द्वारा, आदान-प्रदान द्वारा **मर्जयध्वम्** = शुद्ध करो, **नि =** निश्चित, निरन्तर **होतारम् =** हवन करने वाले को **गृहपतिम् =** गृहपति को **दधिध्वम् =** धारण करो। **इडः =** स्तुति के **पदे =** पद में **नमसा =** नमन द्वारा **रातहव्यम् =** प्रदत्त दान को, **पस्त्यानाम् =** धारणीयों के **यजतम् =** यजनकर्ता को **सपर्यता =** पूजो॥ 1॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **जुहोता =** दान करो, आदान-प्रदान करो (हु-जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, ग्रहण करना, तृप्त करना, आह्वान करना)। **हविषा =** हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मर्जयध्वम्** = शुद्ध करने को (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना। मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **होतारम् =** हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **गृहपतिम् =** गृहपति को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत- श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **दधिध्वम् =** धारण करने वाले को (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **इडः =** स्तुति करते हैं (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **पदे =** पद-पद में, प्रत्येक पद में, चलने में, विद्या में (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **नमसा =** नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **रातहव्यम् =** दिया गया हवि, दान किये हुआ हवि, दान किया हुआ देय, प्रदत्त दान को। (रा - देना, मिल जाना, हु = देना, आदान-

प्रदान करना)। **सपर्यता** = पूजो (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। **यजतम्** = यजनकर्ता को (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **पस्त्यानाम्** = गतियोग्य, गम्य, धारणीय, बन्धन, घर्षणों का (पष-पंस = नष्ट करना, जाना, बांधना, फांस लगाना, धारण करना, घर्षण करना) ॥ 1 ॥

64. चित्र इत् शिशोः तरुणस्य वक्षथो, न यो मातरौ अनु एति धातवे।
अनूधा यत् अजीजनत् अधा चित् आ, ववक्षत् सद्यो महि दूत्यम् अचरन् ॥ 2 ॥ 10-115-1

मन्त्रार्थ - **शिशोः** = शिशु का **तरुणस्य** = तरुण का, पार कराने वाले का **वक्षयो** = पालन-रक्षण करने वाले **चित्र** = विचित्र, आश्चर्यजनक **इत्** = ही (है), **यो** = जो **मातरौ** = दोनो माताओं को **धातवे** = धारण करने के लिए **न** = नहीं **अन्वेति** = अनुगमन करता है। **यत्** = जो **अनूधा** = अनुधारक **अजीजनत्** = उत्पन्न हुआ, **अधा** = अथ, इसके अनन्तर **चित्** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ववक्षत्** = पालन-रक्षण किया। **सद्यो** = शीघ्र, तत्काल **महि** = महत्, पूज्य **दूत्यम्** = प्रगति, परिश्रम **अचरन्** = आचरण किया ॥ 2 ॥

पदार्थ - **चित्र** = चित्र (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **शिशोः** = शिशो (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **तरुणस्य** = तरुण का, पार कराने वाले का (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वक्षयो** = वक्ष (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **न** = नहीं (अव्यय)। **यो** = जो। **मातरौ** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अन्वेति** = अनुगमन करती है (अनु = पश्चात्, पीछे, या - जाना, जानना, पाना)। **धातवे** = धारण करने के लिए (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अनूधा** = अनूध (अनु = पश्चात्, पीछे, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अजीजनत्** = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **अधा** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **चित्** = भी, ही। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ववक्षत्** = ववक्ष (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **सद्यो** = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य (सद् - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **दूत्यम्** = गतिशीलता, विद्वता, परिश्रम (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **अचरन्** = आचरण, अचर (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, चर् = जाना, खाना, आचरण करना) ॥ 2 ॥

65. इदम् ते एकम् पर ऊ ते एकम्, तृतीयेन ज्योतिषा सम् विशस्व।
संवेशनः तन्वे चारुः एधि, प्रियो देवानाम् परमे जनित्रे ॥ 3 ॥ 10-56-1

मन्त्रार्थ - **इदम्** = यह **ते** = तुम्हारा **एकम्** = एक (है) **ते** = तुम्हारा **एकम्** = एक **पर** = अन्य **ऊ** = भी (है) **तृतीयेन** = तृतीय द्वारा **ज्योतिषा** = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा **सम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति **विशस्व** = प्रवेश करो। **संवेशनः** = सम्यक् प्रवेशी **तन्वे** = विस्तार के लिए **चारुः** = चारु, उत्तम, **प्रियो** = प्रिय, **देवानाम्** = देवों का **परमे** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में **जनित्रे** = जनित्र में, सृजनकर्ता में **एधि** = जाता है, प्राप्त होता है ॥ 3 ॥

पदार्थ - **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **एकम्** = एक (एक = एक, एक - विचार करना)। **पर** = अन्य (सर्वनाम)। **ऊ** = निश्चय ही, भी। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **एकम्** = एक (एक = एक, एक - विचार करना)। **तृतीयेन** = तृतीय में, तीसरे में (संख्या, सर्वनाम)। **ज्योतिषा** = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत् - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **विशस्व** = विश का, प्रवेश का (विश् - घुसना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। **संवेशनः** = सम्यक् प्रवेश, विस्तार करने वाला (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, विश् - प्रवेश करना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। **तन्वे** = तन्व में, विस्तार के लिए (तन्

= विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, बढ़ाना, विश्वास करना, आश्रय देना)। **चारुः =** चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **एधि =** जाता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, एध - बढ़ना)। **प्रियो =** प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **देवानाम् =** देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **परमे =** परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में (सर्वनाम)। **जनित्रे =** उत्पादक के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **॥ 3 ॥**

66. इमम् स्तोमम् अर्हते जातवेदसे, रथम् इव सम् महेमा मनीषया।
भद्रा हि नः प्रमतिः अस्य संसदि, अग्ने सख्ये मा रिषाम वयम् तव ॥ 4 ॥ 1-14-1

मन्त्रार्थ - **इमम् =** इसको **स्तोमम् =** स्तोम को **मनीषया =** मनीषी द्वारा, विचारशील द्वारा **अर्हते =** पूज्य, योग्य के लिए **जातवेदसे =** जातवेद के लिए, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले के लिए **रथम् =** रथ **इव =** के समान **सम् =** सम्यक् रूप से, भलीभाँति **महेमा =** महिमावान् करते हैं। **अग्ने =** हे अग्नि, **भद्रा =** कल्याणकारी **हि =** ही **नः =** हमारा **प्रमतिः =** प्रकृष्ट मति **अस्य =** इसका **सख्ये =** मित्रता में **संसदि =** संसद् में **मा =** नहीं, मत **रिषाम =** हिंसा करें। **वयम् =** हम **तव =** तुम्हारे **(हैं) ॥ 4 ॥**

पदार्थ - **इमम् =** इसको (सर्वनाम)। **स्तोमम् =** स्तोम को (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अर्हते =** पूज्य, योग्य के लिए (अर्ह् = पूजा करना, पूज्य होना, योग्य होना)। **जातवेदसे =** जातवेद के लिए, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा- ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **रथम् =** रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सम् =** सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **महेमा =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **मनीषया =** मनीषी द्वारा, विचारशील द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **भद्रा =** कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **प्रमतिः =** प्रमद के लिए, प्रकृष्ट आनन्द के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **संसदि =** संसद (सम्-संस् = सम्यक्, भलीभांति, सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सख्ये =** मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **रिषाम =** हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **वयम् =** हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **तव =** तुम्हारा (सर्वनाम) **॥**

67. मूर्धानम् दिवो अरतिम् पृथिव्या, वैश्वानरम् ऋते आ जातम् अग्निम्।
कविम् सम्राजम् अतिथिम् जनानाम्, आसन् नः पात्रम् जनयन्त देवाः ॥ 5 ॥ 6-7-1

मन्त्रार्थ :- दिवो - तेजस्वी, **पृथिव्या** - पृथिवी वाले **देवाः** - देवों ने **मूर्द्धानम्** - उच्च, **अरतिम्** - गतिशील, ज्ञानी, रति अर्थात् रमण से हीन, **वैश्वानरम्** - विश्वनायक, सभी नर अर्थात् ले जाने वाले **ऋते** - ऋत में, **आ** - समन्तात् **जातम्** - उत्पन्न, **कविम्** - कवि, **सम्राजम्** - सम्यक् प्रकाशमान, **जनानाम्** - लोगों के **अतिथिम्** - अतिथि, **आसन्** - विद्यमान, **पात्रम्** - पात्र, रक्षक **अग्निम्** - अग्नि को, **नः =** हमारे लिए **जनयन्त** - उत्पन्न किया **॥ 5 ॥**

भावार्थ :- परमात्मा ने ऋत के अन्तर्गत समस्त सृष्टि को उत्पन्न किया है। ऋत अर्थात् सार्वभौम सृष्टि नियमों का बोध करते हुए उनका पालन कर हम परमात्मा की व्यवस्था का लाभ पा सकते हैं।

विशेष :- विद्वानों ने पृथिव्या शब्द का अर्थ अन्तरिक्ष अथवा आकाश भी किया है। पृथ धातु का अर्थ विस्तार होना, फैलना होता है। इसी अर्थ में यह धरती भी पृथ्वी कही जाती है तथा आकाश भी अति विस्तृत होने के कारण पृथिवी कहा जा सकता है। मन्त्र का उपयुक्त अर्थ निष्पन्न हो सके तो इस प्रकार धातुज अर्थ वेद में सर्वत्र स्वीकार्य है।

पदार्थ : - **मूर्द्धानम्** - उच्च (मूर्द्ध = उच्च होना)। **दिवः =** तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना आदि)। **अरतिम्** - गतिशील, ज्ञानी, रति अर्थात् रमण से हीन (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, अ - नहीं, रम् - रमना, रमण करना, रति होना)। **पृथिव्याः =** पृथ्वी का (पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **वैश्वानरम् =** विश्वनायक को, विश्वजन को, वैश्वानर को (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। **ऋते =** ऋत में, विना। **आ =** समन्तात्, सम्पूर्णतः (उपसर्ग)। **जातम् =** उत्पन्न (जन् - उत्पन्न करना)। **अग्निम् =** अग्नि को। **कविम् –** कवि को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **सम्राजम्** - सम्यक् प्रकाशमान को (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति, राज् - चमकना, प्रकाशित होना। **अतिथिम् =** सतत् गतिशील (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना)। **जनानाम्** - लोगों का (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **आसन्** - विद्यमान, थे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवन होना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पात्रम्** - पात्र को (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **जनयन्त** - उत्पन्न किया (जन् = उत्पन्न करना)। **देवाः =** विद्वान्, तेजस्वी (दिव्, देव् = चमकना, तेजस्वी होना, विद्वान् होना) **॥ 5 ॥**

68. वि त्वत् आपो न पर्वतस्य पृष्ठात्, उक्थेभिः अग्ने जनयन्त देवाः।
तम् त्वा गिरः सुष्टुतयो वाजयन्ति, आजिम् न गिर्ववाहो जिग्युः अश्वाः ॥ 6 ॥ 6-24-6

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **वि =** विशेष **त्वत् =** तुमसे **आपो =** आप, व्याप्त, व्यापक **न =** के समान **पर्वतस्य =** पर्वत, पर्वतों का **पृष्ठात् =** पृष्ठ से **उक्थेभिः =** वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा **जनयन्त =** उत्पन्न करते हैं। **देवाः =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **तम् =** उस **त्वा =** तुम्हारा **गिरः =** बोध, वाणियाँ, सिञ्चन को **सुष्टुतयो =** सुन्दर स्तुतियों को **वाजयन्ति =** गति, बल प्रदान करते हैं **आजिम् =** सम्यक् गति, ज्ञान, स्थापन को **न =** के समान **गिर्ववाहो =** गिर्ववाह, वाणी, बोध, सिञ्चन का वहन करने वाला **अश्वाः =** तीव्र गति युक्त, व्यापक **जिग्युः =** स्तुति करते हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **त्वत् =** तुमसे (सर्वनाम)। **आपो =** आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पर्वतस्य =** पर्वत, पर्वतों का (पर्व् - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **पृष्ठात् =** पृष्ठ से (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **उक्थेभिः =** वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जनयन्त =** उत्पन्न किया (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **देवाः =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गिरः =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **सुष्टुतयो =** सुन्दर स्तुति (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **वाजयन्ति =** वाजय, गति करते हैं (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आजिम् =** सम्यक् गति, ज्ञान, स्थापन को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गिर्ववाहो =** गिर्ववाह, वाणी, बोध, सिञ्चन का वहन करने वाला (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **जिग्युः =** स्तुति करते हो (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अश्वाः =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना) **॥ 6 ॥**

69. आ वो राजानम् अध्वरस्य रुद्रम्, होतारम् सत्ययजम् रोदस्योः।
अग्निम् पुरा तनयित्नोः अचित्तात्, हिरण्यरूपम् अवसे कृणुध्वम्॥ 7॥ 4-3-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वो** = तुम लोग **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का **राजानम्** = राजा **रुद्रम्** = रुद्र, करुणाशील **होतारम्** = हवन करने वाले **सत्ययजम्** = सत्य यजनकर्ता को **रोदस्योः** = रोदसी के, रुद्र, करुणाशील के **हिरण्यरूपम्** = हिरण्यरूप **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **पुरा** = पहले **तनयित्नोः** = विस्तार करने वालों के **अचित्तात्** = अचित्त से **अवसे** = रक्षा के लिए **कृणुध्वम्** = करो॥ 7॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **रुद्रम्** = रुद्र को, करुणाशील को (रुद् - रोना, रोते-रोते कहना)। **होतारम्** = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सत्ययजम्** = सत्य यज को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **रोदस्योः** = रोदसी के (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **तनयित्नोः** = विस्तार करने वालों का (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **अचित्तात्** = अचित्त को (अच् - मरना, जाना, चलना, आदर करना, मांगना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, चि - चेतन होना, सम्यक् जानना, चिन्तन करना, विचार करना, सन्देह करना, स्मरण करना)। **हिरण्यरूपम्** = हिरण्यरूप को (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रुपाकृति लाना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना)॥ 7॥

70. इन्धे राजा सम् अर्यो नमोभिः, यस्य प्रतीकम् आहुतम् घृतेन।
नरो हव्येभिः ईडते सबाधः, आ अग्निः अग्रम् उषसाम् अशोचि॥ 8॥ 7-8-1

मन्त्रार्थ - **राजा** = राजा **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अर्यो** = अर्य, ज्ञानी **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा **इन्धे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें, **यस्य** = जिसका **प्रतीकम्** = प्रतीक **घृतेन** = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा **आहुतम्** = आदान-प्रदान किया हुआ, आह्वान किये हुए, व्याप्त (है)। **सबाधः** = सबाध, बाधा सहित **नरो** = नर **हव्येभिः** = दान द्वारा **ईडते** = स्तुति करता है। **अग्निः** = अग्नि ने, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् ने **अग्रम्** = अग्र, आगे **उषसाम्** = उषाओं को, प्रभात को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **अशोचि** = पवित्र किया॥ 8॥

पदार्थ - **इन्धे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्यो** = अर्य, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **प्रतीकम्** = प्रतीक को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तिक्-तीक् - जाना)। **आहुतम्** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **घृतेन** = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र

होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **हव्येभिः** = दान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ईडते** = स्तुति के लिए (ईड् = स्तुति करना)। **सबाध** = सबाध (स - सहित, साथ, बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अग्रम्** = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उषसाम्** = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अशोचि** = पवित्र किया (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 8 ॥

71. प्र केतुना बृहता याति अग्निः, आ रोदसी वृषभो रोरवीति।
दिवः चित् अन्तात् उपमाम् उदानट्, अपाम् उपस्थे महिषो ववर्ध ॥ 9 ॥ 10-8-1

मन्त्रार्थ - **बृहता** = बढ़ाने वाला **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **केतुना** = केतु द्वारा, ज्ञान, निवास, परामर्श द्वारा **प्र याति** = प्रकृष्ट जाता है, प्राप्त होता है। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **रोदसी** = प्रकाशमान, वाणी-गति युक्त, करुणाशील, रोने वाला, रुलाने वाला **वृषभो** = पराक्रमी **रोरवीति** = शब्द करता है, प्रकाश करता है, गति करता है। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **चित्** = ही **अन्तात्** = अन्त तक, अन्त से, भीतर से **उपमाम्** = उपमा को **उदानट्** = उत्थान किया। **अपाम्** = पालकों के **उपस्थे** = उपस्थ में, निकट **महिषो** = महिष, महान् **ववर्ध** = बढ़ा ॥ 9 ॥

पदार्थ -**प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **केतुना** = केतु द्वारा, ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता द्वारा (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **बृहता** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **याति** = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **रोरवीति** = शब्द करता है, प्रकाश करता है, गति करता है (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना, रव् - जाना, जानना, पाना, प्रकाश करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **चित्** = भी, ही। **अन्तात्** = अन्त तक, अन्तः, भीतर से, अन्त से (अन्तः = बीच में, अन्त् - अन्त होना, समाप्त होना, बाँधना, पाना, हिंसा करना)। **उपमाम्** = उपमा को (उप-सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **उदानट्** = उदान हुआ, उच्च हुआ (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। उद्-उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, अन् = प्राण होना, जीवन होना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **उपस्थे** = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित (उप = समीप, स्थ = स्थित)। **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **ववर्ध** = बढ़ना (वृध - बढ़ना, अधिक होना)॥ 9 ॥

72. अग्निम् नरो दीधितिभिः अरण्योः, हस्तच्युतम् जनयत प्रशस्तम्।
दूरेदृशम् गृहपतिम् अथव्युम् ॥ 10 ॥ 7-1-1

मन्त्रार्थ - **अरण्योः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त **नरो** = नर **दीधितिभिः** = बुद्धि द्वारा **हस्तच्युतम्** = हस्तच्युत को **प्रशस्तम्** = प्रशस्त **दूरेदृशम्** = दूरदृष्टियुक्त **अथव्युम्** = अविचल **गृहपतिम्** = गृहपति को **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **जनयत** = उत्पन्न करता है ॥ 10 ।

पदार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **दीधितिभिः** = दीधिति, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **अरण्योः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना)। **हस्तच्युतम्** = हस्तच्युत को (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना, च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **जनयत** = उत्पन्न करता है (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **प्रशस्तम्** = प्रशस्त (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **दूरेदृशम्** = दूरेदृश को, दूर के दृश को(दूरे = दूर (अव्यय), दृश्-पश्य -देखना)। **गृहपतिम्** = गृहपति को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत- श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **अथव्युम्** = अविचल को (अ = न हीं, थर्व - जाना, अस्थिर होना, हिंसा करना) **॥ 10 ॥**

(8) सूक्त 8

73. अबोधि अग्निः समिधा जनानाम्, प्रति धेनुम् इव आयतीम् उषासम्।
यह्वा इव प्र वयाम् उज्जिहानाः, प्र भानवः सस्रते नाकम् अच्छ ॥ 1 ॥ 5-1-1

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का **समिधा** = सम्यक् प्रकाश द्वारा **धेनुम्** = प्रिय, पालन करने वाले **इव** = के समान **आयतीम्** = आयती को, शब्दकर्ता को **उषासम्** = उषा **प्रति** = के प्रति, सम्बन्ध में **अबोधि** = बोध कराया। **यह्वा** = महान् **इव** = के समान **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **वयाम्** = रचना को **उज्जिहानाः** = ऊपर ले जाने वाले, उत्कृष्ट गति देने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, अधिक **भानवः** = प्रकाशमान **अच्छ** = अच्छा, निर्मल **नाकम्** = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल को **सिस्रते** = प्राप्त करते हैं **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **अबोधि** = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **समिधा** = सम्यक् प्रकाशित (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **धेनुमिव** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले के समान (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **आयतीम्** = आयती को, शब्दकर्ता को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, ई - जाना, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **उषासम्** = उषा (उषस् = प्रभात होना)। **यह्वा** = महान् (यह्व्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वयाम्** = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उज्जिहानाः** = उत्कृष्ट गति, ज्ञान वाले (उत् - ऊपर, जिह् = चलना, जाना, जानना, पाना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **भानवः** = प्रकाशमान (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **सिस्रते** = सिस्रत, प्राप्त करते हैं (सि = बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना। सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **नाकम्** = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क -नाश होना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना) **॥ 1 ॥**

74. प्र भूः जयन्तम् महाम् विपोधाम्, मूरैः अमूरम् पुराम् दर्माणम्।
नयन्तम् गीर्भिः वना धियम् धा, हरिश्मश्रुम् न वर्मणा धनर्चिम् ॥ 2 ॥ 10-46-5

मन्त्रार्थ - **जयन्तम्** = जीतने वाले **महाम्** = महान् को **विपोधाम्** = रक्षकों को धारण करने वाले को **मूरैः** = मूरों

द्वारा **अमूरम्** = अमूर को, सेवाभावी विद्वान् **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को **दर्माणम्** = आदर करने वाले को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **भूः** = हो गया, हुआ। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **नयन्तम्** = ले जानें वाले को, **वना** = वन द्वारा **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को **हरिश्मश्रुम्** = हरिश्मश्रु को **न** = के समान **वर्मणा** = वर्म द्वारा **धनर्चिम्** = धनर्चि को **धा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **भूः** = भू, होना, भुवन, अस्तित्व, हो गया, हुआ (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जयन्तम्** = जीतने वाले (जि - सब से बढ़ कर होना, जीतना)। **महाम्** = महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **विपोधाम्** = रक्षकों को धारण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **मूरैः** = मूरों द्वारा (मुर् - घेरना, लपेटना)। **अमूरम्** = सेवाभावी विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना, मुर् = घेरना, लपेटना)। **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **दर्माणम्** = दर्माण को, आदर करने को (दृ - आदर करना, हिंसा करना)। **नयन्तम्** = ले जानें को (नी-नय - ले जाना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **वना** = वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **धा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो (धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **हरिश्मश्रुम्** = हरिश्मश्रु को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, शी-शय् - शयन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वर्मणा** = वर्मण (वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **धनर्चिम्** = धनर्चि को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) **॥ 2 ॥**

75. शुक्रम् ते अन्यद् यजतम् ते अन्यद्, विषुरूपे अहनी द्यौः इव असि।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावन्, भद्रा ते पूषन् इह रातिः अस्तु ॥ 3 ॥ 6-58-1

मन्त्रार्थ - **पूषन्** = हे पूषा, पोषणकर्ता **ते** = तुम्हारा **शुक्रम्** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी रूप **अन्यद्** = अन्यतम (है), **ते** = तुम्हारा **यजतम्** = यजन **अन्यद्** = अन्यतम (है)। **विषुरूपे** = व्यापक रूप में **अहनी** = व्याप्त, अहिंसक **द्यौः** = प्रकाशवान्, अग्रगामी **इव** = के समान **असि** = हो। **विश्वा** = सभी **हि** = ही **माया** = माया, मान्य, निर्माणयोग्य **स्वधावन्** = स्वधा युक्त **अवसि** = रक्षा करते हो। **ते** = तुम्हारा **इह** = यहाँ **भद्रा** = कल्याणकारी **रातिः** = अनुदान **अस्तु** = हो **॥ 3 ॥**

पदार्थ -**शुक्रम्** = शुक्र को, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी को (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अन्यद्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **यजतम्** = यजन को (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अन्यद्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **विषुरूपे** = व्यापक रूप (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, सिंचन करना, व्याप्त होना, आवरण होना। रूप - आकार बनाना, रचना करना, मन में रुपाकृति लाना)। **अहनी** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना,

समीप जाना, प्रकाश होना, जानना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **माया** = माया (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अवसि** = रक्षा करते हो (अव् = रक्षा करना)। **स्वधावन्** = स्वधा युक्त (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। **भद्रा** = कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पूषन्** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **रातिः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 3 ॥

76. इडाम् अग्ने पुरुदंसम् सनिम् गोः, शश्वत्तमम् हवमानाय साध।
स्यात् नः सूनुः तनयो विजावा, अग्ने सा ते सुमतिः भूतु अस्मे ॥ 4 ॥ 3-6-11

मन्त्रार्थ- अग्ने = हे अग्नि, **इडाम्** = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को **पुरुदंसम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी, देखने वाले, बोलने वाले **सनिम्** = दानी **गोः** = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत **हवमानाय** = दानी के लिए, आह्वानकर्ता, आदान-प्रदान करने वाले, तृप्त करने वाले के लिए **साध** = साधना करें। **अग्ने** = हे अग्नि, **नः** = हमारा **सूनुः** = सन्तान **तनयो** = विस्तार, तनय **विजावा** = विशेष रूप से तीव्रगामी **स्यात्** = हो। **ते** = तुम्हारे लिए **अस्मै** = हमारी **सा** = वह **सुमतिः** = सुमति, सुबुद्धि **भूतु** = उत्पन्न हों ॥ 4 ॥

पदार्थ - इडाम् = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुदंसम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी, डसने वालों द्वारा, काटने वालों द्वारा, देखने वालों द्वारा, बोलने वालों द्वारा (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, दंस् - डसना, काटना, देखना, शब्द करना)। **सनिम्** = दानी (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **गोः** = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **हवमानाय** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **साध** = साधु के लिए (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **स्यात्** = हो (अस् = होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सूनुः** = सन्तान (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **तनयो** = विस्तार, तनय को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **विजावा** = विशेष रूप से प्रकाशित कर (वि - विशेष, जु - जाना, तीव्र जाना, क्षिप्र जाना, दौड़ना, भागना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सा** = वह (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुमतिः** = सुमति, सुबुद्धि (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **भूतु** = उत्पन्न हों (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अस्मै** = इसके लिए, हमको, इस (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

77. प्र होता जातो महान् नभोवित्, नृषद्मा सीदत् अपाम् विवर्ते।
दधत् यो धायि सुते वयांसि, यन्ता वसूनि विधते तनूपाः ॥ 5 ॥ 10-46-1

मन्त्रार्थ - होता = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **जातो** = उत्पन्न हुआ **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् **नभोवित्** = नभज्ञाता **नृषद्मा** = नरो में स्थित **अपाम्** = अपा को, पालकों का **विवर्ते** = विवर्त में, विशेष वर्ताव में

सीदत् = संचरण करें, प्रतिष्ठित हों। **यो** = जो **धायि** = धारण कर्ता **यन्ता** = यन्ता, संयमन करने वाला **सुते** = ऐश्वर्य में, उत्पन्न हुए में **वयांसि** = वयों को, रचनाशील को, **वसूनि** = वसुओं को **दधत्** = धारण करते हुए **तनूपाः** = विस्तार, वृद्धि के रक्षक, पालनकर्ता **विधते** = विधान करता है, विशेष धारण करता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **जातो** = उत्पन्न हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **नभोवित्** = नभ (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **नृषद्मा** = नृषद् में (नृ - ले जाना, सद्-सीद-सद्लृ - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना, बैठना, चढ़ाई करना, सूखना)। **सीदत्** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **विवर्ते** = विवर्तन के लिए, विशेष वर्ताव के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **दधत्** = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **यो** = जो। **धायि** = धारण किया गया है (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **वयांसि** = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **यन्ता** = यन्ता, संयमन करने वाले (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **विधते** = विधान के लिए (वि - विशेष, धा - धारण करना)। **तनूपाः** = विस्तार, वृद्धि के रक्षक, पालनकर्ता (तन् = विस्तार करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना, पा = पालन करना, रक्षा करना)। **॥ 5 ॥**

78. प्र सम्राजम् असुरस्य प्रशस्तम्, पुंसः कृष्टीनाम् अनुमाद्यस्य।
इन्द्रस्य इव प्र तवसः कृतानि, वन्दत् वारा वन्दमाना विवष्टु॥ 6 ॥ 7-6-1

मन्त्रार्थ - **असुरस्य** = असुर का, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले का, प्रकाश देने वाले का **प्रशस्तम्** = प्रशस्त को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान को **कृष्टीनाम्** = कृष्टियों का, कृषकों का, **अनुमाद्यस्य** = आनन्दित का **पुंसः** = बढ़ाने वाला, अभिवर्धन करने वाला, **इन्द्रस्य** = इन्द्र के, परम ऐश्वर्यशाली के **इव** = समान, **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **तवसः** = गति, वृद्धि **कृतानि** = कृतों को **वन्दत्** = वन्दना करते हुए **वारा** = वरणीय, प्रिय **वन्दमाना** = वन्दमान, वन्दना करते हुए **विवष्टु** = वास करे, धारण करे, इच्छा करे **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। **असुरस्य** = असुर का, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले का, प्रकाश देने वाले का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **प्रशस्तम्** = प्रशस्त को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **पुंसः** = बढ़ाना, अभिवर्धन (पुंस = बढ़ना, बढ़ाना)। **कृष्टीनाम्** = कृष्टी का, कृष का, कर्षण का (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अनुमाद्यस्य** = आनन्दित करते हैं (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान

(अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **तवसः** = तवस् द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा द्वारा (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **कृतानि** = किया (कृ = करना)। **वन्दत्** = वन्दना करता है (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **वारा** = वरणीय, प्रिय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वन्दमाना** = वन्दमान (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **विवष्टु** = वास करे, धारण करे, इच्छा करे (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना) ॥ 6 ॥

79. अरण्योः निहितो जातवेदा, गर्भ इव इत् सुभृतो गर्भिणीभिः।
दिवेदिवे ईड्यो जागृवद्भिः, हविष्मद्भिः मनुष्येभिः अग्निः ॥ 7 ॥ 30-29-2

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, अग्रणी **अरण्योः** = अरण्य, प्रगतिशील, विद्वान्, **निहितो** = निहित, निरन्तर हितकारी **जातवेदा** = वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले, **गर्भिणीभिः** = गर्भिणी द्वारा **गर्भ** = गर्भ **इव** = के समान **इत्** = ही **सुभृतो** = सुभृत, अच्छी तरह भरण-धारण किया हुआ **जागृवद्भिः** = जागृवद् **हविष्मद्भिः** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्तियुक्त **मनुष्येभिः** = मनुष्यों द्वारा, विचारशीलों द्वारा **दिवेदिवे** = प्रतिदिन **ईड्यो** = स्तुत्य (है) ॥ 7 ॥

पदार्थ - **अरण्योः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त का (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना)। **निहितो** = निहित, स्थित (नि - निरन्तर, निश्चित, हि - जाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **जातवेदा** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **गर्भ** = गर्भ (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सुभृतो** = सुभृत, अच्छी तरह धारण करना (सु = अच्छा, भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **गर्भिणीभिः** = गर्भ में (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **दिवेदिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **ईड्यो** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **जागृवद्भिः** = जागृवद् द्वारा (जागृ - जगना, नींद न लेना, वद् = कहना, बोलना)। **हविष्मद्भिः** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मनुष्येभिः** = मनुष्यों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 7 ॥

80. सनात् अग्ने मृणासि यातुधानान्, न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः।
अनु दह सहमूरान् कयादो, मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ॥ 8 ॥ 10-89-19

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि **सनात्** = सदा से, सेवा से **यातुधानान्** = यातुधानों को, प्रयत्नों को धारण करने वालों को, यातना को धारण करने वालों को **मृणासि** = सुखी करते हो, मारते हो, **जिग्युः** = स्तुतिकर्ता **रक्षांसि** = रक्षक **पृतनासु** = व्यापकों में, जीवनों में **त्वा** = तुमको **न** = नहीं। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **दह** = जलाओ **सहमूरान्** = मूर सहित **कयादो** = कयाद **मा** = नहीं, मत **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **हेत्या** = हेति द्वारा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा द्वारा **मुक्षत** = एकत्र करें, छुड़ायें **दैव्यायाः** = दिव्य के लिए ॥ 8 ॥

भावार्थ :- मन्त्र में कहा गया है कि यातुधानों को अर्थात् प्रयत्नों को धारण करने वालों को, अथवा यातना को धारण करने वालों को सुखी करते हो, या मारते हो। यातुधान शब्द के दो अर्थ हैं। प्रयत्नों को धारण करने वालों को सुखी करना है, तथा यातना को धारण करने वालों को मारना भी उचित हो सकता है।

पदार्थ - **सनात्** = सदा से, सनातन से, सेवा से (**सनात्** = सदा से, सनातन से (अव्यय)। सन् - दान करना,

सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मृणासि =** सुख करो, मार दो (मृड - सुखी होना, सुख देना, मृण् - हिंसा करना, मारना, छिद्र करना)। **यातुधानान् =** यातुधानों को (यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना, धा = धारण करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रक्षांसि =** रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **पृतनासु =** व्यापकों में, जीवन में (पृत -व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना)। **जिग्युः =** स्तुति करते हो (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अनु =** पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **दह =** जलाओ (दह् - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना)। **सहमूरान =** मूर सहित (सह = साथ, सहित, सर्वनाम, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, मुर् - घेरना, लपेटना)। **कयादो** = कयाद (कि – जानना समझना। **अद्** - खाना, नष्ट करना। दा - = देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **हेत्या =** हेति के लिए, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा के लिए (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **मुक्षत =** एकत्र करें, छुड़ायें (मुक्ष = राशि करना, सञ्चित करना, एकत्र करना, छूटना)। **दैव्यायाः =** दिव्य के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) **॥ 8 ॥**

(9) सूक्त 9

81. अग्ने ओजिष्ठम् आ भर, द्युम्नम् अस्मभ्यम् अधिगो।
प्र नो राये पनीयसे, रत्सि वाजाय पन्थाम् ॥ 1 ॥ 5-10-1

मन्त्रार्थ - **अधिगो =** अ-धि-गति, अस्थिर गति, स्थिर न होने वाली गति, अरुद्ध गति युक्त **अग्ने =** हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, **ओजिष्ठम् =** अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को, **द्युम्नम् =** प्रकाशमान को, **अस्मभ्यम् =** हमारे लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **नो =** हमारे लिए **राये =** विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी के लिए **पनीयसे =** प्रशंसा, स्तुति करने के लिए **वाजाय =** वाज के लिए, विद्या-गति के लिए **पन्थाम् =** पथ को, मार्ग को **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **रत्सि =** विलेख करो, चिह्नित करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **अग्न =** हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **ओजिष्ठम् =** ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **द्युम्नम् =** प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अस्मभ्यम् =** हमारे लिए (सर्वनाम)। **अधिगो =** अ-धि-गति, अस्थिर गति, स्थिर न होने वाली गति, अरुद्ध गति (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **राये =** विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **पनीयसे =** प्रशंसा, स्तुति करने के लिए (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **रत्सि =** रत्स (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **वाजाय =** वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पन्थाम् =** पथ को, मार्ग को (पथ, पन्थ् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना) **॥ 1 ॥**

82. यदि वीरो अनु स्यात्, अग्निम् इन्धीत मर्त्यः।
आजुह्वत् हव्यम् आनुषक्, शर्म भक्षीत दैव्यम् ॥ 2 ॥ 5-2-6

मन्त्रार्थ - **यदि =** यदि **वीरो =** वीर **अनु =** पश्चात्, पीछे, अनुकूल **स्यात् =** हो, **मर्त्यः =** मरणशील (मनुष्य) **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **इन्धीत =** प्रकाशित करें। **आजुह्वत् =** दानी **हव्यम् =** आदान-प्रदान करने

योग्य को, हव्य को, देय को **आनुषक्** = निरन्तर, अविछिन्न **दैव्यम्** = दिव्य **शर्म** = सुख **भक्षीत** = भोग करो, सेवन करो, प्राप्त करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **यदि** = यदि (अव्यय)। **वीरो** = वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्यात्** = हो (अस् = होना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इन्धीत** = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **आजुह्वत्** = दानी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना, हु = देना, दान करना, आदान-प्रदान करना)। **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **आनुषक्** = निरन्तर, अविछिन्न (अव्यय)। **शर्म** = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म् = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। **भक्षीत** = भोग करो, सेवन करो, प्राप्त करो (भक्ष - खाना, ग्रहण करना)। **दैव्यम्** = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) **॥ 2 ॥**

83. त्वेषः ते धूम ऋण्वति, दिवि सम् शुक्रः आततः।
सूरो न हि द्युता त्वम्, कृपा पावक रोचसे ॥ 3 ॥ 6-2-6

मन्त्रार्थ - **ते** = तुम्हारा **त्वेषः** = प्रकाशवान् **धूम** = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **आततः** = विस्तृत, आश्रय, वाणी **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **सम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति **ऋण्वति** = जाता है। **सूरो** = सूर्य **न** = के समान **हि** = ही **द्युता** = प्रकाशमान **त्वम्** = तुम **कृपा** = कृपा करके **पावक** = पावक, पवित्र **रोचसे** = प्रकाशमान होते हो **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **त्वेषः** = प्रकाशवान् (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धूम** = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (धू -कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **ऋण्वति** = जाता है (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सन्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **आततः** = विस्तृत, आश्रय, वाणी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, शब्द करना, दुःख देना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **सूरो** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **द्युता** = प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **कृपा** = कृपा, दया (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **रोचसे** = प्रकाशमान होते हो (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना) **॥ 3 ॥**

84. त्वम् हि क्षैतवत् यशो, अग्ने मित्रो न पत्यसे।
त्वम् विचर्षणे श्रवो, वसो पुष्टिम् न पुष्यसि ॥ 4 ॥ 6-2-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वम्** = तुम **हि** = ही **क्षैतवत्** = क्षैतवान्, वासयुक्त **यशो** = यश, कीर्ति युक्त **मित्रो** = मित्र **न** = के समान **पत्यसे** = ऐश्वर्यवान् करते हो। **विचर्षणे** = हे विशेष विचार करने वाले, **श्रवो** = हे श्रुतिवान्, **वसो** = हे वसु, वासदाता, **त्वम्** = तुम **पुष्टिम्** = पुष्टि, पोषण **न** = के समान **पुष्यसि** = पुष्ट करते हो **॥ 4 ॥**

पदार्थ -**त्वम्** = तुम। **हि** = ही, निश्चय। **क्षैतवत्** = क्षैतवान्, वासयुक्त (क्षि - निवास करना, जाना, जानना, पाना)। **यशो** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्

(अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मित्रो =** मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पत्यसे =** ऐश्वर्यवान् के लिए (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **विचर्षणे** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **श्रवो =** श्रुति (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वसो** = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **पुष्टिम् =** पुष्टि को, पोषण को (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पुष्यसि** = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना) **॥ 4 ॥**

85. प्रातः अग्निः पुरुप्रियो, विशः स्तवेत अतिथिः।
विश्वे यस्मिन् अमर्त्ये, हव्यम् मर्त्तासः इन्धते॥ 5 ॥ 5-18-1

मन्त्रार्थ - प्रातः = प्रातः **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **पुरुप्रियो =** पुरुप्रिय, बहुप्रिय, **विशः =** निवेशक, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **अतिथिः =** अतिथि **स्तवेत =** स्तुति करे। **विश्वे =** सभी **मर्त्तासः =** मरणशील **यस्मिन् =** जिस **अमर्त्ये =** अमर्त्य में, अमरणशील (परमात्मा) में **हव्यम् =** आदान-प्रदान योग्य, देय को **इन्धते =** प्रकाशित करतें हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ - प्रातः = प्रातः (प्रा- पूर्ण करना, तृप्त करना)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुप्रियो =** पुरुप्रिय (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, प्री = प्रिय होना)। **विशः =** विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **स्तवेत =** स्तोता, प्रशंसक, स्तुत्य, प्रशंसनीय (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **अतिथिः =** अतिथि (अत् - सतत गमन करना)। **विश्वे =** सभी (सर्वनाम)। **यस्मिन् =** जिसमें (सर्वनाम)। **अमर्त्ये =** अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **हव्यम् =** आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मर्त्तास =** मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इन्धते =** प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करतें हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) **॥ 5 ॥**

86. यत् वाहिष्ठम् तत् अग्नये, बृहत् अर्च विभावसो।
महिषी इव त्वत् रयिः, त्वत् वाजा उत् ईरते॥ 6 ॥ 5-25-7

मन्त्रार्थ :- विभावसो = हे विशेष प्रकाशित वसु, **यत् =** जो **बृहत् =** महान्, बृहत् **वाहिष्ठम् =** अत्यन्त वहन करनें वाले **तत् =** उस **अग्नये =** अग्नि के लिए **अर्च =** पूजन करते हैं, **महिषी =** पूजित, सम्मानित **इव** - के समान **त्वत् =** तुमसे **रयिः =** विद्या, ज्ञान, **त्वत् =** तुमसे **वाजाः =** विद्या, गति, बल **उत् =** उत्कृष्ट **ईरते =** प्राप्त करता है **॥ 6 ॥**

भावार्थ :- अग्नि स्वरूप परमात्मा की अर्चना-उपासना करते हैं। वह हमें प्रेरणा करता है॥ 6॥

पदार्थ- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वाहिष्ठम् =** अत्यन्त वहन करनें वाले (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **अग्नये =** अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अर्च =** पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **विभावसो =** विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **महिषीव =** पूजित, सम्मानित (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **त्वत् =** तुमसे (सर्वनाम)। **रयिः =** विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-

रै - शब्द करना)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **वाजाः** = विद्या, गति, बल (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् - कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना) ॥ 6 ॥

87. विशोविशो वो अतिथिम्, वाजयन्तः पुरुप्रियम्।
अग्निम् वो दुर्यम् वचः, स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥ 7 ॥ 8-74-1

मन्त्रार्थ - **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान् **विशोविशो** = प्रतिष्ठित, प्रवेशी **वो** = तुम **अतिथिम्** = सतत गतिशील, अतिथि को **पुरुप्रियम्** = बहुप्रिय **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **वो** = तुम **दुर्यम्** = दुर्य, दूर **वचः** = वचन **शूषस्य** = उत्पन्न करने वाले के **मन्मभिः** = विचार द्वारा **स्तुषे** = स्तुति करते हो ॥ 7 ॥

पदार्थ - **विशोविशो** = प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अतिथिम्** = सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पुरुप्रियम्** = पुरुप्रिय को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, प्री = प्रिय होना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **दुर्यम्** = दुर्य को, दूर को (दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **स्तुषे** = स्तुत, स्तुह (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **शूषस्य** = उत्पन्न करने वाले हैं (शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना)। **मन्मभिः** = विचार द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 7 ॥

88. बृहद् वयो हि भानवे, अर्च आ देवाय अग्नये।
यम् मित्रम् न प्रशस्तये, मर्तासो दधिरे पुरः ॥ 8 ॥ 5-16-1

मन्त्रार्थ - **बृहद्** = महान्, बृहत् **वयो** = वय, रचना **हि** = ही **भानवे** = प्रकाशमान के लिए **देवाय** = देव के लिए **अग्नये** = अग्नि के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **अर्चः** = पूजा, सेवा, प्रकाश करो। **यम्** = जिसे **मित्रम्** = मित्र **न** = के समान **प्रशस्तये** = प्रशस्ति के लिए **पुरः** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी **मर्तासो** = मर्य, मरणशील **दधिरे** = धारण करते हैं ॥ 8 ॥

पदार्थ - **बृहद्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **वयो** = वय, रचना (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **भानवे** = प्रकाशमान के लिए (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **अर्चः** = पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **मित्रम्** = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्रशस्तये** = प्रशस्ति के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **मर्तासो** = मर्य, मरणशील (मृ - मरना, देहत्याग करना)। **दधिरे** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **पुरः** = पहले,

अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना) ॥ 8 ॥

89. अगन्म वृत्रहन्तमम्, ज्येष्ठम् अग्निम् आनवम्।
यः स्म श्रुतर्वन् आर्क्षे, बृहत् अनीकः इध्यते ॥ 9 ॥ 8-74-4

मन्त्रार्थ - **वृत्रहन्तमम्** = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़ा **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **आनवम्** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् को, सम्यक् स्तुति को, नवीन को **अगन्म** = गये, पाया, प्राप्त हुए। **यः** = जो **श्रुतर्वन्** = श्रुतर्वा, श्रुत **आर्क्षे** = प्रकाशकर्ता में **बृहत्** = महान्, बड़ा, बृहत् **अनीकः** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण **स्म** = है, (वह) **इध्यते** = प्रकाश करता है ॥ 9 ॥

पदार्थ - **अगन्म** = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **वृत्रहन्तमम्** = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृत् - हिंसा करना, वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हन् - हिंसा करना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़ा (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आनवम्** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, चेतन करना, प्राण होना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **स्म** = है (अस् - होना)। **श्रुतर्वन्** = श्रुतर्व को, श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **आर्क्षे** = ऋक्ष, हिंसक, प्रकाशकर्ता के लिए (ऋक्ष् - काटना, हिंसा करना, प्रकाश करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अनीक** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **इध्यते** = प्रकाश करता है (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) ॥ 9 ॥

90. जातः परेण धर्मणा, यत् सवृद्भिः सह अभुवः।
पिता यत् कश्यपस्य अग्निः, श्रद्धा माता मनुः कविः ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **परेण** = परम **धर्मणा** = धर्म द्वारा **सवृद्भिः** = सह वर्तमानों, सवृत्तों **सह** = के साथ **जातः** = उत्पन्न **अभुवः** = हुआ, **यत्** = जो **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **कश्यपस्य** = कश्यप का, शासक का, प्रकाशपालक का **पिता** = पिता, पालन करने वाला, **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण, **माता** = माता, **मनुः** = विचारशील, **कविः** = ज्ञानी, कवि (है) ॥ 10 ॥

पदार्थ -**जातः** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **परेण** = पर, परम द्वारा (पर = पराया, अन्य, दूसरा, परे, पश्चात्, बाद में (उपसर्ग)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **सवृद्भिः** = सह वर्तनी, सवृत् द्वारा (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **अभुवः** = हुआ (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **कश्यपस्य** = कश्यप का (कश् - प्रकाश होना, शासन करना, दण्ड देना, प्रकाश करना, गति करना, चलना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण (श्रत् = सत्य (उपसर्ग)। **माता** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मनुः** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता

करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 10 ॥

(10) सूक्त 10

91. सोमम् राजानम् वरुणम्, अग्निम् अनु आ रभामहे।
आदित्यम् विष्णुम् सूर्यम्, ब्रह्माणम् च बृहस्पतिम् ॥ 1 ॥ 10-141-3

मन्त्रार्थ - **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को, **राजानम्** = राजा को, **वरुणम्** = वरुण को, वरणीय को, **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को, **आदित्यम्** = आदित्य को, अक्षय-अविनाशी को, **विष्णुम्** = विष्णु को, व्यापक को, **सूर्यम्** = सूर्य को, सृष्टिकर्ता, ऐश्वर्यवान् को, **ब्रह्माणम्** = ब्रह्म को, बृहत् को **च** = और। **बृहस्पतिम्** = बृहस्पति को **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **रभामहे** = आनन्दित करते हैं, उपक्रम करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **वरुणम्** = वरुण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रभामहे** = आनन्दित करते हैं, उपक्रम करते हैं, (रभ - कार्य आरम्भ करना, आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। **आदित्यम्** = आदित्य को, अक्षय को (अ - नहीं, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **विष्णुम्** = विष्णु को (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **ब्रह्माणम्** = ब्रह्म को (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **च** = और। **बृहस्पतिम्** = बृहस्पति को (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

92. इतः एते उदारुहन्, दिवः पृष्ठानि आ रुहन्।
प्र भूः जयो यथा पथो, द्याम् अङ्गिरसो ययुः ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - **इतः** = यहां से **एते** = यह **उदारुहन्** = उच्च, चढ़े, बढ़ें। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पृष्ठानि** = पृष्ठों को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **रुहन्** = चढ़े, बढ़ें। **यथा** = जिस प्रकार **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **भूः** = भू, भुवन, अस्तित्व, **जयो** = विजय **पथो** = पथ **अङ्गिरसो** = विद्वान्, प्रगतिशील, ने **द्याम्** = द्यु को, विशिष्ट, प्रकाशमय को **ययुः** = प्राप्त किया ॥ 2 ॥

पदार्थ - **इतः** = यहां से। **एते** = यह (सर्वनाम)। **उदारुहन्** = उत्कृष्ट, उच्च, उदार चढ़े, बढ़ें को (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पृष्ठानि** = पृष्ठ (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रुहन्** = चढ़े, बढ़ें को (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **भूः** = भू, होना, भुवन, अस्तित्व, हो गया, हुआ (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जयो** = विजय (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पथो** = पथ (पथ, पन्थ् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे

बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **अङ्गिरसो** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **ययुः** = पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना) ॥ 2 ॥

93. राये अग्ने महे त्वा, दानाय समिधीमहि।
ईडिष्वा हि महे वृषन्, द्यावा होत्राय पृथिवी ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् **त्वा** = तुमको **दानाय** = दान के लिए **समिधीमहि** = सम्यक् प्रकाशित करते हैं। **महे** = हे महान्, पूज्य, **वृषन्** = हे शक्तिशाली, पराक्रमी, **द्यावा** = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत **होत्राय** = दान के लिए, दानकर्ता के लिए **हि** = ही **ईडिष्वा** = स्तुति करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ - **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **दानाय** = दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **समिधीमहि** = सम्यक् प्रकाशित होते हैं (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **ईडिष्वा** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **द्यावा** = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **होत्राय** = दानी, दानकर्ता के लिए (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)।।

94. दधन्वे वा यत् ईम् अनु, वोचद् ब्रह्म इति वेः उ तत्।
परि विश्वानि काव्या नेमिः, चक्रम् इव आभुवत् ॥ 4 ॥ 2-5-3

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **दधन्वे** = धारण करते हैं, **वा** = अथवा **ईम्** = इसके **अनु** = अनुसार, अनुकूल **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बृहत् **इति** = ऐसा **वोचद्** = बोलते हैं, **उ** = निश्चय ही, **तत्** = उस को **वेः** = बनाते हैं, जानते हैं। **विश्वानि** = सभी **काव्या** = काव्य, शब्दकर्ता, विद्वान्, उपदेशक **नेमिः** = ले जाने वाला, मार्गदर्शक **चक्रम्** = चक्र **इव** = के समान **परि** = सभी ओर **आभुवत्** = हो गया, हुआ ॥ 4 ॥

पदार्थ - **दधन्वे** = धारण करते हैं (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ईम्** = इसको **(सर्वनाम)**। **अनु** = पश्चात्, अनुसार, अनुकूल (उपसर्ग)। **वोचद्** = बोलें (वच् - बोलना, कहना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **वेः** = बनाते हो, जानते हो (वे = बुनना, वी = जानना, पाना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **काव्या** = काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **नेमिः** = ले जाने वाला, मार्गदर्शक (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **चक्रम्** = चक्र को (चकृ = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **अभुवत्** = हो गया, हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना,

कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 4 ॥

95. प्रति अग्ने हरसा हरः, शृणाहि विश्वतः परि।
यातुधानस्य रक्षसो, बलम् नि उब्ज वीर्यम् ॥ 5 ॥ 10-87-25

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **हरसा** = हर द्वारा **हरः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **परि** = सभी ओर **शृणाहि** = सुनों। **यातुधानस्य** = यातुधान का **रक्षसो** = रक्षक **बलम्** = बल को **नि** = निश्चित, निरन्तर **वीर्यम्** = पराक्रम, वीरता को **उब्ज** = सीधा, सरल, दमन करो ॥ 5 ॥

पदार्थ - **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **हरसा** = हर द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **हरः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **शृणाहि** = सुनों (शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना। पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यातुधानस्य** = यातुधान के लिए (या - जाना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना, धा = धारण करना)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **बलम्** = बल को (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **उब्ज** = सीधा, सरल, दमन (उब्ज = सीधी रीति से चलना, सीधी रीति से बर्ताव करना, दबाना, दमन करना)। **वीर्यम्** = पराक्रम, वीरता को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥

96. त्वम् अग्ने वसून् इह, रुद्रान् आदित्यान् उत।
यज आ स्वध्वरम् जनम्, मनुजातम् घृतप्रुषम् ॥ 6 ॥ 1-45-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वम्** = तुम **इह** = इसमें, यहाँ **वसून्** = वसुओं को, वसने वालों को, वसाने वालों को, **रुद्रान्** = रुद्रगणों को, रुदन् करने वालों को, रुलाने वालों को, **आदित्यान्** = आदित्यों को, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्नों को **उत** = ही **स्वध्वरम्** = उत्तम अहिंसक **जनम्** = जन को **मनुजातम्** = मनुजात को, विचारशीलता से उत्पन्न **घृत-प्रुषम्** = प्रकाशमान अभिसिञ्चन को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **यज** = यजन करो ॥ 6 ॥

पदार्थ -**त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वसून्** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **रुद्रान्** = रुद्रगण, करुणामय (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **आदित्यान्** = आदित्यों को, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न को (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **उत** = ही (अव्यय)। **यज** = यजन करो (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **स्वध्वरम्** = अच्छी अहिंसा, आत्महनन को (सु+अध्वर, स्व+ध्वर, स्व = निज, अपना, ध्वृ - टेढ़ा करना, नवाना, वक्र करना, मार डालना, वर्णन करना)। **जनम्** = जन को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मनुजातम्** = मनुजात को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **घृत-प्रुषम्** = प्रकाशित का अभिसिञ्चन करना (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, प्रुष् - सौम्य होना, स्निग्ध होना, चिकना होना, सिञ्चन करना, पूर्ण करना) ॥ 6 ॥

(11) सूक्त 11

97. पुरु त्वा दाशिवान् वोचे, अरिः अग्ने तव स्विदा।
तोदस्य इव शरणे आ महस्य॥ 1॥1-150-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्वा** = तुमको **पुरु** = बहुत (अव्यय)। **दाशिवान्** = दानी **अरिः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **तव** = तुम्हारा **स्विदा** = ही **महस्य** = महान् का **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **शरणे** = शरण में **तोदस्य** = दुःखी का **इव** = समान **वोचे** = बोलता है॥ 1॥

पदार्थ - **पुरु** = बहुत (अव्यय)। **पुरु** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना) **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **दाशिवान्** = दानी (दश् = देना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **वोचे** = बोलता है (वच् - बोलना, कहना)। **अरिः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम) (अव्यय)। **स्विदा** = ही (अव्यय)। **स्विदा** = स्वेदयुक्त (स्विद - गीला करना, चिकना होना, छोड़ना, त्याग करना। स्विद - अस्पष्ट ध्वनि करना, गुनगुनाना। स्विद - पसीजना, पसीना छूटना)। **तोदस्य** = तुद का (तुद् - दुःख होना, दुःख देना, पीड़ा करना, घाव करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **शरणे** = शरण में (श्रण - देना, दान करना, रक्षा करना, श्री - सेवा करना।)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **महस्य** = महान् का, मह का (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)॥ 1॥

98. प्र होत्रे पूर्व्यम् वचो, अग्नये भरता बृहत्।
विपाम् ज्योतीषि बिभ्रते न वेधसे॥ 2॥ 3-10-5

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **होत्रे** = दानी **अग्नये** = अग्नि के लिए **पूर्व्यम्** = पहले, पूर्व **वचो** = वचन को **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **भरता** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को **ज्योतीषि** = प्रकाश **बिभ्रते** = भरण, धारण (प्रदान) करते हो, **वेधसे** = वेधने वाले, ताडना कररने वाले के लिए **न** = नहीं॥ 2॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **होत्रे** = दानी, दानकर्ता में (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पूर्व्यम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **भरता** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **ज्योतीषि** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **बिभ्रते** = भरण, धारण करने के लिए (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)॥

99. अग्ने वाजस्य गोमतः, ईशानः सहसो यहो।
अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः॥ 3॥ 1-79-4

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **वाजस्य** = बल, विद्या, प्रगति का **गोमतः** = शब्द करने वालों, मननशीलों से युक्त **ईशानः** = शासन करने वाले, **सहसो** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, **यहो** = पुत्र, सन्तान, **जातवेदो** = वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **महि** = महत्, महान्, **श्रवः** = श्रवण, वाणी **अस्मे** = हमारे लिए **देहि** = दीजिये॥ 3॥

पदार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाजस्य** = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति

करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गोमत =** गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **ईशानः =** अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **सहसो =** सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **यहो =** पुत्र, सन्तान (यह् = पुत्र होना, सन्तान होना)। **अस्मे =** हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **देहि =** दो, दीजिये (दा = देना, दान करना, रखना)। **जातवेदो =** जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **महि =** महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **श्रवः =** श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) **॥ 3 ॥**

100. अग्ने यजिष्ठो अध्वरे, देवान् देवयते यज।
होता मन्द्रो वि राजसि अति स्त्रिधः ॥ 4 ॥ 3-10-7

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **यजिष्ठो =** यजिष्ठ, , अत्यन्त पूजनीय, अतिशय यजन करने वाला **अध्वरे =** अहिंसक में **देवयते =** देवयत्न के लिए **देवान् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **यज =** यजन करो। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **मन्द्रो =** स्तुत्य, आनन्दित करने वाला **अति =** बहुत, अत्यधिक **स्त्रिधः** = प्रगतिशील, विद्वान् **वि =** विशेष **राजसि =** प्रकाशित होता है **॥ 4 ॥**

पदार्थ -अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यजिष्ठो =** यजिष्ठ, अतिशय यजन करने वाला (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **अध्वरे =** अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवान् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवयते =** देवयत्न के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, (यत -यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **यज =** यजन करो (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्द्रो =** स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राजसि =** प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अति =** बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **स्त्रिधः** = प्रगतिशील, विद्वान् (सृ = जाना, चलना, जानना, पाना) **॥ 4 ॥**

101. जज्ञाना सप्त मातृभिः, मेधाम् आशासत श्रिये।
अयम् ध्रुवो रयीणाम् चिकेतत् आ ॥ 5 ॥ 9-102-4

मन्त्रार्थ - सप्त = सात **मातृभिः =** माताओं द्वारा **जज्ञाना =** उत्पन्न **मेधाम् =** मेधा को **श्रिये** = श्री के लिए, श्रेय के लिए, सेवा के लिए **आशासत =** आशा करता है। **अयम् =** यह **ध्रुवो =** अविचल प्रगतिशील **रयीणाम्** = विद्याओं, गतिशीलताओं को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **चिकेतत् =** जानता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - जज्ञाना = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। **सप्त** = सात (संख्या)। **मातृभिः =** माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मेधाम् =** मेधा से (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **आशासत =** आशायें (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना)। **श्रिये** = श्रिया (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना,

श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **ध्रुवो** = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **रयीणाम्** = विद्या गतिशीलता के लिए (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **चिकेतत्** = विद्वान् (चिकित् - जानना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 5 ॥

102. उत स्या नो दिवा मतिः, अदितिः ऊत्या आगमत्।
सा शन्ताता मयः करत् अप स्त्रिधः ॥ 6 ॥ 8-18-7

मन्त्रार्थ - **नो** = हमारे लिए **स्या** = वह **उत** = ही **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **मतिः** = मति, मननशक्ति **अदितिः** = अक्षय, अविनाशी **ऊत्या** = वाणी द्वारा, रक्षा द्वारा **आगमत्** = प्राप्त हुए। **सा** = वह **शन्ताता** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **मयः** = प्रगतिशील, ज्ञानी **स्त्रिधः** = दुःखों को **अप** = दूर **करत्** = करे ॥ 6 ॥

पदार्थ - **उत** = ही (अव्यय)। **स्या** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्। सि = बाँधना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **मतिः** = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **ऊत्या** = वाणी, रक्षा द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **अगमत्** = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **सा** = वह (सर्वनाम)। **शन्ताता** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **मयः** = गति, ज्ञान (मय् - जाना, जानना, पाना)। **करत्** = करे (कृ - करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **स्त्रिधः** = दुःख (सृध् - मर्दन करना, सम्पीडन करना, सृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना। स्तु = जाना, जानना, पाना) ॥ 6 ॥

103. ईडिष्वा हि प्रतीव्याम्, यजस्व जातवेदसम्।
चरिष्णुधूमम् अगृभीत शोचिषम् ॥ 7 ॥ 8-23-1

मन्त्रार्थ - **प्रतीव्याम्** = प्रत्येक में व्याप्त को **हि** = ही **ईडिष्वा** = स्तुति करो। **जातवेदसम्** = वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को **यजस्व** = यजन करो। **चरिष्णु-धूमम्** = चरिष्णुधूम को **शोचिषम्** = पवित्रता को **अगृभीत** = गर्भित किया, धारण किया, सिंचन किया ॥ 7 ॥

पदार्थ - **ईडिष्वा** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **प्रतीव्याम्** = प्रत्येक में व्याप्त (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय) वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **यजस्व** = यजन करो (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **चरिष्णु-धूमम्** = चरिष्णुधूम को (चर् =विचरना, आचरण करना, धू -कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **अगृभीत** = गर्भित किया, धारण किया, सिंचन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गृ = सींचना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना, गृह् - ग्रहण लेना, स्वीकार करना)। **शोचिषम्** = पवित्रता को (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 7 ॥

104. न तस्य माया च, न रिपुः ईशीत मर्त्यः।
यो अग्नये ददाश हव्यदातये ॥ 8 ॥ 8-23-15

मन्त्रार्थ - **मर्त्यः** = मरणशील **तस्य** = उसका **मायया** = माया द्वारा **न** = नहीं **च** = और **रिपुः** = हिंसक **न** =

नहीं **ईशीत** = शासन करे। **यो** = जो **हव्यदातये** = हव्यदाता के लिए **अग्नये** = अग्नि के लिए **ददाश** = देता है ॥ **8** ॥

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तस्य** = उसका (सर्वनाम)। **मायया** = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रिपुः** = हिंसक (रि = हिंसा करना, जानना)। **ईशीत** = ऐश्वर्य व अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यो** = जो। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ददाश** = दिया है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **हव्यदातये** = हव्यदाता के लिए (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, दा - दान करना, देना) ॥ **8** ॥

105. अप त्यम् वृजिनम् रिपुम्, स्तेनम् अग्ने दुराध्यम्।
दविष्ठम् अस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥ 9 ॥ 6-51-13

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **त्यम्** = उस को **वृजिनम्** = वर्जनीय को **रिपुम्** = हिंसक को **स्तेनम्** = चोर को **दुराध्यम्** = दुराध्य को, दुष्ट आराधक को **अप** = दूर करो। **सत्पते** = हे सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक, **अस्य** = इसके **दविष्ठम्** = अत्यन्त प्रगति को **सुगम्** = सुगम **कृधी** = करो ॥ **9** ॥

पदार्थ - **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **वृजिनम्** = वृजन, त्याग, वर्जना को (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **रिपुम्** = हिंसक को (रि = हिंसा करना, जानना)। **स्तेनम्** = चोर को (स्तेन - चुराना, लूटना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दुराध्यम्** = दुराध्य को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **दविष्ठम्** = दविष्ठ को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सत्पते** = हे सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **कृधी** = करो (कृ = करना)। **सुगम्** = सुगामी, विद्वान् (सु = अच्छा, अच्छा (उपसर्ग), गम् - जाना, जानना, पाना)। ॥ **9** ॥

106. श्रुष्टी अग्ने नवस्य मे, स्तोमस्य वीर विश्पते।
नि मायिनः तपसा रक्षसो दह ॥ 10 ॥ 8-23-14

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **श्रुष्टि** = हे श्रुष्टि, **मे** = मेरे लिए **नवस्य** = नवीन **स्तोमस्य** = स्तोम का, स्तुतियों का, **वीर** = हे पराक्रमी, वीर, **विश्पते** = विश के स्वामी, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी, **मायिनः** = माया वाले **रक्षसो** = रक्षा करने वाले, रक्षस् **तपसा** = तप द्वारा **नि** = निश्चित, निरन्तर **दह** = जलाऐं ॥ **10** ॥

पदार्थ - **श्रुष्टि** = श्रुष्टि (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नवस्य** = स्तुति के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **स्तोमस्य** = स्तोम के लिए (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **वीर** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **विश्पते** = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना}। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **मायिनः** = माया वालों का (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **तपसा** = तप द्वारा (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **दह** = जलाओ (दह् - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना) ॥ **10** ॥

(12) सूक्त 12

107. प्र मंहिष्ठाय गायत, ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे।
उपस्तुतासो अग्नये॥ 1॥ 8-92-8

मन्त्रार्थ - **उपस्तुतासो** = उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मंहिष्ठाय** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए **ऋताव्ने** = ऋतवान् के लिए **बृहते** = महान्, बृहत् **शुक्रशोचिषे** = शुक्र-शुचि के लिए **अग्नये** = अग्नि के लिए **गायत** = गाते हैं॥ 1॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मंहिष्ठाय** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **ऋताव्ने** = ऋताव्न के लिए (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **शुक्रशोचिषे** = शुक्र-शुचि के लिए (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)।। **उपस्तुतासो** = उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)॥

108. प्र सो अग्ने तव ऊतिभिः, सुवीराभिः तरति वाजकर्मभिः।
यस्य त्वम् सख्यम् आविथ॥ 2॥ 8-19-30

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **सो** = वह **तव** = तुम्हारी **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों, रक्षाओं द्वारा **सुवीराभिः** = उत्तम वीरों द्वारा **वाजकर्मभिः** = वाज कर्मों द्वारा **प्र** = प्रकृष्ट **तरति** = तैरता है, तरता है, **यस्य** = जिसका **त्वम्** = तुम **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता को **आविथ** = समन्तात् याचना करते हो॥ 2॥

भावार्थ - हम परमात्मा की मित्रता की याचना करें, यह तो स्वाभाविक है। हमारे कर्म, साधना, उपासना ऐसी हो कि परमात्मा हमारी मित्रता की याचना करें, यह महत्वपूर्ण है॥ 2॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सो** = वह, उसने। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सुवीराभिः** = उत्तम वीर द्वारा (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **तरति** = तैरते हैं, तरते हैं (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वाजकर्मभिः** = वाज कर्म द्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, कृ - करना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **आविथ** = समन्तात् याचना करते हो (विथ - याचना करना, मांगना)॥ 2॥

109. तम् गूर्धया स्वर्णरम् देवासो, देवम् अरतिम् दधन्विरे।
देवत्रा हव्यम् ऊहिषे॥ 3॥ 8-19-1

मन्त्रार्थ - **तम्** = उसको **गूर्धया** = शब्द करो, स्तुति करो। **देवासो** = देवगणों ने **स्वर्णरम्** = सुख, सृजन, ऐश्वर्य ले जाने वाले, **अरतिम्** = प्रगतिशील, विद्वान्, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, **देवम्** = देव को **दधन्विरे** = धारण किया, प्राप्त किया। **देवत्रा** = देवों को, देवों का त्राण करने वाले **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, देय को **ऊहिषे** = विचार करो, वहन करो॥ 03॥

पदार्थ - **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **गूर्धया** = प्रयास, शब्द करो (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुर्द - क्रीडा करना, खेलना)। **स्वः** = सुख (अव्यय)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु

होना, चलना, ले जाना)। **देवासो =** देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवम् =** देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अरतिम् =** गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **दधन्विरे =** दधन्विर के लिए (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **देवत्रा =** देवों को, देवों का त्राण करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, त्रै - त्राण करना, रक्षा करना)। **हव्यम् =** आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ऊहिषे =** विचार करो, वहन करो (ऊह् = परिकल्पना करना, तर्क करना, विचार करना। वह् - वहन करना, ले जाना) **॥ 3 ॥**

110. मा नो हृणीथा अतिथिम्, वसुः अग्निः पुरुप्रशस्तः एषः।
यः सुहोता स्वध्वरः ॥ 4 ॥ 8-92-12

मन्त्रार्थ - **नो =** हमारे **अतिथिम् =** सतत गतिशील, अतिथि को **मा =** नहीं, मत **हृणीथा =** हरण करो। **एषः =** यह **वसुः =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, **पुरुप्रशस्तः =** पुरुप्रशस्त, बहु प्रशंसित (है), **यः =** जो **सुहोता =** उत्तम दानी **स्वध्वरः =** उत्तम अहिंसक (है) **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **हृणीथा =** हृणीथ (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। **अतिथिम् =** सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। **वसुः =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुप्रशस्त =** पुरुप्रशस्त (पुरु - बहुत (सर्वनाम)। पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **एषः =** यह (सर्वनाम)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **सुहोता =** सुन्दर दान (सु - सुन्दर, अच्छा, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **स्वध्वरः =** स्वध्वर, स्वयम् धारित (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना) **॥ 4 ॥**

111. भद्रो नो अग्निः आहुतो, भद्रा रातिः, सुभग भद्रो अध्वरः।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥ 5 ॥ 8-19-19

मन्त्रार्थ - **नो =** हमारे लिए **आहुतो =** आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **भद्रो =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (हो)। **रातिः =** अनुदान **भद्रा =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (हो)। **सुभग =** हे उत्तम सेवा, भजनयुक्त, **अध्वरः =** अहिंसक, अवर्णनीय **भद्रो =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (हो)। **उत =** उसी प्रकार **प्रशस्तयः =** प्रशस्तियाँ **भद्रा =** कल्याणकारी (हों) **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **भद्रो =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आहुतो =** आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **भद्रा =** कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **रातिः =** अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **सुभग =** अच्छी सेवा, भजन (सु - सुन्दर, अच्छा,

भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **भद्रो =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **अध्वरः =** अहिंसक, अवर्णनीये (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **भद्रा =** कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **उत =** ही (अव्यय)। **प्रशस्तयः =** प्रशस्तियाँ (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना) **॥ 5 ॥**

112. यजिष्ठम् त्वा ववृमहे, देवम् देवत्रा होतारम् अमर्त्यम्।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ 6 ॥ 8-12-3

मन्त्रार्थ - **देवत्रा =** देवों का त्राण करने वाले **त्वा =** तुम **यजिष्ठम् =** अत्यन्त यजनकर्ता, **देवम् =** देव, **होतारम् =** दान, आदान-प्रदान करने वाले, **अमर्त्यम् =** अमर्त्य, अमर, अविनाशी, **अस्य =** इस **यज्ञस्य =** यजन का **सुक्रतुम् =** उत्तम कर्ता को **ववृमहे =** वरण करते हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **यजिष्ठम् =** देवपूजक को (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **ववृमहे =** वरण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **देवम् =** देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवत्रा =** देवों का त्राण करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, त्रै - त्राण करना, रक्षा करना)। **होतारम् =** हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **अमर्त्यम् =** अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **यज्ञस्य =** यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **सुक्रतुम् =** अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता को (कृ - करना) **॥ 6 ॥**

113. तत् अग्ने द्युम्नम् आ भर, यत् सासाह आ सदने, कञ्चित् अत्रिणम्।
मन्युम् जनस्य दूढ्यम् ॥ 7 ॥ 6-19-15

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **तत् =** उस **द्युम्नम् =** प्रकाशमान को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **यत् =** जिसने **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सदने =** सदन में, स्थान में **कञ्चित् =** किसी **अत्रिणम् =** अतिशय गमनशील को, जानने वाले को **जनस्य =** जन का **दूढ्यम् =** गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी **मन्युम् =** विचार को **सासाह =** सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ठ किया **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **अग्ने =** अग्नि का (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **द्युम्नम् =** प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **सासाह =** सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ठ (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना, प्रसन्न होना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सदने =** सदन में, स्थान में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **कञ्चित् =** किसी को, क्या (सर्वनाम)। **अत्रिणम् =** अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **मन्युम् =** मन्यु को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **जनस्य =** जन का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **दूढ्यम् =** गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी को (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना) **॥ 7 ॥**

114. यद् वा उ विश्पतिः शितः, सुप्रीतो मनुषो विशे।

विश्वा इत् अग्निः प्रति, रक्षांसि सेधति ॥ 8 ॥ 8-13-13

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो **वा =** अथवा **उ =** निश्चय ही, भी **विश्पतिः =** विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी **शितः** = तीक्ष्ण, श्रुत **सुप्रीतो =** सुप्रीत, उत्तम प्रीतयुक्त **मनुषो =** विचारशील का **विशे =** विश में, गृह में **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **विश्वा =** सब **इत् =** ही **प्रति रक्षांसि =** प्रति रक्षकों को **सेधति =** प्रतिसेध करता है, प्रतिसिद्ध करता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वा =** अथवा (अव्यय)। **उ =** निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **विश्पतिः =** विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। **शितः** = शित, तीक्ष्ण, श्रुति (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **सुप्रीतो =** सुप्रीत (सु = अच्छा (उपसर्ग)। प्री = प्रेम करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **मनुषो =** विचारशील का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **विशे =** विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **विश्व =** सभी। **इत् =** ही (अव्यय)। **अग्निः =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **प्रति =** सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **रक्षांसि =** रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **सेधति =** सिद्ध करता है (सिध् = जाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना) **॥ 8 ॥**

इति प्रथमो अध्यायः

ॐ

अथ द्वितीयो अध्यायः

एन्द्रम् पर्वम् काण्डम् वा

(13) सूक्त 1

115. तत् वो गाय सुते सचा, पुरुहूताय सत्वने।
शम् यत् गवे न शाकिने॥ 1॥ 6-45-22-1

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम सब लोग **तत्** = उस **सुते** = ऐश्वर्यवान्, **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **पुरुहूताय** = पुरुहूत, बहुत आह्वान किये गये, अग्र-दत्त के लिए **सत्वने** = सत्वन् के लिए, सत्यवान् के लिए **शम्** = सुख, कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **यत्** = जो **गवे** = वाणी **न** = के समान **शाकिने** = शक्तिवान् के लिए **गाय** = गान करो॥ 1॥

पदार्थ - **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **गाय** = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच् - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पुरुहूताय** = पुरुहूत, अग्र-दत्त के लिए (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सत्वने** = सत्वन् के लिए, सत्यवान् के लिए (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गवे** = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शाकिने** = शक्तिदाता के लिए (शक्-शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना)॥ 1॥

116. यः ते नूनम् शतक्रतो, इन्द्र द्युम्नितमो मदः।
तेन नूनम् मदे मदेः॥ 2॥ 8-92-16

मन्त्रार्थ - **शतक्रतो** = हे सैकड़ों कर्म करने वाले **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यः** = जो **ते** = तुम्हारा **नूनम्** = निश्चय ही **द्युम्नितमो** = अत्यन्त अभिगमन करने वाला, प्रकाशक **मदः** = मद, आनन्द (है), **तेन** = उसके द्वारा **नूनम्** = निश्चय ही **मदे** = आनन्द में **मदेः** = आनन्द करो॥ 2॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **द्युम्नितमो** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **मदः** = मद, आनन्द (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **तेन** = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदेः** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)॥ 2॥

117. गावः उप वद अवटे, मही यज्ञस्य रप्सुदा।
उभा कर्णा हिरण्यया॥ 3॥ 8-72-12

मन्त्रार्थ - **मही** महान्, पूज्य, **यज्ञस्य** यज्ञ का **रप्सुदा** स्पष्ट वाणी देने वाले **गावः** शब्द, वचन **उप** समीप **हिरण्यया** हिरण्यमय, प्रकाशमान, शब्दयुक्त **उभा** दोनों **कर्णा** कानों वाले **अवटे** रक्षण-पालन में, **वद** बोलो ॥ 3 ॥

भावार्थ - स्पष्ट वाणी देने वाले, रक्षा की गयी वाणी की हिरण्यमय दोनो कानों से निकट रक्षा करो। स्पष्ट वाणी बोलने की क्षमता मनुष्य को परमात्मा का विशेष उपहार है। परमात्मा से प्रार्थना है कि हमारे निकट, हमारे दोनो कानों से उसकी रक्षा करे। स्पष्ट वाणी की रक्षा कानों से ही हो सकती है, हम सुनकर ही स्पष्ट बोलना सीख सकते हैं, स्पष्ट उच्चारण की रक्षा कर सकते हैं। इसके लिए कानों को हिरण्यमय होना चाहिए। हिरण धातु का अर्थ है दीप्त होना, शब्द करना। हिरण्य का अर्थ हुआ दीप्त शब्द। कानों को ऐसा होना चाहिए कि वे दीप्त वचन सुनें, अनुचित निन्दनीय वाणी न सुनें ॥ 3 ॥

विशेष - रप धातु का अर्थ है स्पष्ट बोलना। रप्सुदा का अर्थ हुआ स्पष्टवाणी देने वाले। अव धातु अथवा अवति, अवते, आवयति क्रिया-रूपों के अर्थ बहुत व्यापक हैं। ॥ 3 ॥

पदार्थ - **मही** - महान्, पूज्य (मह् - पूज्य होना) **यज्ञस्य** - यज्ञ की (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) रप्सुदा स्पष्ट वाणी देने वाले (रप - स्पष्ट बोलना) । **गावः** - शब्दों या वचनों की (गु - शब्द करना) **उप** - समीप। **हिरण्यया** - हिरण्यमय (हिरण्य - प्रकाश, शब्द होना)। **उभा** - दोनों। **कर्णा**- कान (श्रु - सुनना, कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना)। वद = बोलो (वद - कहना, समझाना)। **अवटे =** अवट (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, अ = नहीं, वट् = गूँथना, बटना, लपेटना, एकत्र करना, पीसना, विभाग करना, बोलना, स्पष्ट कहना) ॥ 3 ॥

118. अरम् अश्वाय गायत, श्रुतकक्ष अरम् गवे।
अरम् इन्द्रस्य धाम्ने ॥ 4 ॥ 8-92-25

मन्त्रार्थ - **श्रुतकक्ष =** हे श्रुतकक्ष, सुने हुए को धारण करने वाले, **अश्वाय =** अश्व के लिए, तीव्र गति युक्त, व्यापक के लिए, **अरम् =** पर्याप्त, **गवे =** वाणी के लिए **अरम् =** पर्याप्त, **इन्द्रस्य =** इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का **धाम्ने =** धाम के लिए **अरम् =** पर्याप्त **गायत =** गायन करो ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अरम् =** पर्याप्त (अव्यय)। **अश्वाय =** अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **श्रुतकक्ष =** श्रुतकक्ष (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, कक्ष् - धारण करना, घर्षण करना)। **अरम् =** पर्याप्त (अव्यय)। **गवे =** वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अरम् =** पर्याप्त (अव्यय)। **इन्द्रस्य =** इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **धाम्ने =** धाम में (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 4 ॥

119. तम् इन्द्रम् वाजयामसि, महे वृत्राय हन्तवे।
स वृषा वृषभो भुवत् ॥ 5 ॥ 8-3-7

मन्त्रार्थ - **तम् =** उस **इन्द्रम् =** इन्द्र को **महे =** पूज्य, महान्, **वृत्राय =** हिंसक के प्रति **हन्तवे =** हन्ता के लिए **वाजयामसि =** गतिमान, बलवान होते हो। **स =** वह **वृषा =** पराक्रम द्वारा **वृषभो =** पराक्रमी **भुवत् =** होता हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ - **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वाजयामसि =** गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृत्राय =** वृत्र, के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना,

चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हन्तवे** = मारने के लिए (हन् - मारना)। **स** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) **॥ 5 ॥**

120. त्वम् इन्द्र बलात् अधि, सहसो जात ओजसः।
त्वम् सम् वृषन् वृषा इत असि ॥ 6 ॥ 10-153-2

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वम्** = तुम **बलात्** = बल से **ओजसः** = ओज से **अधि** = अधिक, उच्च **सहसो** = सक्षम, समर्थ **जात** = हुए। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी, वर्षा करने वाले, **त्वम्** = तुम **सम्** = सम्यक्, भलीभाँति **वृषा** = पराक्रमी, वर्षा करने वाले **इत** = ही **असि** = हो **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **बलात्** = बल (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जात** = उत्पन्न हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **ओजसः** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इत** = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **असि** = हो (अस् - होना) **॥ 6 ॥**

121. यज्ञः इन्द्रम् अवर्धयद्, यत् भूमिम् व्यवर्तयत्।
चक्राणः ओपशम् दिवि ॥ 7 ॥ 8-14-5

मन्त्रार्थ - **यज्ञः** = यजन ने **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अवर्धयद्** = बढ़ाया, **यत्** = जो **भूमिम्** = भूमि को, **दिवि** = दिव्यता में **ओपशम्** = समीपशायी को **चक्राणः** = चक्रण करते हुए **व्यवर्तयत्** = विशेष वर्तमान करता है **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **यज्ञ** = यजन (यज = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अवर्धयद्** = बढ़ाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **भूमिम्** = भूमि को (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **व्यवर्तयत्** = व्यवर्तय (वि - विशेष, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। **चक्राण** = चक्रण करता हुआ, चक्रण करते हुए (चकृ = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **ओपशम्** = समीपशायी को (उप - समीप, निकट। शी = सोना, शयन करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) **॥ 7 ॥**

122. यत् इन्द्र अहम् यथा त्वम्, ईशीय वस्वः एक इत्।
स्तोता मे गोसखा स्यात् ॥ 8 ॥ 8-14-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **अहम्** = मैं **यथा** = जिस प्रकार **त्वम्** = तुम **वस्वः** = वसु का,

स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले का **एक** = एक **इत्** = ही **ईशीय** = शासन करो। **स्तोता** = स्तुतिकर्ता **मे** = मेरा **गोसखा** = शब्दकर्ता, मननशील मित्र **स्यात्** = हो ॥ 8 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **ईशीय** = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **वस्व** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **स्तोता** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **गोसखा** = मननशील मित्र (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, सख् = मित्र होना)। **स्यात्** = हो (अस् = होना) ॥ 8 ॥

123. पन्यम् पन्यम् इत् सोतारः, आ धावत मद्याय।
सोमम् वीराय शूराय ॥ 9 ॥ 2-25-9

मन्त्रार्थ - **सोतार** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले **मद्याय** = आनन्द के लिए **वीराय** = वीर के लिए **शूराय** = वीर, पराक्रमी के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक् **पन्यम्** = प्रशंसनीय को, स्तुतियोग्य को **पन्यम्** = प्रशंसनीय को, स्तुतियोग्य को **इत्** = ही **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **धावत** = दौड़ते हैं ॥ 9 ॥

पदार्थ - **पन्यम्** = प्रशंसा को, स्तुति को (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **पन्यम्** = प्रशंसा को, स्तुति को (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सोतार** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **धावत** = दौड़ते हुए (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **मद्याय** = आनन्दित करने के लिए (मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **वीराय** = वीर के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **शूराय** = वीर, पराक्रमी के लिए (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना) ॥ 9 ॥

124. इदम् वसो सुतम् अन्धः, पिबा सुपूर्णम् उदरम्।
अनाभयिन् ररिमा ते ॥ 10 ॥ 8-2-1

मन्त्रार्थ :- **वसो** = हे वसु, **इदम्** = यह **सुतम्** = ऐश्वर्यवान् **अन्धः** = प्राणधारक (है)। **सुपूर्णम्** = सुपूर्ण को, अच्छी तरह पूर्ण को **उदरम्** = उदर को, आद्र करने वाले को, आद्रता को देने वाले को **पिबा** = पियो, पान करें। **अनाभयिन्** = हे अभय, निर्भय, **ते** = तुम्हारे लिए **ररिमा** = देते हैं ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **अन्धः** = प्राणधारक, आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सुपूर्णम्** = सुपूर्ण को, अच्छी तरह पूर्ण को (सु - सुन्दर, अच्छा, पृ - पूर्ण करना, भरना)। **उदरम्** = उदर को, आद्र करने वाले को, आद्रता को देने वाले को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **अनाभयिन्** = अभय, निर्भय (**अन्** = नहीं (उपसर्ग)। आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः (उपसर्ग)।, भी - भय होना, डर होना, डराना)। **ररिमा** = देते हैं (रा = देना, लेना, ग्रहण करना, मिल जाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) ॥ 10 ॥

(14) सूक्त 2

125. उत् घ इत् अभि श्रुतामघम्, वृषभम् नर्यापसम्।
अस्तारम् एषि सूर्य॥ 1॥ 8-93-1

मन्त्रार्थ - **सूर्य** = हे ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, **उत्** = उत्कृष्ट, उच्च **घ** = ही **इत्** = ही **अभि** = अभिमुख, सभी ओर, सर्वथा **श्रुतामघम्** = श्रुतामघ को, बहुश्रुत धन वाले को, विख्यात धनी को, **वृषभम्** = पराक्रमी, वर्षा करने वाले को **नर्यापसम्** = नरो के पालक को, **अस्तारम्** = प्रकाशमान को **एषि** = प्राप्त करते हो, चाहते हो॥ **1**॥

पदार्थ - **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **घ** = ही, भी (अव्यय, निपात)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **श्रुतामघम्** = श्रुतामघ को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **नर्यापसम्** = नरो के पालक को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना, अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अस्तारम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **एषि** = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। **सूर्य** = सूर्ये, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)॥ **1**॥

126. यत् अद्य कच्च वृत्रहन्, उदगा अभि सूर्य।
सर्वम् तत् इन्द्र ते वशे॥ 2॥ 8-93-42

मन्त्रार्थ - **वृत्रहन्** = हे हिंसा का हनन करने वाले, **सूर्य** = हे ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **अद्य** = आज **कच्च** = कुछ भी **अभि** = अभिमुख, सभी ओर, सर्वथा **उदगा** = उत्कृष्ट, उच्च गया, उदय हुआ, **तत्** = वह **सर्वम्** = सब कुछ **ते** = तुम्हारे **वशे** = वश में (है)॥ **2**॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **कच्च** = कुछ भी (अव्यय)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **उदगा** = उतक्रष्ट अग्रणी (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सूर्य** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **सर्वम्** = सब कुछ (सर्वनाम)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वशे** = वश में (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)॥ **2**॥ **साम 1070**

127. यः आनयत् परावतः, सुनीती तुर्वशम् यदुम्।
इन्द्रः सः नो युवा सखा॥ 3॥ 6-45-1

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **सुनीती** = अच्छी नीतियुक्त **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **परावतः** = दूर से **तुर्वशम्** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को **यदुम्** = यदु को, प्रयत्नशील, उद्योगी को **आनयत्** = सम्यक् ले जाते हैं, संरक्षण करते हैं, **सः** = वह **नो** = हमारा **युवा** = युवा **सखा** = मित्र (है)॥ **3**॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **आनयत्** = सम्यक् जाना, संरक्षण करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नी - नय - ले जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **परावतः** = रक्षा करो, पालन करो (परावतः = पराया, लौटा हुआ, अव्यय, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **सुनीती** = अच्छी नीति (सु - सुन्दर, अच्छा, नी = ले जाना)। **तुर्वशम्**

= शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, वण् - शब्द करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना)। **यदुम्** = यदु को (यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्य दाता (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सः** = वह, उसने। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 3 ॥

128. मा नः इन्द्र अभि आ दिशः, सूरो अक्तुषु आ यमत्।
त्वा युजा वनेम तत् ॥ 4 ॥ 8-92-31

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नः** = हमारा **अभि** = अभिमुख **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को **सूरो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला **अक्तुषु** = अक्तुओं, कुटिलताओं में **मा** = नहीं, मत **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **यमत्** = नियमन करता है। **त्वा** = तुमको **युजा** = युक्तकर **तत्** = उस को **वनेम** = बोलें, सेवा करें ॥ 4 ॥

भावार्थ - परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा इन्द्र कुटिलताओं में हमारा यमन, नियमन नहीं करता है, हमें मार्गदर्शन नहीं करता है। कुटिलता करने वाले भी हमारा नियमन नियन्त्रण नहीं कर सकते हैं। ये दोनो भाव इस मन्त्र में ग्राह्य हैं। उस परमात्मा से युक्त होकर हम बोलें, देवजनों तथा सज्जनों की सेवा करें, यह भावना होनी चाहिए ॥ 4 ॥

पदार्थ - **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **सूरो** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अक्तुषु** = अक्तुओं, कुटिलता, गति में (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **यमत्** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **युजा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वनेम** = बोलें, सेवा करें (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

129. आ इन्द्र सानसिम् रयिम्, सजित्वानम् सदासहम्।
वर्षिष्ठम् ऊतये भर ॥ 5 ॥ 1-8-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सानसिम्** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को, **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को, **सजित्वानम्** = विजेता को **सदासहम्** = सदा सहनीय को, **वर्षिष्ठम्** = परम पराक्रमी को, **ऊतये** = रक्षा के लिए **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 5 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सानसिम्** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **सजित्वानम्** = विजेता को (स - साथ, सहित। जि = सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **सदासहम्** = सदासह को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **वर्षिष्ठम्** = परम पराक्रमी को (वर्ष् = बरसना, सींचना, अति पराक्रम करना, हिंसा करना, क्लेश देना, उत्पीड़न करना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द

करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 5 ॥

130. इन्द्रम् वयम् महाधने, इन्द्रम् अर्भे हवामहे।
युजम् वृत्रेषु वज्रिणम् ॥ 6 ॥ 1-7-5

मन्त्रार्थ - **वयम्** = हम **इन्द्रम्** = इन्द्र को, परम ऐश्वर्यशाली को **महाधने** = महाधन में, **इन्द्रम्** = इन्द्र को, परम ऐश्वर्यशाली को **अर्भे** = अर्भ में, अल्पता में, **युजम्** = युक्त करने वाले को **वृत्रेषु** = वृत्रों में, व्यवहार में, हिंसा में **वज्रिणम्** = वज्री को, वज्रयुक्त को, गतिमान को **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - हम परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा को सभी परिस्थितियों में पुकारते हैं। हमारे पास महाधन हो, अल्पता हो, सामान्य लोक व्यवहार हो अथवा हिंसा हो, प्राणों पर संकट हो, हम ईश्वर का आह्वान करते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को, परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **महाधने** = महाधन में (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्भे** = अर्भ में (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **युजम्** = युज को (युु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वृत्रेषु** = वृत्रों में, व्यवहार में, हिंसा में (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **वज्रिणम्** = वज्री को, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना) ॥ 6 ॥

131. अपिबत् कद्रुवः सुतम्, इन्द्रः सहस्त्रबाह्वे।
तत्र आददिष्ट पौंस्यम् ॥ 7 ॥ 8-45-26

मन्त्रार्थ - **कद्रुवः** = व्याकुल **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली ने **सहस्त्रबाह्वे** = सहस्त्रबाहु के लिए, सहस्त्रों बाहु वाले के लिए, बहुत कर्मशील के लिए **सुतम्** = ऐश्वर्य को, उत्पन्न को **अपिबत्** = पिया, पान किया। **तत्र** = वहाँ **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को **आददिष्ट** = आदान, ग्रहण किया ॥ 7 ॥

भावार्थ - परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा बहुत कर्मशील के लिए व्याकुल होता है, वह ऐश्वर्य को पी लेता है, उपासक के साथ मित्रभाव से सहयोगी हो जाता है। वहाँ वृद्धि का आदान, ग्रहण करता है ॥ 7 ॥

पदार्थ - **अपिबत्** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **कद्रुवः** = भ्रमित, व्याकुल (कद - भ्रमित होना, घबरा जाना, व्याकुल होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्य दाता (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सहस्त्रबाह्वे** = सहस्त्रबाह्व के लिए (सहस्त्र = सहस्त्र, हजार, (संख्या), बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना)। **तत्र** = वहाँ (सर्वनाम)। **आददिष्ट** = ग्रहण किया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दद-दा - दान करना, देना, त्याग करना)। **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को (पुंस – बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना) ॥ 7 ॥

132. वयम् इन्द्र त्वायवो, अभि प्र नोनुमो वृषन्।
विद्धी त्वा अस्य नो वसो ॥ 8 ॥ 10-133-6

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **वृषन्** = हे शक्तिशाली, पराक्रमी, **वयम्** = हम **त्वा** = तुम्हे **यवो** = मिलने वाले **अभि** = अभिमुख **प्र** = प्रकृष्ट **नोनुमो** = स्तुति करते हैं। **वसो** = हे वसु, वास करने वाले, वास देने वाले, **त्वा** = तुम **अस्य** = इसका **नो** = हमारा **विद्धी** = जानते हो ॥ 8 ॥

भावार्थ - हम परमात्मा की स्तुति करते हैं। वह हमे वास देने वाला है। वह हम सबके विषय में जानता है ॥ 8 ॥

पदार्थ - **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा। **यवो** = मिलने वाले (तु = चलना, जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना। यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नोनुमो** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **विद्धी** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) **॥ 8 ॥**

133. आ घा ये अग्निम् इन्धते, स्तृणन्ति बर्हिः आनुषक्।
येषाम् इन्द्रो युवा सखा ॥ 9 ॥ 8-45-1

मन्त्रार्थ :- ये - जो, **अग्निम्** - अग्नि को, **घा** - ही, **आ** - समन्तात्, पूर्णतः, **इन्धते** - प्रदीप्त करते हैं, प्रकाशित करते हैं, **बर्हिः** - बृहत्, महान्, **आनुषक्** - अनुकूलतया, क्रमशः **स्तृणन्ति** - आच्छादित करते हैं। **इन्द्रो** - इन्द्र, **येषाम्** - जिनका, **युवा** - युवा, युक्त, **सखा** - मित्र (है) **॥ 9 ॥**

भावार्थ :- जो अपने जीवन में अग्नि अर्थात् परमात्मा की चेतना को प्रकाशित करते हैं तथा बाह्य आचरण को भी उस अनुशासन से आच्छादित करते हैं, उनके लिए इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा युवा सखा बन जाता है। परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा जिनका मित्र हो, सखा हो, उनको सुख - शान्ति स्वतः अनुभव होती है, यह स्वाभाविक है।

पदार्थ :- आ = उपसर्ग। **घा** - ही। **ये** = जो। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना)। **इन्धते** - प्रदीप्त करते हैं, प्रकाशित करते हैं (इन्ध् = प्रकाश होना)। **स्तृणन्ति** - आच्छादित करते हैं (स्तृ = आच्छादित करना, ढकना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बृह् = बढ़ना)। **आनुषक्** - अनुकूलतया, स्तोता, स्तुति करने वाला (नु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **येषाम्** - जिनका। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **युवा** = युवा, युवा वय वाले, तुम दोनों। **सखा** - मित्र (सख् = मित्र होना) **॥**

134. भिन्धि विश्वा अप द्विषः, परि बाधो जही मृधः।
वसु स्पार्हम् तत् आभर ॥ 10 ॥ 8-45-40

मन्त्रार्थ - **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अप** = नीच **द्विषः** = द्वेष करने वाले का **भिन्धि** = भेदन करो। **मृधः** = हिंसक, को **बाधो** = बाधित करने वाले को **परि** = सभी ओर **जही** = हनन करो, नष्ट करो। **वसु** = हे वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, **तत्** = उस **स्पार्हम्** = स्पार्ह, सेवक को **आभर** = भरण करो **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **भिन्धि** = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **बाधो** = बाधित (बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **जही** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा – परित्याग करना, छोड़ना)। **मृधः** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्पार्हम्** = स्पार्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आभर** = भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना) **॥ 10 ॥ साम 915**

(15) सूक्त 3

135. इह इव शृण्वे एषाम्, कशा हस्तेषु यत् वदान्।
नि याममम् चित्रम् ऋञ्जते॥ 1॥ 1-37-3

मन्त्रार्थ - **इह** = यहाँ **इव** = के समान **यत्** = जो **वदान्** = वचनो को **शृण्वे** = सुनते हैं, **एषाम्** = इनके **हस्तेषु** = हाथों में **कशा** = कशा, शासन, दण्डाधिकार **(है)**। **नि** = निश्चित, निरन्तर **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतन, आश्चर्यरूप **याममम्** = प्रगति को, मार्ग को **ऋञ्जते** = अलंकरण करता है॥ **1**॥

भावार्थ - जो परमात्मा की, प्रकृति की वाणी को सुनते हैं, उनके सन्देश को समझते हैं, उनके हाथ में ही शासन होना चाहिए। इससे ही प्रगति का मार्ग अवलोकित-प्रकाशित हो सकता है।॥ **1**॥

पदार्थ - **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **शृण्वे** = सुनें (शृ - सुनना)। **एषाम्** = इनका (सर्वनाम)। **कशा** = कशा (कश् = शासन करना, दण्ड देना, प्रकाश करना, गति करना, चलना)। **हस्तेषु** = हाथों में (हस्त -देना, लेना, ग्रहण करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वदान्** = बोलता है (वद - कहना, स्पष्ट कहना, बोलना, समझाना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **याममम्** = यम को (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **ऋञ्जते** = अलंकरण करता है (ऋञ्ज - अलंकरण करना, प्रसाधन करना, पकाना)॥ **1**॥

136. इमे उ त्वा वि चक्षते, सखायः इन्द्र सोमिनः।
पुष्टावन्तो यथा पशुम्॥ 2॥ 8-45-16

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **इमे** = ये **उ** = निश्चय ही **त्वा** = तुमको **सोमिनः** = सोम वाले **सखायः** = मित्र **वि** = विशेष **चक्षते** = देखते हैं, **पुष्टावन्तो** = पुष्टजन **यथा** = जैसे **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को॥ **2**॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **चक्षते** = देखने के लिए (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमिनः** = सोमिन, सोम वाले (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुष्टावन्तो** = पुष्टों का, पोषितों का (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)॥ **2**॥

137. सम् अस्य मन्यवे विशो, विश्वा नमन्त कृष्टयः।
समुद्राय इव सिन्धवः॥ 3॥ 8-6-4

मन्त्रार्थ - **अस्य** = इसके **मन्यवे** = मन्यु के लिए **विश्वा** = विश्व, सभी **विशो** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **कृष्टयः** = कृषक, कर्षण-कृष्टि करने वाले **समुद्राय** = समुद्र के लिए, सम्यक् आद्रता, जल के लिए **सिन्धवः** = सिन्धुओं **इव** = के समान **सम्** = सम्यक्, भलीभाँति **नमन्त** = नमन करतें हैं॥ **3**॥

पदार्थ - **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **विशो** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **नमन्त** = नमन करें (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **कृष्टयः** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। **समुद्राय** = समुद्र के लिए (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना,

गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सिन्धवः =** सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना) **॥ 3 ॥**

138. देवानाम् इत् अवो महत्, तत् आ वृणीमहे वयम्।
वृष्णाम् अस्मभ्यम् ऊतये ॥ 4 ॥ 8-83-1

मन्त्रार्थ - देवानाम् = देवों का **इत् =** ही **महत् =** महान् **अवो =** रक्षण (है), **वयम् =** हम **तत् =** उस **वृष्णाम् =** पराक्रमी को **अस्मभ्यम् =** हमारे **ऊतये =** रक्षण के लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वृणीमहे =** वरण करते हैं **॥ 4 ॥**

पदार्थ - देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **इत् =** ही (अव्यय, निपात)। **अवो =** रक्षक, विद्वान् (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **महत् =** महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वृणीमहे =** वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **वयम् =** हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **वृष्णाम् =** पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अस्मभ्यम् =** हमारे लिए (सर्वनाम)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) **॥ 4 ॥**

139. सोमानाम् स्वरणम्, कृणुहि ब्रह्मणस्पते।
कक्षीवन्तम् यः औशिजः ॥ 5 ॥ 1-18-1

मन्त्रार्थ : ब्रह्मणस्पते हे महान् ऐश्वर्यशाली! **यः** जो **औशिजः** कामनाजन्य (है), **कक्षीवन्तम्** धारणायुक्त को **सोमानम्** सृजनशील, ऐश्वर्यशाली, प्रेरक, **स्वरणम्** उपदेशक को **कृणुहि** करो (बनाओ) **॥ 5 ॥**

भावार्थ : जो प्रभातजन्य प्रकाशपुत्र हैं, उनको दिव्य विद्या, प्रकाश का गर्व तो है, साथ ही विद्या की प्यास भी है। वे सृजनशील, प्रेरक उपदेशक बनते हैं। अध्यात्म और विद्या का ऐश्वर्य उनको प्राप्त होता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ : सोमानम् = सृजनशील (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, सू = प्रेरणा देना)। **स्वरणम्** = उपदेशक (स्वृ = शब्द करना)। **कृणुहि** = करो (कृ = करना)। **ब्रह्मणस्पते** = ऐश्वर्यवृद्ध, बड़े ऐश्वर्यवाला (ब्रह् = बढ़ना, पत् = ऐश्वर्य होना)। **कक्षीवन्तम्** = धारणायुक्त (कक्ष = धारण करना, घर्षण करना)। **यः** = जो। **औशिजः** = कामनाजन्य (उश्-वश् = कामना करना, चाहना) **॥ 5 ॥**

140. बोधन्मना इत् अस्तु, नो वृत्रहा भूर्यासुतिः।
शृणोतु शक्रः आशिषम् ॥ 6 ॥ 8-93-18

मन्त्रार्थ - वृत्रहा = वृत्र का हनन करने वाले **भूर्यासुतिः =** बहुत ऐश्वर्यवान् **नो =** हमारे लिए **बोधन्मना =** मन का बोध करने वाला **इत् =** ही **अस्तु =** हो। **शक्रः =** शक्तिवान्, समर्थ **आशिषम् =** आशीष को **शृणोतु =** सुनें **॥ 6 ॥**

पदार्थ - बोधन्मना = बोध का (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **अस्तु =** हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **भूर्यासुतिः =** बहुत ऐश्वर्यवान् (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **शृणोतु =** सुनें। (श्रु-शृण् = सुनना)। **शक्रः =** शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **आशिषम् =** विशेषताएं, आशीष को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना) **॥ 6 ॥**

141. अद्य आ नो देव सवितः, प्रजावत् सावीः सौभगम्।
परा दुःष्वप्न्यम् सुव॥ 7॥ 5-82-4

मन्त्रार्थ - **देव** = हे देव, तेजस्वी, **सवितः** = हे ऐश्वर्य युक्त, उत्पन्न करने वाले, **अद्य** = आज **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नो** = हमारे लिए **प्रजावत्** = प्रजा के समान **सौभगम्** = सौभाग्य को, सौभग को **सावीः** = उत्पन्न करो। **दुःष्वप्न्यम्** = दुःस्वप्न्य को **परा** = परे, दूर **सुव** = फेंक दो, भेज दो॥ 7॥

पदार्थ - **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सवितः** = सवित, ऐश्वर्य युक्त और उत्पन्न करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **प्रजावत्** = प्रजा के समान (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **सावीः** = उत्पन्नकर्ता, उत्पन्न करने वाली (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना)। **सौभगम्** = सौभाग्य को, सौभग को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **दुःष्वप्न्यम्** = दुःस्वप्न्य को (दुः = बुरा, कठिन, स्वप् - सोना, निद्रा लेना)। **सुव** = उत्पन्न करो, ऐश्वर्य दो, फेंक दो, भेज दो (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सू- भेजना, उड़ाना)॥ 7॥

142. क्व स्य वृषभो युवा, तुविग्रीवो अनानतः।
ब्रह्मा कः तम् सपर्यति॥ 8॥ 6-4-27

मन्त्रार्थ - **स्य** = वह **वृषभो** = पराक्रमी **युवा** = युवा **तुविग्रीवो** = बहुत ग्रीवायुक्त **अनानतः** = प्राणवान् **क्व** = कहाँ **(है), कः** = कौन **ब्रह्मा** = बड़ा, बृहत् **तम्** = उसको **सपर्यति** = पूजता है, सेवा करता है॥ 8॥

पदार्थ - **क्व** = कहाँ। **स्य** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्। सि = बाँधना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **तुविग्रीवो** = तुविग्रीव (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, गृ = सींचना, समझना, जानना,खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)। **अनानतः** = प्राणवान् (आ - सम्यक्, समन्तात्, अन - प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, जानना, पाना, चेतन होना, चेतन करना)। **ब्रह्मा** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **कः** = कौन, किस ने (पुल्लिंग)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **सपर्यति** = सेवा करो (सपर - पूजा करना, सेवा करना)॥ 8॥

143. उपह्वरे गिरीणाम्, सङ्गमे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत॥ 9॥ 8-6-28

मन्त्रार्थ :- **गिरीणाम्** = वाणियों, बोध, सिञ्चन के **उपह्वरे** = समीप वरण, आच्छादन, निवास में, **च** = और **नदीनाम्** = शब्दों के, प्रकाश के **सङ्गमे** = संगमन में **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **विप्रो** = पूर्ण, तृप्त करने वाले **अजायत** = उत्पन्न हुए॥ 15॥

भावार्थ :- **गिरीणाम् अर्थात्** वाणियों का, बोध का, सिञ्चन का। **उपह्वरे का अर्थ है** समीप पुकारने में, उपवास में अथवा निकट रहकर वरण, आच्छादन, निवास के संगमन में और नदियों अर्थात् शब्दों के, प्रकाश के संगम में विप्र अर्थात् पूर्ण, तृप्त करने वाले ऋषि, मनीषी **धिया** अर्थात् धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा उत्पन्न हुए। **इस मन्त्र का यही मुख्य सन्देश है कि** विप्र अर्थात् पूर्ण, तृप्त करने वाले ऋषि, मनीषी **धिया अर्थात्** धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा उत्पन्न होते हैं। विप्र, ऋषि, मनीषी बनने के लिए गहन साधना तथा स्वाध्याय की अपेक्षा है॥ 15॥

पदार्थ- उपह्वरे = उपकुटिल में (उप - समीप, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना,

निवास करना)। **गिरीणाम् =** वाणियों का, बोध का, सिञ्चन का (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **सङ्गमे =** संगमन में (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना, साथ चलना)। **च – च =** और। **नदीनाम् =** नदियों का (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **धिया =** धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **विप्रो =** विप्र, पूर्ण, तृप्त करने वाले (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। **अजायत =** उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना) **॥ 15 ॥ साम 1084**

144. प्र सम्राजम् चर्षणीनाम्, इन्द्रम् स्तोता नव्यम् गीर्भिः।
नरम् नृषाहम् मंहिष्ठम् ॥ 10 ॥ 8-16-1

मन्त्रार्थ - गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **चर्षणीनाम् =** आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सम्राजम् =** सम्यक् प्रकाशमान, **नव्यम् =** स्तुति योग्य, **नरम् =** नर, **नृषाहम् =** नृषाह, नरों को सहन करने वाले, **मंहिष्ठम् =** महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बडे **इन्द्रम् =** इन्द्र को **स्तोता =** स्तुति करो **॥ 10 ॥**

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सम्राजम् =** सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। **चर्षणीनाम् =** आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तोता =** स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। **नव्यम् =** नवीनता, स्तुति को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **नरम् =** नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **नृषाहम् =** नृषद (नृ - ले जाना, सद्-सीद-सद्ऌ - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना, बैठना, चढ़ाई करना, सूखना)। **मंहिष्ठम् =** महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) **॥ 10 ॥**

(16) सूक्त 4

145. अपात् उ शिप्री अन्धसः, सुदक्षस्य प्रहोषिणः।
इन्दोः इन्द्रो यवाशिरः ॥ 1 ॥ 8-12-8

मन्त्रार्थ - उ = निश्चय ही **शिप्री** = शिप्र, शीघ्रकारी **अन्धसः =** प्राणवान्, **सुदक्षस्य =** सुदक्ष, सुसमृद्ध का **प्रहोषिणः =** अधिक आदान-प्रदान करने वाला **इन्दोः =** इन्दु का **यवाशिरः =** यवाशिर, मिलाने वाली वाणी युक्त **इन्द्रो =** इन्द्र **ने अपात् =** रक्षा की **॥ 1 ॥**

पदार्थ - अपात् = पदहीन, रक्षा की (पद् - चलना, भूषित होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना)। **उ =** निश्चय ही, भी। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **अन्धसः =** प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **सुदक्षस्य =** सुदक्ष, सुसमृद्ध के लिए (सु - सुन्दर, अच्छा, दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **प्रहोषिणः =** प्रहोषिण, अधिक आदान-प्रदान करना (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **इन्दोः =** इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रो =** इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **यवाशिरः =** यवाशिर (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ -सुनना, जाना, जानना, पाना) **॥ 1 ॥**

146. इमा उ त्वा पुरूवसो, अभि प्र नोनुवुः गिरः।

गावो वत्सम् न धेनवः ॥ 2 ॥ 6-45-25

मन्त्रार्थ - **पुरूवसो** = हे अग्र-वसन वाले, **इमा** = ये **उ** = ही **त्वा** = तुम्हारे लिए **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन युक्त **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **धेनवः** = प्रिय, पालन करने वाले **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **वत्सम्** = बोलने वाले **न** = के समान **नोनुवुः** = स्तुति करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ - **इमा** = ये। **उ** = ही। **त्वा** = तुम्हारे लिए। **पुरूवसो** = अग्र-वसन वाले (पुर् - अभिगमन करना, आगे जाना, वस् - वसना, वास करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नोनुवुः** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वत्सम्** = बोलने वाले को (वद् - वच्- बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना) ॥ 2 ॥

147. अत्र ह गोः अमन्वत, नाम त्वष्टुः अपीच्यम्।
इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥ 3 ॥ 10-17-1

मन्त्रार्थ - **अत्र** = यहाँ **ह** = ही **गोः** = शब्दयुक्त, मननशील, गतिशील **त्वष्टुः** = त्वष्टा का, प्रकाशक का **नाम** = नाम **इत्था** = इस प्रकार **चन्द्रमसो** = आनन्द, प्रकाश के **गृहे** = गृह में, घर में **अपीच्यम्** = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय **अमन्वत** = माना गया है ॥ 3 ॥

भावार्थ - यहाँ चन्द्रमा के घर में त्वष्टा, प्रकाशक अर्थात् सूर्य का प्रकाश ही है, ऐसा जानने योग्य है, इस प्रकार का भावार्थ विद्वानों ने किया है, जो स्वीकार्य है। चन्द्रमा में सूर्य का ही प्रकाश है, यह सर्वविदित है। परन्तु वेद की गरिमा के अनुकूल तो यही है कि त्वष्टा अर्थात् प्रकाशक तो मूलतः ईश्वर, परमात्मा ही है। उसका ही प्रकाश सूर्य, चन्द्र आदि सर्वत्र सृष्टि में व्याप्त है, यहाँ यह जानना चाहिए ॥ 3 ॥

पदार्थ - **अत्र** = यहाँ (अव्यय)। **अह** = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **गोः** = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अमन्वत** = सेवाभावी, विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **त्वष्टुः** = त्वष्टा का, प्रकाशक का (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। **अपीच्यम्** = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय (अ - नहीं, अप - पालन करना, पि - जाना, स्थानान्तर करना, पी = पीना, पान करना)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **चन्द्रमसो** = आनन्द, प्रकाश (चन्द्र- आनन्द होना, चमकना)। **गृहे** = गृह में, घर में (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना) ॥ 3 ॥

148. यत् इन्द्रो अनयत् रितो, महीः अपो वृषन्तमः।
तत्र पूषा भुवत् सचा ॥ 4 ॥ 6-57-4

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **रितो** = प्रगतिशील, प्रवाहमान **महीः** = मही, महिमावान्, महान् **अपो** = पालन करने वाला **वृषन्तमः** = शक्तिशाली, पराक्रमी **अनयत्** = ले जाता है, **तत्र** = वहाँ **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **भुवत्** = होता हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अनयत्** = ले गये, प्राणवान् करते हुए, नहीं ले जाते हुए, प्राणवान् करते हुए, न जानते हुए, न जाते हुए, न पाते हुए (अ-नयन, अन्-अयन, अ - नहीं, भूतकालिक क्रिया प्रत्यय। नी-नय - ले जाना, अन् - जीना, समर्थ होना, जाना, अन् - नहीं, इ-अय् - जाना, जानना, पाना)। **रितो** = प्रगतिशील, विद्वान (रि = हिंसा करना, जानना, री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना)। **महीः** = मही, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना,

पालन करना)। **वृषन्तमः** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **तत्र** = वहाँ (सर्वनाम)। **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना) **॥ 4 ॥**

149. गौः धयति मरुताम्, श्रवस्युः माता मघोनाम्।
युक्ता वह्नी रथानाम् ॥ 5 ॥ 8-94-1

मन्त्रार्थ - **गौः** = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक **श्रवस्युः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील **मघोनाम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् का **मरुताम्** = मरुतों का, मरणशीलों का **माता** = माता, मानकर्ता, निर्माता **रथानाम्** = रथों का **युक्ता** = संयुक्त **वह्नी** = वहन करने वाला **धयति** = धारण, पोषण, रक्षण करता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **गौः** = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **धयति** = धारण, पोषण, रक्षण करता हैं (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मरुताम्** = मरुतों का, मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **श्रवस्युः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **माता** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मघोनाम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **युक्ता** = युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वह्वी** = वहन करने वाले (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **रथानाम्** = रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना) **॥ 5 ॥**

150. उप नो हरिभिः सुतम्, याहि मदानाम् पते।
उप नो हरिभिः सुतम् ॥ 6 ॥ 8-93-31

मन्त्रार्थ - **मदानाम्** = हे मदों का, तृप्तियों के **पते** = पति, पालक, रक्षक, **नो** = हमारे **उप** = समीप **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **याहि** = प्राप्त हों, प्राप्त करें। **नो** = हमारे **उप** = समीप **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (**याहि** = प्राप्त हों, प्राप्त करें) **॥**

पदार्थ - **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **मदानाम्** = मदों का, तृप्तियों का (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, समाधान करना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) **॥ 6 ॥ साम 1087**

151. इष्टा होत्रा असृक्षत, इन्द्रम् वृधन्तो अध्वरे।
अच्छ अवभृथम् ओजसा ॥ 7 ॥ 8-93-23

मन्त्रार्थ - **इष्टा** = विद्या, ज्ञान, इच्छा **वृधन्तो** = वृद्धिशील, वर्द्धमान **होत्रा** = दानी, दानकर्ता ने **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अध्वरे** = अहिंसक में **असृक्षत** = संचरित किया, जाना, पाया। **अवभृथम्** = अवभरण को **ओजसा** = ओज द्वारा **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **इष्टा** = विद्या, ज्ञान, इच्छा (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **होत्रा** = दानी, दानकर्ता (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना,जानना, प्राप्त करना, पाना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वृधन्तो** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **अवभृथम्** = अवभरण को (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, भृ - भरण करने वाले)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 7 ॥

152. अहम् इत् हि पितुः परि, मेधाम् ऋतस्य जग्रह।
अहम् सूर्य इव अजनि ॥ 8 ॥ 8-6-10

मन्त्रार्थ - **अहम्** = मैं **हि** = निश्चय **इत्** = ही **पितुः** = पिता के **ऋतस्य** = ऋत के **मेधाम्** = मेधा को **परि जग्रह** = परिग्रहण करता हूँ। **अहम्** = मैं **सूर्य** = सूर्य, सृजनशील **इव** = के समान **अजनि** = उत्पन्न करता हूँ ॥ 8 ॥

पदार्थ - **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **मेधाम्** = मेधा को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **जग्रह** = गृहण किया, जाना (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **सूर्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **अजनि** = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना) ॥ 8 ॥

153. रेवतीः नः सधमादे, इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः।
क्षुमन्तो याभिः मदेम ॥ 9 ॥ 1-30-13

मन्त्रार्थ - **नः** = हम **रेवतीः** = प्रगतिशील **सधमादे** = आनन्द के साथ **इन्द्रे** = इन्द्र में, परम ऐश्वर्य में **तुविवाजाः** = बहुत बलशाली **सन्तु** = हों, **याभिः** = जिनके द्वारा **क्षुमन्तो** = शब्दकर्ता **मदेम** = आनन्दित होते हैं ॥ 9 ॥

पदार्थ - **रेवतीः** = गतिशीलता (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सधमाद** = आनन्द के साथ, सानन्द (सध+मद्, सद्+मद्, सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **तुविवाजाः** = तुविवाजा (**तुवि** = बहुत, अनेक (सर्वनाम, अव्यय, वैदिक उपसर्ग)। तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **क्षुमन्तो** = विद्वान्, गतिशील, शब्दकर्ता (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **याभिः** = जिसके द्वारा (सर्वनाम)। **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें (मद् – हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना) ॥ 9 ॥

154. सोमः पूषा च चेततुः, विश्वासाम् सुक्षितीनाम्।
देवत्रा रथ्योः हिता ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **च** = और **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता **विश्वासाम्** = सभी **सुक्षितीनाम्** = सुन्दर निवास वालों का **देवत्रा** = देवों को, देवों का त्राण करने वाले **रथ्योः** = रथी का **हिता** = हितकारी, गति, वृद्धि करने वाला **चेततुः** = चेतन करे ॥ 10 ॥

पदार्थ - **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत

सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **पूषा =** पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **च =** और। **चेततुः =** चेतन, चुना गया, एकत्र (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **विश्वासाम् =** सभी (सर्वनाम)। **सुक्षितीनाम् =** सुन्दर निवास वाले को (सु = अच्छा, उपसर्ग, क्षि = निवास करना, रहना)। **देवत्रा =** देवों का त्राण करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, त्रै - त्राण करना, रक्षा करना)। **रथ्योः =** रथ्य (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हिता =** हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना) **॥ 10 ॥**

(17) सूक्त 5

155. पान्तम् आ वो अन्धसः, इन्द्रम् अभि प्र गायत।
विश्वासाहम् शतक्रतुम्, मंहिष्ठम् चर्षणीनाम् ॥ 1 ॥ 8-92-1

मन्त्रार्थ :- अन्धसः = प्राणवान् **वो =** तुम लोग **आ =** समन्तात्, सम्यक् **पान्तम् =** रक्षण करते हुए, पीते हुए **विश्वासाहम् =** विश्व को सहन करने में समर्थ **शतक्रतुम् =** सैकड़ों कर्म करने वाले को **चर्षणीनाम् =** आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **मंहिष्ठम् =** महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित **इन्द्रम् =** इन्द्र को **अभि =** अभिमुख, सर्वथा **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, **गायत =** गायन करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अन्धसः =** प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **विश्वासाहम् =** विश्व को सहन करने में समर्थ (विश्व - सभी, सह् - सहन करना, समर्थ होना)। **शतक्रतुम् =** सैकड़ों कर्म करने वाले को (शत - सौ, कृ - करना)। **मंहिष्ठम् =** महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **चर्षणीनाम् =** आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना) **॥ 1 ॥**

156. प्र वः इन्द्राय मादनम्, हर्यश्वाय गायत।
सखायः सोमपाव्ने ॥ 2 ॥ 7-31-1

मन्त्रार्थ :- वः = तुम **सखायः =** मित्र लोग **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **हर्यश्वाय =** हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए **सोमपाव्ने =** सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए **मादनम् =** हर्ष को, आनन्द को **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत =** गायन करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मादनम् =** हर्ष को, मादन को (मदी-माद् = हर्ष होना)। **हर्यश्वाय =** हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सखायः =** मित्र (सख् = मित्र होना)। **सोमपाव्ने =** सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य, अमानवी पराक्रम होना,

ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पू = पावन करना। पा = पालन करना, बचाना) ॥ 2 ॥

157. वयम् उ त्वा तदित् अर्थाः, इन्द्र त्वा अयन्तः सखायः।
कण्वा उक्थेभिः जरन्ते ॥ 3 ॥ 8-2-16

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वा** = तुमको **वयम्** = हम **उ** = निश्चय ही **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **तदित्** = वही **अयन्तः** = गति, ज्ञान, प्राप्ति करते हुए **अर्थाः** = अर्थ, प्रयोजन, चाहने वाले **सखायः** = मित्र **कण्वा** = कण्व, शाब्दिक, विद्वान् **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा **जरन्ते** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **वयम्** = हम, हम लोग (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **तदित्** = वही (अव्यय)। **अर्थाः** = अर्थ, प्रयोजन (अर्थ - मांगना, याचना करना, चाहना, प्रयोजन-तात्पर्य होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अयन्तः** = गति, ज्ञान, प्राप्ति (अय् = जाना, जानना, पाना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **कण्वा** = कण्व, शाब्दिक, विद्वान् (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना)। **जरन्ते** = जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व करते हैं (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना) ॥ 3 ॥

158. इन्द्राय मद्वने सुतम्, परि ष्टोभन्तु नो गिरः।
अर्कम् अर्चन्तु कारवः ॥ 4 ॥ 8-92-19

मन्त्रार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्यवान् के लिए, **मद्वने** = आनन्दयुक्त के लिए **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **नो** = हमारा **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **परि** = सभी ओर **ष्टोभन्तु** = स्तुति करें। **कारवः** = कर्मशील **अर्कम्** = अर्क को **अर्चन्तु** = अर्चना करें ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मद्वने** = आनन्द में, हर्ष में, प्रसन्नता में (मद - हृष्ट होना, हर्षित होना, थकना, श्रान्त होना, मद - तृप्त करना, समाधान करना, मद - हृष्ट होना, हर्षित होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **ष्टोभन्तु** = स्तुति करें (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **अर्कम्** = अर्क को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **अर्चन्तु** = अर्चना करें (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **कारवः** = करने वाला (कृ - करना) ॥ 4 ॥

159. अयम् ते इन्द्र सोमो, निपूतो अधि बर्हिषि।
एहि ईम् अस्य द्रवा पिब ॥ 5 ॥ 8-17-11

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **अयम्** = यह **ते** = तुम्हारा **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **निपूतो** = निश्चित पवित्र **अधि** = अधिगत, उच्च **बर्हिषि** = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में (है)। **एहि** = जाओ, प्राप्त करो **ईम्** = इस प्रकार **अस्य** = इसका **द्रवा** = प्रवाह, ज्ञान **पिब** = पी लो ॥ 5 ॥

पदार्थ :- **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **निपूतो** = निश्चित पवित्रकर्ता (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **बर्हिषि** = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **एहि** = जाओ, प्राप्त करो (ई

- जाना)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **द्रवा** = प्रवाहकामी, ज्ञान (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 5 ॥

160. सुरूपकृत्नुम् ऊतये, सुदुघाम् इव गोदुहे।
जुहूमसि द्यवि द्यवि ॥ 6 ॥ 1-4-1

मन्त्रार्थ - **सुरूपकृत्नुम्** = उत्तम रूप करने वाले को **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले **इव** = के समान **ऊतये** = रक्षा के लिए, **गोदुहे** = गोदुह के लिए, शब्द-मनन का दोहन करने वाले के लिए **द्यवि द्यवि** = प्रत्येक अग्रता में प्रकाश में **जुहूमसि** = आदान-प्रदान करते हो ॥ 6 ॥

पदार्थ - **सुरूपकृत्नुम्** = सुरूपकृत्नु को, उत्तम रूप करने वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रुपाकृति लाना, कृ = करना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, दुह् -दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **गोदुहे** = गोदुह के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना। दुह् -दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **जुहूमसि** = आदान-प्रदान करने वाले हैं (जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना)। **द्यवि** = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **द्यवि** = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना) ॥ 6 ॥

161. अभि त्वा वृषभा सुते, सुतम् सृजामि पीतये।
तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥ 7 ॥ 8-45-22

मन्त्रार्थ :- **वृषभा** = हे पराक्रमी, **त्वा** = तुमको **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **पीतये** = पान के लिए **सृजामि** = उत्पन्न करता हूँ। **तृम्पा** = तृप्त, शान्ति, प्रेम करो, **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को **व्यश्नुही** = विशेष व्यापक करो, विशेष पोषण करो ॥ 7 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वृषभा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सृजामि** = त्याग, रचना, उत्पन्न करता हूँ (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तृम्पा** = तृप्त, शान्ति, प्रेम (तृम्प - तृप्त होना या करना, शान्त होना, प्रेम करना)। **व्यश्नुही** = विशेष व्यापक हो, विशेष पोषणीय हो (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 7 ॥

162. यः इन्द्र चमसेषु आ, सोमः चमूषु ते सुतः।
पिब इत् अस्य त्वम् ईशिषे ॥ 8 ॥ 8-82-7

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **चमसेषु** = चमसों में, भोजन-पात्र **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **चमूषु** = भोजन, खाने वालों में **ते** = तुम्हारे लिए **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **पिब** = पी लो। **अस्य** = इसका **त्वम्** = तुम **इत्** = ही **ईशिषे** = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन करते हो ॥ 8 ॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **चमसेषु** = चमस, भोजन-पात्र (चम् - खाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना,

उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्‌भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **चमूषु =** भोजन, खाने वाला (चम् - खाना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्‌भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पिब =** पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **ईशिषे =** ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना) **॥ 8 ॥**

163. योगे योगे तवस्तरम्, वाजे वाजे हवामहे।
सखायः इन्द्रम् ऊतये ॥ 9 ॥ 1-3-7

मन्त्रार्थ :- सखायः = मित्रगण **तवस्तरम् =** अत्यन्त प्रगति-वृद्धिकारक **इन्द्रम् =** इन्द्र को **ऊतये =** रक्षा के लिए **योगे योगे =** योग-योग में **वाजे वाजे =** विद्या-गति-बल में **हवामहे =** आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ :- योगे = योग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **योगे =** योग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **तवस्तरम् =** अत्यन्त प्रगति-वृद्धिकारक को (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **वाजे =** वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजे =** वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **हवामहे =** आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सखायः =** मित्र (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) **॥ 9 ॥**

164. आ तु इत आ नि षीदत, इन्द्रम् अभि प्र गायत।
सखायः स्तोमवाहसः ॥ 10 ॥ 1-5-1

मन्त्रार्थ :- स्तोमवाहसः = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले **सखायः =** मित्रगण **तु =** क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत **आ इत =** आयें, **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नि षीदत् =** बैठें, प्रतिष्ठित हों **इन्द्रम् =** इन्द्र को **अभि =** अभिमुख, सर्वथा **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत =** गायन करें **॥ 10 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **तु =** क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत (अव्यय, निपात)। **इत् =** ही (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **षीदत् =** सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सखायः =** मित्र के लिए (सख् = मित्र होना)। **स्तोमवाहसः =** स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना) **॥**

(18) सूक्त 6

165. इदम् हि अनु ओजसा, सुतम् राधानाम् पते।
पिबा तु अस्य गिर्वणः ॥ 1 ॥ 3-51-10

मन्त्रार्थ - राधानाम् = हे शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धियों के **पते =** पति, **गिर्वणः =** हे वाणी, बोध, सिञ्चनकर्ता,

इदम् = इसको **हि** = ही **अनु** = अनुकूल **ओजसा** = ओज द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत, तो, परन्तु, अब **अस्य** = इसका **पिबा** = पियो, पान करें ॥ 1 ॥

पदार्थ - **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **राधानाम्** = शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत (अव्यय, निपात)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना) ॥ 1 ॥

166. महान् इन्द्रः पुरः च नो, महित्वम् अस्तु वज्रिणे।
द्यौः न प्रथिना शवः ॥ 2 ॥ 1-8-5

मन्त्रार्थ - **नो** = हमारे लिए **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान् **पुरः** = अग्रगामी, अग्रणी **च** = और **महित्वम्** = महित्व को **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **द्यौः** = द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी **न** = के समान **प्रथिना** = विस्तृत, प्रसिद्ध **शवः** = गति, ज्ञान युक्त **अस्तु** = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ - **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पुरः** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **च** = और। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **महित्वम्** = महित्व को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्रथिना** = विस्तार, प्रसिद्धि (प्रथ = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **शवः** = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) ॥ 2 ॥

167. आ तु नः इन्द्र क्षुमन्तम्, चित्रम् ग्राभम् सम् गृभाय।
महाहस्ती दक्षिणेन ॥ 3 ॥ 8-81-1

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली,` **महाहस्ती** = हे महाहस्ती, महान् हाथ वाले, **दक्षिणेन** = दक्षिण द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत **नः** = हमारे लिए **क्षुमन्तम्** = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को **चित्रम्** = अद्भुत चेतना, आश्चर्यरूप को **ग्राभम्** = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को **सम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति **गृभाय** = गर्भिति करो, ग्रहण करो, वाणी, बोध, अभिसिंचन करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत (अव्यय, निपात)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **क्षुमन्तम्** = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **ग्राभम्** = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को (गृभ् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **गृभाय** = गृभ के लिए, ग्रहण करने वाले, वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले के लिए (गृह् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना, निवास करना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना,

शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - ग्रहण करना, लेना, अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **महाहस्ती** = महाहस्ती, महान् हाथ वाला (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना। हस्त -देना, लेना, ग्रहण करना)। **दक्षिणेन** = दक्षिण द्वारा (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना) **॥ 3 ॥**

168. अभि प्र गोपतिम् गिरा, इन्द्रम् अर्च यथा विदे।
सूनुम् सत्यस्य सत्पतिम् ॥ 4 ॥ 8-69-4

मन्त्रार्थ - **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, **गिरा** = वाणियों द्वारा **यथा** = जैसे **विदे** = जानते हो, **गोपतिम्** = सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, **सत्यस्य** = सत्य के **सूनुम्** = ऐश्वर्य, सृजन, **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अर्च** = पूजो, सम्मान, सेवा करो।**॥ 4 ॥**

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्च** = पूजा, सम्मान, सेवा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **विदे** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **सूनुम्** = सूनु को, ऐश्वर्य को, उत्पन्न को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सत्यस्य** = सत्य का (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना) **॥ 4 ॥**

169. कया नः चित्र आ भुवत्, ऊती सदावृधः सखा।
कया शचिष्ठया वृता ॥ 5 ॥ 4-31-1

मन्त्रार्थ :- **कया** = किससे **चित्र** = चित्र, चेतन, अद्भुद् **आ** = समन्तात्, सम्पूर्ण **ऊती** = शब्द-रक्षा करने वाला **सदावृधः** = सदा वर्धित **नः** = हमारा **सखा** = मित्र **भुवत्** = होता हैं, **कया** = किस **शचिष्ठया** = उत्तम वाणी द्वारा **वृता** = आवृत, वर्तमान (है) **॥ 5 ॥**

भावार्थ :- किस उपाय द्वारा अद्भुद्, सदा वृद्धि करने वाला,-रक्षा करने वाला परमात्मा हमारा सखा है। स्पष्ट वाणी द्वारा वर्तमान रहता है। भाव है कि जिस उपाय से परमात्मा हमारा मित्र बन जाता है तथा जिस वाणी से वह हमारे जीवन में इस रूप में वर्तमान रहता है, उसे जानना चाहिए, वह यही वेदवाणी है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **कया** = किससे, किसके द्वारा, किस उपाय द्वारा (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **चित्र** = चित्र, अद्भुद्, चित्र या रूप वाला (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सदावृधः** = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना -वृध् - वृद्धि होना, बढ़ना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **कया** = किससे (सर्वनाम)। **शचिष्ठया** = उत्तम वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना)। **वृता** = हिंसक, आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना) **॥ 5 ॥**

170. त्यम् उ वः सत्रासाहम्, विश्वासु गीर्षु आयतम्।
आच्यावयसि ऊतये॥ 6॥ 8-92-7

मन्त्रार्थ - **त्यम्** = उस को **उ** = निश्चय ही **वः** = तुम लोग **सत्रासाहम्** = सत्र में समर्थ को **विश्वासु** = सब में **गीर्षु** = वाणियों, बोध, सिञ्चन में **आयतम्** = आयत, व्याप्त, विस्तृत को **आच्यावयसि** = आदर, प्रगति करते हो॥ 6॥

पदार्थ - **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **सत्रासाहम्** = सत्र में समर्थ को, विस्तार, सम्बन्ध बनाने में समर्थ (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना, प्रसन्न होना)। **विश्वासु** = सब में वास करने वाले (विश्व = सब)। **गीर्षु** = वाणियों, बोध, सिञ्चन का (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गायन करना, गमन करना, जानना)। **आयतम्** = आयत को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः। आय - शब्द करना, शासन करना। ई-अय् - जाना, चलना। यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **आच्यावयसि** = आदर, प्रगति करते हो (अच् - चलना, जाना, आदर करना, मांगना)॥ 6॥

171. सदसः पतिम् अद्भुतम्, प्रियम् इन्द्रस्य काम्यम्।
सनिम् मेधाम् अयाषिम् ॥ 7॥ 1-18-6

मन्त्रार्थ- **सदसः** सभा के **पतिम्** रक्षक, पालक, **अद्भुतम्** आश्चर्य जनक, **प्रियम्** प्रिय, **इन्द्रस्य** इन्द्र के **काम्यम्** कमनीय, कामनायोग्य, **सनिम्** दानी, **मेधाम्** मेधा, बुद्धि को **अयाषिम्** प्राप्त होऊं॥ 7॥

भावार्थ - इन्द्र के काम्य, प्रिय, अद्भुत सभापति, दानी मेधा को व्यापकता से प्राप्त होऊं, यह भावना है। स्वाहा शब्द यजन आदि सामूहिक कार्यक्रमों में मन्त्र के अन्त में सामान्यतः बोला जाता रहा है, जैसे मन्त्र के आरम्भ में अनिवार्य रूप से ओम् का उच्चारण किया जाता है। वहाँ भी भावना यही होती है कि जो मन्त्र हम उच्चारित कर रहे हैं, जो पवित्र कार्य हम कर रहे हैं, वह व्यापक हो, उसका लाभ सभी को प्राप्त हो।

पदार्थ - **सदसः** = सभा के (सद् - बैठना) **पतिम्** = रक्षक, पालक (पत् - ऐश्वर्य होना, गति करना, उतरना, गिरना, शक्तिमान् होना, श्रीमान् होना, पराक्रम करना) **अद्भुतम्** = आश्चर्य जनक, प्रियम् प्रिय (प्री - प्रीति करना) **इन्द्रस्य** = इन्द्र के (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) **काम्यम्** = कमनीय (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **सनिम्** = दानी (दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना) **मेधाम्** = मेधा, बुद्धि को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना) **अयाषिम्** = प्राप्त होऊं (अय् - जाना, चलना, जानना, पाना)॥ 7॥

172. ये ते पन्था अधो दिवो, येभिः वि अश्वम् ऐरयः।
उत श्रोषन्तु नो भुवः॥ 8॥

मन्त्रार्थ - **ये** = जो **ते** = तुम्हारे **पन्था** = मार्ग **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **अधो** = नीचे (हैं), **येभिः** = जिनसे **वि** = विशेष **अश्वम्** = तीव्र गति युक्त, व्यापक को **ऐरयः** = प्राप्त होते हैं, **उत** = उसी प्रकार **नो** = हमारे **भुवः** = भुवन, जन **श्रोषन्तु** = सुनें॥ 8॥

पदार्थ - **ये** = जो। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पन्था** = मार्ग (पथ, पन्थ् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। **अधो** = नीचे (अव्यय)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **येभिः** = जिनसे। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **ऐरयः** = प्राप्त होते हैं (इर् - ईर्ष्या करना, ऋ-इर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **उत** = ही (अव्यय)। **श्रोषन्तु** = सुनते हो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **भुवः** = भुवः (भु

= जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 8 ॥

173. भद्रम् भद्रम् नः आ भर, इषम् ऊर्जम् शतक्रतो।
यत् इन्द्र मृडयासि नः ॥ 9 ॥ 8-93-28

मन्त्रार्थ - **शतक्रतो** = हे सैकड़ों कर्म करने वाले, (अत्यन्त कर्मशील) **भद्रम्** = कल्याणकारी **भद्रम्** = कल्याणकारी **नः** = हमारे लिए **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को, **ऊर्जम्** = ऊर्जा को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **यत्** = जो **नः** = हमको **मृडयासि** = सुखी करते हो ॥ 9 ॥

पदार्थ - **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **ऊर्जम्** = ऊर्जा को (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मृडयासि** = सुखी करते हो (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 9 ॥

174. अस्ति सोमो अयम् सुतः, पिबन्ति अस्य मरुतः।
उत स्वराजो अश्विना ॥ 10 ॥ 8-94-4

मन्त्रार्थ - **अयम्** = यह **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्नकर्ता **सोमो** = ऐश्वर्यमय **अस्ति** = है। **अस्य** = इसका **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का **उत** = उसी प्रकार **स्वराजो** = स्वयम् प्रकाशमान **अश्विना** = तीव्र गति युक्त, व्यापक **पिबन्ति** = पीते है, पान करते है ॥ 10 ॥

पदार्थ - **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **सोमो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पिबन्ति** = पीता है, पान करते है (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **उत** = ही (अव्यय)। **स्वराजो** = स्वयं प्रकाशमान (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना) ॥ 10 ॥

(19) सूक्त 7

175. ईङ्खयन्तीः अपस्युवः, इन्द्रम् जातम् उपासते।
वन्वानासः सुवीर्यम् ॥ 1 ॥ 10-153-1

मन्त्रार्थ - **ईङ्खयन्तीः** = प्रगतिशील, **अपस्युवः** = पालनकर्ता, **वन्वानासः** = स्तुति-सेवा करने वाले **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को **जातम्** = उत्पन्नकर्ता **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यवान्, इन्द्र को **उपासते** = उपासना करते है ॥ 1 ॥

पदार्थ - **ईङ्खयन्तीः** = जाती हुई (ईङ्ख = जाना)। **अपस्युव** = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **उपासते** = उपासना करते है (उप - समीप, निकट, अस् - होना, आस् - बैठना,

उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **वन्वानासः** = स्तुति करने वाले, सेवा करने वाले (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 1 ॥

176. न कि देवाः इनीमसि, न कि आ योपयामसि।
मन्त्रश्रुत्यम् चरामसि ॥ 2 ॥ 10-134-7

मन्त्रार्थ - **देवाः** = हे विद्वान्, तेजस्वी, स्तुतिकर्ता, देवगण, **न** = नहीं **कि** = कोई, किसी को **इनीमसि** = गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त करते हो, **न** = नहीं **कि** = कोई, किसी को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **योपयामसि** = विकल करते हो। **मन्त्रश्रुत्यम्** = मन्त्र, विचार, श्रुति के अनुसार **चरामसि** = आचरण करते हो ॥ 2 ॥

पदार्थ - **नकि** = नष्ट, विनाशक (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **इनीमसि** = गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त करते हो (इ - जाना, जानना, पाना, इन् - प्रकाश करना)। **नकि** = नष्ट, विनाशक (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **योपयामसि** = विकल करते हो, घबरा जाते हो (युप – चित्त वैक्लव्य होना, घबरा जाना)। **मन्त्रश्रुत्यम्** = मन्त्र, विचार, श्रुति के अनुसार, मन्त्र, विचार सुनने वाले को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, मन्त्र = मन्त्रणा करना, विचार करना, गुप्त भाषण करना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **चरामसि** = विचरण करते हो (चर -जाना, खाना, आचरण करना) ॥ 2 ॥

177. दोषो आगाद् बृहद्गाय, द्युमद्गामम् आथर्वण।
स्तुहि देवम् सवितारम् ॥ 3 ॥ 10-71-1

मन्त्रार्थ - **आथर्वण** = हे अविचलित-अहिंसक, **दोषो** = दोष **आगाद्** = आये, **बृहद्गाय** = बृहत् गायन, स्तुति करो। **द्युमद्गामम्** = अग्रगामी, प्रकाशगामी **देवम्** = देव **सवितारम्** = सविता, सृष्टिकर्ता, ऐश्वर्यवान् को, उत्पन्न करने वाले को **स्तुहि** = स्तुति करो ॥ 3 ॥

पदार्थ - **दोषो** = रात्रि, दोष (अव्यय, दुः-दुष् - दूषित होना)। **आगाद्** = आये (आ - सम्यक्, गम् - जाना, आ-गम् - आना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **बृहद्गाय** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् गायन, ज्ञान के लिए (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **द्युमद्गामम्** = अग्रगामी, प्रकाशगामी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **आथर्वण** = अविचलित-अहिंसक का (अ - नहीं, थर्व - अस्थिर होना, हिंसा करना)। **स्तुहि** = स्तुत, स्तुह (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सवितारम्** = सविता, सृष्टिकर्ता, ऐश्वर्यवान् को, उत्पन्न करने वाले का (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना) ॥ 3 ॥

178. एषो उषा अपूर्व्या, व्युच्छति प्रिया दिवः।
स्तुषे वाम् अश्विना बृहत् ॥ 4 ॥ 1-46-1

मन्त्रार्थ - **एषो** = यह **अपूर्व्या** = अपूर्व, विशिष्ट **उषा** = प्रभात, हिंसा, दाह **व्युच्छति** = विशेष पूर्ण करता है, समाप्त करता है। **वाम्** = तुम दोनों **प्रिया** = प्रिय **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक युगल **बृहत्** = महान्, बृहत् **स्तुषे** = स्तुति करते हो ॥ 4 ॥

पदार्थ - **एषो** = यह (सर्वनाम)। **उषा** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अपूर्व्या** = अपूर्व, विशिष्ट (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **व्युच्छति** = विशेष पूर्ण करता है, समाप्त करता है (वि = विशेष, उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **स्तुषे** = स्तुति के लिए (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **॥ 4 ॥**

179. इन्द्रो दधीचो अस्थभिः, वृत्राणि अप्रतिष्कुतः।
जघान नवतीः नव ॥ 5 ॥ 1-84-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **दधीचो** = धारणकर्ता **अप्रतिष्कुतः** = अप्रतिष्कुत, प्रतिवाद हीन **नवतीः** = नये, शब्दकर्ता, ध्वनिकर्ता,, स्तुतिकर्ता, निश्चयकर्ता **नव** = नये, शब्दकर्ता, ध्वनिकर्ता,, स्तुतिकर्ता, निश्चयकर्ता **वृत्राणि** = हिंसकों को **अस्थभिः** = अस्थों द्वारा, उपस्थितों द्वारा **जघान** = मार दिया, हनन किया **॥ 5 ॥**

पदार्थ -**इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **दधीचो** = धारण करे, धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अस्थभिः** = अस्थों द्वारा (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **अप्रतिष्कुतः** = अप्रतिष्कुत, प्रतिवाद हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समकक्ष, कु – शब्द करना, अस्पष्ट बोलना)। **जघान** = मार दिया, हनन किया (हन्-घ्न - हिंसा करना)। **नवतीः** = नब्बे, शब्दकर्ता, ध्वनिकर्ता,, स्तुतिकर्ता, निश्चयकर्ता (नवति - संख्या), नू-नव = शब्द करना, ध्वनि करना, स्तुति करना, निश्चय करना)। **नव** = नौ, शब्दकर्ता, ध्वनिकर्ता,, स्तुतिकर्ता, निश्चयकर्ता। नव - (संख्या)। नू-नव = शब्द करना, ध्वनि करना, स्तुति करना, निश्चय करना) **॥ 5 ॥ साम 913**

180. इन्द्र आ इहि मत्सि अन्धसो, विश्वेभिः सोमपर्वभिः।
महान् अभिष्टिः ओजसा ॥ 6 ॥ 1-9-1

मन्त्रार्थ- **इन्द्र** हे परम ऐश्वर्यवान् (परमात्मन्) **आ-इहि** आइये। **अन्धसा** - अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **विश्वेभिः** सब, **सोम-पर्वभिः** सोमपर्वों द्वारा **महान्** महान्, बड़े **अभिष्टिः** अभीष्ट **ओजसा** ओज द्वारा **मत्सि** तृप्त होते हो **॥ 6 ॥**

भावार्थ - परमात्मा को उत्तम गुणों से ही तृप्त किया जा सकता है। महान् अभीष्ट ओज तथा सौम्य गुण महत्वपूर्ण हैं। अन्धसो अथवा अन्धसः शब्द का सामान्य अर्थ तो अन्धकार ही प्रतीत होता है, परन्तु यहाँ पर विद्वानों ने सामान्यतः इसका अर्थ अन्न किया है। अन् धातु का अर्थ प्राण होना, चेतन होना होता है, अतः प्राण रक्षा का मुख्य साधन मानते हुए प्राण धारण करने में मुख्य साधन अन्न को अन्ध शब्द से व्यक्त किया गया माना गया है। अनम् प्राणम् धारयति इति अन्धः, ऐसा निर्वचन कर सकते हैं। **॥ 6 ॥**

पदार्थ- **इन्द्र** = ऐश्वर्यवान् (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) **आ-इहि** = आइये (आ-इ - आना, इ - जाना)। **अन्धसा** = अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना), **विश्वेभिः** = सब **सोमपर्वभिः** = सोमपर्वों से (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, पर्व् - पूर्ण करना, विभाग करना) **महान्** = पूज्य (मह् - पूजा करना, पूज्य होना) **अभिष्टिः** = अभीष्ट **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान होना, बढ़ना, जीना) **मत्सि** = तृप्त होते हो (मद् - तृप्त होना) **॥ 6 ॥**

181. आ तू नः इन्द्र वृत्रहन्, अस्माकम् अर्धम् आ गहि।
महान् महीभिः ऊतिभिः ॥ 7 ॥ 4-32-1

मन्त्रार्थ- वृत्रहन् हे वृत्र (हिंसा) को मारने वाले **महान्** बड़े, पूज्य, महान् **इन्द्र** हे परम ऐश्वर्यवान् (परमात्मन्), **अस्माकम्** हमारे **आ** समन्तात् सम्पूर्ण **तू** तो **नः** हमारे **अर्धम्** आधे को **महीभिः** महान् **ऊतिभिः** संरक्षणों द्वारा **आ-गहि** गति, ज्ञान, घना करें **॥ 7 ॥**

भावार्थ - कर्म स्वतन्त्रता तथा उपासना का महत्व दोनो ही समान रूप से इस मन्त्र में हमारी प्रेरणा हैं। हमारा आधा कार्य तो परमात्मा की कृपा से उसके संरक्षण से होगा, परन्तु यह तभी सम्भव होगा जब हम आधा कार्य स्वयम् अपने प्रयास से करेंगे। गह धातु गति अर्थ वाली है। गति अर्थ में ज्ञान, प्राप्ति समाहित होते हैं। गह धातु का एक अर्थ गहन होना, घना होना भी है, अतः गहन का अर्थ घना, गहन, गहरा होता है।

पदार्थ- आ = समन्तात् सम्पूर्ण **तु =** तो **नः =** हमारे **वृत्रहन् =** वृत्र को मारने वाले (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना) **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना), **इन्द्र =** ऐश्वर्यवान् (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना), **अस्माकम् =** हमारे **अर्द्धम् =** आधे को **महीभिः =** महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करनाौ), **ऊतिभिः =** संरक्षण से (ऊ-अव् - रक्षा करना, पालन करना) **आ =** समन्तात् सम्पूर्ण **गहि =** गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) **॥ 7 ॥**

182. ओजः तत् अस्य तित्विषे, उभे यत् समवर्तयत्।
इन्द्रः चर्मेव रोदसी ॥ 8 ॥ 8-6-5

मन्त्रार्थ - **तत् =** वह **ओजः =** ओज **अस्य =** इसका **तित्विषे =** प्रकाश करता है, **यत् =** जो **उभे =** पूर्णतः **समवर्तयत् =** सम्यक् वर्तमान हुआ। **इन्द्रः =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली **चर्मेव =** चर्म, आवरण के समान **रोदसी =** प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (हैं) **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **ओजः =** ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **तित्विष =** प्रकाश का (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। **उभे =** दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **समवर्तयत् =** समवर्तय, सम्यक् रूप से वरण करना (सम - सब, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना)। **इन्द्रः =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **चर्मेव =** चर्म, आवरण के (चर्म् - चर्म होना, आवरण होना, चर् - चलना, आचरण करना, वीरता दिखाना, प्रयास करना)। **रोदसी =** प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना) **॥ 8 ॥**

183. अयम् उ ते समतसि, कपोतः इव गर्भधिम्।
वचः तत् चित् नः ओहसे ॥ 9 ॥ 1-30-4

मन्त्रार्थ - **अयम् =** यह **उ =** ही **ते =** तुम्हारे लिए **कपोतः =** कपोत, कम्पन करने वाले, कम्पित करने वाले **इव =** के समान **गर्भधिम् =** गर्भ को धारण करने वाले को **समतसि =** सम्यक् सतत गतिशील होता है, प्राप्त होता है। **तत् =** वह **चित् =** ही **नः =** हमारे **वचः =** वचन को **ओहसे =** तर्क, विचार करते हो **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **अयम् =** यह (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **समतसि =** सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **कपोत =** कपोत, कम्पन करने वाले, कम्पित करने वाले (कम्प् = कम्पन करना, चलना, सहना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **गर्भधिम् =** गर्भ को धारण करने वाले को (गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **वचः =** वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **चित् =** चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **ओहसे =** ओहस के लिए (ऊह् = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) **॥ 9 ॥**

184. वातः आ वातु भेषजम्, शम्भु मयोभु नो हृदे।
प्र न आयूंषि तारिषत् ॥ 10 ॥ 10-186-1

मन्त्रार्थ - **शम्भु** = हे कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी, **मयोभु** = हे गति-ज्ञानमय, **वातः** = वात, वायु, तीव्र गति वाले **भेषजम्** = भेषज को, औषधि को **नो** = हमारे **हृदे** = हृदय के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वातु** = प्रवाहित करे, **नः** = हमारे **आयूंषि** = आयु को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुखता से **तारिषत्** = तार दे, पार करे ॥ **10** ॥

पदार्थ - **वातः** = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वातु** = वात, वायु के समान तीव्र गति में (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **भेषजम्** = भेषज को, औषधि को (भिषज् - रोग मुक्त करना, चिकित्सा करना, नष्ट करना, भेष - डरना, जाना, जानना, पाना)। **शम्भु** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **मयोभु** = गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय् - जाना, जानना, पाना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **हृदे** = हृदय के लिए (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आयूंषि** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, ग़ति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **तारिषत्** = चाहा, तार दिया, पार किया (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना, तृष - प्यास लगना, इच्छा करना, उत्कण्ठित होना, चाहना) ॥ **10** ॥

(20) सूक्त 8

185. यम् रक्षन्ति प्रचेतसो, वरुणो मित्रो अर्यमा।
न किः स दभ्यते जनः ॥ 1 ॥ 1-41-1

मन्त्रार्थ - **यम्** = जिसको **प्रचेतसो** = प्रकृष्ठ विचार वाले, **वरुणो** = वरणीय, **मित्रो** = मित्र **अर्यमा** = ज्ञानी **रक्षन्ति** = रक्षा करते हैं, **स** = वह **जनः** = जन **किः** = किसी से **न** = नहीं, **दभ्यते** = निन्दित, हिंसित होता है ॥ **1** ॥

पदार्थ - **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **रक्षन्ति** = रक्षा करते हैं, बचाते हैं (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **प्रचेतसो** = प्रकृष्ठ विचार वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **स** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **दभ्यते** = निन्दक, हिंसक के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना)। **जनः** = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ **1** ॥

186. गव्या उ षु णो यथा, पुरा अश्वया उत रथया।
वरिवस्य आ महोनाम् ॥ 2 ॥ 8-46-9

मन्त्रार्थ - **णो** = हमारे लिए **यथा** =जिस प्रकार **पुरा** = पहले **षु** = उत्तम **गव्या** = वाणी द्वारा **उ** = और **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा **उत** = उसी प्रकार **रथया** = रथ द्वारा **महोनाम्** = महनीयों का **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वरिवस्य** = वरण करो ॥ **2** ॥

पदार्थ - **गव्या** = वाणी द्वारा, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **षु** = अच्छा। **णो** = हमारा, हमारे लिए, हमको (सर्वनाम)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना,

प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **उत =** ही (अव्यय)। **रथया =** रथ के लिए (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वरिवस्य =** वरणीय का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **महोनाम् =** महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) **॥ 2 ॥**

187. इमाः ते इन्द्र पृश्नयो, घृतम् दुहते आशिरम्।
एनाम् ऋतस्य पिप्युषीः ॥ 3 ॥ 8-6-18

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **इमाः =** ये **पृश्नयो =** प्रश्नकर्ता **ते =** तुम्हारे लिए **एनाम् =** इसको **ऋतस्य =** ऋत के **पिप्युषीः =** बढ़ाने वाले **घृतम् =** प्रकाशमान को **आशिरम् =** शिर तक **दुहते =** दुहते हैं **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **इमाः =** ये (सर्वनाम)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पृश्नयो =** प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूंछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। **घृतम् =** प्रकाशमान को (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **दुहते =** दुहने वाले के लिए (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **आशिरम् =** आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **एनाम् =** इसको (सर्वनाम)। **ऋतस्य =** ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **पिप्युषीः =** बढ़ाने वाले (प्यै - बढ़ना, बढ़ाना) **॥ 3 ॥**

188. अया धिया च गव्यया, पुरुणामन् पुरुष्टुत।
यत् सोमे सोमे आभुवः ॥ 4 ॥ 8-93-17

मन्त्रार्थ - **पुरुणामन् =** हे बहुत नाम वाले, **पुरुष्टुत =** हे बहुत स्तुत, **अया =** गति, प्रेरणा द्वारा **धिया =** धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **च =** और **गव्यया =** वाणी द्वारा **यत् =** जो **सोमे सोमे =** सोम-सोम में **आभुवः =** हो गया है **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **अया =** गति, प्रेरणा द्वारा (अय् = जाना, जानना, पाना)। **धिया =** धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **च =** और। **गव्यया =** गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **पुरुणामन् =** पुरुणाम वाले (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, नाम - नाम होना, नाम रखना, नम् = नमन करना, सम्मान करना, शब्द करना)। **पुरुष्टुत =** पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **सोमे =** सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **सोमे =** सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **आभुवः =** हो गया (आ - समन्तात्, पूर्णतः, भू - होना) **॥ 4 ॥**

189. पावका नः सरस्वती, वाजेभिः वाजिनीवती।
यज्ञम् वष्टु धियावसुः ॥ 5 ॥ 1-3-10

मन्त्रार्थ - **नः =** हमारे लिए **सरस्वती =** सरस्वती, सरसता, प्रगतिशीलता **पावका =** पवित्रकारक, **वाजेभिः =** बल, विद्या, गति द्वारा **वाजिनीवती =** बलवती, विद्यायुक्त, प्रगतिशील, **यज्ञम् =** यजन को **धियावसुः =** धारणा-बुद्धि द्वारा स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **वष्टु =** इच्छा करने वाली हो **॥ 84 ॥**

पदार्थ - पावका = पवित्रकारक, पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सरस्वती =** सरस्वती, सरसता, प्रगतिशीलता (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना, स - साथ, सहित, रस् - स्वाद लेना, प्रीति करना, शब्द करना)। **वाजेभिः =** वाजद्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजिनीवती =** बलवती, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **यज्ञम् =** यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **वष्टु =** वष्टि, इच्छा (वश - इच्छा करना, चाहना)। **धियावसुः =** धियावस, धारणा द्वारा स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, बुद्धि द्वारा स्नेहपूर्वक निवास तथा वास देने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) **॥ 84 ॥**

190. कः इमम् नाहुषीषु, आ इन्द्रम् सोमस्य तर्पयात्।
स नो वसूनि आ भरात् ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - कः = कौन **इमम् =** इस **इन्द्रम् =** इन्द्र को **नाहुषीषु =** बन्धनों में **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सोमस्य =** सोम का **तर्पतयात् =** तर्पण करे, तृप्त करे। **स =** वह, उसने **नो =** हमारे लिए **वसूनि =** वसुओं को, वास, वसन, वासन आदि को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भरात् =** भरण करे **॥ 6 ॥**

पदार्थ - कः = कौन (सर्वनाम)। **इमम् =** इसको (सर्वनाम)। **नाहुषीषु =** बंधनों में (नह - बांधना, अड़ाना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमस्य =** सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **तर्पतयात् =** तृप्त करो (तृप् = तृप्त होना, तृप्त करना)। **स =** वह, उसने। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वसूनि =** वसुओं को, वास, वसन, वासन आदि को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भरात् =** पोषण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना) **॥**

191. आ याहि सुषुमा हि ते, इन्द्र सोमम् पिबा इमम्।
आ इदम् बर्हिः सदो मम ॥ 7 ॥ 8-17-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली **आ याहि =** आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें। **ते =** तुम्हारे लिए **हि =** ही **सुषुमा =** उत्तम सृजन करते हैं। **इमम् =** इसको **सोमम् =** सोम को,सृजन को, ऐश्वर्य को **पिबा =** पियें, पान करें। **इदम् =** यह **आ =** समन्तात्, सम्यक् **बर्हिः =** बृद्धि **सदो =** स्थान, प्रतिष्ठा, प्रगति, गन्तव्य **मम =** मेरा (है) **॥ 7 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि =** जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **सुषुमा =** उत्तम सृजन करते हैं (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **पिबा =** पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **इमम्**

= इसको (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति। **इदम् =** यह, सर्वनाम। **बर्हिः =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सदो =** स्थान, प्रतिष्ठा, प्रगति, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **मम =** मेरा (सर्वनाम) **॥ 7 ॥**

192. महि त्रीणाम् अवः अस्तु, द्युक्षम् मित्रस्य अर्यम्णः।
दुराधर्षम् वरुणस्य ॥ 8 ॥ 10-185-1

मन्त्रार्थ : मित्रस्य मित्र, **वरुणस्य** वरुण, **अर्यम्णः** अर्यमन्, **त्रीणाम्** तीनों का **दुराधर्षम्** दुर्जेय **द्युक्षम्** अगता, **महि** पूज्य **अवो** संरक्षण **अस्तु** हो **॥ 8 ॥**

भावार्थ : उपासक को परमात्मा की कृपा से मित्रों, सज्जनों, श्रेष्ठ लोगों का संरक्षण प्राप्त होता है जिससे उन्हें दुष्ट लोग हानि नहीं पहुँचा पाते हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ : महि = पूज्य महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। **त्रीणाम्** = तीन का। **अवः** = रक्षक (अव् = रक्षा करना)। अस्तु = हो। **द्युक्षम्** = अग्रगामी (द्यु = आगे जाना, क्षि = क्षय होना, नष्ट होना, हिंसा करना, निवास करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **मित्रस्य** = मित्र का (मिद- स्नेह करना, प्रीति करना)। **अर्यम्णः** = अर्यमा का (ऋ = जाना, पाना, मिलाना)। **दुराधर्षम्** = दुर्जेय (दुः + आधर्षम्, धृष् = जीतना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, वरण करना) **॥ 8 ॥**

193. त्वावतः पुरूवसो, वयम् इन्द्र प्रणेतः।
स्मसि स्थातः हरीणाम् ॥ 9 ॥ 8-47-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **पुरूवसो =** हे बहुत वास देने वाले, **वयम् =** हम **त्वावतः =** तुम्हारे समान **प्रणेतः =** प्रकृष्ट नेता, ले जाने वाले, **हरीणाम् =** ले जाने वालों के **स्थातः =** अधिष्ठाता **स्मसि =** हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ - त्वावतः = तुम्हारे समान (त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा, वतः - समान)। **पुरूवसो =** हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **वयम् =** हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रणेतः =** ले जाने वाला, ले जायी गयी (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मिलना, ले जाना)। **स्मसि =** हैं (अस् = होना)। **स्थातः =** स्थित (स्था- स्थित होना, ठहरना)। **हरीणाम् =** ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना) **॥ 9 ॥**

(21) सूक्त 9

194. उ त्वा मदन्तु सोमाः, कृणुष्व राधो अद्रिवः।
अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥ 1 ॥ 8-64-1

मन्त्रार्थ - उ = निश्चय ही **त्वा =** तुमको **सोमाः =** सोम,सृजन, ऐश्वर्यमय **मदन्तु =** आनन्दित करें, हर्षित करें, तृप्त करें। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **अद्रिवः =** अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **कृणुष्व =** कीजिये। **ब्रह्मद्विषो =** ब्रह्म द्वेष को **अव जहि =** अवहनन करो, नष्ट करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ - उ = निश्चय ही, भी। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **मदन्तु =** आनन्दित हों, हर्षित हों, तृप्त हों (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोमाः =** ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **कृणुष्व =** कीजिये (कृ - करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना,

परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त। (अव्यय), रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **ब्रह्मद्विषो** = ब्रह्म द्वेष को, विराट, महान् द्वेष को (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा – परित्याग करना, छोड़ना) ॥ 1 ॥

195. गिर्वणः पाहि नः सुतम्, मधोः धाराभिः अज्यसे।
इन्द्र त्वा दातम् इत् यशः ॥ 2 । 3-40-6

मन्त्रार्थ - **नः** = हमारे **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन द्वारा **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो। **मधोः** = मधु के **धाराभिः** = धाराओं द्वारा **अज्यसे** = प्रगति करो। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वा** = तुम्हारा **दातम्** = दिया हुआ **इत्** = ही **यशः** = यश, कीर्ति (है) ॥

पदार्थ - **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मधोः** = मधु का (मद्-मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **धाराभिः** = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अज्यसे** = गतिमान्, वेग से जाने के लिए (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **दातम्** = देने वाले को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **यशः** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥ 2 ॥

196. सदा वः इन्द्रः चर्कृषत्, आ उप उ नु स सपर्यन्।
न देवो वृतः शूरः इन्द्रः ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - **सदा** = सदा, सर्व काल में **वः** = तुम सबको **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली **चर्कृषत्** = आकर्षित करता है। **स** = वह **उप** = समीप **उ** = ही **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सपर्यन्** = सेवा करते हुए **शूरः** = वीर, पराक्रमी **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान् **देवो** = देव **न** = के समान **वृतः** = वर्तमान **(है)** ॥ 3 ॥

पदार्थ - **सदा** = सदा, सर्व काल में। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **चर्कृषत्** = आकर्षित करता है (चर्क - तृप्त करना, प्रतिघात करना, कृष् - खींचना, आकर्षित करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **स** = वह, उसने। **सपर्यन्** = सेवा, पूजा करो (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वृतः** = हिंसक, आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

197. आ त्वा विशन्तु इन्दवः, समुद्रम् इव सिन्धवः।
न त्वाम् इन्द्र अति रिच्यते ॥ 4 ॥ 8-93-22

मन्त्रार्थ - **इन्दवः** = इन्दुगण **त्वा** = तुमको **सिन्धवः** = सिन्धु **समुद्रम्** = समुद्र **इव** = के समान **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **विशन्तु** = प्रवेश करें। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वाम्** = तुमको **न** = नहीं **अति रिच्यते** = अतिक्रम

बन्धन करता है, एकत्र करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **विशन्तु** = प्रवेश करें (विश् - घुसना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सिन्धवः** = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **रिच्यते** = बन्धन करता है, एकत्र करता है (रिच – एकत्र करना, जोड़ना, बांधना, अलग-अलग करना, फैलाना, रेचक दवा देना)। ॥ 4 ॥

198. इन्द्रम् इत् गाथिनो बृहत्, इन्द्रम् अर्केभिः अर्किणः।
इन्द्रम् वाणीः अनूषत ॥ 5 ॥ 1-7-1

मन्त्रार्थ - **बृहत्** = महान्, बृहत् **गाथिनो** = ग्रन्थकार, कथाकार **इन्द्रम्** = इन्द्र को **इत्** = ही, **अर्किणः** = स्तुति कर्ता **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अर्केभिः** = स्तुतियों द्वारा, **वाणीः** = वाणी ने **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अनूषत** = अताप किया ॥ 5 ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **गाथिनो** = ग्रन्थकार, कथाकार (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना)। **बृहत्** = महान्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्केभिः** = स्तुतियों द्वारा (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **अर्किणः** = स्तुति करने वाले (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वाणीः** = वाणी ने (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **अनूषत** = अतप्त किया, तापमुक्त किया (अन् = नहीं, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना) ॥ 5 ॥

199. इन्द्रः इषे ददातु नः, ऋभुक्षणम् ऋभुम् रयिम्।
वाजी ददातु वाजिनम् ॥ 6 ॥ 8-93-34

मन्त्रार्थ - **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **नः** = हमारे **इषे** = प्रगति, ज्ञान, इच्छा के लिए **ऋभुक्षणम्** = प्रगति-शब्द को दीप्त करने वाले, **ऋभुम्** = प्रगतिशील, विद्वान् **रयिम्** = विद्या, ज्ञान, **ददातु** = प्रदान करें। **वाजी** = बलशाली **वाजिनम्** = बलवान् को **ददातु** = प्रदान करें ॥ 6 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **ददातु** = प्रदान करें (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **न** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऋभुक्षणम्** = घात, हिंसा (ऋभ् - शब्द करना, जाना, जानना, पाना। ऋभुक्ष् - घात करना, मारना)। **ऋभुम्** = ऋभु, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋभ् - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **ददातु** = प्रदान करें (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 6 ॥

200. इन्द्रो अङ्ग महत् भयम्, अभीषत् अप चुच्यवत्।
स हि स्थिरो विचर्षणिः ॥ 7 ॥ 2-41-10

मन्त्रार्थ - **अङ्ग** = हे विद्वान्, प्रगतिशील, **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली **महत्** = महान् **भयम्** = भय को **अभीषत्** = डराता है, **अप** = दूर **चुच्यवत्** = काटता है, नष्ट करता है। **स** = वह **हि** = ही, निश्चय **स्थिरो** = स्थिर **विचर्षणिः** = विशेष विचारशील (है)। **7 ॥**

पदार्थ - **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अङ्ग** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **महत्** = महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **भयम्** = भय को (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **अभीषत्** = डराया (भी- डरना, घबराना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **चुच्यवत्** = चुच्य के समान, स्नान योग्य, मथने, काटने के समान (च्यु-च्यव् - नाश करना, तैरना, सहना। चुच-चुच्य - अर्क निकालना, स्नान करना, मथना, काटना, अर्क निकालना)। **स** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **स्थिरो** = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना) **॥ 7 ॥**

201. इमा उ त्वा सुते सुते, नक्षन्ते गिर्वणो गिरः।
गावो वत्सम् न धेनवः ॥ 8 ॥ 6-45-28

मन्त्रार्थ - **इमा** = यह, इसको **उ** = निश्चय ही **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सुते सुते** = प्रत्येक सुत में, ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **गिर्वणो** = वाणी, बोध, सिञ्चन युक्त **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन को **गावो** = शब्दकर्ता **धेनवः** = प्रिय, पालन करने वाले **वत्सम्** = वत्स, वाणी **न** = के समान **नक्षन्ते** = प्राप्त करते हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **इमा** = यह, इसको (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **नक्षन्ते** = प्राप्त करते हुए (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **गिर्वणो** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वत्सम्** = वत्स, वाणी को (वद् = कहना, बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना) **॥ 8 ॥**

202. इन्द्रा नु पूषणा वयम्, सख्याय स्वस्तये।
हुवेम वाजसातये ॥ 9 ॥ 6-57-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्रा** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नु** = निश्चय ही **पूषणा** = पोषण करने वाले, **वयम्** = हम **सख्याय** = मित्रता के लिए, **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए, **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्त करते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **इन्द्रा** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **पूषणा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **सख्याय** = मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना,

व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 9 ॥

203. न कि इन्द्र त्वत् उत्तरम्, न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्।
न कि एवम् यथा त्वम् ॥ 10 ॥ 4-30-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **वृत्रहन्** = हे हिंसा का हनन करने वाले, **त्वत्** = तुमसे **उत्तरम्** = उत्तर, उत्तम, उच्चतर **कि** = कोई **न** = नहीं **(है), ज्यायो** = वृद्ध, जयी **न** = नहीं **अस्ति** = है। **एवम्** = इस प्रकार **यथा** = जैसे **त्वम्** = तुम (हो), **कि** = कोई **न** = नहीं **(है) ॥ 10 ॥**

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कि** = कोई, किसी (अव्यय)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **उत्तरम्** = उत्तर को तैरने-पार जाने को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तृ, तृ = तैरना, पार जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **ज्यायो** = ज्या का, वृद्ध, जयी का (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कि** = कोई, किसी (अव्यय)। **एवम्** = इस प्रकार, इस तरह (अव्यय)। **यथा** = जहाँ (सर्वनाम)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। ॥ **10** ॥

(22) सूक्त 10

204. तरणिम् वो जनानाम्, त्रदम् वाजस्य गोमतः।
समानम् उ प्र शंसिषम् ॥ 1 ॥ 8-45-28

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों के **तरणिम्** = तारने वाले, **त्रदम्** = रक्षक, **वाजस्य** = विद्या का, प्रगति का **गोमतः** = शब्द करने वालों, मननशीलों को **समानम्** = समान **उ** = ही **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **शंसिषम्** = स्तुति-प्रशंसा करता हूँ। ॥ **1** ॥

पदार्थ - **तरणिम्** = तैरने वाले को, तैरने के साधन को (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **त्रदम्** = त्रद को, रक्षा को (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना, तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वाजस्य** = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **शंसिषम्** = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ **1** ॥

205. असृग्रम् इन्द्र ते गिरः, प्रति त्वाम् उदहासत।
सजोषा वृषभम् पतिम् ॥ 2 ॥ 1-9-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **ते** = तुम्हारे लिए **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन को **असृग्रम्** = रचा, सृजन किया। **त्वाम्** = तुम्हारे **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में **सजोषा** = विचारसहित, विवेक सहित, सप्रीति **वृषभम्** = पराक्रमी, वर्षा करने वाले **पतिम्** = अधिपति, रक्षक, पालक को **उदहासत** = उच्च व्याप्त हुआ ॥ **2** ॥

पदार्थ - **असृग्रम् =** सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गिरः =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **प्रति =** सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **त्वाम् =** तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **उदहासत =** उत्कृष्टता से हंसा (उत् = ही। अह् - व्याप्त होना, समर्पण करना, देना)। **सजोषा =** विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **वृषभम् =** वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पतिम् =** पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) **॥ 2 ॥**

206. सुनीथो घा स मर्त्यो, यम् मरुतो यम् अर्यमा।
मित्राः पान्ति अद्रुहः ॥ 3 ॥ 8-46-4

मन्त्रार्थ - **स =** वह **मर्त्यो =** मृत्य, मरणशील **अद्रुहः =** द्रोहहीन, **सुनीथो =** प्रशंसित **घा =** ही (है), **यम् =** जिसको **मरुतो =** मरणशील, **यम् =** जिसको **अर्यमा =** अर्यमा, ज्ञानी **मित्राः =** मित्र **पान्ति =** रक्षण-पालन करते हैं **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **सुनीथो =** स्तुति करना (सु - सुन्दर, अच्छा, नीथ = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **घा =** ही (अव्यय, निपात)। **स =** वह (सर्वनाम)। **मर्त्यो =** मृत्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **मरुतो =** मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **अर्यमा =** अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **मित्राः =** मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **पान्ति =** पालन करें, (पा = रक्षा करना)। **अद्रुहः =** द्रोह न करने वाला (द्रुह् - द्रोह करना) **॥ 3 ॥**

207. यत् वीडौ इन्द्र यत् स्थिरे, यत् पर्शाने पराभृतम्।
वसु स्पार्हम् तत् आ भर ॥ 4 ॥ 8-45-41

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **वसु =** हे वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने, वास देने वाले, **यत् =** जो **वीडौ =** दृढ़ता में, विशेष स्तुति में, **यत् =** जो **स्थिरे =** स्थिर में, **यत् =** जो **पर्शाने =** स्नेह, सरलता, प्रगति, सिंचन में, **पराभृतम् =** परिपूर्ण (है) **तत् =** वह **स्पार्हम् =** स्पार्ह, सेवक को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **भर =** पोषण करो, पूर्ण करो **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **वीडौ =** विशेष स्तुति कीजिए, दृढ़ कीजिए (वि = विशेष, ईड् = स्तुति करना, वीड् - स्थिर होना, दृढ़ होना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **स्थिरे =** स्थिर में (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **पर्शाने =** स्नेह, सरलता, प्रगति, सिंचन में (पर्ष - स्निग्ध होना, स्नेह होना, तेल लगाना, पृष् - सींचना, सहन करना, सरल होना, जाना, चलना)। **पराभृतम् =** पराभृत को (परा - परम, परे, पीछे, विपरीत, भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **वसु =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्पार्हम् =** स्पार्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) **॥ 4 ॥**

208. श्रुतम् वो वृत्रहन्तमम्, प्र शर्धम् चर्षणीनाम्।
आशिषे राधसे महे ॥ 5 ॥ 8-93-16

मन्त्रार्थ - **वो =** तुम **वृत्रहन्तमम् =** हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले **चर्षणीनाम् =** आनन्द, चेतना, विचार युक्तों

का **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **शर्धम्** = विजय, शर्द्ध, बल को **श्रुतम्** = विश्रुत है, सुना है। **महे** = हे महान्, पूज्य, महिमावान्, **आशिषे** = आशीष के लिए **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ - **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वृत्रहन्तमम्** = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **शर्धम्** = विजय, शर्द्ध, बल को (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **आशिषे** = विशेषताएं, आशीष के लिए (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 5 ॥

209. अरम् ते इन्द्र श्रवसे, गमेम शूर त्वावतः।
अरम् शक्र परेमणि ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली, **शूर** = हे वीर, पराक्रमी, **ते** = तुम्हारा **श्रवसे** = श्रवण, वाणी के लिए **अरम्** = पर्याप्त, प्रगतिशील, विद्वान् **गमेम** = जाते हैं। **शक्र** = हे शक्तिवान्, क्षमयुक्त, सामर्थ्ययुक्त, **त्वावतः** = तुम्हारे समान **अरम्** = पर्याप्त, प्रगतिशील, विद्वान् **परेमणि** = परिव्याप्त, परम शब्द में, परा वाणी में (**गमेम** = जाते हैं) ॥ 6 ॥

पदार्थ - **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय), प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **श्रवसे** = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **गमेम** = जाने वाला (गम् = जाना)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **त्वावतः** = तुम्हारे समान (त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा, वतः - समान)। **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय), प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना)। **शक्र** = शक्तिवान्, सामर्थ्ययुक्त (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना)। **परेमणि** = परिव्याप्त, परम शब्द में, परा वाणी में (परि - सब ओर, ई - जाना, व्याप्त होना, प्रेरणा करना) ॥ 6 ॥

210. धानावन्तम् करम्भिणम्, अपूपवन्तम् उक्थिनम्।
इन्द्र प्रातः जुषस्व नः ॥ 7 ॥ 3-52-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, **नः** = हमारे लिए **धानावन्तम्** = धारण, पोषण, रक्षा, दान, प्रगति, शब्द युक्त, **करम्भिणम्** = कर्म के प्रकाश युक्त, **अपूपवन्तम्** = पालक-रक्षक **उक्थिनम्** = वक्ताओं को **प्रातः** = प्रातः **जुषस्व** = सेवा करो, सन्तुष्ट करो ॥ 7 ॥

पदार्थ - **धानावन्तम्** = धारण, गति, शब्द युक्त (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **करम्भिणम्** = करम्भी को, कर्म के प्रकाश युक्त को (कृ - करना, भा - प्रकाश करना, भृ - भरण करना, भरना)। **अपूपवन्तम्** = पालक-रक्षक को, अपावन को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उक्थिनम्** = उक्ति, कथन वाले को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **इन्द्र** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रातः** = प्रातः (अव्यय)। **जुषस्व** = सेवा करो, सन्तुष्ट करो (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 7 ॥ **अध्याय 20 मन्त्र 29 यजुर्वेद**

211. अपाम् फेनेन नमुचेः, शिरः इन्द्र उत् अवर्त्तयः।
विश्वा यत् अजयः स्पृधः॥ 8॥ 8-14-13

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **अपाम्** = पालकों के **फेनेन** = वृद्धि द्वारा **नमुचेः** = नमुचि का, नमनशील का **शिरः** = शिर **उत्** = उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **अवर्त्तयः** = वतर्मान किया। **यत्** = जो **विश्वा** = सभी **अजयः** = अजेय, जिसको जय न किया जा सके **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाला (है)॥ **8**॥

पदार्थ - **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **फेनेन** = फेन द्वारा, वृद्धि द्वारा (स्फी-फेय्-स्फाय= बढ़ना, मोटा होना, स्थूल होना)। **नमुचेः** = नमनशील का (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **शिरः** = शिर (शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ -सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **अवर्त्तयः** = न वर्तने योग्य (अ - नहीं, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अजयः** = अजय, जय-हीन, जिसको जय न किया जा सके (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जि-जय - जीतना, जय होना)। **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)॥ **8॥ अध्याय 19 मन्त्र 71 यजुर्वेद**

212. इमे ते इन्द्र सोमाः, सुतासो ये च सोत्वाः।
तेषाम् मत्स्व प्रभूवसो॥ 9॥ 8-2-10

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **प्रभूवसो** = हे प्रभूवसु, **इमे** = ये **ते** = तुम्हारे लिए **सोमाः** = ऐश्वर्यमय सृजन, **सुतासो** = उत्पन्न हुए **च** = और **ये** = जो **सोत्वाः** = सृजन करने वाले, सृष्टिकर्ता **(हैं), तेषाम्** = उनका **मत्स्व** = आनन्द करो, तृप्त करो॥ **9**॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमाः** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **ये** = जो। **च** = और। **सोत्वाः** = सृजन करने वाले, सृष्टिकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **तेषाम्** = उनका (सर्वनाम)। **मत्स्व** = हर्षित हो, तृप्त हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **प्रभूवसो** = प्रभूवसु (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)॥ **9**॥

213. तुभ्यम् सुतासः सोमाः, स्तीर्णम् बर्हिः विभावसो।
स्तोतृभ्यः इन्द्र मृडय॥ 10॥ 8-93-25

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **विभावसो** = हे विशेष प्रकाशमान वसु, **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए **सुतासः** = ऐश्वर्य, उत्पन्न **सोमाः** = ऐश्वर्य, सृजन **स्तीर्णम्** = आच्छादन को **बर्हिः** = बढ़ाओ। **स्तोतृभ्यः** = स्तुति कर्ताओं के लिए। **मृडय** = सुख करो॥ **10**॥

पदार्थ - **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुतासः** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमाः** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना,

जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **स्तीर्णम्** = स्तीर्ण को, आच्छादन को (स्तृ = आच्छादित करना, विस्तार करना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्तोतृभ्य** = स्तुति के लिए। (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मृडय** = सुखी करो (मृड - सुखी होना, सुख देना) ॥ **10** ॥

(23) सूक्त 11

214. आ वः इन्द्रम् कृविम् यथा, वाजयन्तः शतक्रतुम्।
मंहिष्ठम् सिञ्चे इन्दुभिः ॥ 1 ॥ 1-30-1

मन्त्रार्थ - **वः** = तुम **यथा** = जैसे **वाजयन्तः** = बलपूर्वक **कृविम्** = दुःखी को **सिञ्चे** = सिञ्चन करते हो, **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले, **मंहिष्ठम्** = महानतम **इन्द्रम्** = इन्द्र को **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा, परम ऐश्वर्य द्वारा **सिञ्चे** = सिञ्चन करते हो ॥ **1** ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **कृविम्** = मारने को, दुःख देने को (कृवि - मार डालना, सताना, दुःख देना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले को (शत - सौ, कृ - करना)। **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सिञ्चे** = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **इन्दुभिः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ **1** ॥

215. अतः चित् इन्द्र नः उपा, याहि शतवाजया।
इषा सहस्त्रवाजया ॥ 2 ॥ 8-92-10

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **चित्** = हे चेतन, **अतः** = इसलिए **शतवाजया** = शत-शत विद्या-प्रगति-बल द्वारा, **इषा** = इच्छा, ज्ञान, दृष्टि द्वारा, **सहस्त्रवाजया** = सहस्त्रों विद्या-प्रगति-बल द्वारा **नः** = हमारे **उप** = समीप **आ याहि** = आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें ॥ **2** ॥

पदार्थ - **अतः** = इसलिए (अव्यय)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **चित्** = चेतन (**चित्** = चेतन होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **शतवाजया** = शतवाज के लिए, विद्या-गति के लिए (शत = सौ, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **इषा** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **सहस्त्रवाजया** = सहस्त्रवाज, हजार विद्या, गति (सहस्त्र = हजार, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना) ॥ **2** ॥

216. आ बुन्दम् वृत्रहा ददे, जातः पृच्छात् वि मातरम्।
के उग्राः के हा शृण्विरे ॥ 3 ॥ 8-45-4

मन्त्रार्थ - **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **बुन्दम्** = जानने, समझने वाले को **आ** = समन्तात्, सम्यक्,

सम्पूर्ण **ददे** = दिया, दान किया। **आ ददे** = आदान किया, ग्रहण किया, लिया। **जातः** = उत्पन्नकर्ता **वि** = विशेष **मातरम्** = माता को, मानकर्ता को **पृच्छात्** = पूछता है, **हा** = हा, **के** = कौन **के** = कौन **उग्राः** = उग्र **शृण्विरे** = सुना है **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **बुन्दम्** = जानने, समझने वाले को (बुन्द- जानना, समझना, बूझना, सूक्ष्म दृष्टि से जानना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **ददे** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **जातः** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पृच्छात्** = पूछता है, पूछा (पृश्-पृच्छ् - पूछना, प्रश्न करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मातरम्** = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **के** = कौन (सर्वनाम)। **उग्राः** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **के** = कौन (सर्वनाम)। **हा** = हा (निपात, अव्यय)। **शृण्विरे** = सुना है (श्रु-शृण् = सुनना) **॥ 3 ॥**

217. वृवदुक्थम् हवामहे, सृप्रकरस्नम् ऊतये।
साधः कृण्वन्तम् अवसे ॥ 4 ॥ 8-32-10

मन्त्रार्थ - **बृबदुक्थम्** = वरणीय वाणी को **सृप्रकरस्नम्** = प्रगतिशील कर्ता को **ऊतये** = रक्षा के लिए **हवामहे** = पुकारते हैं, आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **साधः** = हे साधक, **कृण्वन्तम्** = कर्मशील को **अवसे** = रक्षा करते हो **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **वृवदुक्थम्** = वरणीय वाणी को (वृ - वरण करना। उक् - उच्-वद् - कहना, समझना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सृप्रकरस्नम्** = गतिशील हाथ (सृप - जाना, सरकना, कृ - करना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **साधः** = साध (साध् - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, साधना करना, यशस्वी होना)। **कृण्वन्तम्** = करने, करते हुए को (कृ = करना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना) **॥ 4 ॥**

218. ऋजुनीती नो वरुणो, मित्रो नयति विद्वान्।
अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ 5 ॥ 1-90-1

मन्त्रार्थ - **नो** = हमको **ऋजु-नीती** = ऋजुनीतियुक्त, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् नीतियुक्त **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला **मित्रो** = मित्र **विद्वान्** = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी **देवैः** = देवों द्वारा **सजोषाः** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति सहित **नयति** = ले जाता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **ऋजु** = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **नीती** = नीती (नी - ले जाना, पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **नयति** = ले जाता है (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **विद्वान्** = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **देवैः** = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सजोषाः** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना) **॥ 5 ॥**

219. दूरात् इह इव यत् सतो, अरुणप्सुः अशिश्वितत्।
वि भानुम् विश्वथा तनत्॥ 6॥ 8-5-1

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **सतो** = सत्य **अरुणप्सुः** = अरुणिमा, गतिशील, व्यापक **दूरात्** = दूर से **इह** = यहाँ **इव** = के समान **अशिश्वितत्** = शुभ्र करता है, **वि** = विशेष **भानुम्** = प्रकाश को **विश्वथा** = सब प्रकार से **तनत्** = विस्तार करता है॥ 6॥

पदार्थ - **दूरात्** = दूर से (अव्यय)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **सतो** = सत्य (सत् = सत्य होना, अस्तित्व होना)। **अरुणप्सुः** = अरुणप्सु, हिंसक, गतिशील, व्यापक (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **अशिश्वितत्** = शुभ्र करता है (श्वित - श्वेत होना, शुभ्र होना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **भानुम्** = भानु, प्रकाशमान को (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **विश्वथा** = सब प्रकार से (सर्वनाम)। **तनत्** = विस्तार (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)॥ 6॥

220. आ नो मित्रावरुणा, घृतैः गव्यूतिम् उक्षतम्।
मध्वा रजांसि सुक्रतू॥ 7॥ 3-62-16

मन्त्रार्थ - **सु-क्रतू** = उत्तम कर्म कर्ता **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **घृतैः** = अभिसिञ्चितों प्रकाशितों द्वारा **गव्यूतिम्** = बोलने योग्य वाणी को, **मध्वा** = मधु द्वारा **रजांसि** = लोकों को, रजः को **उक्षतम्** = प्रोक्षण करें, स्वच्छ करें, दृढ़ करें, सिञ्चन करें॥ 7॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **घृतैः** = अभिसिञ्चितों प्रकाशितों द्वारा (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **गव्यूतिम्** = गव्यूति को, बोलने योग्य वाणी बोलने वाले को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, उ - सुखाना, शोषण करना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। **उक्षतम्** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **मध्वा** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **रजांसि** = लोकों को, रजः को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **सु-क्रतू** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)॥ 7॥

221. उत् उ त्ये सूनवो गिरः, काष्ठा यज्ञेषु अत्नत।
वाश्राः अभिज्ञु यातवे॥ 8॥ 1-37-10

मन्त्रार्थ - **त्ये** = उन सब **सूनवो** = उत्पन्न, सन्तान **वाश्राः** = शब्द कर्ता, पुकारने वाले, **अभिज्ञु** = अभिज्ञान रखने वाले ने **उ** = निश्चय ही **उत्** = उत्कृष्ट **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **यज्ञेषु** = यजनों में **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए **अत्नत** = विस्तार किया॥ 8॥

पदार्थ - **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्ये** = उन सब ने (सर्वनाम)। **सूनवो** = सन्तान (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **काष्ठा** = प्रकाशक (कास् = प्रकाश करना)। **यज्ञेषु** = यजनों में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **अत्नत** = विस्तार किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **वाश्राः** = शब्द करना, आवाज करना, पुकारना (वास - शब्द करना, बुलाना, पुकारना, वा - गति करना, बहना, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अभिज्ञु** = अभिज्ञान रखने वाला (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर,

सर्वथा (उपसर्ग), ज्ञा-जान - जानना, समझना)। **यातवे =** प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दु:ख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) **॥ 8 ॥**

222. इदम् विष्णुः विचक्रमे, त्रेधा नि दधे पदम्।
सम् ऊढम् अस्य पांसुले ॥ 9 ॥ 1-22-17

मन्त्रार्थ :- विष्णुः विष्णु ने **इदम्** इसकी **विचक्रमे** रचना की। **अस्य** इसका **त्रेधा** तीन प्रकार **पदम्** पद को, ज्ञान, प्रगति को **सम्** सम्यक् **ऊढम्** वाणी को **पांसुले** पांसुल में **नि दधे** धारण (स्थापित) किया **॥ 9 ॥**

भावार्थ :- विष्णु का अर्थ है सर्वव्यापक अर्थात् परमात्मा। उन्होंने इस सृष्टि की रचना की। तीन प्रकार से पदस्थापित किया अर्थात् सृष्टि तीन रूपों में है। इसे चेतना, ऊर्जा, द्रव्य कह सकते हैं। सत्, रज, तम भी कहा जा सकता है **॥ 9 ॥**

पदार्थ : इदम् = यह, इसको। **विष्णुः** = विष्णु (विष्ण् = व्याप्त होना)। **विचक्रमे** = रचना की (वि = विशेष, चक- तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **त्रेधा** = तीन प्रकार से (त्रि = तीन)। **नि** = निश्चित। **दधे** = धारण करें (दध - धारण करना)। **पदम्** = पद को (पद - चलना, स्थानान्तर करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **ऊढम्** = वाणी को (ऊ - शब्द करना)। **अस्य** = इसका। **पांसुले** = पांसुल में (पंस - चलना, गति करना, बन्धन करना, धारण करना) **॥ 9 ॥**
अध्याय 5 मन्त्र 15 यजुर्वेद साम 1669

(24) सूक्त 12

223. अतीहि मन्युषाविणम्, सुषुवांसम् उपेरय।
अस्य रातौ सुतम् पिब ॥ 1 ॥ 8-32-21

मन्त्रार्थ - मन्युषाविणम् = विचार सामर्थ्य वाले को **अतीहि** = अतिशय जानें, प्राप्त करें। **सुषुवांसम्** = उत्तम सृजन, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् करने वाले को **उपेरय** = समीप प्रेरणा दें, प्रेरित करें, भेजें। **अस्य** = इसके **रातौ** = अनुदान में **सुतम्** = ऐश्वर्य को, उत्पन्न, सृजन को **पिब** = पान करो, ग्रहण करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ - अतीहि = अतिशय जानें (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **मन्युषाविणम्** = विचार सामर्थ्य वाले (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, सु - उत्पन्न करना, आसवन करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना,ऐश्वर्यवान्)। **सुषुवांसम्** = सुन्दर सृजन किया, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् करने वाले (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, शुष - शुष्क होना, सूखना, शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना)। **उपेरय** = जाने, जानने, प्रेरणा के लिए (उप - समीप, निकट, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रातौ** = अनुदान, देना (रा - देना, मिल जाना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान् को, उत्पन्न हुओं को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) **॥ 1 ॥**

224. कत् उ प्रचेतसे महे, वचो देवाय शस्यते।
तत् हि इत् अस्य वर्धनम् ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - कत् = कितना **उ** = ही **प्रचेतसे** = प्रकृष्ठ विचार वाले **महे** = महान्, पूज्य **वचो** = वचन **देवाय** = देव के लिए **शस्यते** = स्तुति है। **तत्** = वह **हि** = ही **इत्** = ही **अस्य** = इसका **वर्धनम्** = वृद्धि (है) **॥ 2 ॥**

पदार्थ - कत् = कितना (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **प्रचेतसे** = प्रकृष्ठ विचार वाले के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शस्यते** = शस्य के लिए, स्तुति के लिए (शंस - चाहना, इच्छा करना,

स्तुति, प्रशंसा करने वाला, शस - मारना, दुःख देना, काटना, हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **वर्धनम्** = वृद्धि को (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना) ॥

225. उक्थम् च न शस्यमानम्, नागो रयिः आ चिकेत।
न गायत्रम् गीयमानम् ॥ 3 ॥ 8-2-14

मन्त्रार्थ - **शस्यमानम्** = स्तुति करते हुए **न** = के समान, **गायत्रम्** = गान को **गीयमानम्** = गाते हुए **न** = के समान **नागो** = अकुटिल **उक्थम्** = उक्ति, कथन को **च** = और **रयिः** = प्रगति, विद्या को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **चिकेत** = जानता है ॥ 3 ॥

भावार्थ - अशब्दमुक्त, अकुटिल उपासक, मार्गदर्शक हमारे कथन को और प्रगति, विद्या को जानता है। वह केवल स्तुति गान को अथवा इच्छा को नहीं जानता है। इसका भाव है कि केवल स्तुति करने और सब कुछ हो जाने की इच्छा करने से लाभ नहीं होता है, हमारी वाणी में सत्य होना चाहिए, विद्या तथा प्रगतिशीलता होनी चाहिए ॥ 3 ॥

पदार्थ - **उक्थम्** = उक्ति, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शस्यमानम्** = स्तुति, इच्छा करते हुए (शंस - चाहना, इच्छा करना, स्तुति, प्रशंसा करने वाला, शस् - काटना, हिंसा करना)। **नागो** = अशब्दमुक्त, अकुटिल (अ = नहीं, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, ग्रहण करना, गु = शब्द करना)। **रयिः** = प्रगतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान (अ - नहीं, अय् = जाना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **चिकेत** = विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गायत्रम्** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **गीयमानम्** = स्तुति करते हुए, गतिमान, गायन करते हुए (गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) ॥ 3 ॥ **साम 1805**

226. इन्द्रः उक्थेभिः मन्दिष्ठो, वाजानाम् च वाजपतिः।
हरिवान् सुतानाम् सखा ॥ 4 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा **मन्दिष्ठो** = अत्यन्त आनन्दमय, **च** = और **वाजानाम्** = वाजों का, बल, विद्या, प्रगति का **वाजपतिः** = वाजपति, **हरिवान्** = हरि युक्त, **सुतानाम्** = ऐश्वर्यवानों के, उत्पन्न हुओं के **सखा** = मित्र (हैं) ॥ 4 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **मन्दिष्ठो** = अत्यन्त मन्द, स्तुति, आनन्द (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **च** = और। **वाजपतिः** = वाजपति (वाज् = जानना, जाना, पहुँचना, पाना, तैयार करना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **हरिवान्** = हरि युक्त (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सुतानाम्** = ऐश्वर्यवानों के, उत्पन्न हुओं के (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 4 ॥

227. आ याहि उप नः सुतम्, वाजेभिः मा हृणीयथाः।
महान् इव युवजानिः ॥ 5 ॥

मन्त्रार्थ - **नः** = हमारे **उप** = समीप **आ याहि** = आयें। **महान्** = महान्, बड़े, पूज्य **इव** = के समान **युवजानिः**

= मेल करने वाले **सुतम्** = सृजन, रचना को **वाजेभिः** = बल द्वारा **मा** = नहीं **ह्वणीयथाः** = लज्जित करें ॥ **5** ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **वाजेभिः** = वाजद्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **ह्वणीयथाः** = लज्जित (ह्वणी - लज्जित होना, क्रोध करना, गुस्सा करना।)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **युवजानिः** = मेल, मिलन को उत्पन्न करने वाले (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ **5** ॥

228. कदा वसो स्तोत्रम् हर्यते, आ अव श्मशा रुधत् वाः।
दीर्घम् सुतम् वाताप्याय ॥ 6 ॥ 10-105-1

मन्त्रार्थ - **वसो** = हे वसु, **कदा** = कब **स्तोत्रम्** = स्तोत्र को, स्तुति को **हर्यते** = प्रकाश, प्रगतिशील, इच्छुक, हरण योग्य के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **श्मशा** = शमन, विचार द्वारा **वाः** = प्रगतिशील **दीर्घम्** = दीर्घ **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, सृजनशील को **वाताप्याय** = सुखी करने के लिए **अव रुधत्** = अवरुद्ध करते हो ॥ **6** ॥

भावार्थ - हे वसु, हे वास देने वाले जो विचारों से प्रगतिशील हैं, उनके लिए ऐश्वर्यवान्, सृजनशील को कब अवरुद्ध करते हो, अर्थात् कभी अवरुद्ध नहीं करते हो ॥ **6** ॥

पदार्थ - **कदा** = कब (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्तोत्रम्** = स्तोत्र को, स्तुति होने को (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **हर्यत** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **श्मशा** = शमन, विचार द्वारा (शम = शमन करना, शान्त करना, प्रसिद्ध करना, स्पष्टता से दिखाना, विचार करना, सहन करना, ठण्डा होना, मन स्वाधीन रखना, स्वस्थ होना, क्षुब्ध नहीं होना)। **अरुधत्** = बढ़ा, चाहा, रुका हुआ (रुध - बढ़ना, गर्व करना, चाहना, रोकना, कृपालु होना, दया करना, अनुमोदन देना, सलाह करना, शोक करना, रोना)। **वाः** = गतिशील (वा - गति करना, बहना)। **दीर्घम्** = दीर्घ को, विशाल को (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **वाताप्याय** = सुखी करने के लिए (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना,) ॥ **6** ॥

229. ब्राह्मणात् इन्द्र राधसः, पिबा सोमम् ऋतून् अनु।
तव इदम् सख्यम् अस्तृतम् ॥ 7 ॥ 1-15-5

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **ब्राह्मणात्** = ब्राह्मण से, वृद्धि से **राधसः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय का, दान, वृद्धि का **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्य, सृजन को **ऋतून्** = ऋतुओं के **अनु** = अनुकूल **पिबा** = पियें, पान करें। **तव** = तुम्हारा **इदम्** = यह **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता **अस्तृतम्** = आच्छादित है ॥

पदार्थ - **ब्राह्मणात्** = ब्राह्मण, ब्रह्म से सम्बन्धित (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **राधसः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण

करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **ऋतून्** = ऋतुओं को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **अस्तृतम्** = आच्छादित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तृ - पूर्ण करना, आच्छादित करना, ढकना, फैलाना) ॥

230. वयम् घा ते अपि स्मसि, स्तोतार इन्द्र गिर्वणः।
त्वम् नो जिन्व सोमपाः॥ 8॥ 8-32-7

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **वयम्** = हम **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चनयुक्त **घा** = ही **ते** = तुम्हारे **अपि** = निकट **स्तोतार** = स्तुतिकर्ता **स्मसि** = हैं। **त्वम्** = तुम **सोमपाः** = सोम पालक, सोमपान करने वाले **नो** = हमको **जिन्व** = प्रसन्न करो॥ 8॥

पदार्थ - **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **घा** = ही (अव्यय, निपात)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अपि** = भी, निकट (अव्यय)। **स्मसि** = हैं (अस् = होना)। **स्तोतार** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **जिन्व** = प्रसन्न करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **सोमपाः** = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)॥ 8॥

231. आ इन्द्र पृक्षु कासु चित्, नृम्णम् तनूषु धेहि नः।
सत्राजित् उग्र पौंस्यम्॥ 9॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **सत्राजित्** = हे विस्तृत विजेता, **उग्र** = हे उग्र, **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **पृक्षु** = सम्पर्कों में, मेल में, **कासु** = प्रकाश में **चित्** = ही **तनूषु** = विस्तारों में **नृम्णम्** = नर को, ले जाने वाले को **नः** = हमारे **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को **धेहि** = धारण करें॥ 9॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पृक्षु** = सम्पर्कों में, मेल में (पृक् - मिलना)। **कासु** = प्रकाश में (कास् = प्रकाश करना)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। **तनूषु** = विस्तारों में (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **धेहि** = धारण करें (धा-धि-धी - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सत्राजित्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **उग्र** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को (पुंस – बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)॥ 9॥

232. एव आ हि असि वीरयुः, एव आ शूरः उत स्थिरः।
एव आ ते राध्यम् मनः॥ 10॥ 8-92-28

मन्त्रार्थ - **वीरयुः** = वीरता युक्त **एव** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **हि** = निश्चय ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **एव** = ही **शूरः** = वीर, पराक्रमी **उत** = ही **स्थिरः** = स्थिर **असि** = हो। **ते** = तुम्हारा **एव** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **राध्यम्** = राध्य, सिद्धयुक्त, पूर्णयुक्त **मनः** = मन (है)॥

पदार्थ - **एव** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **असि** = हो

(अस् - होना)। **वीरयुः =** वीरता युक्त (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **एव =** ही (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **शूर =** वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **उत =** ही (अव्यय)। **स्थिरः =** स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **एव =** ही (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **राध्यम् =** राध्य को, सिद्ध करने वाले को, सिद्धयुक्त को, पूर्णयुक्त को (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **मनः =** मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)॥

इति द्वितीयो अध्यायः

ॐ

अथ तृतीयो अध्यायः

ऐन्द्रम् पर्वम् काण्डम् वा

(25) सूक्त 1

233. अभि त्वा शूर नोनुमो, अदुग्धा इव धेनवः।
ईशानम् अस्य जगतः, स्वर्दृशम् ईशानम् इन्द्र तस्थुषः॥ 1॥ 7-32-22

मन्त्रार्थ - **शूर** = हे वीर, पराक्रमी, **त्वा** = तुम्हारे **अदुग्धाः** = अदुग्ध, अदोहित **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **इव** = के समान **अभि** = अभिमुख **नोनुमः** = स्तुति करते हैं। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **अस्य** = इस **जगतः** = जगत् का, संसार का **ईशानम्** = शासन करने वाले को, **स्वदृशम्** = उत्पन्न, ऐश्वर्य को **दृशानः** = देखने वाले **ईशानम्** = शासन करने वाले को **तस्थुषः** = स्थापित करते हैं॥ 1॥

भावार्थ :- **इन्द्र अर्थात्** परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा इस जगत् का शासन करने वाला है। **अदुग्धाः इव धेनवः** का अर्थ है विना दुही धेनु के समान। धेनु का शाब्दिक अर्थ है प्रिय, पालन करने वाले। पालन करने वाले स्वभावतः हमारे प्रिय होते ही हैं। गाय हमारे लिए उपयोगी प्राणी है। अतः वह हमें प्रिय भी है। उसके दुग्ध से पालन होता है। इसीलिए उसे धेनु भी कहते हैं। यहाँ विना दुही धेनु को ले जाने वाले शूरवीर पराक्रमी कहे गये हैं। उसी प्रकार हम ईश का वरण करते हैं। यही श्रेयस्कर है।

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **नोनुमः** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अदुग्धाः** = अदुग्ध, अदोहित (अ = नहीं, खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **स्वदृशम्** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, दृष्टि (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य -देखना)। **दृशानः** = देखने वाले (दृश्-पश्य -देखना)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **इन्द्र** - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)॥ 1॥

234. त्वाम् इत हि हवामहे, सातौ वाजस्य कारवः।
त्वाम् वृत्रेषु इन्द्र सत्पतिम्, नरः त्वाम् काष्ठासु अर्वतः॥ 2॥ 6-46-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **वाजस्य** = बल, विद्या, प्रगति के **कारवः** = कर्ता, करने वाले, कर्मशील **त्वाम्** = तुमको **इत्** = ही **हि** = निश्चय ही **सातौ** = सेवा, विभाजन, योग्यता में **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **नरः** = नर **त्वाम्** = तुमको **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक को **वृत्रेषु** = हिंसा में, **त्वाम्** = तुमको **अर्वतः** = प्रगति के **काष्ठासु** = प्रकाश में (**हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं)॥ 2॥

भावार्थ :- हम प्रत्येक कार्य में तथा प्रत्येक परिस्थिति में परमात्मा का ही आह्वान करते हैं॥ 2॥

पदार्थ- **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सातौ** = सेवा, विभाजन, योग्यता में (सन् - सेवा करना, विभक्त करना, योग्य होना)। **वाजस्य** = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **कारवः** = करने वाला (कृ - करना)। **त्वाम्** =

तुमको, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वृत्रेषु =** वृत्रों में (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सत्पतिम् =** सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **नरः =** नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **त्वाम् =** तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **काष्ठासु =** प्रकाशकों में (कास् = प्रकाश करना)। **अर्वतः =** प्रगति से (अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) **॥ 2 ॥**

235. अभि प्र वः सुराधसम्, इन्द्रम् अर्च यथा विदे।
यो जरितृभ्यो मघवा, पुरूवसुः सहस्त्रेण इव शिक्षति॥ 3 ॥ 8-49-1

मन्त्रार्थ - **वः =** तुम लोग **अभि =** अभिमुख **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख **सुराधसम् =** उत्तम आराधक को, उत्तम सिद्धि को **इन्द्रम् =** इन्द्र को **अर्च =** पूजो, **यथा =** जिस प्रकार **विदे =** जानते हो। **यो =** जो **मघवा =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् **पुरूवसुः =** बहुत वास देने वाले **जरितृभ्यो =** वृद्ध, परिपक्व लोगों के लिए **सहस्त्रेण =** हजार **इव =** के समान **शिक्षति =** शिक्षित करता है, सिखाता है **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः =** तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **सुराधसम् =** उत्तम राध, उत्तम सिद्धि को (राध् - सिद्ध करना, पूरा करना, बढ़ना, निर्णय करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्च =** पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **यथा =** जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **विदे =** विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **यो =** जो। **जरितृभ्यो =** जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों के लिए (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **मघवा =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पुरूवसुः =** हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **सहस्त्रेण =** हजार (संख्या)। **इव =** के समान (अव्यय)। **शिक्षति =** शिक्षित करता है (शिक्ष् - शिक्षा देना) **॥ 3 ॥**

236. तम् वो दस्मम् ऋतीषहम्, वसोः मन्दानम् अन्धसः।
अभि वत्सम् न स्वसरेषु धेनवः, इन्द्रम् गीर्भिः नवामहे॥ 4 ॥ 8-88-1

मन्त्रार्थ :- **वः =** तुम लोग **तम् =** उसको **दस्मम् =** रक्षण, पालन, स्थापन करने वाले, **ऋतीषहम् =** ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित, **वसोः =** वसु का, वास का **मन्दानम् =** आनन्द देने वाले **अन्धसः =** प्राणवान्, **अभि =** अभिमुख **वत्सम् =** बोलने वाले **न =** के समान **धेनवः =** धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **स्वसरेषु =** अपनी प्रगतियों में **इन्द्रम् =** इन्द्र को **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **नवामहे =** स्तुति करते हैं **॥ 4 ॥**

भावार्थ :- परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा की स्तुति वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा करते हैं। वाणी का भावार्थ वेदवाणी मानना समुचित है। उसका बोध होना भी आवश्यक है। बोध हो जाये तो समाज को उस बोध से अभिसिंचित करें, लाभान्वित करें, यह भी आवश्यक है **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **वः =** तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **दस्मम् =** रक्षण, पालन, स्थापन करने वाले को, नष्ट करने वाले को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **ऋतीषहम् =** ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, ऋती - कृपा करना, दया करना, निन्दा करना, दोष लगाना, घृणा करना, सह -शक्ति-सामर्थ्य होना, साथ होना, तृप्त होना, प्रसन्न होना, सहन करना, सन्तुष्ट होना)। **वसोः =** वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **मन्दानम् =** आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **अन्धसः**

= प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वत्सम् =** बोलने वाले को (वद् - वच्- बोलना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्वसरेषु =** स्वसरों में (स्व - अपना, सु - अच्छा, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना। सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना। सृ - गति करना, जानना, पाना)। **धेनवः =** धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **नवामहे =** स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना) **॥ 4 ॥**

237. तरोभिः वो विदत् वसुम्, इन्द्रम् सबाध ऊतये।
बृहद् गायन्तः सुतसोमे, अध्वरे हुवे भरम् न कारिणम्। 5 ॥ 8-66-1

मन्त्रार्थ :- तरोभिः = तरने वालों द्वारा, तैरने वालों द्वारा **वो =** तुम सबको, **वसुम् =** वसु को, **इन्द्रम् =** इन्द्र को **सबाध =** सबाधित, बाधा सहित **ऊतये =** रक्षा के लिए **विदत् =** जानें। **बृहद् =** महान्, बृहत् **गायन्तः =** गाते हैं, गायन करने वाले **सुतसोमे =** सुतसोम में, ऐश्वर्यवान् प्रेरणा में **अध्वरे =** अहिंसक में **भरम् =** भरण करने वाले को, पोषण करने वाले को **न =** के समान **कारिणम् =** करने वाले को, कर्त्ता को **हुवे =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- तरोभिः = तरने वालों द्वारा, तैरने वालों द्वारा (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **विदत् =** जानें (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **वसुम् =** वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सबाध =** सबाधित, बाधा सहित (स - सहित, साथ, बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **बृहद् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **गायन्तः =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सुतसोमे =** सुतसोम में, ऐश्वर्यवान् प्रेरणा में (सु = अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अध्वरे =** अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **हुवे =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **भरम् =** भरण करने वाले को, पोषण करने वाले को (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कारिणम् =** करने वाले को, कर्त्ता को (कृ - करना) **॥ 5 ॥**

238. तरणिः इत् सिषासति, वाजम् पुरन्ध्या युजा।
आ वः इन्द्रम् पुरुहूतम्, नमे गिरा नेमिम् तष्टा इव सुद्रुवम्॥ 6 ॥ 7-32-20

मन्त्रार्थ :- तरणिः = तैरने वाला **इत् =** ही **सिषासति =** शुद्ध होता है। **वाजम् =** विद्या को, प्रगति को **पुरन्ध्या =** पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले के साथ **युजा =** युक्त कीजिये। **वः =** तुम लोग **इन्द्रम् =** इन्द्र को **पुरुहूतम् =** पुरुहूत को, बहुत प्रदत्त को **नेमिम् =** ले जाने वाले, मार्गदर्शक को **तष्टा =** स्थापित **इव =** के समान **सुद्रुवम् =** सुद्रुव को, उत्तम प्रवाहकामी, ज्ञान को **गिरा =** वाणियों द्वारा **आ =** सम्यक् **नमे =** नमन करते हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ :- तरणिः = तैरने वाला, तैरने का साधन (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना,

जल के पार जाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सिषासति** = शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर् = आगे जाना, धि-धा = धारण करना)। **युजा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नमे** = नमन में (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **नेमिम्** = ले जाने वाले, मार्गदर्शक को (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **तष्टा** = स्थापित (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सुद्रुवम्** = सुद्रुव को, प्रवाहकामी, ज्ञान को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना) **॥ 6 ॥**

239. पिबा सुतस्य रसिनो, मत्स्वः आ नः इन्द्र गोमतः।
आपिः नो बोधि सधमाद्ये, वृधे अस्मान् अवन्तु ते धियः ॥ 7 ॥ 8-3-1

मन्त्रार्थ - **सुतस्य** = सुत का **रसिनो** = रस का **पिबा** = पियो, पान करें। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नः** = हमारे लिए **गोमतः** = शब्द कर्ता, मननशील ने **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **मत्स्वः** = हर्षित हो, तृप्त हो। **आपिः** पालन कर्ता **नो** = हमको **सधमाद्ये** = साथ आनन्द में **बोधि** = जानता है। **ते** = तुम्हारी **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **अस्मान्** = हमको **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में **अवन्तु** = प्रकाशित करें, रक्षा करें **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सुतस्य** = सुत का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **रसिनो** = रस का (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **मत्स्वः** = हर्षित हो, तृप्त हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **आपिः** = प्राप्त किया, पालन किया (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **बोधि** = जानता है (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **सधमाद्ये** = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **अवन्तु** = प्रकाशित करें, रक्षा करें (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) **॥ 7 ॥**

240. त्वम् हि एहि चेरवे, विदा भगम् वसुत्तये।
उत् वावृषस्व मघवन् गविष्टये, उत् इन्द्र अश्वम् इष्टये ॥ 8 ॥ 8-50-7

मन्त्रार्थ - **त्वम्** = तुम **हि** = ही **चेरवे** = चेरु के लिए, मिलन के लिए, वियोग के लिए **एहि** = आओ, प्राप्त करो। **भगम्** = सेवा को **वसुत्तये** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले के लिए **विदा** = जानो। **मघवन्** = हे धनवान्,

ऐश्वर्यवान् **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **गविष्टये** = वाणी, ज्ञान, इच्छा के लिए **उत्** = उत्कृष्ट **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **इष्टये** = इच्छा, प्राप्ति के लिए **उत्** = उत्कृष्ट **वावृषस्व** = पराक्रम करो, वर्षा करो ॥ 8 ॥

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **एहि** = जाओ, प्राप्त करो (ई - जाना)। **चेरवे** = चेरु के लिए, मिलन के लिए, वियोग के लिए (चिर - वियोग होना, मिलना)। **विदा** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **भगम्** = भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **वसुत्तये** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वावृषस्व** = वर्षा करो (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **गविष्टये** = गविष्ट युगल, वाणी, ज्ञान, इच्छा के लिए (गु = शब्द करना, मनन करना, गम् = जाना, जानना, पाना, इष् - इच्छा करना, एक-एक कर चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **इष्टये** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 8 ॥

241. न हि वः चरमम् च न, वसिष्ठः परि मंसते।
अस्माकम् अद्य मरुतः सुते सचा, विश्वे पिबन्तु कामिनः ॥ 9 ॥ 7-59-3

मन्त्रार्थ - **न** = नहीं, **हि** = ही **वः** = तुम लोग **च** = और **न** = नहीं **वसिष्ठः** = वसिष्ठ **चरमम्** = चरम को, विचरण को **परिमंसते** = रूपान्तर करता है, मापता है, गति, प्राप्ति करता है। **अद्य** = आज **अस्माकम्** = हमारा **मरुतः** = मरणशील, **सुते** = ऐश्वर्य में **सचा** = सहगामी **विश्वे** = सभी **कामिनः** = कामना, इच्छा करने वाले **पिबन्तु** = पियें, पान करें ॥ 9 ॥

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **चरमम्** = विचरण करने को (चर -जाना, खाना, आचरण करना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वसिष्ठः** = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **परिमंसते** = रूपान्तर करता है, मापता है, गति करता है (मंस-मस - रूपान्तर करना, आकार बदलना, नापना, गति करना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **विश्वे** = सभी (सर्वनाम)। **पिबन्तु** = पियें, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **कामिनः** = कामना, इच्छा (कम - चाहना, इच्छा करना) ॥ 9 ॥

242. मा चित् अन्यत् वि शंसत, सखायो मा रिषण्यत।
इन्द्रम् इत् स्तोता वृषणम्, सचा सुते मुहुः उक्था च शंसत ॥ 10 ॥ 8-1-1

मन्त्रार्थ - **मा** = नहीं **चित्** = ही **अन्यत्** = अन्य **वि** = विशेष **शंसत** = स्तुति करो। **सखायो** = मित्र **मा** = नहीं, **रिषण्यत** = हिंसा करो। **सचा** = हे समझदार, जानकार, सहगामी, **स्तोता** = हे स्तुतिकर्ता, **वृषणम्** = पराक्रमी **इन्द्रम्** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् को **इत्** = ही **सुते** = ऐश्वर्य में, सृजन में **मुहुः** = प्रायः, बार-बार **उक्था** = उक्ति, कथन **च** = और **शंसत** = स्तुति करो ॥ 10 ॥

पदार्थ - **मा** = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **अन्यत्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **शंसत** = स्तुति करो (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **मा** = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **रिषण्यत** = हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **स्तोता** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मुहुः** = प्रायः, बार- बार (अव्यय)। **उक्था** = उक्ति, कथन (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **च** = और। **शंसत** = स्तुति करो (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) **॥ 10 ॥**

(26) सूक्त 2

243. न किः तम् कर्मणा नशत्, यः चकार सदावृधम्।
इन्द्रम् न यज्ञैः विश्वगूर्तम्, ऋभ्वसम् अधृष्टम् धृष्णुम् ओजसा ॥ 1 ॥ 8-70-3

मन्त्रार्थ - **न** = नहीं **किः** = कोई **तम्** = उसको **कर्मणा** = कर्म द्वारा **नशत्** = नष्ट करता है **यः** = जिसने **सदावृधम्** = सदा बढ़ने वाले को **चकार** = किया है। **इन्द्रम्** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् **न** = के समान **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा **विश्वगूर्तम्** = सभी प्रयत्नशील, **ऋभ्वसम्** = प्रगतिशील **धृष्णुम्** = विजेता को **ओजसा** = ओज द्वारा **अधृष्टम्** = जय किया **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **कर्मणा** = कर्म (कृ - करना)। **नशत्** = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **चकार** = किया (कृ = करना)। **सदावृधम्** = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना -वृध् - वृद्धि होना, बढ़ना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **विश्वगूर्तम्** = सभी प्रयत्न करने वाले को (विश्व - सभी, गूर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, भक्षण करना, खाना, हिंसा करना)। **ऋभ्वसम्** = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् – जाना, फैलाना, ऋृ - जाना, चलना, जानना, पाना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अधृष्टम्** = विजय, गर्व किया (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **धृष्णुम्** = विजय, गर्व को (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) **॥ 1 ॥**

244. यः ऋते चित् अभिश्रिषः, पुरा जत्रुभ्यः आतृदः।
सन्धाता सन्धिम् मघवा, पुरूवसुः निष्कर्ता विह्रुतम् पुनः ॥ 2 ॥ 8-1-12

मन्त्रार्थ - **यः** = जिसने **अभिश्रिषः** = अभिश्रिष, सेवा, आश्रय, समृद्धि **ऋते** = विना **चित्** = ही **पुरा** = पहले **जत्रुभ्यः** = उत्पन्नकर्ता के लिए **आतृदः** = दान, भोजन-पोषण किया है, **सन्धिम्** = सन्धियों को **सन्धाता** = सन्धि करने वाला, **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **पुरूवसुः** = अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक, **विह्रुतम्** = विहरण करने वाले को **पुनः** = फिर **निष्कर्ता** = निष्कर्ता, निष्करण करने वाला **(है) ॥ 2 ॥**

पदार्थ - **य** = जो (सर्वनाम)। **ऋते** = विना (अव्यय)। **चित्** = भी, ही। **अभिश्रिषः** = अभिश्रिष, सेवा, आश्रय, समृद्धि (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, श्री - सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **जत्रुभ्य** = जत्रु, उत्पन्न के लिए (जन = उत्पन्न होना, पैदा होना, उत्पन्न करना, पैदा करना)। **आतृदः** = हिंसा, दान, भोजन-पोषण करने वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तृद् - हिंसा करना, अनादर करना, खाना,

देना)। **सन्धाता =** सन्धि करने वाला (सम्-धि, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, धि - धारण करना)। **सन्धिम् =** सन्धियों को (सम्-धि, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, धि - धारण करना)। **मघवा =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पुरूवसुः =** हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **निष्कर्ता =** निष्कर्ता, निष्करण करने वाला, निष्कर्म युक्त (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। **विह्रुतम् =** विहरण करने वाला (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना, ह्री = लज्जा करना, लज्जित होना)। **पुनः =** फिर (अव्यय) **॥ 2 ॥**

245. आ त्वा सहस्त्रम् आ शतम्, युक्ता रथे हिरण्यये।
ब्रह्मयुजो हरयः इन्द्र, केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥ 3 ॥ 8-1-24

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वा =** तुमको **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सहस्त्रम् =** हजार को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **शतम् =** सौ **युक्ता =** युक्त **हिरण्यये =** हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील **रथे =** रथ में **ब्रह्मयुजो =** ब्रह्मयुक्त, बृहत् युक्त **हरयः =** हरिगण, हरने वाले, ले जाने वाले, पहुँचाने वाले **केशिनो =** केशी गण **सोमपीतये =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए **वहन्तु =** वहन करें **॥ 3 ॥**

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सहस्त्रम् =** हजार को (संख्या)। **शतम् =** सौ (सर्वनाम)। **युक्ता =** युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **रथे =** रथ में (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हिरण्यये =** हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **ब्रह्मयुजो =** ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **हरय =** हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **केशिनो =** केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **वहन्तु =** वहन करें (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सोमपीतये =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, प्राशन करना, संरक्षण करना) **॥ 3 ॥**

246. आ मन्द्रैः इन्द्र हरिभिः, याहि मयूररोमभिः।
मा त्वा के चित् नियेमुः इत्, न पाशिनो अति धन्वेव तान् इहि ॥ 4 ॥ 3-45-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, **मन्द्रैः =** स्तुत्यों द्वारा, आनन्दित करने वालों द्वारा **हरिभिः =** हरि-गण द्वारा **मयूररोमभिः =** मयूर-रोमों द्वारा, प्रगतिशील विद्वानों द्वारा **आ याहि =** आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें। **त्वा =** तुमको **के =** कोई **चित् =** भी **मा =** नहीं, मत **नियेमुः =** नियमन करे, **पाशिनो =** पाश युक्त, बन्धनकारी **इत् =** भी **न =** नहीं। **अति =** बहुत **धन्वा =** गतिशील **इव =** के समान **तान् =** उनको **इहि =** जाओ, प्राप्त करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मन्द्रैः =** स्तुत्यों द्वारा, आनन्दित करने वालों द्वारा, विनाश करने वालों द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **इन्द्र =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हरिभिः =** हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **याहि =** जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **मयूररोमभिः =** मयूर-रोमों द्वारा, प्रगतिशील विद्वानों द्वारा (मय् - जाना, जानना,

पाना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **के** = कौन, कोई (सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **यमन्** = यमन करने वाला, यमन करता हुआ (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पाशिनो** = पाश वालों का, दिखाने वालों का, बन्धन का (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **धन्वा** = गति, शब्द करने वाले (धन्व - जाना, जानना, पाना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **तान्** = उनको (सर्वनाम)। **इहि** = आओ, जानो (इ = जाना, जानना, पाना) ॥

247. त्वम् अङ्ग प्र शंसिषो, देवः शविष्ठ मर्त्यम्।
न त्वत् अन्यो मघवन् अस्ति, मर्डिता इन्द्र ब्रवीमि ते वचः ॥ 5 ॥ 1-48-19

मन्त्रार्थ :- अङ्ग - हे अंग, प्रगतिशील, ज्ञानी, **शविष्ठ** - हे अतिशय प्रत्युपकार करने वाले, **त्वम्** - तुम, **मर्त्यम्** - मरणशील को, **प्र-शंसिषो** - प्रशंसनीय, प्रशंसक, **देवः** - देव (हो)। **मघवन्** - हे धनवान्, **त्वत्** - तुमसे, **अन्यो** - अन्य, **मर्डिता** - सुख देने वाला, **न** - नहीं, **अस्ति** - है। **इन्द्र** - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान्, **ते** - तुम्हारे लिए, **वचः** - वचन, वाणी, **ब्रवीमि** - बोलता हूँ ॥ 5 ॥

भावार्थ :- हम मरणशील हैं। हमारे लिए इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई भी निकट आने वाला नहीं है। केवल परमात्मा ही हमें सुख प्रदान कर सकता है। अतः हम उसके लिए ही वाणी बोलते हैं, उससे ही प्रार्थना करते हैं।

पदार्थ :- त्वम् = तुम। **अङ्ग** = अङ्ग - अंग, अंकुर, गतिशील, समीप जाने वाला, ज्ञानी, आदर के साथ सम्बोधन (अंग् = चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **प्र** = अधिक। **प्र-शंसिषो** - प्रशंसनीय, प्रशंसक (शंस - प्रशंसा करना)। **देवः** = देव। **शविष्ठ** - अतिशय प्रत्युपकार करने वाले, समीप आने वाले (शव - जाना, समीप जाना या आना, बदले में देना)। **मर्त्यम्** - मरणशील को (मृ = मरना)। **न** = नहीं। **त्वत्** = तुमसे। **अन्यः** = कोई और, इतर। **मघवन्** = धनवान् (मघ् = धन होना)। **अस्ति** = है (अस् - होना)। **मर्डिता** - सुखी, सुख देने वाला (मृड - सुख देना)। **इन्द्र** - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ब्रवीमि** = बोलता हूँ। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए, तुम्हारी। **वचः** - वचन, वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 5 ॥

248. त्वम् इन्द्र यशा असि, ऋजीषी शवसः पतिः।
त्वम् वृत्राणि हंसि अप्रतीनि, एक इत् पुरु अनुत्तः चर्षणीधृतिः ॥ 6 ॥ 8-90-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वम्** = तुम **यशा** = यश, कीर्ति, **ऋजीषी** = ऋजीषी, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान्, **शवसः** = शवस् का, गति, ज्ञान का **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **असि** = हो। **त्वम्** = तुम **वृत्राणि** = वृत्रों को, हिंसकों को, आच्छादनों को **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो। **अप्रतीनि** = अप्रतिगामी, अतुल्य प्रकाश, **एक** = एक **इत्** = ही **पुरु** = पहले, बहुत **अनुत्तः** = अप्रेरित, **चर्षणीधृतिः** = आनन्दमय, चेतन, विचारशील (हो) ॥ 6 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यशा** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **ऋजीषी** = ऋजीषी, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **शवसः** = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **अप्रतीनि** = अप्रतिगामी, अतुल्य प्रकाश (अ - नहीं, प्रति - सम्बन्ध में, विषय में,प्रत्येक में, (अव्यय), प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, इ - जाना, जानना, पाना, इन् - प्रकाश करना)। **एक**

= एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पुरु** = बहुत, पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **अनुत्तः** = अप्रेरित (अ - नहीं, नुद् = प्रेरित करना)। **चर्षणीधृतिः** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाला (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, धृ - धारण करना) ॥ 6 ॥

249. इन्द्रम् इत् देवतातये, इन्द्रम् प्रयति अध्वरे।
इन्द्रम् समीके वनिनो, हवामहे इन्द्रम् धनस्य सातये ॥ 7 ॥ 8-3-5

मन्त्रार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को **इत्** = ही **देवतातये** = देवत्व के विस्तार के लिए, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अध्वरे** = अहिंसक **प्रयति** = प्रयत्न में, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **समीके** = सम्यक् रूप से इच्छा के लिए **वनिनो** = शब्दकर्ता **इन्द्रम्** = इन्द्र को **धनस्य** = धन का **सातये** = सेवा, दान के लिए **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **देवतातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रयति** = प्रयत्न में (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यत् = यत्न करना, निश्चय करना, यन् - उद्धार करना, यम् - आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **समीके** = सम्यक् इच्छा, प्रगति के लिए (सम् = सम्यक्, भलीभांति, ई - जाना, फैलना, व्यापना, गर्भवती होना, इच्छा करना, चाहना, खाना, उड़ाना, फेंकना, भेजना, प्रेरणा करना)। **वनिनो** = वनी, शब्दकर्ता (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **धनस्य** = धन का (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **सातये** = सेवा, दान के लिए (सन् = सेवा करना, दान करना) ॥ 7 ॥

250. इमा उ त्वा पुरूवसो, गिरो वर्धन्तु या मम।
पावकवर्णाः शुचयो, विपश्चितो अभि स्तोमैः अनूषत ॥ 8 ॥ 8-3-3

मन्त्रार्थ - **पुरूवसो** हे अग्र-वसन वाले, **इमा** ये **उ** ही **त्वा** तुम्हारे लिए **या** जो **मम** मेरा **गिरो** वाणी **वर्द्धन्तु** बढे। **पावक-वर्णाः** पवित्रता का वरण करने वाले **शुचयो** पवित्र **विपश्चितो** विशेष दृष्टियुक्त **अभि स्तोमैः** स्तुतियों से **अनूषत** स्तुति करते हैं ॥ 8 ॥

भावार्थ - हमारी वाणी परमात्मा को समर्पित हो तो शुद्ध पवित्र रहेगी और उसका प्रभाव भी बढ़ेगा। पवित्र दृष्टि वाले स्तुतियों से हमें प्राणवान् करते हैं ॥ 8 ॥

पदार्थ- पुरूवसो = हे अग्र-वसन वाले (पुर् - अभिगमन करना, आगे जाना, वस् - वसना, वास करना)। **इमा** = ये। **उ** = ही। **त्वा** = तुम्हारे लिए। **या** = जो। **मम** = मेरा। **गिरो** = वाणी (गृ - शब्द करना)। **वर्द्धन्तु** = बढे (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **पावक-वर्णाः** = पवित्रता का वरण करने वाले (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, वर्ण - वर्णन करना, विस्तृत करना, प्रसंसा करना, प्रकाशित होना, वृ - वरण करना)। **शुचयो** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **विपश्चितो** = विशेष दृष्टियुक्त (वि - विशेष, पश् - देखना)। **अभि** = सब ओर। **स्तोमैः** = स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अनूषत** = प्राणवान् किया (नू - स्तुति करना) ॥ 8 ॥

251. उत् उ त्ये मधुमत्तमा, गिरः स्तोमासः ईरते।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो, वाजयन्तो रथा इव ॥ 1 ॥ 8-3-15

मन्त्रार्थ - **त्ये** = वे **मधुमत्तमा** = अत्यन्त मधुयुक्त **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन, **स्तोमासः** = स्तुतियाँ **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **उ** = निश्चय ही **सत्राजितो** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी विजेता **धनसा** = धन द्वारा **अक्षितोतयो**

= अक्षित रक्षक, अविनाशी रक्षक **वाजयन्तो** = बलवान **रथा** = रथ **इव** = के समान **ईरते** = कम्पित करता है ॥ **1** ॥

पदार्थ - **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्ये** = वे (सर्वनाम)। **मधुमत्तमा** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **गिर** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **स्तोमास** = स्तुति में, प्रशंसा में (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करनाा)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **सत्राजितो** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **धनसा** = धनसात में, धन के संभजन में (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना, स - सहित, साथ)। **अक्षितोतयो** = अक्षित रक्षक, अविनाशी रक्षक (अक्षित+ ऊतयो, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, क्षि - क्षय होना, नष्ट होना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **वाजयन्तो** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **रथा** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ **1** ॥

252. यथा गौरो अपा कृतम्, तृष्यन् एति अव इरिणम्।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयम् आ गहि, कण्वेषु सु सचा पिब ॥ 10 ॥ 8-4-3

मन्त्रार्थ - **यथा** = जिस प्रकार **गौरो** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता **अपा** = पालनकर्ता **तृष्यन्** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह **अव** = नीचे, दूर **इरिणम्** = शब्दयोग्य को **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ **एति** = जाता है, प्राप्त होता है। **आपित्वे** = समन्तात, सम्पूर्ण पालन, रक्षण में **नः** = हमारे लिए **प्रपित्वे** = प्रगति में **तूयम्** = तूय को, वृद्धि को, वर्द्धन को **आ गहि** = आयें, प्राप्त करें। **कण्वेषु** = कण्वों में, शाब्दिकों में, **सु** = उत्तम **सचा** = सहगामी **पिब** = पी लें ॥ **10** ॥

पदार्थ - **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **गौरो** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अपा** = पालनकर्ता, जल (अप = पालन करना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **तृष्यन्** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह (तृष् = तृषा होना, प्यासा होना, इच्छा करना, चाहना)। **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **इरिणम्** = शब्दयोग्य के लिए (इरण् - शब्द करना)। **आपित्वे** = पालन, रक्षण करने के लिए (आ - समन्तात, सम्पूर्ण। पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **प्रपित्वे** = जाने पर (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, पि = जाना, जानना, पाना)। **तूयम्** = तूय को, वर्द्धन को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **कण्वेषु** = कण्वेषु, शब्द करना, कण बनना (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **सु** = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ **10** ॥ **साम 1721**

(27) सूक्त 3

253. शग्धि उ षु शचीपते, इन्द्र विश्वाभिः ऊतिभिः।
भगम् न हि त्वा यशसम्, वसुविदम् अनु शूर चरामसि ॥ 1 ॥ 8-66-5

मन्त्रार्थ - **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य हो **उ** = निश्चय ही, भी **षु** = उत्तम, अच्छा **शचीपते** = हे उत्तम वाणी के ऐश्वर्यवान्, स्वामी **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **शूर** = हे वीर, पराक्रमी, **विश्वाभिः** = सभी **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों, रक्षाओं द्वारा **भगम्** = सेवा **न** = के समान **हि** = ही **त्वा** = तुम्हारा **यशसम्** = यश, कीर्ति को **वसुविदम्** = वसुविद् के

अनु = अनुकूल **चरामसि** = विचरण करते हैं॥

पदार्थ - **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य हो (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **शचीपत** = उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी (शच- स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वाभिः** = सभी द्वारा (सर्वनाम)। **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **भगम्** = भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करेना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **यशसम्** = यश, कीर्ति को (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **वसुविदम्** = वसुविद् को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **चरामसि** = चरते हो, विचरण करते हैं (चर -जाना, खाना, आचरण करना)॥ **1**॥

254. या इन्द्र भुजः आभरः, स्ववान् असुरेभ्यः।
स्तोतारम् इत् मघवन्, अस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः॥ 2॥ 8-97-1

मन्त्रार्थ - **या** = जो **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **मघवन्** = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **स्ववान्** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् **भुजः** = भोग दाता, भोजन कराने वाले **आभरः** = समन्तात, पूर्ण भरण करने वाले **असुरेभ्यः** = असुरों, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वालों, प्रकाशवानके लिए **ये** = जो **च** = और **त्वे** = तुम **अस्य** = इसका **वृक्तबर्हिषः** = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ **स्तोतारम्** = स्तुतिकर्ता को **इत्** = ही **वर्धय** = बढाऐं॥ **2**॥

पदार्थ - **या** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **भुज** = भक्षण करो, भोग करो (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **आभरः** = भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना)। **स्ववान्** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **असुरेभ्यः** = असुर, ऐश्वर्यहीन, सृजन नहीं करने वाला, प्रकाशमानों द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **स्तोतारम्** = स्तुतिकर्ता को (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **वर्धय** = बढ़ें (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **ये** = जो। **च** = और। **त्वे** = तुममें (सर्वनाम)। **वृक्तबर्हिषः** = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ (वृक- लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)॥ **2**॥

255. प्र मित्राय प्र अर्यम्णे, सचथ्यम् ऋतावसो।
वरूथ्ये वरुणे छन्द्यम्, वचः स्तोत्रम् राजसु गायत॥ 3॥ 8-101-5

मन्त्रार्थ - **ऋतावसो** = ऋतावसु **सचथ्यम्** = अभिसिञ्चन, सेवा को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **मित्राय** = मित्र के लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **अर्यम्णे** = अर्यमा, ज्ञानी के लिए **वरूथ्ये** = वरण योग्य के लिए **वरुणे** = वरणीय में **छन्द्यम्** = छन्दमय **वचः** = वचन **स्तोत्रम्** = स्तोत्र को, स्तुति को **राजसु** = प्रकाशमानों में **गायत** = गाते हैं॥ **3**॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मित्राय** = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **अर्यम्णे** = अर्यमा,

ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **सचथ्यम् =** अभिसिञ्चन, सेवा को, (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना, पूर्णतया समझना, सम्बन्धी होना, सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना)। **ऋतावसो =** ऋतावसु (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वरूथ्ये =** वरण करने योग्य के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वरुणे =** वरणीय, वरण करने के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **छन्द्यम् =** छन्द को (छन्द् - बल-प्राण होना, आच्छादन करना)। **वचः =** वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **स्तोत्रम् =** स्तोत्र को, स्तुति होने को (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **राजसु =** राजाओं में, प्रकाशमानों में (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना) **॥ 3 ॥**

256. अभि त्वा पूर्वपीतये, इन्द्र स्तोमेभिः आयवः।
समीचीनासः ऋभवः, समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥ 4 ॥ 8-3-7

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **अभि =** अभिमुख **त्वा =** तुमको **पूर्वपीतये =** पूर्वपीत, पूर्व पान के लिए **स्तोमेभिः =** स्तुतियों द्वारा **आयवः =** मिश्रित करने, पृथक् पृथक् करने, शासन करने वाले **समीचीनासः =** समीचीन, **ऋभवः** = ऋभुगण, प्रगतिशील, विद्वान् **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर (शब्द, स्तुति) करते हुए **रुद्रा =** रुद्रगण, करुणामय **पूर्व्यम् =** पहले, पूर्व **गृणन्त =** वाणी, बोध, सिञ्चन करते हैं **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **पूर्वपीतये =** पूर्वपीत, पूर्व पान के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना,पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तोमेभिः =** स्तुतिकर्ता द्वारा (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करनाा)। **आयवः =** उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना। (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना)। **समीचीनास =** पूजक, विद्वान् (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, इज् - पूजना, जाना, जानना)। **ऋभवः** = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् – जाना, फैलाना, ऋृ - जाना, चलना, जानना, पाना)। **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, स्वृ-स्वर् = शब्द करना)। **रुद्रा =** रुद्रगण, करुणामय (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **गृणन्त =** वाणी, बोध, सिञ्चन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **पूर्व्यम् =** पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) **॥ 4 ॥**

257. प्र वः इन्द्राय बृहते, मरुतो ब्रह्म अर्चत।
वृत्रम् हनति वृत्रहा, शतक्रतुः वज्रेण शतपर्वणा ॥ 5 ॥ 8-89-3

मन्त्रार्थ - **वः =** तुम सबके लिए **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **बृहते =** महान्, बृहत् के लिए **मरुतो =** मरणशीलों का **ब्रह्म =** ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो। **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाला **शतक्रतुः =** सैकड़ों कर्म करने वाला **शतपर्वणा =** शतपर्व युक्त **वज्रेण =** वज्र, गतिमान द्वारा **वृत्रम् =** वृत्र को, हिंसा को **हनति =** मारता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः =** तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके

लिए। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **बृहते =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **मरुतो =** मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **ब्रह्म =** ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **वृत्रम् =** वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हनति =** मारता है (हन् - मारना)। **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **शतक्रतुः =** सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **वज्रेण =** वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **शतपर्वणा =** शतपर्व (शत = सौ, पर्व् - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) **॥ 5 ॥**

258. बृहत् इन्द्राय गायत, मरुतो वृत्रहन्तमम्।
येन ज्योतिः अजनयम् ऋतावृधो, देवम् देवाय जागृवि ॥ 6 ॥ 8-89-1

मन्त्रार्थ - **मरुतो =** मरणशील जन (मनुष्य) **वृत्रहन्तमम् =** हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्यवान् के लिए **बृहत् =** महान्, बृहत् **गायत =** गाते हैं। **जागृवि =** जाग्रत ने **येन =** जिसके द्वारा **ऋतावृधो =** ऋत से वर्धित **ज्योतिः =** प्रकाशमान **देवम् =** देव को **देवाय =** देव के लिए **अजनयम् =** उत्पन्न किया **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गायत =** गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **मरुतो =** मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वृत्रहन्तमम् =** हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **येन =** जिससे, जिसके द्वारा। **ज्योतिः =** प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **अजनयम् =** जय किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जि-जय - जीतना, जय होना)। **ऋतावृधो =** ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **देवम् =** देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवाय =** देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जागृवि =** जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना) **॥ 6 ॥**

259. इन्द्र क्रतुम् न आ भर, पिता पुत्रेभ्यो यथा।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत, यामनि जीवा ज्योतिः अशीमहि ॥ 7 ॥ 7-32-26

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **नः =** हमारे **क्रतुम् =** कर्म को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो, **यथा =** जिस प्रकार **पिता =** पिता, पालन करने वाला **पुत्रेभ्यो =** पुत्रों के लिए (करता है)। **पुरुहूत =** हे पुरुहूत, अग्र-दत्त, बहु प्रदाता, **णो =** हमारे लिए **अस्मिन् =** इसमें **शिक्षा =** शिक्षा दो। **जीवा =** जीव **यामनि =** याम में, प्राप्तव्य में **ज्योतिः =** प्रकाशमय **अशीमहि =** भोजन करते हैं **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **क्रतुम् =** कर्म को (कृ = करना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **पिता =** पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **पुत्रेभ्यो =** पुत्रों द्वारा, पुत्रों के लिए, पुत्रों से (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **यथा =** जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **शिक्षा =** शिक्षा (शिक्ष् - शिक्षा देना)। **णो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अस्मिन् =** इस, इसमें (सर्वनाम)। **पुरुहूत =** पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना,

आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यामनि =** याम में, प्राप्तव्य में (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **जीवा =** जीव (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **ज्योतिः =** प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **अशीमहि =** भोजन करते हैं (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) **॥ 7 ॥**

260. मा नः इन्द्र परा वृणक्, भवा नः सधमाद्ये।
त्वम् नः ऊती त्वम् इत् नः आप्यम्, मा नः इन्द्र परा वृणक् ॥ 8 ॥ 8-97-7

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नः =** हमको **मा =** नहीं, मत **परा वृणक् =** परित्याग करो। **नः =** हमारे **सधमाद्ये =** साथ आनन्द में **भवा =** हो। **त्वम् =** तुम **नः =** हमारे लिए, हमारा **ऊती =** शब्दकर्ता, रक्षक (हो), **त्वम् =** तुम **इत् =** ही **नः =** हमारे **आप्यम् =** आप, व्याप्त, व्यापक (हो)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **नः =** हमको **मा =** नहीं, मत **परा वृणक् =** परित्याग करो **॥ 8 ॥**

पदार्थ - मा = नहीं, मत (अव्यय)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **परा =** परम्, परे, दूर, विपरीत (अव्यय)। **वृणक् =** त्यागो (वृण् = परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **भवा =** हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सधमाद्ये =** साथ आनन्द में (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊती =** शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **इत् =** ही (अव्यय)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आप्यम् =** आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **परा =** परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **वृणक् =** वरण किया (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना) **॥ 8 ॥**

261. वयम् घ त्वा सुतावन्तः, आपो न वृक्तबर्हिषः।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु, वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥ 9 ॥ 8-33-1

मन्त्रार्थ :- वृत्रहन् = हे हिंसा का हनन करने वाले, **त्वा =** तुमको **वयम् =** हम **सुतावन्तः =** सुतावान्, रचनावान् **घ =** ही **आपो =** आप, व्याप्त, व्यापक **न =** के समान **वृक्तबर्हिषः =** वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ, **पवित्रस्य =** पवित्र के **प्रस्रवणेषु =** प्रस्रवणों में **स्तोतारः =** स्तुतिकर्ता **परि =** सभी ओर **आसते =** बैठते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **घ =** ही, भी (अव्यय, निपात)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुतावन्तः =** सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आपो =** आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वृक्तबर्हिषः =** वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ (वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **पवित्रस्य =** पवित्र का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **प्रस्रवणेषु =** प्रस्रवणों में (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्रु = जाना, जानना, पाना, सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **वृत्रहन् =** हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **परि =** सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्तोतारः =** स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति,

पूजा, सेवा करना)। **आसते** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ **9** ॥

262. यत् इन्द्र नाहुषीषु आ, ओजो नृम्णम् च कृष्टिषु।
यत् वा पञ्च क्षितीनाम् द्युम्नम्, आ भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥ 10 ॥ 6-46-7

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **यत्** = जो **नाहुषीषु** = बंधनों में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ओजो** = ओज **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले को **च** = और **कृष्टिषु** = कृष्टियों में, कर्षण, रेखांकन में **यत्** = जो **वा** = अथवा **पञ्च** = पाँच **क्षितीनाम्** = निवासों का, क्षतियों का, क्षयों का **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्धी **विश्वानि** = सभी **पौंस्या** = बढ़ाने वालों को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ **10** ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नाहुषीषु** = बंधनों में (नह - बांधना, अड़ाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। **च** = और। **कृष्टिषु** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **पञ्च** = पाँच (पञ्च - पाँच, संख्या)। **क्षितीनाम्** = निवास, क्षति, क्षय का (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **पौंस्या** = बढ़ाने वालों को (पुंस – बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना) ॥ **10** ॥

(28) सूक्त 4

263. सत्यम् इत्था वृषा इत् असि, वृषजूतिः नो अविता।
वृषा हि उग्र शृण्विषे, परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥ 1 ॥ 8-33-10

मन्त्रार्थ - **इत्था** = इस प्रकार **सत्यम्** = सत्य **वृषा** = पराक्रमी **इत्** = ही **वृषजूतिः** = पराक्रमी वेगवान् चंचल **नो** = हमारे **अविता** = रक्षक **वृषा** = पराक्रमी **हि** = ही **उग्र** = उग्र **शृण्विषे** = श्रोता के लिए **परावति** = पराया, दूर, लौटा हुआ **वृषो** = पराक्रमी **अर्वावति** = प्रगतिशील, विद्वान्, **श्रुतः** = श्रुत, सुने हुए **असि** = हो ॥ **1** ॥

पदार्थ - **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **वृषजूतिः** = पराक्रमी वेगवान् चंचल (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **उग्र** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **शृण्विषे** = श्रोता के लिए, शृण्वती (श्रु-शृण् = सुनना)। **परावति** = पराया, दूर, लौटा हुआ, (अव्यय)। **वृषो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अर्वावति** = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **श्रुतः** = श्रुत, सुने हुए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ **1** ॥

264. यत् शक्र असि परावति, यत् अर्वावति वृत्रहन्।
अतः त्वा गीर्भिः द्युगत्, इन्द्र केशिभिः सुतावान् आ विवासति॥ 2॥ 8-97-4

मन्त्रार्थ - **शक्र** = हे शक्तिवान्, समर्थ **यत्** = जो **परावति** = दूर **असि** = हो, **वृत्रहन्** = हे हिंसा का हनन करने वाले, **यत्** = जो **अर्वावति** = प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (**असि** = हो), **अतः** = इसलिए **द्युगत्** = हे अग्रगामी, प्रकाशमान, **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **सुतावान्** = सुतावान्, रचनावान् **त्वा** = तुमको **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **केशिभिः** = केशियों द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **विवासति** = विशेष वास करता है॥ **2**॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **शक्र** = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **परावति** = पराया, दूर, लौटा हुआ, (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अर्वावति** = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **अतः** = इसलिए (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **द्युगत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **केशिभिः** = केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **सुतावान्** = सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **विवासति** = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)॥ **2**॥

265. अभि वो वीरम् अन्धसो मदेषु, गाय गिरा महा विचेतसम्।
इन्द्रम् नाम श्रुत्यम् शाकिनम् वचो यथा॥ 3॥ 8-46-14

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम लोग **वीरम्** = पराक्रमी, वीर **विचेतसम्** = विशेष चेतना **नाम** = नाम वाले **श्रुत्यम्** = श्रुतियोग्य **शाकिनम्** = शक्तिशाली **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण के **मदेषु** = आनन्दों में **महा** = महान् **गिरा** = वाणियाँ **वचो** = वचन को **यथा** = जैसे **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **गाय** = गायन करो॥ **3**॥

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वीरम्** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **गाय** = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **महा** = महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **विचेतसम्** = विशेष चेतना (वि = विशेष, विपरीत, चित - विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **श्रुत्यम्** = श्रुति (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **शाकिनम्** = शक्तिदाता के लिए (शक्-शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार॥ **3**॥

266. इन्द्र त्रिधातु शरणम्, त्रिवरूथम् स्वस्तये।
छर्दिः यच्छ मघवद्भ्यः, च मह्यम् च यावया दिद्युम् एभ्यः॥ 4॥ 6-46-9

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्रिधातु** = हे त्रिधातु, त्रिविध धारण करने वाले, **त्रिवरूथम्** = त्रिविध कामनाएँ, त्रिविध-आच्छादन **दिद्युम्** = प्रकाशित **छर्दिः** = सम्यक् दीपन, कथनयुक्त **शरणम्** = शरण को **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए **मघवद्भ्यः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् के लिए, **मह्यम्** = मेरे लिए **च** = और **एभ्यः** = इनके लिए **यावया** = मिलाओ **च** = और **यच्छ** = प्रदान करो ॥ **4** ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्रिधातु** = त्रिधातु (त्रि - तीन संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **शरणम्** = शरण को (श्रण - देना, दान करना, रक्षा करना, श्री - सेवा करना)। **त्रिवरूथम्** = त्रिवरूथ, त्रिकामनाएँ, त्रि-आच्छादन (त्रि = तीन (संख्या)। वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **छर्दिः** = छर्दि, सम्यक् दीपन, कथन (छर्द - सम्यक् दीपन करना, कहना, उद्गार होना, वमन होना)। **यच्छ** = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना)। **मघवद्भ्यः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, मघ के लिए (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **च** = और। **मह्यम्** = मेरे लिए (सर्वनाम)। **च** = और। **यावया** = अलग करना, पृथक् करना (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **दिद्युम्** = प्रकाशित किया (द्युत - चमकना, प्रकाशित होना)। **एभ्यः** = इनके लिए (सर्वनाम) ॥ **4** ॥

267. श्रायन्त इव सूर्यम्, विश्वा इत् इन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाता उ जनिमानि, ओजसा प्रति भागम् न दीधिम ॥ 5 ॥ 8-99-3

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रस्य** इन्द्र के **सूर्यम्** सूर्य का **श्रायन्त इव** आश्रय लेने के समान **विश्वा** सब **इत्** ही **भक्षत** भक्षण करें। **ओजसा** ओज द्वारा **वसूनि** वसुओं के **जाता** उत्पन्न करने वाले, **उ** और **जनिमानि** उत्पन्न होने वाले **प्रति-भागम्** प्रत्येक भाग के **न** समान **दीधिम्** धारण करते हैं ॥ **1** ॥

भावार्थ - जैसे इन्द्र सूर्य का आश्रय लेता है, वैसे ही विश्व भक्षण करता है। इन्द्र का अर्थ है ऐश्वर्यवान् तथा सूर्य का अर्थ है उत्पन्न करने वाला तथा ऐश्वर्यवान्। उत्पन्नकर्ता होने का महत्व विशेष है, इसीलिए सूर्य का आश्रय इन्द्र लेता है। अनेक मन्त्रों में इन्द्र तथा सूर्य दोनो ही परमात्मा के विशेषण के रूप में आये हैं। परमात्मा में सभी गुण तथा शक्तियाँ समाहित हैं, अतः उसके विशेषण के रूप में इन्द्र, सूर्य, वरुण, यम, शिव, विष्णु, अग्नि, आदित्य आदि शब्द प्रयोग होते हैं। इस मन्त्र में विशेष सन्देश देते हुए कहा गया है कि ऐश्वर्य होने पर भी उत्पन्न करने वाले का आश्रय लेना होता है। ऐश्वर्य किसी को किसी से प्राप्त भी हो सकता है, परन्तु जो उसे उत्पन्न करता है तथा विविध प्रकार से सृजनशील है, रचनाशील है, उसका आश्रय लेना ही महत्वपूर्ण है।

पदार्थ :- **श्रायन्त** = आश्रय (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इव** = समान, की भाँति। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। **विश्वा** = सभी। **इत्** = ही। **इन्द्रस्य** = इन्द्र के, परम ऐश्वर्यवान् के (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **भक्षत** = भक्षण करें (भक्ष - खाना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, उपभोग करना)। **वसूनि** = वसुओं के (वस् = निवास करना, दया करना, प्रीति करना, आच्छादन करना, कतरना, लेना)। **जातो** = उत्पन्न (जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **जनिमानि** = उत्पन्न होने वाले (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में। **भागम्** = भाग (भज - अंश या भागहोना)। **न** = नहीं। **दीधिमः** = धारण करते हैं, प्रकाशित करते हैं (दीध - चमकना, प्रकाशित होना, खेलना, क्रीडा करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना, धारण करना) ॥ **5** ॥ **साम 267, 1319**

268. न सीम् अदेवः आप, तत् इषम् दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चित् यः एतशो, युयोजते इन्द्रो हरी युयोजते ॥ 6 ॥ 8-70-7

मन्त्रार्थ - **तत्** = वह **अदेवः** = अदेव, अविद्वान् **दीर्घायो** = दीर्घ आयु वाला **मर्त्यः** = मरणशील **सीम्** = सबको **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **न** = नहीं **आप** = प्राप्त करता है। **एतग्वा** = गति, व्याप्ति, चाहने वाला **चित्** = ही **यः** = जो **एतशो** = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा को **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं, **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली,

परम ऐश्वर्यमान **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ -**न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सीम्** = सब (सर्वनाम)। **सीम्** = बन्धन को (सि = बाँधना, मर्यादा होना, सीमा होना)। **अदेव** = अदेव, अविद्वान्, (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आप** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **दीर्घायो** = दीर्घ आयु वाला (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **एतग्वा** = गति, व्याप्ति, चाहने वाला (ए - जाना, फैलना, व्यापना, गर्भवती होना, इच्छा करना, चाहना, खाना, उड़ाना, फेंकना, भेजना, प्रेरणा करना)। **चित्** = भी, ही। **यः** = जो (सर्वनाम)। **एतशो** = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु -मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु -मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना) ॥

269. आ नो विश्वासु हव्यम्, इन्द्रम् समत्सु भूषत।
उप ब्रह्माणि सवनानि, वृत्रहन् परमज्या ऋचीषम ॥ 7 ॥ 8-90-1

मन्त्रार्थ - **नो** = हमारे लिए **विश्वासु** = सभी **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को **इन्द्रम्** = इन्द्र, परमेश्वर को **समत्सु** = समानताओं में **आ** = समन्तात्, सम्यक् **भूषत** = भूषित करें। **वृत्रहन्** = हे हिंसा का हनन करने वाले **परमज्या** = हे परम विजेता, **ब्रह्माणि** = ब्रह्म को **सवनानि** = सृजन को **उप** = समीप **ऋचीषम** = स्तुति करें ॥ 7 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **विश्वासु** = सभी (सर्वनाम)। **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **भूषत** = भूषित हों, (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सवनानि** = उत्पन्न करने से (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **परमज्या** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। जि - जीतना। **ऋचीषम** = स्तुति करें (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 7 ॥

270. तव इत् इन्द्र अवमम्, वसु त्वम् पुष्यसि मध्यमम्।
सत्र आ विश्वस्य परमस्य, राजसि न किः त्वा गोषु वृण्वते ॥ 8 ॥ 7-32-16

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे इन्द्र, हे परम ऐश्वर्यशाली **तव** = तुम्हारा **इत्** = ही **अवमम्** = प्रकाशित, रक्षा को **वसु** = हे वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, **त्वम्** = तुम **मध्यमम्** = मध्यम को **पुष्यसि** = पुष्ट करते हो। **सत्र** = हे सत्र, विस्तार, सम्बन्धी **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का **परमस्य** = अत्यन्त, उच्चतम,

परम का **राजसि** = प्रकाशमान् **त्वा** = तुमको **गोषु** = शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **किः** = कोई **न** = नहीं **वृण्वते** = त्याग कर सकता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **इन्द्र** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अवमम्** = प्रकाशित , रक्षा को (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **पुष्यसि** = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। **मध्यमम्** = मध्यम को (सर्वनाम)। **सत्र** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र् - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **परमस्य** = अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम का, परम का (सर्वनाम)। **राजसि** = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वृण्वते** = वरण करता है (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना) **॥ 8 ॥**

271. क्व इयथ क्व इत् असि, पुरुत्रा चित् हि ते मनः।
अलर्षि युध्म खजकृत्, पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥ 9 ॥ 8-1-7

मन्त्रार्थ - **क्व** = कहाँ **इयथ** = पायें, **क्व** = कहाँ **इत्** = ही **असि** = हो, **ते** = तुम्हारा **मनः** = मन **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी **चित्** = ही **हि** = ही (है)। **पुरन्दर** = हे अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाले, **अलर्षि** = हे विद्या-सामर्थ्य वाले, **युध्म** = हे युद्धकुशल, **खजकृत्** = हे मन्थन कर्ता, **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **गायत्रा** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले **अगासिषुः** = गायन करते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **क्व** = कहाँ (सर्वनाम)। **इयथ** = पायें (इ = जाना, जानना, पाना)। **क्व** = कहाँ (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चित्** = भी, ही। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मनः** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अलर्षि** = विद्या-सामर्थ्य वाला, (अल् = समापन होना, पर्याप्त होना, शब्द करना, ध्वनि करना, सहन करना, समर्थ होना, भूषित करना, निवारण करना)। **युध्म** = युद्ध, बंधन के योग्य (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना)। **खजकृत्** = मन्थन करते हैं (खज - मथना, हिलाना, मन्थन करना कृ - करना)। **पुरन्दर** = अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, दृ = आदर करना, सम्मान करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत्रा** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **अगासिषुः** = स्तुति, गाना, गायन करते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) **॥ 9 ॥**

272. वयम् एनम् इत् आ ह्यो, अपीपेम इह वज्रिणम्।
तस्मा उ अद्य सवने,सुतम् भर आ नूनम् भूषत श्रुते ॥ 10 ॥ 8-55-7

मन्त्रार्थ - **वयम्** = हम **एनम्** = इसको, इसे **इत्** = ही **ह्यो** = कल **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **अपीपेम** = पिया, पान किया। **इह** = यहां **वज्रिणम्** = वज्र, गतिमान को **तस्मा** = इससे **उ** = निश्चय ही **अद्य** = आज **सवने** = सृजन करने में **सुतम्** = उत्पन्न को **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **नूनम्** = निश्चय ही **श्रुते** = श्रुति में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भूषत** = भूषित हों, भूषित करो **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **एनम्** = इसको, इसे (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **आ** =

समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ह्यो** = कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। **अपीपेम** = पिया, पान किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ - नहीं, पी- पीना, पान करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **वज्रिणम्** = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **तस्मा** = इससे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **अद्य** = आज (अव्यय)। **सवने** = उत्पन्न करने से (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सुतम्** = सुत को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **भूषत** = भूषित हों, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **श्रुते** = श्रुति करने के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) **॥ 10 ॥**

(29) सूक्त 5

273. यो राजा चर्षणीनाम्, याता रथेभिः अध्रिगुः।
विश्वासाम् तरुता पृतनानाम्, ज्येष्ठम् यो वृत्रहा गृणे ॥ 1 ॥ 8-70-1

मन्त्रार्थ :- यो = जो **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **राजा** = राजा **याता** = प्राप्त हुआ, **रथेभिः** = रथों द्वारा **अध्रिगुः** = जिस गति को कोई धारण न कर सके। **विश्वासाम्** = सभी का **तरुता** = तारण करने वाला, तारक, **पृतनानाम्** = व्यापकों, बल वालों में **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, **यो** = जो **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाला **गृणे** = शब्द करता है **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **याता** = प्राप्त (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **रथेभिः** = रथों द्वारा (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अध्रिगुः** = जिस गति को कोई धारण न कर सके (अ+ध्रि+गुः, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **विश्वासाम्** = सभी (सर्वनाम)। **तरुता** = तारने वाला, तारक (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **पृतनानाम्** = पृतनों का, व्यापकों, बल वालों का (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **गृणे** = शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना) **॥ 1 ॥**

274. यतः इन्द्र भयामहे, ततो नो अभयम् कृधि।
मघवन् शग्धि तव तत् नः ऊतये, वि द्विषो वि मृधो जहि ॥ 2 ॥ 8-50-13

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यतः** = जिससे **भयामहे** - भयभीत होते हैं, **ततो** = उससे **नो** = हमको, **अभयम्** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त **कृधि** = करो। **मघवन्** = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य करो। **नः** = हमारे **ऊतये** = रक्षा के लिए **तव** = तुम्हारा **तत्** = वह **वि** = विशेष **द्विषो** = द्वेष करने वाले **वि** = विशेष, **मृधो** = हिंसक को **जहि** = हनन करो, नष्ट करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - यतः = जिससे (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **भयामहे** = भयभीत होते हैं (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **ततो** = उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अभयम्** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त (अ - नहीं, भी = भय होना, डरना, घबराना)। **कृधि** = करो (कृ = करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य हो (शक् - शक्तिमान्

होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **तत्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा – परित्याग करना, छोड़ना) ॥ **2** ॥

275. वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणाम्, सत्रम् सोम्यानाम्।
द्रप्सः पुराम् भेत्ता, शश्वतीनाम् इन्द्रो मुनीनाम् सखा ॥ 3 ॥ 8-17-14

मन्त्रार्थ - **वास्तोष्पते** = हे वास्तोष्पति, हे वास्तु के पति, वास्तुरक्षक, **स्थूणाम्** = स्थूयों के **ध्रुवा** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान्, **सोम्यानाम्** = सौम्य, ऐश्वर्यवान् के **सत्रम्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी, **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी के **द्रप्सः** = हर्ष, आनन्द, गर्व, **शश्वतीनाम्** = शश्वत के **भेत्ता** = भेदन करने वाले, **मुनीनाम्** = मुनीयों का **सखा** = मित्र **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **(है)** ॥ **3** ॥

पदार्थ - **वास्तोष्पते** = वास्तोष्पत के लिए (वस् = रहना, निवास करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **ध्रुवा** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **स्थूणाम्** = स्थूयों का (स्था - स्थित होना, ठहरना)। **सत्रम्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी को (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **सोम्यानाम्** = सौम्य, ऐश्वर्यवान् का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्रप्सः** = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **भेत्ता** = भय (भी - डरना, घबराना)। **शश्वतीनाम्** = शश्वत को (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मुनीनाम्** = मुनीयों का (मुण - प्रण करना, वचन देना, शब्द करना, सींचना, मु - बाँधना। मू - बांधना, जकड़ना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ **3** ॥

276. बट् महान् असि सूर्य्य, बट् आदित्य महान् असि।
महः ते सतो महिमा, पनिष्टम मह्ना देव महान् असि ॥ 4 ॥ 8-101-11

मन्त्रार्थ- **सूर्य** हे सूर्य (उत्पन्न कर्ता, प्रेरक, ऐश्वर्यवान्), **बट्** सत्य ही, निश्चय ही **महान्** महान् **असि** हो, **बट्** सत्य ही, निश्चय ही **आदित्य** है आदित्य, अखण्ड, अविनाशी **महान्** महान् **असि** हो। **महः** हे पूज्य, **ते** तुम्हारी **सतो** सत्य **महिमा** महिमा **पनिष्टम** पूज्य है, **देव** हे देव, **मह्ना** महिमावान् **महान्** महान् **असि** हो ॥ **4** ॥

भावार्थ - परमात्मा को उत्पन्न करने, प्रेरित करने तथा परम ऐश्वर्यवान् होने से सूर्य कहा गया है और अखण्ड, अविनाशी होने से उसे आदित्य कहा गया है।

विशेष - बट् तथा अद्धा निपात, अव्यय हैं, इनके अर्थ सत्य ही, निश्चय ही होते हैं।

पदार्थ- **बट्** - सत्य ही, निश्चय ही (अव्यय, निपात्)। **महान्** = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। **असि** = हो। **सूर्य** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। **बट्** - सत्य ही, निश्चय ही (अव्यय, निपात्)। **आदित्य** = आदित्य (अदिति से उत्पन्न, अदिति = अ + दी, दी = क्षय होना, नष्ट होना, अद् = खाना)। **महान्** = महान् (मह- सम्मान करना, पूजा करना)। असि = हो। **महः** = महान् (मह- सम्मान करना, पूजा करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए। **सतो** = सत्य। (सत् = सत्य होना, अस्तित्व होना)। **महिमा** = महिमा है (महि = पूजा करना, सम्मान करना)। **पनिष्टम** = पूज्य हैं (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **मह्ना** = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **देव** = तेजस्वी, देव (देव्, दिव् = तेजस्वी होना,

चमकना)। **महान्** = महान (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **असि** = हो (अस् - होना) **॥ 4 ॥**

277. अश्वी रथी सुरूपः इत्, गोमान् यत् इन्द्र ते सखा।
श्वात्रभाजा वयसा सचते, सदा चन्दैः याति सभाम् उप॥ 5॥ 8-4-9

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **अश्वी** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **रथी** = रथी, रथवाला **सुरूपः** = सुरूप, उत्तम रूप वाले **इत्** = ही **गोमान्** = गोमान, विद्वान् **यत्** = जो **ते** = तुम्हारा **सखा** = मित्र (है), **श्वात्रभाजा** = प्रगतिशील सेवाभावी, प्रगति सेवी **वयसा** = वय, गति, ज्ञान, रचना द्वारा **सचते** = अभिसिञ्चन करता है, **सदा** = सदा, सर्व काल में **चन्दैः** = चन्द्र, आनन्द, प्रकाश के साथ **सभाम्** = सभा के **उप** = समीप **याति** = जाता है॥

पदार्थ - **अश्वी** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **रथी** = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **सुरूपः** = सुरूप, उत्तम रूप वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रुपाकृति लाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **गोमान्** = गोमान, विद्वान् (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **श्वात्रभाजा** = प्रगतिशील सेवाभावी, प्रगति सेवी (शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना, भज् = सेवा करना, भजन करना, भाग करना, अलग करना)। **वयसा** = वय, गति, ज्ञान, रचना द्वारा (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सचते** = अभिसिञ्चन करता है (सच् - सींचना, सेवा करना, सन्तुष्ट करना, पूर्णतः समझना, सम्बन्धी होना)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **चन्दैः** = चन्द्र, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द् - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। **याति** = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **सभाम्** = सभा को (स - सहित, साथ, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग) **॥ 5 ॥**

278. यत् द्यावः इन्द्र ते शतम्, शतम् भूमीः उत स्युः
न त्वा वज्रिन् सहस्त्रम् सूर्याः, अनु न जातम् अष्ट रोदसी॥ 6॥ 8-70-5

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **ते** = तुम्हारा **शतम्** = सौ **द्यावः** = अग्रगामी, प्रकाशमय, **शतम्** = सौ **भूमीः** = भूमि **उत** = भी **स्युः** = हों। **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमान, **त्वा** = तुमको **सहस्त्रम्** = हजार **सूर्याः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले **न** = नहीं, **अनु** = पश्चात्, अनुकूल **जातम्** = उत्पन्न **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **न** = नहीं **अष्ट** = प्रकाश करता है **॥ 6 ॥**

भावार्थ :- परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा इन्द्र को सहस्त्रों सूर्य आदि भी नहीं प्रकाशित कर सकते हैं। वही सबको प्रकाशित करने वाला है **॥ 6 ॥**

पदार्थ :- **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **द्यावः** = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **भूमीः** = भूमि (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **स्युः** = हों (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वज्रिन्** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **सहस्त्रम्** = हजार को (संख्या)। **सूर्याः** = सूर्ये, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए

को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अष्ट** = प्रकाश करता है (अस् = प्रकाश करना, फेकना, लेना)। **अष्ट** = आठ (संख्या)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना) ॥ 6 ॥

279. यत् इन्द्र प्राक् अपाक् उदक्, न्यक् वा हूयसे नृभिः।
सिमा पुरू नृषूतो असि, आनवे असि प्रशर्ध तुर्वशे ॥ 7 ॥ 8-4-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **प्राक्** = पहले, पूर्व दिशा **अपाक्** = पालनकर्ता **उदक्** = उदक **न्यक्** = ले जाने वाला **वा** = अथवा **नृभिः** = नरों द्वारा **हूयसे** = आह्वान किया जाता है, **सिमा** = सम्पूर्ण **पुरू** = पहले, आगे **नृषूतो** = नरो से प्रेरित, नरो से उत्पन्न **असि** = हो, **आनवे** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् के लिए **प्रशर्ध** = समर्थ विजेता **तुर्वशे** = शीघ्रकारी के लिए **असि** = हो ॥ 7 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्राक्** = पहले, पूर्व दिशा (अव्यय)। **अपाक्** = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **उदक्** = उदक (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **न्यक्** = ले जाने वाला (नी - ले जाना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **हूयसे** = आह्वान करते हो, दान करते हो (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **सिमा** = सम्पूर्ण (सर्वनाम)। **पुरू** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **नृषूतो** = नृरो से प्रेरित, नृरो से उत्पन्न (नृ - ले जाना, सु = प्रेरणा देना, उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना,)। **असि** = हो (अस् - होना)। **आनवे** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् के लिए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, चेतन करना, प्राण होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **प्रशर्ध** = समर्थ विजेता (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शृध - मुस्कराना, सहना, सहन करना, पराभव करना, जीतना, अपमान करना, अनादर करना)। **तुर्वशे** = शीघ्रकारी (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना) ॥ 7 ॥

280. कः तम् इन्द्र त्वा वसो, आ मर्त्यो दधर्षति।
श्रद्धा हि ते मघवन् पार्ये, दिवि वाजी वाजम् सिषासति ॥ 8 ॥ 7-32-14

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **वसो** = हे वसु, **कः** = कौन **मर्त्यो** = मरणशील **तम्** = उस **त्वा** = तुमको **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दधर्षति** = जीतता है, गर्व करता है, धृष्टता करता है। **मघवन्** = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण **हि** = ही **ते** = तुम्हारा **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए **वाजी** = बलयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **वाजम्** = विद्या को, गति को **सिषासति** = शुद्ध करता है ॥ 8 ॥

पदार्थ - **कः** = कौन (सर्वनाम)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मर्त्यो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **दधर्षति** = जीतता है, गर्व करता है, धृष्टता करता है (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण (श्रत् = सत्य (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए (पार - कार्य पूर्ण करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त

होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजम् =** विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सिषासति =** शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना)।। **8** ।।

281. इन्द्राग्नी अपात् इयम्, पूर्वा आगात् पद्वतीभ्यः।
हित्वा शिरो जिह्वया रारपत्, चरत् त्रिंशत् पदा नि अक्रमीत।। 9 ।। 6-59-6

मन्त्रार्थ - इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि ने **इयम् =** इसकी **अपात् =** रक्षा की। **पूर्वा =** पूर्वा ने **पद्वतीभ्यः =** पदयुक्तों के साथ, प्रगतिशीलों के साथ **आगात् =** भ्रमण किया, विद्यमान हुआ, प्राप्त किया, प्राप्त हुआ। **शिरो =** शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकारी ने **हित्वा =** हित, गति, वृद्धि कर **जिह्वया =** जिह्वा द्वारा **रारपत् =** शब्द किया। **त्रिंशत् =** तीस, **पदा =** पद **चरत् =** विचरण करते हुए **नि =** निश्चित, निरन्तर **अक्रमीत =** वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी।। **9** ।।

पदार्थ -इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **अपात् =** पदहीन, रक्षा की (पद् - चलना, भूषित होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना)। **इयम् =** यह, इसको (सर्वनाम)। **पूर्वा =** पूर्वा, पहले (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम)। **आगात् =** घूमा, भ्रमण किया, विद्यमान, प्राप्त (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **पद्वतीभ्यः =** पदयुक्तों से (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **हित्वा =** बढ़ाकर, हित, गति, वृद्धि कर (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **शिरो =** शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकाारी (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **जिह्वया =** जिह्वा से (जिह् - जाना, चलना, जानना, पाना)। **रारपत् =** दान, शब्द किया (रा - देना, दान करना, मिल जाना, रप - स्पष्ट बोलना)। **चरत् =** विचरण करती हैं (चर् -चलना, विचरण करना)। **त्रिंशत् =** तीस, संख्या, सर्वनाम)। **पदा =** पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अक्रमीत =** वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)।। **9** ।।

282. इन्द्र नेदीय आ इत् इहि, मितमेधाभिः ऊतिभिः।
आ शन्तम शन्तमाभिः अभिष्टिभिः, आ स्वापे स्वापिभिः।। 10 ।। 8-53-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नेदीय =** हे निकट रखने योग्य **मितमेधाभिः =** मितमेधावियों द्वारा, **ऊतिभिः =** ऊतियों, वाणियों, रक्षाओं द्वारा **आ इत् इहि =** आओ ही, जानों ही, प्राप्त हो ही। **शन्तम =** हे कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी, **शन्तमाभिः =** कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी द्वारा **अभिष्टिभिः =** सर्वथा इष्ट, अभीष्टि द्वारा **आ =** आओ, जानों, प्राप्त हो। **स्वापे =** हे उत्तम पालक, **स्वापिभिः =** उत्तम पालकों द्वारा **आ =** आओ, जानों, प्राप्त हो।। **10** ।।

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नेदीय =** निन्दनीय, निकट रखने योग्य (निद = निन्दा करना, समीप जाना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इत् =** ही (अव्यय)। **इहि =** आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना)। **मितमेधाभिः =** मितमेधावियों द्वारा (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **ऊतिभिः =** ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **शन्तम =** हे कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **शन्तमाभिः =** कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी द्वारा (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **अभिष्टिभिः =** सर्वथा इष्ट, अभीष्टि द्वारा (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **स्वापे =** उत्तम

पालक (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना)। **स्वापिभिः =** उत्तम पालकों द्वारा (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना) **॥ 10 ॥**

(30) सूक्त 6

283. इत ऊती वो अजरम्, प्रहेतारम् अप्रहितम्।
आशुम् जेतारम् हेतारम् रथीतमम्, अतूर्तम् तुग्रियावृधम्॥ 1 ॥ 8-99-7

मन्त्रार्थ - **वो =** तुम सब **ऊती =** शब्दकर्ता, रक्षक, **अजरम् =** जरा-हीन को, **प्रहेतारम् =** प्रकृष्ट गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को, **अप्रहितम् =** अधिक हित, गति, वृद्धि को, **आशुम् =** आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति को, **जेतारम् =** जीतने वाले को, **हेतारम् =** गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को, **रथीतमम् =** उत्तम रथी को, **अतूर्तम् =** अशीघ्रकारी (अतिशीघ्रता नेकरने वाले) को **तुग्रियावृधम् =** प्रकाश, बल बढानें वाले को **इत =** पायें, प्रकाश करें **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **इत =** पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **ऊती =** शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अजरम् =** जरा-हीन को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **प्रहेतारम् =** प्रकृष्ट गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **अप्रहितम् =** अधिक हित, गति, वृद्धि को (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **आशुम् =** आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **जेतारम् =** जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **हेतारम् =** गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **रथीतमम् =** उत्तम रथी, उत्तम रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अतूर्तम् =** अशीघ्रकारी (तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **तुग्रियावृधम् =** प्रकाश, बलवान् को बढानें वाले को (तुज - रहना, बसति करना, मजबूत या बलवान् होना, ग्रहण करना, लेना, चमकना, प्रकाशित होना, दुःख देना, मार डालना, वृध - बढ़ना, अधिक होना) **॥ 1 ॥**

284. मो षु त्वा वाघतः च नः, आरे अस्मत् नि रीरमन्।
आरात्तात् वा सधमादम् नः, आ गहि इह वा सन् उप श्रुधि॥ 2 ॥ 7-32-1

मन्त्रार्थ - **त्वा =** तुम्हारा **षु =** उत्तम, अच्छा **मो =** बन्धन **नः =** हमारे **वाघतः =** उत्थान से **च =** और **अस्मत् =** हमसे **आरे =** दूर होकर **नि =** निश्चित, निरन्तर **रीरमन् =** रमण करे, शब्द करे। **आरात्तात् =** दूर से **वा =** अथवा **नः =** हमारे **सधमादम् =** साथ **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि =** गति, ज्ञान, घना करें (**आ गहि =** गति, ज्ञान, प्राप्त करें)। **वा =** अथवा **इह =** यहाँ **सन् =** वर्तमान, ही **उप =** समीप **श्रुधि =** सुनिये **॥ 2 ॥**

पदार्थ -**मो =** बन्धन (मू = बाँधना)। **षु =** सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वाघतः =** उत्थान से (वघ् - रुकना, उठ़ना, उत्थान करना)। **च =** और। **नः =** हमारे (अव्यय)। **आरे =** दूर (अव्यय)। **अस्मत् =** हमसे (सर्वनाम)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **रीरमन् =** रीरम करो, शब्द करो (री - शब्द करना, ध्वनि करना, रम - रमना, क्रीडा करना, खेलना)। **आरात्तात् =** दूर, समीप (अव्यय)। **वा =** अथवा (अव्यय)। **सधमादम् =** साथ आनन्द को (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि =** गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **इह =** यहाँ (सर्वनाम)। **वा =** अथवा (अव्यय)। **सन् =** ही। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **श्रुधि =** सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) **॥ 2 ॥**

285. सुनोता सोमपाव्ने, सोमम् इन्द्राय वज्रिणे।

पचता पक्तीः अवसे कृणुध्वम्, इत् पृणत् इत् पृणते मयः ॥ 3 ॥ 7-32-8

मन्त्रार्थ - सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **सोमपाव्ने** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए, **वज्रिणे** = वजयुक्त, गतिमान के लिए, **सुनोता** = उत्तम स्तुति करें, उत्पन्न करें। **पचता** = पकाने वाले **पक्तीः** = पाक करें। **अवसे** = रक्षा के लिए **पृणत्** = पूर्ण **इत्** = ही **मयः** = गति, ज्ञान **इत्** = ही **पृणते** = पूर्ण **कृणुध्वम्** = करो ॥ 3 ॥

पदार्थ - सुनोता = उत्तम स्तुतिकर्ता (सु - उत्तम, नु - स्तुति करना)। **सुनोता** = उत्पन्न करो (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सोमपाव्ने** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्‌भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा = पालन करना, बचाना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्‌भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पचता** = पकाने वाले (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **पक्तीः** = पकाने वाले (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पृणत्** = पूर्ण करो, पालन करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पृणते** = पूर्ण करता है (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **मयः** = गति, ज्ञान (मय् - जाना, जानना, पाना) ॥ 3 ॥

286. यः सत्राहा विचर्षणिः, इन्द्रम् तम् हूमहे वयम्।
सहस्रमन्यो तुविनृम्ण, सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥ 4 ॥ 6-46-3

मन्त्रार्थ - यः = जो **सत्राहा** = विस्तार, सम्बन्ध को जानने वाला, **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाला (है), **वयम्** = हम **तम्** = उस **इन्द्रम्** = इन्द्र को **हूमहे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं। **सहस्रमन्यो** = हे बहुमान्य, **तुविनृम्ण** = हे बहु नायक, बहुत धन वाले **सत्पते** = हे सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक, **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में, **नो** = हमारे **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में **भवा** = हो, रहो ॥ 4 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **सत्राहा** = विस्तार, सम्बन्ध को जानने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, हा - त्याग करना, चलना, जाना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **हूमहे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **सहस्रमन्यो** = हजारों मन वाला (सहस्र = हजार,मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **तुविनृम्ण** = बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, नृ - ले जाना, विनम्र होना)। **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **भवा** = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो

(सर्वनाम)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)।। **4** ।।

287. शचीभिः नः शचीवसू, दिवा नक्तम् दिशस्यतम्।
मा वाम् रातिः उपदसत् कदा चन, अस्मत् रातिः कदा चन।। 5 ।। 1-139-5

मन्त्रार्थ - **शचीवसू** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले **शचीभिः** = वाणी द्वारा **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **नक्तम्** = नक्त, नष्ट, विनाशक को **दिशस्यतम्** = दिशा देते हैं, समझते हैं, रचते हैं। **वाम्** = तुम्हारा **रातिः** = अनुदान **कदाचन** = कभी **मा** = नहीं, मत **उपदसत्** = नष्ट हो, **अस्मत्** = हमसे **रातिः** = अनुदान **कदाचन** = कभी (**मा** = नहीं, मत **उपदसत्** = नष्ट हो)।। **5** ।।

पदार्थ -**शचीभिः** = वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **शचीवसू** = उत्तम वाणियों को धारण करने वाले, (शच- स्पष्ट बोलना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, कतरना, लेना)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **नक्तम्** = नक्त, नष्ट, विनाशक को (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **दिशस्यतम्** = दिशायें, देते हैं, समझते हैं (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **मा** = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **रातिः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **उपदसत्** = नष्ट होना, रक्षाण, पालन करना (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **कदाचन** = कभी (सर्वनाम)। **अस्मत्** = हमसे (सर्वनाम)। **रातिः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **कदाचन** = कभी (सर्वनाम)।। **5** ।।

288. यदा कदा च मीढुषे, स्तोता जरेत मर्त्यः।
आत् इत् वन्देत वरुणम्, विपा गिरा धर्त्तारम् विव्रतानाम्।। 6 ।।

मन्त्रार्थ - **मर्त्यः** = मरणशील **यदा** = जब **कदा** = कब **च** = और **मीढुषे** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले के लिए **स्तोता** = स्तुतिकर्ता **जरेत** = जरित्र, जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व करें। **विपा** = विशेष रक्षक, पालक **गिरा** = स्तुतियों द्वारा **विव्रतानाम्** = विशेष व्रतों के **धर्त्तारम्** = धारणकर्ता **वरुणम्** = वरुण को **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **इत्** = ही **वन्देत** = वन्दना करे।। **6** ।।

पदार्थ -**यदा** = जब (सर्वनाम)। **कदा** = कब (सर्वनाम)। **च** = और। **मीढुषे** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले में (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मी = समझना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **स्तोता** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। **जरेत** = जरित्र, जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व करें (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। **इत्** = ही (अव्यय)। **वन्देत** = वन्दना करता है (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **वरुणम्** = वरुण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **विपा** = विशेष रक्षक, पालक को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना)। **गिरा** = स्तुतियां, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **धर्त्तारम्** = धारणकर्ता को, धारण करने वाले को (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **विव्रतानाम्** = विव्रतियों, विषेश वरण का (वि - विशेष, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना) ।। **6** ।।

289. पाहि गा अन्धसो मदे, इन्द्राय मेध्यातिथे।
यः सम्मिश्लो हर्यो अर्यो, हिरण्यय इन्द्रो वज्री हिरण्ययः।। 7 ।। 8-33-4

मन्त्रार्थ - **मेध्यातिथे** = हे मेध के अतिथि, मेध्य अतिथि, **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **मद** = मद, हर्ष, तृप्ति में **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **गा** = गान, गायक को **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो।

यः = जो **सम्मिश्लो** = सम्यक् वाणी **हर्यो** = हर्य, प्रकाश, प्रगतिशील **अयो** = प्रगति, विद्वान्, ज्ञान **हिरण्यय** = प्रकाशमान, स्तुति करने वाला **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (है) ॥ 7 ॥

पदार्थ - **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **गा** = गान, गायक, गाय (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मद** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मेध्यातिथे** = हे मेध के अतिथ, मेध्य अतिथ (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, अत् - सतत गमन करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **सम्मिश्लो** = सम्यक् वाणी (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), मिश - शब्द करना, आवाज करना, क्रोध करना, गुस्सा करना)। **हर्यो** = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **अयो** = प्रगतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान (अ - नहीं, अय् = जाना, जानना, पाना)। **हिरण्यय** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) ॥ 7 ॥

290. उभयम् शृणवत् च नः, इन्द्रो अर्वाक् इदम् वचः।
सत्राच्या मघवान् सोमपीतये, धिया शविष्ठः आ गमत्॥ 8 ॥ 8-63-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **च** = और **अर्वाक्** = गतिशील, शब्दकर्ता **नः** = हमारे **इदम्** = यह **उभयम्** = दोनों **वचः** = वचन **शृणवत्** = सुनें। **सत्राच्या** = विस्तार, सम्बन्ध, सत्य देने वाला **मघवान्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोमपान कर्ता के लिए **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **शविष्ठः** = अत्यन्त समीपगामी **आ गमत्** = आता है ॥ 8 ॥

पदार्थ - **उभयम्** = दोनों को (सर्वनाम)। **शृणवत्** = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना, जाना)। **च** = और। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्वाक्** = गतिशील, शब्दकर्ता (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **सत्राच्या** = विस्तार, सम्बन्ध, सत्य देने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, चि - चुनना, एकत्र करना, सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, रा - देना, मिल जाना)। **मघवान्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 8 ॥

291. महे च न त्वा अद्रिवः, परा शुल्काय दीयसे।

न सहस्राय न अयुताय, वज्रिवो न शताय शतामघ ॥ 9 ॥ 8-1-5

मन्त्रार्थ - **महे** = हे महान्, पूज्य, महिमावान्, **त्वा** = तुम **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, ग्रहण करने वाले, **वज्रिवो** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त, **शतामघ** = अतिधनवान्, ऐश्वर्यवान् **परा** = परम **शुल्काय** = शुल्क के लिए **च** = और **न** = नहीं **सहस्राय** = हजार के लिए, **न** = नहीं **अयुताय** = अयुत (दस हजार) के लिए, **न** = नहीं **शताय** = सौ के लिए, **न** = नहीं **दीयसे** = क्षरित होता है, दिया जाता है।**॥ 9 ॥**

भावार्थ - महान्, पूज्य, महिमावान्, परमात्मा तथा उसके उपासक किसी मूल्य पर न तो क्षरित हो सकते हैं, और न ही किसी प्रकार अपात्र को देय हो सकते हैं। सुपात्र, सज्जनों को तो वे सदा सुलभ प्राप्त होते ही हैं।**॥ 9 ॥**

पदार्थ - **महे** = हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **शुल्काय** = शुल्क के लिए (शुल्क - कर लगाना, उत्पत्ति कर देना, उत्पन्न करना, पैदा करना, कहना, प्रीति करना, मिलाना, छोड़ देना, मुक्त कर देना)। **दीयसे** = क्षरित होता है (दी - ह्रास (ह्रास) होना, झरना, नष्ट होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सहस्राय** = हजार के लिए (संख्या)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयुताय** = अयुत के लिए (अ = नहीं, युत् - बोलना, शब्द करना, चमकना, प्रकाश करना)। **वज्रिवो** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शताय** = सौ के लिए (सर्वनाम)। **शतामघ** = अतिधनवान्, ऐश्वर्यवान् (शता = सौ, मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)**॥ 9 ॥**

292. वस्यान् इन्द्र असि मे पितुः, उत भ्रातुः अभुञ्जतः।
माता च मे छदयथः समा, वसो वसुत्वनाय राधसे ॥ 10 ॥ 8-1-6

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **मे** = मेरे **पितुः** = पिता, गति, ज्ञान के, **वस्यान्** = वसाने वाले **असि** = हो **उत** = और **भ्रातुः** = भ्राता का **अभुञ्जतः** = पालन-रक्षा किया है। **वसो** = हे वसु, वास देने वाले, **माता** = माता, मान करने वाले **च** = और **मे** = मेरे लिए **छदयथः** = आच्छादन, आवरण, बल करने वाले **समा** = सम विभाग करने वाले **वसुत्वनाय** = स्नेहपूर्वक निवास करने के लिए **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो **॥ 10 ॥**

पदार्थ -**वस्यान्** = वस्य, वसने को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **भ्रातुः** = भ्राता (भृ = भरण करना)। **अभुञ्जतः** = रक्षा न करने वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भुज–संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **माता** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **च** = और। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **छदयथः** = आच्छादन, आवरण, बल (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना)। **समा** = सम विभाग, सम्वत्सर, शरद्, वर्ष, (सम - सब, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वसुत्वनाय** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)।**॥ 10 ॥**

(31) सूक्त 7

293. इमे इन्द्राय सुन्विरे, सोमासो दध्याशिरः।
तान् आ मदाय वज्रहस्त, पीतये हरिभ्याम् याही ओक आ॥ 1॥ 7-32-4

मन्त्रार्थ - **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले, **इमे** = इस **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्यवान् के लिए **सोमासो** = सोमगण, अनेक ऐश्वर्यमय **दध्याशिरः** = धारण, पालन को व्याप्त होने वाले, सुनने वाले **सुन्विरे** = उत्पन्न, ऐश्वर्य किये गये। **ओक** = हे निवासदाता, निवासी, **तान्** = उनको **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए **पीतये** = पान के लिए **हरिभ्याम्** = हरण करने वाले के लिए, हरि-युगल के लिए **आ याही** = आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें॥ **1**॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सुन्विरे** = सुन्विर, उत्पन्न, ऐश्वर्य किये गये (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **दध्याशिरः** = धारण, पालन को व्याप्त होने वाले, सुनने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **तान्** = उनको (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **वज्रहस्त** = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **हरिभ्याम्** = हरण करने वाले के लिए, हरि-युगल के लिए (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **याही** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **ओक** = निवास (ओक - निवास करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)॥ **1**॥

294. इमे इन्द्र मदाय ते, सोमाः चिकित्र उक्थिनः।
मधोः पपान उप नो गिरः, शृणु रास्व स्तोत्राय गिर्वणः॥ 2॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **इमे** = इस **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए **ते** = तुम्हारा **सोमाः** = सोमगण, ऐश्वर्यमय, **उक्थिनः** = कथनशील, कहने वाले **चिकित्र** = जानते हैं। **नो** = हमारे **गिरः** = वाणियों ने, बोध, सिञ्चन ने **मधोः** = मधु का **उप** = समीप **पपान** = रक्षण, पान, प्राशन किया। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चनकर्ता **स्तोत्राय** = स्तोत्र के लिए, स्तुति के लिए **शृणु** = सुनो, **रास्व** = दान दो॥ **2**॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सोमाः** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **चिकित्र** = जानता है (चिकित् - जानना)। **उक्थिनः** = कथनशील, कहने वाले (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **मधोः** = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पपान** = रक्षण, पीना, प्राशन करना (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **शृणु** = सुनो (श्रु-शृण् = सुनना)। **रास्व** = दान दो (रा- देना, लेना, ग्रहण करना, रस्, रास् = शब्द करना, रस् = रस होना, स्वाद लेना, प्रीति करना, प्यार करना, शब्द करना, रस लेना)। **स्तोत्राय** = स्तोत्र के लिए, स्तुति के लिए

(स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)।। **2** ।।

295. आ त्वा अद्य सर्वदुघाम्, हुवे गायत्रवेपसम्।
इन्द्रम् धेनुम् सुदुघाम् अन्याम्, इषम् उरुधाराम् अरङ्कृतम्।। 3 ।। 8-1-10

मन्त्रार्थ - **अद्य** = आज **त्वा** = तुम **इन्द्रम्** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान्, **सर्वदुघाम्** = सब के लिए दोहन करने वाले, **गायत्रवेपसम्** = गान, स्तुति करने वाले, **धेनुम्** = धेनु अर्थात् प्रिय, पालन करने वाले, **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले, **अन्याम्** = अन्य **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि, **उरुधाराम्** = बहुपालक, रक्षक, **अरङ्कृतम्** = गति करने वाले को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ।। **3** ।।

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **सर्वदुघाम्** = सब के लिए दोहन करने वाले (सर्व = सब (सर्वनाम) दुह् -दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **गायत्रवेपसम्** = गायत्र, गान, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना वेप् = काँपना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **धेनुम्** = धेनु को, प्रिय को, पालन करने वाले को (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, दुह् -दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **अन्याम्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **उरुधाराम्** = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अरङ्कृतम्** = गतिकर्ता को (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, हिंसा करना, कृ = करना) ।। **3** ।।

296. न त्वा बृहन्तो अद्रयो, वरन्ते इन्द्र वीडवः।
यत् शिक्षसि स्तुवते मावते, वसु न किः तत् आ मिनाति ते।। 4 ।। 8-88-3

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वा** = तुमको **बृहन्तो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा **अद्रयो** = आदर युक्त, अहिंसक **वीडवः** = वीड्व, विशेष स्तुति योग्य **न** = नहीं **वरन्ते** = वरण करते हैं। **वसु** = हे वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए **मावते** = सम्मान युक्त के लिए **यत्** = जो **शिक्षसि** = शिक्षा देते हो, सिखाते हो, **न** = नहीं **किः** = कोई **ते** = तुम्हारा **तत्** = उस को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **मिनाति** = हिंसा करता है, नष्ट करता है, बाधित करता है ।। **4** ।।

भावार्थ - जो परमात्मा का वरण करते हैं, उनको परमात्मा से जो शिक्षा, प्रेरणा, अनुदान प्राप्त होता है, उसे कोई भी नष्ट नहीं कर सकता है, बाधित नहीं कर सकता है।

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **बृहन्तो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अद्रयो** = आदर युक्त, अहिंसक (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना)। **वरन्ते** = वरते (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वीडवः** = वीड्व, विशेष स्तुति योग्य (वि = विशेष, ईड् = स्तुति करना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **शिक्षसि** = शिक्षा देता है, सिखाता है (शिक्ष् - शिक्षा देना)। **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **मावते** = सम्मान युक्त (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान

करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मिनाति** = हिंसा करता है, प्रक्षेपण करता है (मी - हिंसा करना। मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) **॥ 4 ॥**

297. कः ईम् वेद सुते सचा, पिबन्तम् कत् वयो दधे।
अयम् यः पुरो विभिनति, ओजसा मन्दानः शिप्री अन्धसः ॥ 5 ॥ 8-33-7

मन्त्रार्थ - **कः** = कौन **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **ईम्** = समान, इस प्रकार **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **वेद** = जानता है। **कत्** = कितना **वयो** = रचनाशील, विद्यावान् **पिबन्तम्** = पान करने वाले को **दधे** = धारण करते हैं। **अयम्** = यह **यः** = जो **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी **ओजसा** = ओज द्वारा **मन्दानः** = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार का **शिप्री** = शिप्री, तीक्ष्ण, काटने वाला **विभिनति** = विशेष भेदन, करते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ -**कः** = कौन (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **वेद** = ज्ञान, जानो, जानता है (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पिबन्तम्** = पान करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **विभिनति** = विशेष भेदन, भाग करते हैं (वि - विशेष, भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **मन्दानः** = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना) **॥ 5 ॥**

298. यत् इन्द्र शासो अव्रतम्, च्यावया सदसः परि।
अस्माकम् अंशुम् मघवन्, पुरुस्पृहम् वसव्ये अधि बर्हय ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **अव्रतम्** = अव्रती को **शासो** = शासित करते हो, **सदसः** = सभा के **परि** = सभी ओर **च्यावया** = पार करो। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **अस्माकम्** = हमारे **अंशुम्** = अंशु को, **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को, **वसव्ये** = वास में, धारण योग्य में **अधि** = अधिक **बर्हय** = बढ़ाओ **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **शासो** = शासन (शास् - शासन करना)। **अव्रतम्** = अव्रती को (अ = नहीं, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **च्यावया** = हँसने वालों का, तैरने वालों का, पार कराने वालों का, विद्वानों का (च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **सदसः** = सभा के (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **अंशुम्** = अंश को (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **मघवन्** =

धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पुरुस्पृहम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **वसव्ये =** वास, धारण योग्य (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)।, **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **बर्हय =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **॥ 6 ॥**

299. त्वष्टा नो दैव्यम् वचः, पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः।
पुत्रैः भ्रातृभिः अदितिः नु पातु, नो दुष्टरम् त्रामणम् वचः ॥ 7 ॥ 2-24-4

मन्त्रार्थ - त्वष्टा = त्वष्टा, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला, **पर्जन्यो =** पोषण उत्पन्न करने वाले, पर्जन्य, **ब्रह्मणस्पतिः=** विराट, महान्, बृहस्पति, **अदितिः =** अक्षय, अविनाशी **नो =** हमारा **दैव्यम् =** दिव्य **वचः =** वचन को **पुत्रैः =** पुत्रों **भ्रातृभिः =** भ्राताओं के साथ **नो =** हमारे **दुष्टरम्** = दुस्तर, तैरने में, पार करने में कठिन **त्रामणम् =** रक्षक, पालक, पोषक **वचः =** वचन **नु =** निश्चय ही **पातु =** पालन करे, रक्षा करे **॥ 7 ॥**

पदार्थ - त्वष्टा = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **दैव्यम् =** दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) **वचः =** वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **पर्जन्यो =** पोषण उत्पन्न करने वाले, पर्जन्य (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **ब्रह्मणस्पतिः =** विराट, महान्, बृहस्पति (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **पुत्रैः =** पुत्रों द्वारा (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **भ्रातृभिः =** भ्राताओं द्वारा (भृ = भरण करना)। **अदितिः =** अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **पातु =** पालन करे, रक्षा करे (पा = पालन करना, बचाना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **दुष्टरम्** = दुष्ट को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन)। **त्रामणम् =** रक्षक, पालक, पोषक को (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **वचः =** वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना) **॥ 7 ॥**

300. कदा चन स्तरीः असि, नः इन्द्र सश्चसि दाशुषे।
उप उप इत् नु मघवन्, भूय इत् नु ते दानम् देवस्य पृच्यते ॥ 8 ॥ 8-91-7

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **कदा चन =** कभी **स्तरीः =** आच्छादन, विस्तार **असि =** हो **नः =** हमारे लिए **सश्चसि =** चलते हो, **मघवन् =** हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **दाशुषे =** दानी के लिए **उप =** समीप **उप =** समीप **इत् =** ही **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही **भूय =** पुनः, बहुत **इत् =** ही **नु =** निश्चय ही **ते =** तुम्हारे लिए **देवस्य =** देव का **दानम् =** दान को **पृच्यते =** स्पर्श करता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ - कदा = कब (सर्वनाम)। **चन =** ही। **स्तरीः =** आच्छादन, विस्तार (स्तृ = आच्छादित करना, विस्तार करना)। **असि =** हो (अस् - होना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सश्चसि =** जाता है (सश्च् = पाना, जानना, जाना) **दाशुषे =** दानी के लिए (दश् - देना)। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **इत् =** ही (अव्यय)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **मघवन् =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **भूय =** मानो पुनः, बहुत, अतिशय अधिक (अव्यय)। **इत् =** ही (अव्यय)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दानम् =** दान को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **देवस्य =** देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पृच्यते =** स्पर्श करता है (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना) **॥ 8 ॥**

301. युङ्क्ष्वा हि वृत्रहन्तम, हरी इन्द्र परावतः।
अर्वाचीनो मघवन् सोमपीतये, उग्रः ऋष्वेभिः आ गहि॥ 9॥ 8-3-17

मन्त्रार्थ - **वृत्रहन्तम** = हे वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **परावतः** = दूर से **हि** = निश्चय ही **युङ्क्ष्वा** = युक्त करें, मिलाप कीजिये। **मघवन्** = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान् **अर्वाचीनो** = अर्वाचीन, प्रगतिशील, विद्वान्, **सोमपीतये** = सोम अर्थात् ऐश्वर्य, सृजन के पान के लिए **उग्रः** = उग्र **ऋष्वेभिः** = ऋषियों द्वारा **आ गहि** = आयें, प्राप्त हों। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें॥ **9**॥

पदार्थ - **युङ्क्ष्वा** = युक्त, मिलाप कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वृत्रहन्तम** = हे वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **परावतः** = रक्षा करो, पालन करो (परावतः = पराया, लौटा हुआ, अव्यय, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय) अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)।। **अर्वाचीनो** = अर्वाचीन, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **उग्र** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ऋष्वेभिः** = ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)॥ **9**॥

302. त्वाम् इदा ह्यो नरो, अपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः।
सः इन्द्र स्तोमवाहसः, इह श्रुधि उप स्वसरम् आ गहि॥ 10॥ 8-99-1

मन्त्रार्थ - **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, प्रगतिमान, **त्वाम्** = तुमको **इदा** = आज, अब **ह्यो** = कल **भूर्णयः** = धारण-पोषण करने वाले **नरो** = नर ने **अपीप्यन्** = पिया, पान किया। **इन्द्र** = हे इन्द्र, हे परम ऐश्वर्यशाली, **सः** = वह **स्तोमवाहसः** = स्तुति वाहक, स्तुति कर्ता (है)। **इह** = यहाँ **श्रुधि** = सुनिये, **उप** = समीप **स्वसरम्** = स्वगति को, उत्तम गति को, उत्तम गृह को **आ गहि** = आयें, प्राप्त हों। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें॥ **10**॥

पदार्थ - **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इदा** = आज, अब (सर्वनाम, अव्यय)। **ह्यो** = कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अपीप्यन्** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **वज्रिन्** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **भूर्णयः** = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। **सः** = वह, उसने। **इन्द्र** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तोमवाहसः** = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **श्रुधि** = सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **स्वसरम्** = स्वगति को, उत्तम गति को, उत्तम गृह को (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)॥ **10**॥

(32) सूक्त 8

303. प्रति उ अदर्शि आयती, उच्छन्ती दुहिता दिवः।
अहो मही वृणुते, चक्षुषा तमो ज्योतिः कृणोति सूनरी॥ 1॥ 7-81-1

मन्त्रार्थ :- **उ** = निश्चय ही **प्रति** = प्रत्येक **अदर्शि** = देखा है, **आयती** = आयती, आती हुई, शब्दकर्ता **ऊच्छन्ती** = उच्छेद करती हुई **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **दुहिता** = दुही हुई, दुहने वाली **अहो** = व्यापक **मही** = मही, महिमावान्, महान् **वृणुते** = वरण करती है। **सूनरी** = प्रेरणा देने वाली **चक्षुषा** = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से **तमो** = अन्धकार, इच्छा, दुःख को **ज्योतिः** = प्रकाश **कृणोति** = करती है॥ 1॥

पदार्थ :- **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक (अव्यय)। **उ** = निश्चय ही, भी। **अदर्शि** = देखा (दृश्-पश्य -देखना)। **आयती** = आयती, शब्दकर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **ऊच्छन्ती** = उच्छेद करती हुई, बोलते हैं, रक्षा करते हैं (उत् - उच्च (उपसर्ग)। छिद् - छेदना, काटना)। **दुहिता** = दुही हुई, दुहने वाली (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अहो** = व्यापक (अह् = व्यापना, व्यापक होना)। **मही** = मही, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृणुते** = वरण करता है (वृ - वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **चक्षुषा** = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **तमो** = अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **कृणोति** = करता है (कृ = करना)। **सूनरी** = प्रेरणा देने वाली (सु - उत्तम, सू = प्रेरणा देना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)॥ 1॥ **साम 751**

304. इमाः उ वाम् दिविष्टयः, उस्रा हवन्ते अश्विना।
अयम् वाम् अह्वे अवसे, शचीवसू विशम् विशम् हि गच्छथः॥ 2॥ 7-74-1

मन्त्रार्थ - **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक, **उस्रा** = हे उष्ण, उष्ण करने वाले, **इमाः** = ये **दिविष्टयः** = दिव्यता की इच्छा, तेजस्व की कामना वाले **उ** = निश्चय ही **वाम्** = तुमको **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं। **अयम्** = यह **वाम्** = तुमको **अवसे** = रक्षा के लिए **अह्वे** = आह्वान करता हूँ। **शचीवसू** = हे विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले, **विशम् विशम्** = प्रत्येक विश को, प्रवेशी को **हि** = ही **गच्छथः** = जाते हो॥ 1॥

पदार्थ :- **इमाः** = ये (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **वाम्** = तुमको (सर्वनाम)। **दिविष्टयः** = दिव्यता की इच्छा, तेजस्व की कामना (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **उस्रा** = उष्ण, उष्ण होने वाला, उष्ण करने वाला (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना, रोग होना)। **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **वाम्** = तुमको (सर्वनाम)। **अह्वे** = आह्वान करता हूँ (अ - नहीं, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना, बुलाना, पुकारना, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **शचीवसू** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले, (शच- स्पष्ट बोलना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)।

विशम् = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **विशम्** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **गच्छथः** = जाते हो (गम्-गच्छ् - जाना) ॥ 1 ॥

305. कुष्ठः को वाम् अश्विना, तपानो देवा मर्त्यः।
घ्नता वाम् अश्मया क्षपमाणो, अंशुना इत्थम् उ आत् उ अन्यथा ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक, **वाम्** = तुम दोनों को **को** = कौन **कुष्ठः** = परीक्षित, गृहस्थ, वाणी में स्थित **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, **मर्त्यः** = मरणशील **तपानो** = तपाने वाला, प्रकाश करने वाला (है, अर्थात् कोई नहीं है)। **वाम्** = तुम दोनों को **अश्मया** = व्याप्त, व्यापक द्वारा **क्षपमाणो** = सहनशील, संयमी **अंशुना** = अंशु द्वारा **इत्थम्** = इस प्रकार **उ** = निश्चय ही **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **उ** = निश्चय ही **अन्यथा** = अन्य प्रकार से **घ्नता** = मारने करने वाला (है, अर्थात् कोई नहीं है) ॥ 3 ॥

भावार्थ - सर्वव्यापक परमात्मा हो अथवा व्यापक भावयुक्त उपासक, उसकी समता कोई नहीं कर सकता है, उसका हनन भी कोई नहीं कर सकता है ॥ 3 ॥

पदार्थ - **कुष्ठः** = बहिष्कृत, परीक्षित, गृहस्थ, वाणी में स्थित (कुष् - बाहर करना, घिसना, परीक्षा करना, घेरना, घर बनाना, कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, स्था - ठहरना, स्थित होना)। **को** = कौन (सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **तपानो** = तप का (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **घ्नता** = नष्ट, मारने करने वाले (हन् - मारना)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अश्मया** = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **क्षपमाणो** = क्षप, सहन करना, संयमी होना (क्षप = भेजना, सहन करना, हूकना, संयमी होना)। **अंशुना** = अंशु द्वारा (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **इत्थम्** = इस प्रकार। **उ** = निश्चय ही, भी। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **अन्यथा** = अन्य प्रकार से (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

306. अयम् वाम् मधुमत्तमः, सुतः सोमो दिविष्टिषु।
तम् अश्विना पिबतम् तिरो, अह्न्यम् धत्तम् रत्नानि दाशुषे ॥ 4 ॥ 1-47-1

मन्त्रार्थ - **अयम्** = यह **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमो** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता **दिविष्टिषु** = दिव्यताओं में (है)। **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक, **वाम्** = तुम दोनों **तम्** = उसको **पिबतम्** = पियो, पान करें। **तिरो** = पार कराने वाले **अह्न्यम्** = व्यापक, व्याप्त **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्नों को **दाशुषे** = दानी के लिए **धत्तम्** = धारण, पोषण किया ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमो** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो - अन्त करना)। **दिविष्टिषु** = दिव्य स्थितियों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, स्था- स्थित होना, ठहरना, इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त

करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **पिबतम्** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तिरो** = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय), पार कराने वाले (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **अह्न्यम्** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **धत्तम्** = धारण, पोषण करो (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना) **॥ 4 ॥**

307. आ त्वा सोमस्य गल्दया, सदा याचन् अहम् ज्या।
भूर्णिम् मृगम् न सवनेषु चुक्रुधम्, कः ईशानम् न याचिषत् ॥ 5 ॥ 8-1-20

मन्त्रार्थ - **अहम्** = मैं **त्वा** = तुम **सोमस्य** = सोम का **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गल्दया** = उपभोग द्वारा **सदा** = सदा, सर्व काल में **ज्या** = ज्या, वृद्धि, जय को **याचन्** = याचना करता हुआ **भूर्णिम्** = धारण-पोषण करने वाले **मृगम्** = मृग, अन्वेषी को **सवनेषु** = उत्पन्न करने, ऐश्वर्य में **न** = नहीं **चुक्रुधम्** = क्रोध किया। **कः** = कौन **ईशानम्** = ईश्वर को **न** = नहीं **याचिषत्** = याचना करते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सोमस्य** = सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **गल्दया** = उपभोग, भक्षण करना (गल् - निगलना, खाना, भक्षण करना)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **याचन्** = याचना करता हुआ (याच - याचना करना, मांगना, देने की चाहना करना)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **ज्या** = ज्या, वृद्ध, जयी (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **भूर्णिम्** = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। **मृगम्** = मृग, अन्वेषी को (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सवनेषु** = उत्पन्न करने, ऐश्वर्य का (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **चुक्रुधम्** = क्रोध किया (क्रुध - क्रोध करना, गुस्सा करना)। **कः** = कौन (सर्वनाम)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **याचिषत्** = याचना करते हैं (याच - याचना करना, मांगना, देने की चाहना करना) **॥ 5 ॥**

308. अध्वर्यो द्रावया त्वम्, सोमम् इन्द्रः पिपासति।
उप उ नूनम् युयुजे, वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥ 6 ॥ 8-4-11

मन्त्रार्थ - **त्वम्** = तुम **अध्वर्यो** = अध्वर्य, अहिंसनीय **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **द्रावया** = द्रवित करो। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **पिपासति** = पीने की इच्छा करते हैं। **वृषणा** = वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **उ** = ही **नूनम्** = निश्चय ही **उप** = समीप **युयुजे** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं **च** = और **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **आ जगाम** = आ गये **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **अध्वर्यो** = अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **द्रावया** = प्राप्त, अनुसरण किया (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पिपासति** = रक्षण, पीने की इच्छा करता है (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **युयुजे** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु -मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज

- जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **वृषणा =** वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **हरी =** ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **च =** और। **जगाम =** गया (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना) **॥ 6 ॥**

309. अभीषतः तत् आ भर, इन्द्र ज्यायः कनीयसः।
पुरूवसुः हि मघवन्, बभूविथ भरे भरे च हव्यः ॥ 7 ॥ 7-32-24

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **तत् =** वह **ज्यायः =** वृद्धि, जयी **कनीयसः =** प्रकाशमान **अभि =** सब ओर **ईषतः =** इच्छाओ को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **मघवन् =** हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **पुरूवसुः =** अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक **हि =** निश्चय **भरे भरे =** प्रत्येक भरण में **च =** और **हव्यः =** आदान-प्रदान योग्य, हव्य **बभूविथ =** हो गये।**॥ 7 ॥**

पदार्थ -**अभीषतः =** डराया (भी- डरना, घबराना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ज्यायः =** ज्या का, वृद्ध, जयी करने वाले (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **कनीयसः =** कनीयस प्रकाशमानों का (कन् = प्रकाश प्रीति करना, तृप्त होना, जाना, जानना, पाना, चाहना)। **पुरूवसुः =** हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **मघवन् =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **बभूविथ =** हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। **भरे =** भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **भरे =** भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **च =** और। **हव्यः =** आदान-प्रदान करने योग्य, हव्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) **॥ 7 ॥**

310. यत् इन्द्र यावतः त्वम्, एतावत् अहम् ईशीय।
स्तोतारम् इत् दधिषे, रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ॥ 8 ॥ 7-32-18

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत् =** जो **त्वम् =** तुम **यावतः =** गतिमान, **एतावत् =** इनके अनुसार **अहम् =** मैं **ईशीय =** अधिकारी होऊँ। **स्तोतारम् =** स्तुतिकर्ता को **इत् =** ही **दधिषे =** धारण करता हूँ। **रदावसो =** हे वसुदाता, वसु को देने वाले, **पापत्वाय =** पाप के लिए **न =** नहीं **रंसिषम् =** रमन करूँ **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यावतः =** गति, ज्ञान, प्राप्त (या - जाना, जानना, पाना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **एतावत् =** इनके अनुसार (अव्यय)। **अहम् =** मैं (सर्वनाम)। **ईशीय =** ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **स्तोतारम् =** स्तुतिकर्ता को (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **दधिषे =** धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रदावसो =** हे वसुदाता, वसु को देने वाले (रद - विदारण करना, चीरना, खोदना, लिखना, देना, वस- वस्त्र पहिरना, ओढ़ना, पोशाक धारण करना, वसति करना, टिकना, निवास करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पापत्वाय =** पाप के लिए (पाप् - पाप करना, दुष्ट आचरण करना)। **रंसिषम् =** रमन करूँ (रम – रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना) **॥ 8 ॥**

311. त्वम् इन्द्र प्रतूर्तिषु, अभि विश्वा असि स्पृधः।

अशस्तिहा जनिता, वृत्रतूः असि, त्वम् तूर्य तरुष्यतः ॥ 9 ॥ 8-99-5

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** हे इन्द्र, **विश्वा** सब, **त्वम्** तुम **प्रतूर्तिषु** तीव्रगतियों में, **अभि स्पिधः** स्पर्धा करने वाले **असि** हो। **त्वम्** तुम **अशस्तिहा** अहिंसक को गति, ज्ञान देने वाले **जनिता** उत्पन्न करने वाले **वृत्रतूः** शीघ्र शुभकर्म करने के लिए **तरुष्यतः** तरने के इच्छुकों को **तूर्य्य** वृद्धि, पूर्ण करने वाले **असि** हो ॥ 1 ॥

भावार्थ - जो भी तीव्रतम गति सम्भव है, वह परमात्मा की इच्छा से ही है। अतः तीव्रता में इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा से स्पर्धा कोई नहीं कर सकता है। इसे ध्यान में रखें तो हम उतावलेपन से बच सकते हैं, हमारी गति सन्तुलित तथा संयमित बनी रहेगी और हमारा जीवन शान्तिमय बना रहेगा। परमात्मा अहिंसक को सहायता देता है, उसको पूर्णता प्रदान करता है। जो वास्तव में तरना चाहते हैं, पार जाना चाहते हैं, उनको भी उनके लक्ष्य में पूर्णता प्रदान करता है।

विशेष - प्रतूर्तिषु पद में तु या तुर् धातु होना सम्भव है। तु धातु का अर्थ गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना है। तुर् धातु का अर्थ शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना है। शस् धातु का अर्थ हिंसा करना, मारना, दुःख देना, काटना है। हा धातु का अर्थ गति करना, त्याग करना है। अशस्तिहा पद में कुछ विद्वानों ने शंस् (स्तुति, प्रशंसा करना) धातु का शस् रूप हो जाना तथा हन् (हिंसा करना, मारना) धातु का हा रूप हो जाना माना है।

पदार्थ- **इन्द्र** हे इन्द्र (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना), **त्वम्** तुम **विश्वा** सब, **प्रतूर्तिषु** - तीव्रगतियों में (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना। तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना), **अभि** - सब ओर, **स्पृधः** स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना) **असि** हो (अस् - होना)। **त्वम्** तुम **अशस्तिहा** अहिंसक को, गति, ज्ञान देने वाले (शस् - हिंसा करना, मारना, दुःख देना, काटना)। हा - गति करना, त्याग करना है। शंस्-शस् - स्तुति, प्रशंसा करना, हन् - हिंसा करना, मारना) **जनिता** उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न करना)। **वृत्रतूः** = शीघ्र शुभकर्म करने के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, तुर् = शीघ्र जाना, त्वरा करना)। **तरुष्यतः** तरने के इच्छुकों को (तृ - तरना, तैरना, पार होना) **तूर्य्य** वृद्धि, पूर्ण करने वाले (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना। तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना) **असि** हो (अस् - होना) ॥ 1 ॥

312. प्र यो रिरिक्षे ओजसा, दिवः सदोभ्यः परि।
न त्वा विव्याच रजः, इन्द्र पार्थिवम् अति विश्वम् ववक्षिथ ॥ 10 ॥ 8-88-5

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यो** = जो **ओजसा** = ओज द्वारा **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **सदोभ्यः** = प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य, स्थानों के लिए **परि** = सभी तरफ **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **रिरिक्षे** = अतिरिक्त स्थिति है। **रजः** = रज, लोक **त्वा** = तुमको **न** = नहीं **विव्याच** = व्याप्त हुआ। **अति** = बहुत, अत्यधिक **विश्वम्** = सबको **पार्थिवम्** = पार्थिव को, पृथ्वी को **ववक्षिथ** = पालन, रक्षा किया ॥ 10 ॥

पदार्थ -**प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **यो** = जो। **रिरिक्षे** = अतिरिक्त स्थिति है (रिङ्क्-रिणक्-रिच – रिक्त करना, मल शुद्धि होना, गर्भपात कराना, गर्भ गिराना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सदोभ्यः** = प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य, स्थानों के लिए (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **विव्याच** = व्याप्त हुआ (वि - विशेष, **व्यच** - व्यापना, ठगना, फसाना, जाना)। **रज** = रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पार्थिवम्** = पार्थिव को, पृथ्वी को (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **ववक्षिथ** = पालन, रक्षा किया (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) ॥ 10 ॥

(33) सूक्त 9

313. असावि देवम् गोऋजीकम् अन्धो, नि अस्मिन् इन्द्रो जनुषा ईम् उवोच।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैः बोधा, नो स्तोमम् अन्धसो मदेषु॥ 1॥ 7-21-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान ने **देवम्** = देव **गो–ऋजीकम्** = वाणी में स्थिर **अन्धो** = अन्न को, प्राण को **असावि** ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया। **अस्मिन्** = इसमें **जनुषा** = जनों द्वारा, जन्म से **ईम्** = समान, इस प्रकार **नि** = निश्चित, निरन्तर **उवोच** = बोला, कहा। **हर्यश्व** = हे ले जाने वाले व्यापक **त्वा** = तुम **बोधामसि** = बोध कराते हो। **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा **नो** = हमारा **स्तोमम्** = स्तोम को **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में **बोधा** = जानता हूँ॥ 1॥

पदार्थ - **असावि** ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **गो–ऋजीकम्** = वाणी में स्थिर (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीवित रहना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **अन्धो** = आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जनुषा** = जनों, लोगों, जन्म से (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **उवोच** = बोला, कहा (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **बोधामसि** = बोध किया (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हर्यश्व** = ले जाने वाले व्यापक (हृ - हरण करना, ले जाना। अश् - व्यापक होना)। **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **बोधा** = जानता हूँ (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्तोमम्** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करनाा)। **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)॥ 1॥

314. योनिः ते इन्द्र सदने अकारि, तम् आ नृभिः पुरुहूत प्र याहि।
असो यथा नो अविता वृधः चित्, ददो वसूनि ममदः च सोमैः॥ 2॥ 7-24-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **ते** = तुम्हारे लिए **सदने** = सदन में, स्थान में **योनिः** = बन्धन, मिलन **अकारि** = किया। **पुरुहूत** = हे पुरुहूत, बहुत आहूत, बहुप्रदत्त, अग्र-दत्त, **तम्** = उसको **नृभिः** = नरों द्वारा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **आ याहि** = आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें। **यथा** = जैसे, जिस प्रकार **नो** = हमारे लिए **अविता** = रक्षक, **वृधः** = वृद्धिकर्ता **चित्** = ही **असो** = हो। **वसूनि** = वसुओं को **ददो** = दिया, दान किया, **च** = और **सोमैः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोमो द्वारा **ममदः** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न किया॥ 2॥

पदार्थ - **योनिः** = बन्धन, मिलन (युन - यु - बांधना, बन्धन करना, गूंथना। यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सदने** = सदन में, स्थान में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अकारि** = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ -

पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **असो** = अस् का, ऐश्वर्यवान् का, उत्पन्न करने वाले का (अस् = होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **वृधः** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **चित्** = भी, ही। **ददो** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **ममदः** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **च** = और। **सोमैः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) **॥ 2 ॥**

315. अदर्दः उत्सम् असृजो वि खानि, त्वम् अर्णवान् बद्बधानाम् अरम्णाः।
महान्तम् इन्द्र पर्वतम् वि यत् वः, सृजत् धारा अव यत् दानवान् हन्॥ 3 ॥ 5-32-1

मन्त्रार्थ - **उत्सम्** = उत्स को **अदर्दः** = विदीर्ण किया, **खानि** = खनन को **वि** = विशेष **असृजो** = सृजा, उत्पन्न किया। **त्वम्** = तुमने **अर्णवान्** = अर्णवों को, प्रगतिशील, अहिंसकों को, **बद्बधानाम्** = बन्धनों का **अरम्णाः** = अरति, अरमण (मुक्त) किया। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **वः** = तुम **महान्तम्** = महान् **पर्वतम्** = पर्वत को **वि** = विशेष **सृजत्** = सृजन करते हो, **यत्** = जो **दानवान्** = दानयुक्त, दानी **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **हन्** = मार देता है, **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **अदर्दः** = विदीर्ण किया (अद् – खाना, नष्ट करना, दृ-चीरना, फाड़ना, टुकड़े-टुकड़े करना, दृ - दुःख देना, मार डालना)। **उत्सम्** = उत्स को (सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **असृजो** = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **खानि** = खनन करे, खोदे (खन् = खनन करना, खोदना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अर्णवान्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **बद्बधानाम्** = बँधा हुआ (बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना)। **अरम्णाः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त हुयी (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **महान्तम्** = महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पर्वतम्** = पर्वत, पर्वतों को (पर्व् - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **सृजत्** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दानवान्** = दानी (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **हन्** = मार देता है (हन् - मारना) **॥ 3 ॥**

316. सुष्वाणासः इन्द्र स्तुमसि त्वा, सनिष्यन्तः चित् तुविनृम्ण वाजम्।
आ नो भर सुवितम् यस्य कोना, तना त्मना सह्याम त्वोताः॥ 4 ॥ 10-148-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, **तुविनृम्ण** = हे बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले, **सुष्वाणासः** =

उत्पन्नकर्ता, **वाजम्** = विद्या को, गति को **सनिष्यन्तः** = सेवा, स्तुति करने वाले **चित्** = ही **त्वा** = तुम्हारा **स्तुमसि** = स्तुति करते हैं। **नो** = हमारे लिए **सुवितम्** = सुवित को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो, **यस्य** = जिसका **कोना** = शब्द, स्तुति द्वारा **तना** = विस्तार करो, **त्मना** = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, इच्छा द्वारा **त्वा** = तुम्हारा **उताः** = रक्षित **सह्याम** = सहन करते हैं, वहन करते हैं, प्राप्त करते हैं **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **सुष्वाणास** = उत्पन्नकर्ता (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तुमसि** = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सनिष्यन्तः** = सेवा करने वाले, स्तुति करने वाले (स - सहित, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना)। **चित्** = भी, ही। **तुविनृम्ण** = हे बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, नृ - ले जाना, विनम्र होना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **सुवितम्** = सुवित को (सु - उत्तम, अच्छा, वि - विशेष, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **कोना** = शब्द करें, स्तुति करें (कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौंरे के समान शब्द करना)। **तना** = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **त्मना** = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा (तम् - इच्छा करना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में अ या आ का लोप हो सकता है)। **सह्याम** = सहनशीलता, सहनशक्ति (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना, प्रसन्न होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **उताः** = रक्षण (उ–अव - पालन करना, रक्षा करना, शब्द करना) **॥ 4 ॥**

317. जगृह्या ते दक्षिणम् इन्द्र हस्तम्, वसूयवो वसुपते वसूनाम्।
विद्मा हि त्वा गोपतिम् शूर गोनाम्, अस्मभ्यम् चित्रम् वृषणम् रयिम् दाः ॥ 5 ॥ 10-47-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली **वसूनाम्** = हे वसुओं के **वसुपते** = वसुपति, **वसूयवो** = वसुयुक्त ने **ते** = तुम्हारे **दक्षिणम्** = दक्षिण **हस्तम्** = हाथ को **जगृह्या** = गृहण किया। **शूर** = हे वीर, पराक्रमी, **त्वा** = तुमको **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को **हि** = ही **विद्मा** = जानते हैं। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **चित्रम्** = अद्भुत चेतना, आश्चर्यरूप **वृषणम्** = पराक्रम **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **दाः** = दो **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **जगृह्या** = गृहण किया (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दक्षिणम्** = दक्षिण को (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हस्तम्** = हाथ को (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **वसूयवो** = वसुयुक्त (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, यु = मिलाना, अलग करना)। **वसुपते** = वसुपत के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **वसूनाम्** = वसु द्वारा (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना,

लेना)। **विद्मा** = विद्म, जानने वाले (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **शूर** = हे वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **दाः** = दानी, दो (दा, दद् = देना) **॥ 5 ॥**

318. इन्द्रम् नरो नेमधिता हवन्ते, यत् पार्या युनजते धियः ताः।
शूरो नृषाता श्रवसः च कामे, आ गोमति व्रजे भजा त्वम् नः॥ 6॥ 7-27-1

मन्त्रार्थ - **नेमधिता** = मार्गदर्शक **नरो** = नर **इन्द्रम्** = इन्द्र को **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं, **यत्** = जो **ताः** = उन **पार्या** = पूर्ण करने योग्य, पार जाने योग्य **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि को **युनजते** = युक्त करते हैं। **त्वम्** = तुम **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी, **नृषाता** = नर, ले जाने वाले दानी, **नः** = हमको **श्रवसः** = श्रवः, श्रवण, वाणी की **कामे** = कामना, इच्छा में **च** = और **गोमति** = गोयुक्त, शब्दयुक्त में, **व्रजे** = व्रज में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भजा** = सेवा करो, सेवा में लगाओ **॥ 6 ॥**

पदार्थ -**इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **नेमधिता** = मार्गदर्शक (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पार्या** = पूर्ण करने योग्य (पार - कार्य पूर्ण करना)। **युनजते** = युक्त, मिश्रित होते हैं (यु = बांधना, बन्धन करना, गूंथना, मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **ताः** = वे (सर्वनाम)। **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **नृषाता** = नर, ले जाने वाले दानी (नृ - ले जाना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **श्रवसः** = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **च** = और। **कामे** = कामना, इच्छा में (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गोमति** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **व्रजे** = व्रज में, व्रज के लिए (व्रज् = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, तैयार करना, घूमना, वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **भजा** = सेवा करो, सेवा में लगाओ (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) **॥ 6 ॥**

319. वयः सुपर्णाः उप सेदुः इन्द्रम्, प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः।
अप ध्वान्तम् ऊर्णुहि पूर्धि चक्षुः, मुमुग्धि अस्मान् निधयेव बद्धान्॥ 7॥10-73-11

मन्त्रार्थ - **वयः** = रचनाशील **सुपर्णाः** = सुन्दर पर्ण वाला, उत्तम हरित करने वाले **इन्द्रम्** = इन्द्र को **उप** = समीप **सेदुः** = प्राप्त हुए। **प्रियमेधा** = प्रिय मेधायुक्त, स्नेह, प्यार को समझने, जानने वाले, **नाधमानाः** = याचना करते हुए **ऋषयो**

= ऋषिगण **ध्वान्तम्** = ध्वनित, ध्वनि-युक्त को **अप** = दूर **ऊर्णुहि** = आवरण-आच्छादन करें, ढक दें। **चक्षुः** = दृष्टि, वाणी को **पूर्धि** = पूर्ण करो। **अस्मान्** = हम **बद्धान्** = बँधें हुए को **निधया** = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि **इव** = के समान **मुमुग्धि** = मुक्त करो, प्रसन्न करो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - रचनाशील, प्रिय मेधावी ऋषिगण ही हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं। हम निधि अर्थात्, धारणा शक्ति या बुद्धि से ही सभी बन्धनों, समस्याओं से मुक्त हो सकते हैं **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **वयः** = वय, रचना (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सुपर्णाः** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **सेदुः** = गये, प्राप्त हुए, (सिद् = हिंसा करना, अवसाद होना, जाना, जानना, पाना। सिध् = जाना, जानना, पाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रियमेधा** = प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **ऋषयो** = ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **नाधमानाः** = याचना करते हुए (नाध - याचना करना, रोगी होना, श्रीमान् होना, आशीर्वाद देना, स्वस्ति-वाचन करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **ध्वान्तम्** = ध्वान्त, ध्वनित, ध्वनि-युक्त (ध्वन - शब्द करना,ध्वनि करना)। **ऊर्णुहि** = आवरण-आच्छादन युक्त (ऊर्ण = बुनना, आच्छादन करना, ढकना)। **पूर्धि** = पूर्ण करो (पृ - पूर् - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **चक्षुः** = दृष्टि, वाणी (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) **मुमुग्धि** = मुक्त करो, प्रसन्न करो (मुच् - घर्षण करना, ऐश्वर्य होना, पूजा करना, बोलना, कहना, मुक्त करना, त्याग करना, प्रसन्न होना, मुह् - मोहना, मोहित होना, मुग्ध होना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **निधया** = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, धि = धारण करना, युक्त होना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **बद्धान्** = बाँधतें हुए (बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना) **॥ 7 ॥**

320. नाके सुपर्णम् उप यत् पतन्तम्, हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा।
हिरण्यपक्षम् वरुणस्य दूतम्, यमस्य योनौ शकुनम् भुरण्युम्॥ 8 ॥ 10-123-6

मन्त्रार्थ - **यत्** = जिसने **नाके** = अकुटिल, अविचल में **सुपर्णम्** = सुपर्ण को **उप** = समीप **पतन्तम्** = ऐश्वर्य, पराक्रम, गिरते हुए को **हृदा** = हृदय में **वेनन्तो** = विद्वान्, कान्तिमान् **त्वा** = तुमको **हिरण्यपक्षम्** = हिरण्यपक्ष, प्रकाशमान पक्षयुक्त **यमस्य** = यम के **योनौ** = योनि में, मिलन में **शकुनम्** = सक्षम, समर्थ **भुरण्युम्** = धारण - पोषण करने वाले **वरुणस्य** = वरुण के **दूतम्** = दूत को, प्रगतिशील, विद्वान्, परिश्रमी को **अभ्यचक्षत** = सर्वथा स्पष्ट कहा, देखा **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **नाके** = अकुटिलता में, नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल में (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क -नाश होना)। **सुपर्णम्** = सुपर्ण को (सु - सुन्दर, अच्छा, पृ - पूर्ण करना, भरना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पतन्तम्** = ऐश्वर्य, पराक्रम, गिरने को (पत् = जाना, उड़ना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **हृदा** = हृदय (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। **वेनन्तो** = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **अभ्यचक्षत** = सर्वथा स्पष्ट कहा, देखा (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हिरण्यपक्षम्** = हिरण्यपक्ष, प्रकाशमान पक्ष को (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, पक्ष् - पक्ष होना, पक्ष लेना, किसी एक पक्ष को ग्रहण करना, विभाग करना, ग्रहण करना, स्वीकार करना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम

करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **यमस्य =** यम का (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **योनौ =** योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **शकुनम्** = सक्षम, समर्थ को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **भुरण्युम् =** धारण - पोषण करने वाले को (भुरण - पालन करना, धारण करना) **॥ 8 ॥**

321. ब्रह्म जज्ञानम् प्रथमम् पुरस्तात्, वि सीमतः सुरुचो वेनः आवः।
स बुध्न्या उपमाः अस्य विष्ठाः सतः, च योनिम् असतः च विवः ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ - **वेनः** = विद्वान्, कान्तिमान्, **आवः** = रक्षक, **सुरुचो** = सुरुच, सुप्रकाशित **ब्रह्म** = ब्रह्म ने **पुरस्तात्** = पहले **प्रथमम्** = प्रथम को **वि** = विशेष **सीमतः** = सीमा से **जज्ञानम्** = उत्पन्न किया। **स** = वह **बुध्न्या** = बोधमय, बोधयुक्त **उपमाः** = उपमान, निकट मानयुक्त **अस्य** = इसका **विष्ठाः** = विशेष स्थित, व्याप्त **सतः** = सत्य **च** = और **योनिम्** = योनि को, मिलन को **च** = और **असतः** = प्रकाशक से, असत् से **विवः** = विशेष व्याप्त हुआ **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **जज्ञानम्** = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। **प्रथमम्** = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **पुरस्तात्** = पहले (अव्यय)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **सीमतः** = सीमा से (सि = बाँधना, मर्यादा होना, सीमा होना)। **सुरुचो** = सुरुच में, सुप्रकाशित में (सु - सुन्दर, अच्छा, रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **वेनः** = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **आवः** = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **स** = वह, उसने। **बुध्न्या** = बोधमय, बोधयुक्त (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **उपमाः** = उपमान, निकट मान-मापन (उप- समीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **विष्ठाः** = विस्तृत, व्याप्त (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **सतः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **च** = और। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **असतः** = प्रकाशक से, हैं (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **च** = और। **विवः** = विशेष व्याप्त हुआ, विशेष वास हुआ (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वा - जाना, पवन सा चलना, वी - जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना, वस - वस्त्र धारण करना, दया करना, प्रीति करना, मार डालना, कतरना, चीरना, नष्ट करना, ले लेना, वसति करना, टिकना, निवास करना) **॥ 9 ॥**

322. अपूर्व्या पुरुतमानि अस्मै, महे वीराय तवसे तुराय।
विरप्शिने वज्रिणे शन्तमानि, वचांसि अस्मै स्थविराय तक्षुः ॥ 10 ॥ 6-32-1

मन्त्रार्थ - **अस्मै** = हमारे लिए **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट, विलक्षण, **पुरुतमानि** = बहुत **महे** = पूज्य, **वीराय** = वीर, **तवसे** = प्रगतिशील, वृद्धिशील, **तुराय** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, **विरप्शिने** = स्पष्ट वक्ता, **वज्रिणे** = वजयुक्त, गतिमान के लिए **शन्तमानि** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **वचांसि** = वचनों को **अस्मै** = हम **स्थविराय** =स्थविर, स्थायी, दृा के लिए **तक्षुः** = आच्छादित करते हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **पुरुतमानि** = अत्यन्त अग्रगामी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार

करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वीराय** = वीर के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **तवसे** = तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **तुराय** = शीघ्रता के लिए, शीघ्रकारी, शीघ्रगामी के लिए (तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **विरप्शिने** = स्पष्ट वक्ता (वि = विशेष, विना, विलोम, रप् = स्पष्ट बोलना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **शन्तमानि** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **वचांसि** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **स्थविराय** = स्थिविर के लिए (स्था - स्थित होना, ठहरना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **तक्षुः** = तक्ष, आच्छादित करते हैं, (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना) **॥ 10 ॥**

(34) सूक्त 10

323. अव द्रप्सो अंशुमतीम् अतिष्ठत्, ईयानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः।
आवत् तम् इन्द्रः शच्या धमन्तम्, अप स्नीहितिम् नृमणाः अध द्राः ॥ 1 ॥ 8-96-13

मन्त्रार्थ - **द्रप्सो** = हर्ष, आनन्द युक्त **ईयानः** = प्रगतिशील, जानकार, विद्वान् **कृष्णो** = कृष्ण, कृषक, कृषि, आकर्षण करने वाला **दशभिः** = दस **सहस्रैः** = हजार के साथ **अंशुमतीम्** = अंशुमती को **अव** = प्राप्त **अतिष्ठत्** = प्रतिष्ठित हुआ। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **तम्** = उस **धमन्तम्** = वाद्य बजाने, धौंकने वाले **अप स्नीहितिम्** = अप स्नेही को **शच्या** = उत्तम वाणी द्वारा **आवत्** = रक्षा करता है। **नृमणाः** = नरों में मन वाले **अध द्राः** = लज्जित करते हैं **॥ 1 ॥**

भावार्थ - नीचे,

पदार्थ - **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **द्रप्सो** = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **अंशुमतीम्** = अंशुमती को (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अतिष्ठत्** = ठहरा, स्थित है (तिष्ठ् - ठहरना, स्थित होना)। **ईयानः** = प्राप्त करता हुआ, जानता हुआ (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **कृष्णो** = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **दशभिः** = दश द्वारा, दस द्वारा (दश = दश, दस, संख्या)। **सहस्रैः** = हजार (संख्या)। **आवत्** = रक्षा की, रक्षक (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **शच्या** = उत्तम वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना)। **धमन्तम्** = वाद्य बजाते, धौंकते, फूँकते हुये (धम् - धौंकना, फूँकना, अग्नि सुलगाना, वाद्य बजाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **स्नीहितिम्** = स्नेही को (स्निह - प्रीति करना, स्नेह करना, मित्रता करना, स्निग्ध होना)। **नृमणाः** = नर, ले जाने वाले (नृ - ले जाना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **द्राः** = निन्दा, लज्जित करता है (द्रा = भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना) **॥ 1 ॥**

324. वृत्रस्य त्वा श्वसथात् ईषमाणा, विश्वे देवा अजहुः ये सखायः।
मरुद्भिः इन्द्र सख्यम् ते अस्तु, अथ इमा विश्वाः पृतना जयासि ॥ 2 ॥ 8-96-7

मन्त्रार्थ - **वृत्रस्य** = प्रकाश, वाणी के **श्वसथात्** = श्वास से **ईषमाणा** = प्रगति, दान, शासन करने वाले **ये** = जिन **सखायः** = मित्र **विश्वे** = सभी **देवा** = देवगणों ने **त्वा** = तुमको **अजहुः** = त्याग दिया। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **मरुद्भिः** = मरणशीलों, मरुतों के साथ **ते** = तुम्हारा **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता **अस्तु** = हो। **अथ** = इसके अनन्तर **इमा** = ये **विश्वाः** = विश्व, सभी **पृतना** = व्यापक, बल वाले **जयासि** = जीतते हो **॥ 2 ॥**

भावार्थ - वृत्र अर्थात् प्रकाश, वाणी के श्वास से प्रगति, शासन, दान करने वाले देवगण से प्राकृतिक शक्तियों का अर्थ ग्रहण करना चाहिए। यदि हम केवल उनके द्वारा अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते तो हमें मरणशील मनुष्यों के स्नाथ मिलकर प्रयास करना चाहिए। **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **वृत्रस्य** = प्रकाश, वाणी के (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान

होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **श्वसथात् =** श्वास से (श्वस - श्वास लेना, श्वासोच्छ्वास करना, जीना, जीते रहना)। **ईषमाण =** अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **विश्वे =** सभी (सर्वनाम)। **देवा =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अजहुः =** परित्याग (जहा - हा - छोड़ना, परित्याग करना, जाना, चलना)। **ये =** जो। **सखायः =** मित्र (सख् = मित्र होना)। **मरुद्भिः =** मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सख्यम् =** सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अस्तु =** हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अथ =** अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **इमा =** यह, इसको (सर्वनाम)। **विश्वाः =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **पृतना =** व्यापक, बल वाले (पृत -व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **जयासि =** ज्या, वृद्ध, जयी, जीतते हो (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)॥

325. विधुम् दद्राणम् समने बहूनाम्, युवानम् सन्तम् पलितो जगार।
देवस्य पश्य काव्यम् महित्वा, अद्य आ ममार सः ह्यः समान॥ 3॥ 10-55-5

मन्त्रार्थ - पलितो = फलित-पुष्पित, शुद्ध **विधुम् =** विशेष धारण कर्ता, **दद्राणम् =** शीघ्रगामी, **बहूनाम् =** बहुतों के **समने =** समन में, समान मन में, मन के साथ, **युवानम् =** युवा, **सन्तम् =** सन्त, सेवाभावी, दानी को **जगार =** स्तुति, प्रशंसा करते हैं। **देवस्य =** देव का **काव्यम् =** काव्य, वाणी, शब्द को **महित्वा =** महत्व द्वारा **पश्य =** देखो। **अद्य =** आज **आ =** सम्यक् **ममार =** मर गया, **सः =** वह **ह्यः =** गत दिवस, कल **समान =** सम्यक् प्राणवान् था॥ 3॥

पदार्थ - विधुम् = विशेष धारण करने वाले (वि - विशेष, धा - धारण करना)। **दद्राणम् =** भाग जाने, निन्दा करने वाले को (द्रा = भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **समने =** समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **बहूनाम् =** बहुत (बहु - बहुत, सर्वनाम)। **युवानम् =** युवा को (युव् - बल होना, तरुण होना, युवा होना, यु - मिलाना, अलग करना, बन्धन करना। **सन्तम् =** सन्त को, सेवाभावी को, दानी को (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **पलितो =** फलित-पुष्पित, शुद्ध (पल् - जाना, फलित- पुष्पित होना, फल देना, काटना, गिराना, उढ़ाना, शुद्ध करना)। **जगार =** स्तुति, प्रशंसा करते हैं (जिगा-गा –प्रशंसा करना, सराहना, गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना)। **देवस्य =** देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पश्य =** देखो (पश्-दृश् = देखना)। **काव्यम् =** काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **महित्वा =** महित्व द्वारा, महत् होकर (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अद्य =** आज (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ममार =** मर गया (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सः =** वह, उसने। **ह्यः =** कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। **समान =** समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)॥ 3॥

326. त्वम् ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानो, अशत्रुभ्यो अभवः शत्रुः इन्द्र।
गूढे द्यावापृथिवी अनु-अविन्दो, विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणम् धाः॥ 4॥ 8-96-16

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वम् =** तुम **ह =** ही **त्यत् =** वह **सप्तभ्यो =** सात केलिए **जायमानो =** उत्पन्न होते हुए **अशत्रुभ्यो =** अशत्रुओं के लिए **शत्रुः =** शत्रु **अभवः =** हुए। **गूढे =** गूढ **द्यावापृथिवी =** अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी **अनु-अविन्दो =** प्राप्त होता है। **विभुमद्भ्यो =** विभुयुक्त **भुवनेभ्यो =** भुवनों के लिए **रणम् =** रण, शब्द, को **धाः =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो॥ 4॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **ह =** ही, निश्चय ही (अव्यय)। **त्यत् =** वह, उसने (सर्वनाम)। **सप्तभ्यो =** सात (संख्या)। **जायमानो =** उत्पन्न होता हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अशत्रुभ्यो =** अशत्रु (शी-

शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **अभवः =** हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **शत्रुः =** शत्रु (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गूढे =** गूढ (गूड – रहना, निवास करना, घर बनाना, गुड - संरक्षण करना, बनाना मधुर होना, गुह – हिंसा करना, गति करना, छिपाना, वस्त्रादि से ढांकना)। **द्यावापृथिवी =** अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करन, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **अनु-अविन्दो =** प्राप्त होता है (अनु = पश्चात्, पीछे, विन्द - प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **विभुमद्भ्योः =** विभू के आनन्द के लिए (वि - विशेष, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, मद - हृष्ट होना, हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **भुवनेभ्यो =** भुवनों द्वारा (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **रणम् =** रण, शब्द को (रण् - शब्द करना, जाना)। **धाः =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो (धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना) **॥ 4 ॥**

327. मेडिम् न त्वा वज्रिणम् भृष्टिमन्तम्, पुरुधस्मानम् वृषभम् स्थिरप्स्नुम्।
करोषि अर्यः तरुषीः दुवस्युः, इन्द्र द्युक्षम् वृत्रहणम् गृणीषे ॥ 5 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **मेडिम् =** प्रगति **न =** के समान **त्वा =** तुम **वज्रिणम् =** वज्रयुक्त, गतिमान, **भृष्टिमन्तम् =** ज्योतिमान, **पुरुधस्मानम् =** अधिक पालन, पोषण करने वाले, **वृषभम् =** वृषभ, पराक्रमी, वर्षा करने वाले, **स्थिरप्स्नुम् =** स्थिर संरक्षण करने वाले को **अर्यः** = अर्य, ज्ञानी, **तरुषीः =** तरने, पार करने वाले, **दुवस्युः =** सेवा करने वाला, **करोषि =** करते हो, बना देते हो। **द्युक्षम् =** प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ, **वृत्रहणम् =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **गृणीषे =** शब्द (स्तुति) करते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **मेडिम् =** गति, प्रगति को (मी - समझना, जानना, जाना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वज्रिणम् =** वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **भृष्टिमन्तम् =** चमक, ज्योति (भृश् = चमकना, प्रकाशित होना। भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **पुरुधस्मानम् =** अधिक पालन, पोषण करने वाले (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **वृषभम् =** वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **स्थिरप्स्नुम् =** स्थिर होकर संरक्षण करने वाले (स्था - ठहरना, स्थिर होना, प्सा -भक्षण करना, संरक्षण करना)। **करोषि =** करता है (कृ - करना)। **अर्यः** = अर्य, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **तरुषीः =** तरने के इच्छुक, पार करने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **दुवस्युः =** सेवा की, पीड़ित किया (दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **द्युक्षम् =** प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **वृत्रहणम् =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **गृणीषे =** शब्द करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) **॥ 5 ॥**

328. प्र वो महे महे वृधे भरध्वम्, प्रचेतसे प्र सुमतिम् कृणुध्वम्।

विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः ॥ 6 ॥ 7-31-10

मन्त्रार्थ - **वो** = तुम लोग **महे महे** = प्रत्येक महान्, पूज्य के लिए **वृधे** = वृद्धि के लिए **प्र** = प्रकृष्ट **भरध्वम्** = पूर्ण करो, धारण करो, भरण करो। **प्रचेतसे** = प्रचेता के लिए, प्रकृष्ट विचारवान् के लिए **प्र** = प्रकृष्ट **सुमतिम्** = सुमति, सुबुद्धि **कृणुध्वम्** = करो। **चर्षणिप्राः** = हे आनन्द, चेतना, विचार को पूर्ण करने वाले, **विशः** = प्रतिष्ठित, प्रवेशी **पूर्वीः** = पूर्व **प्र** = प्रकृष्ट **चर** = विचरण करें ॥ 6 ॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **भरध्वम्** = पूर्ण करो, धारण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **प्रचेतसे** = प्रकृष्ट विचार वाले के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सुमतिम्** = सुमति को, सुबुद्धि को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना)। **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **पूर्वीः** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **चर** = चलने वाला (चर् - चलना, विचरण करना)। **चर्षणिप्राः** = हे आनन्द, चेतना, विचार को पूर्ण करने वाले (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना) ॥ 6 ॥ **साम 1793**

329. शुनम् हुवेम मघवानम् इन्द्रम्, अस्मिन् भरे नृतमम् वाजसातौ।
शृण्वन्तम् उग्रम् ऊतये समत्सु, घ्नन्तम् वृत्राणि सञ्जितम् धनानि ॥ 7 ॥ 3-30-22

मन्त्रार्थ - **शुनम्** = शुन **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **नृतमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ नर **वाजसातौ** = गतिमय, विद्वान्, बलवान्, **ऊतये** = रक्षा के लिए **उग्रम्** = उग्र को **शृण्वन्तम्** = सुनने वाले, **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **वृत्राणि** = वृत्रों को, हिंसकों को, आच्छादनों को **घ्नन्तम्** = नष्ट करने वाले, **धनानि** = धन को **सञ्जितम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति जीतने वाले, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अस्मिन्** = इस **भरे** = भरण में **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - **शुनम्** = शुन (शुन = जाना)। **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **नृतमम्** = नरों, उत्तम, श्रेष्ठजन को (नृ - ले जाना)। **वाजसातौ** = गतिमय, विद्वान्, बलवान्, (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **शृण्वन्तम्** = सुनें (शृ - सुनना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **घ्नन्तम्** = नष्ट करते हैं (हन् - मारना)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सञ्जितम्** = सम्यक् रूप से,

भलीभाँति जीतने वाले, (सम् -सम्यक्, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **धनानि** = धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 7 ॥

330. उत् उ ब्रह्माणि ऐरत श्रवस्य, इन्द्रम् सम् अर्ये महया वसिष्ठ।
आ यो विश्वानि श्रवसा ततान, आ उप श्रोता मे ईवतो वचांसि ॥ 8 ॥ 7-23-1

मन्त्रार्थ - **श्रवस्य** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील **उ** = और **ब्रह्माणि** = ब्रह्म, बडे **उत्** = उच्च **ऐरत** = प्राप्त करें, शब्द करें। **वसिष्ठ** = हे वसिष्ठ, अत्यन्त वासयुक्त, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **सम्** = सम्यक् **अर्ये** = ज्ञानी में **महया** = पूजन, सम्मान करो। **यो** = जो **विश्वानि** = सभी **श्रवसा** = श्रवण, वाणी द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ततान** = विस्तार करता है। **उप** = समीप **श्रोता** = श्रोत्र, सुनने वाला **वचांसि** = वचनों को **मे** = मेरे लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **ईवतो** = व्याप्त, प्राप्त हो, गमन करें ॥ 8 ॥

पदार्थ -**उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **ऐरत** = प्राप्त, शब्द, ध्वनि करो (इर् - ईर्ष्या करना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **श्रवस्य** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति (उपसर्ग)। **अर्ये** = अर्य में, ज्ञानी में (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **महया** = महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **वसिष्ठ** = हे वसिष्ठ, वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **यो** = जो। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **श्रवसा** = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **ततान** = विस्तारित किया (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **श्रोता** = कान, श्रोत्र, सुनने वाला (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **ईवतो** = व्याप्त, प्राप्त हो, गमन करें (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, फैलना)। **वचांसि** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 8 ॥

331. चक्रम् यत् अस्य अप्सु आ निषत्तम्, उत उ तत् अस्मै मधु इत् चच्छद्यात्।
पृथिव्याम् अतिषितम् यत् ऊधः, पयो गोषु अदधा ओषधीषु ॥ 9 ॥ 10-73-9

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **चक्रम्** = चक्र को **अस्य** = इसके **अप्सु** = पालन-रक्षण में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, **निषत्तम्** = प्राप्त हुआ, **उत** = और **उ** = निश्चय ही **तत्** = वह **अस्मै** = हमारे लिए **मधु** = मीठा, मधु **इत्** = ही **चच्छद्यात्** = आच्छादित करता है। **यत्** = जो **पृथिव्याम्** = पृथ्वी पर **ऊधः** = वाणी, शब्द, आद्रता को **अतिषितम्** = अत्यधिक बांधा। **पयो** = ज्ञान, प्रवाह को **गोषु** = शब्दों में, वाणियों में **ओषधीषु** = ओषधियों में **अदधा** = धारण किया ॥ 9 ॥

पदार्थ - **चक्रम्** = चक्र को (चकृ = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **अप्सु** = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **निषत्तम्** = प्राप्त हुआ (निष - प्राप्त करना, ले जाना, नि- निश्चय ही, निरन्तर, सद्-षद् - बैठना, स्थित होना, जाना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **उ** = निश्चय ही, भी। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **चच्छद्यात्** = आच्छादित किया (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना)। **पृथिव्याम्** = पृथ्वी पर (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अतिषितम्** = अत्यधिक बंधा हुआ (अति - बहुत, सि - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ऊधः** = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द् = भिगोना, आद्र होना, कष्ट होना)। **पयो** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान (पय् - गति करना, रक्षण करना,

ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **गोषु =** गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अदधा =** धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना)। **ओषधीषु =** ओषधियों में (उषध्-ओषध् = चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना) **॥ 9 ॥**

(35) सूक्त 11

332. त्यम् उ षु वाजिनम् देवजूतम्, सहोवानम् तरुतारम् रथानाम्।
अरिष्टनेमिम् पृतनाजम् आशुम्, स्वस्तये तार्क्ष्यम् इह आ हुवेम ॥ 1 ॥ 10-178-1

मन्त्रार्थ - **उ =** निश्चय ही **त्यम् =** उस **षु =** उत्तम **वाजिनम् =** वाजयुक्त, बलवान्, विद्या-गतियुक्त, **देवजूतम् =** देवगति सम्पन्न, **सहोवानम् =** सहनशील, **रथानाम् =** रथों के **तरुतारम् =** पार करने वाले, **अरिष्टनेमिम् =** अत्यन्त प्रगतिशील, **पृतनाजम् =** व्यापक, **आशुम् =** आशु, तीव्र गति युक्त, **तार्क्ष्यम् =** गमनीय, गम्य, प्राप्य, विद्वान् को **स्वस्तये =** कल्याण के लिए, सुख के लिए **इह =** यहाँ **आ =** समन्तात्, सम्यक् **हुवेम =** आह्वान करते हैं **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **त्यम् =** उस को (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी। **षु =** उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **वाजिनम् =** वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **देवजूतम् =** देव से उत्पन्न के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, जु - चलना, जाना, भागना)। **सहोवानम् =** सहनशीलता, सहनशक्ति (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना, प्रसन्न होना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **तरुतारम् =** पार करने वाला, तारने वाला, तारक (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **रथानाम् =** रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अरिष्टनेमिम् =** अत्यन्त हिंसक, गतिशील, व्यापक को जानने, प्राप्त करने वाले (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रिष- हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना, नी - जाना, जानना, पाना, प्राप्त करना, पहुँचना)। **पृतनाजम् =** व्यापक (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **आशुम् =** आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **स्वस्तये =** कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **तार्क्ष्यम् =** गमनीय, गम्य, प्राप्य, पाने योग्य, विद्वान् (तृक्ष् -चलना, जाना, जानना, पाना)। **इह =** इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हुवेम =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) **॥ 1 ॥**

333. त्रातारम् इन्द्रम् अवितारम् इन्द्रम्, हवे हवे सुहवम् शूरम् इन्द्रम्।
हुवे नु शक्रम् पुरुहूतम् इन्द्रम्, इदम् हविः मघवा वेतु इन्द्रः ॥ 2 ॥ 6-47-11

मन्त्रार्थ - **त्रातारम् =** रक्षक, पालक, पोषक **इन्द्रम् =** इन्द्र को **अवितारम् =** रक्षक **इन्द्रम् =** इन्द्र को **हवे =** आह्वान करते हैं, **सुहवम् =** सुन्दर आह्वानयुक्त **शूरम् =** शूरवीर **इन्द्रम् =** इन्द्र को **हुवे =** आह्वान करते हैं, **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही **शक्रम् =** सक्षम को, समर्थ करने वाले **पुरुहूतम् =** पुरुहूत, बहु-आहूत **इन्द्रम् =** इन्द्र को **हवे =** आह्वान करते हैं। **इदम् =** यह **हविः =** हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य **मघवा =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् **इन्द्रः =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली **वेतु =** जानें, व्याप्त हों, प्राप्त करें **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **त्रातारम् =** रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को

(इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अवितारम् =** रक्षक को (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हवे =** दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **हवे =** दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सुहवम् =** सुन्दर आह्वान को (सु - सुन्दर, अच्छा, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **शूरम् =** शूर को, वीर को, पराक्रमी को (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हुवे =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **शक्रम् =** सक्षम को, समर्थ करने वाले को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **पुरुहूतम् =** पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इदम् =** यह, इसको (सर्वनाम)। **हविः =** हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मघवा =** धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **वेतु =** जानें, व्याप्त हों (वे = बुनना, वी-वे = जाना, जानना, व्याप्त होना)। **इन्द्रः =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) **॥ 2 ॥**

334. यजामहे इन्द्रम् वज्रदक्षिणम्, हरीणाम् रथ्याम् विव्रतानाम्।
प्र श्मश्रुभिः दोधुवत् ऊर्ध्वधा भुवत्, वि सेनाभिः भयमानो वि राधसा ॥ 3 ॥10-23-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को **वज्रदक्षिणम् =** वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को **हरीणाम् =** ले जाने वाले, हरण करने वाले का **विव्रतानाम् =** विशेष वृत के लिए **रथ्याम् =** रथी को **यजामहे =** यजन करते हैं। **श्मश्रुभिः =** श्मश्रुओं द्वारा **दोधुवत् =** कम्पायमान **ऊर्ध्वधा =** ऊर्ध्व धारण करने वाला **वि =** विशेष **सेनाभिः =** सेनाओं द्वारा **भयमानो =** भयमान **वि =** विशेष **राधसा =** शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा**प्र =** प्रमुख, अधिक **भुवत् =** होता हैं **॥**

पदार्थ - यजामहे = यजन करते हैं (यज् = पूजा करना, देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रदक्षिणम्** = वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को (वज् - गति करना, जाना, दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **हरीणाम् =** ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **रथ्याम् =** रथ्य को (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **विव्रतानाम् =** विशेष वृत के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **श्मश्रुभिः =** श्मश्रुओं द्वारा (शम = शमन करना, शान्त करना, प्रसिद्ध करना, स्पष्टता से दिखाना। शम = विचार करना। शम = शमन करना, सहन करना। शम = सान्त्वना करना, शमन करना, शान्त होना, ठण्डा होना, मन स्वाधीन रखना, स्वस्थ होना, क्षुब्ध नहीं होना)। **दोधुवत्** = कम्पित हुआ (धू - कम्पन करना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित)। **ऊर्ध्वधा =** उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **भुवत् =** होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **सेनाभिः =** सेना द्वारा (सि–सिन् = बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **भयमानो =** भयभीत हुआ (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राधसा =** शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना) **॥ 3 ॥**

335. सत्राहणम् दाधृषिम् तुम्रम् इन्द्रम्, महाम् अपारम् वृषभम् सुवज्रम्।
हन्ता यो वृत्रम् सनिता उत वाजम्, दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥ 4 ॥ 4-17-8

मन्त्रार्थ - **सत्राहणम्** = विस्तार, सम्बन्ध का हनन करने वाला **दाधृषिम्** = विजयी **तुम्रम्** = गति, वृद्धि युक्त, **महाम्** = पूज्य, महान् **अपारम्** = अपार **वृषभम्** = वृषभ, पराक्रमी, वर्षा करने वाले **सुवज्रम्** = उत्तम वज्रयुक्त **इन्द्रम्** = इन्द्र को (आह्वान करते हैं)। **यो** = जो **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **सुराधाः** = सुन्दर राध, सिद्धियुक्त, **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को **हन्ता** = मारने वाला, **वाजम्** = विद्या को, गति को **सनिता** = दाता **उत** = और **मघानि** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् का **दाता** = देने वाला (है) **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **सत्राहणम्** = विस्तार, सम्बन्ध का हनन करने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, हन् - मारना हा - त्याग करना, चलना, जाना)। **दाधृषिम्** = विजय, गर्व को (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **तुम्रम्** = गति, वृद्धि को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **महाम्** = बड़े, पूज्य, महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अपारम्** = अपार को (पार - कार्य पूर्ण करना)। **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुवज्रम्** = सुन्दर, अच्छे वज्र, गतिमान को (सु - अच्छा, सुन्दर, वज् - गति करना, जाना)। **हन्ता** = मारने वाला (हन् - मारना)। **यो** = जो। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सनिता** = सेवित, दाता (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **उत** = उसी प्रकार, ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दाता** = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **मघानि** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् का (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सुराधाः** = सुन्दर राध, सिद्धि (राध् - सिद्ध करना, पूरा करना, बढ़ना, निर्णय करना) **॥ 4 ॥**

336. यो नो वनुष्यन् अभिदाति मर्तः, उगणा वा मन्यमानः तुरो वा। क्षिधी युधा शवसा वा तम् इन्द्र, अभि स्याम वृषमणः त्वोताः ॥ 5 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यो** = जो **मर्तः** = मरणशील **उ** = उत्तम, उत्कृष्ट **गणा** = गण, समूह, शब्द **वा** = अथवा **मन्यमानः** = विचारणीय मानते हुए **तुरो** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी **वा** = अथवा **क्षिधी** = निवासी, वासयुक्त, विनाशशील **युधा** = योद्धा, युद्ध करने वाला **वा** = अथवा **शवसा** = समीप, गति, ज्ञान द्वारा **नो** = हमारे लिए **वनुष्यन्** = शब्द, सेवन, वास करते हुए **अभिदाति** = अभिदान करता है, **तम्** = उसको, उसे **अभि** = अभिमुख **वृषमणः** = पराक्रमी **त्वोताः** = तुम्हारे द्वारा रक्षित, वृद्धियुक्त, प्रगतिशील **स्याम** = हों **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **यो** = जो। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वनुष्यन्** = सेवन किया जाता है, वास किया जाता है (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वनु - याचना करना, मांगना)। **अभिदाति** = अभिदाता, सभी ओर, सर्वथा देने वाला (अभिमुख, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, दा - देने वाला)। **मर्त** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **उ** = उत्तम, उत्कृष्ट (उपसर्ग)। **गणा** = गण (गण् - गणना करना, गिनना, समूह होना, शब्द करना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **मन्यमानः** = मानते हुए (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **तुरो** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी (तुर् = शीघ्रता करना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **क्षिधी** = नष्ट होना (क्षि - सूक्ष्म होना, अल्प होना, नष्ट होना, जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, क्षय होना)। **युधा** = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना)। **शवसा** = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना, बदले में देना, विकार होना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य

होना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **स्याम =** हों (अस् - होना)। **वृषमणः =** हे पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **त्वोताः =** गति, वृद्धि, प्रगतिशील वाले को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना) **॥ 5 ॥**

337. यम् वृत्रेषु क्षितयः स्पर्धमाना, यम् युक्तेषु तुरयन्तो हवन्ते।
यम् शूरसातौ यम् अपाम् उपज्मन्, यम् विप्रासो वाजयन्ते सः इन्द्रः ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - यम् = जिसको **वृत्रेषु =** वृत्रों में **क्षितयः =** निवास करने वाले, क्षति, क्षय करने वाले **स्पर्धमाना =** स्पर्धा करने वाले, (**हवन्ते =** आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं), **यम् =** जिसको **युक्तेषु =** युक्तों में **तुरयन्तो =** शीघ्रता करने वाले **हवन्ते =** आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं, **यम् =** जिसको **शूरसातौ =** शूरवीर, पराक्रमी की सेवा में (**हवन्ते =** आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं), **यम् =** जिसको **अपाम् =** पालन, रक्षण में **उपज्मन् =** उपगामी, समीप भोजी (**हवन्ते =** आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं), **यम् =** जिसको **विप्रासो =** विप्रगण, मेधावी (जीवन में) **वाजयन्ते =** गतिमान, बलवान्, प्रगति करते हैं, **सः =** वह **इन्द्रः =** परम ऐश्वर्यशाली (है) **॥ 6 ॥**

पदार्थ - यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **वृत्रेषु =** वृत्रों में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **क्षितयः =** निवास करने वाले को, क्षति, क्षय करने वाले को (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **स्पर्धमाना =** स्पर्धमान (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **युक्तेषु =** युक्त (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **तुरयन्तो =** शीघ्रता करने वाले को (तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना)। **हवन्ते =** आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **शूरसातौ =** शूरवीर, पराक्रमी की सेवा में (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना, सन् = सेवा करना, अलग करना,)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **अपाम् =** अपा, पालकों का (अप - पालन करना)। **उपज्मन् =** उपगामी, समीप भोजी (उप - समीप, जम् = चलना, खाना, निगलना)। **यम् =** जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **विप्रासो =** विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। **वाजयन्ते =** गतिमान, बलवान, प्रगति करते हैं (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सः =** वह, उसने। **इन्द्रः =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) **॥**

338. इन्द्रापर्वता बृहता रथेन, वामीः इषः आ वहतम् सुवीराः।
वीतम् हव्यानि अध्वरेषु देवा,वर्धेथाम् गीर्भिः इडया मदन्ता ॥ 7 ॥ 3-53-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रापर्वता = इन्द्र और पर्वत, परम ऐश्वर्य को पूर्ण करने वाले **बृहता =** महान्, बृहत् **रथेन =** रथ द्वारा **वामीः =** प्रवाहमान **इषः** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति को **सुवीराः =** अच्छे वीर, सुवीर **आ =** समन्तात्, सम्यक् **वहतम् =** वहन करें। **देवा =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **वीतम् =** व्याप्त को **हव्यानि =** देय, दान योग्य को **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन, **इडया =** स्तुति द्वारा **मदन्ता =** हर्षित, तृप्त करते हुए **अध्वरेषु =** अहिंसकों में **वर्धेथाम् =** बढ़ाओ **॥ 7 ॥**

पदार्थ - इन्द्रापर्वता = इन्द्र और पर्वत, परम ऐश्वर्य को पूर्ण करने वाले (इन्द = परम ऐश्वर्य होना, पर्व - पूर्ण करना, भरना)। **बृहता =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **रथेन =** रथ से (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वामीः =** प्रवाहमान (वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना)। **इषः** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति (इष - चबाना, बीनना, एक-एक

दाना चुनना, छानना, इच्छा करना, चाहना। इष - जाना। इष - निरन्तर देखना, करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वहतम् =** वहन करें (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सुवीराः =** अच्छे वीर, सुवीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **वीतम् =** व्याप्त, प्राप्त करते हैं (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **हव्यानि =** दान योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अध्वरेषु =** अहिंसकों में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवा =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वर्धेथाम् =** बढ़ाओ (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **इडया =** स्तुति द्वारा (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **मदन्ता =** हर्षित, तृप्त हों (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) **॥ 7 ॥**

339. इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा, अपः प्रैरयत् सगरस्य ब्रध्नात्।
यो अक्षेण इव चक्रियौ शचीभिः, विष्वक् तस्तम्भ पृथिवीम् उत द्याम् ॥ 8 ॥ 10-89-4

मन्त्रार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **अनिशितसर्गा =** अविचारित को छोड़नें वाले **अपः =** पालक, रक्षक, **गिरो =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **सगरस्य =** सगर का **ब्रध्नात् =** बृद्धि **प्रैरयत् =** प्राप्त करे, पूर्ण करें। **यो =** जो **अक्षेण =** अक्ष, क्रीणा, दृष्टि **इव =** के समान **शचीभिः =** उत्तम वाणी द्वारा **चक्रियौ =** चक्रण किया। **विष्वक् =** विश्व, व्याप्त **पृथिवीम् =** पृथिवी को **उत** = उसी प्रकार **द्याम् =** द्यु को, प्रकाशमय को **तस्तम्भ =** स्तम्भित, स्थापित किया।**॥ 8 ॥**

पदार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गिरो =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **अनिशितसर्गा =** अविचारित को छोड़नें वाला (अ - नहीं, निश् = विचार करना, मनन करना, सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **अपः =** पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **प्रैरयत् =** प्राप्त, पूर्ण करें (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ - जाना, जानना, पाना, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। **सगरस्य =** सगर द्वारा (सग - संवरण करना, आच्छादन करना, ओढ़ना, स - सहित, साथ, गृ - गीला करना, समझना, जानना)। **ब्रध्नात् =** ब्रध्न का, बृद्धि का (बृध् - बढ़ना, वृद्धि होना, बृद्धि करना)। **यो =** जो। **अक्षेण =** अक्ष का, खेल, क्रीणा, दृष्टि का (अक्ष् - खेलना, देखना, व्याप्त होना, एकत्र होना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **चक्रियौ =** किया (चकृ = चक्रण करना, गोलाकार घूमना, कृ - करना)। **शचीभिः =** उत्तम वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना)। **विष्वक् =** विश्व, व्याप्त (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **तस्तम्भ =** स्तम्भित, स्थापित किया (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, स्तभ्-स्तभि-स्तम्भ - स्थापित करना, स्थित करना)। **पृथिवीम् =** पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्याम् =** द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय को (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) **॥ 8 ॥**

340. आ त्वा सखायः सख्या ववृत्युः, तिरः पुरू चित् अर्णवाम् जगम्याः।
पितुः नपातम् आ दधीत वेधा, अस्मिन् क्षये प्रतराम् दीद्यानः ॥ 9 ॥ 10-10-1

मन्त्रार्थ - त्वा = तुम्हारे **तिरः =** तैरने वाले **पुरू =** बहुत **चित् =** ही **जगम्याः =** गमनीय **सखायः =** मित्रों ने **सख्या =** सखाभाव, मित्रता के साथ **अर्णवाम् =** अर्णव, प्रगतिशील, ज्ञान युक्त, प्राप्त होने वाले, अहिंसक को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **ववृत्युः =** वरण किया। **वेधा =** विद्वान्, विधान करने वाले **दीद्यानः =** प्रकाशमान ने **पितुः =** पितु, गति, ज्ञान, पिता का **न =** के समान **पातम् =** प्राप्त, रक्षण को, **प्रतराम् =** तारने वाले को **अस्मिन् =** इस **क्षये =** निवास में, क्षय में **आ =** समन्तात्, सम्यक् **दधीत =** धारण किया **॥ 9 ॥**

पदार्थ -आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सखायः =** मित्र (सख् = मित्र होना)। **सख्या =** सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **ववृत्युः =** वरण किया, दूर किया, विवृत किया (वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **तिरः =** तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। **पुरू =** पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चित् =** चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **अर्णवाम् =** अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **जगम्याः =** चलें, ग्रहण करें (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **पितुः =** पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **न =** नहीं, के समान (अव्यय)। **पातम् =** रक्षा करो, पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दधीत =** धारण करे, धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **वेधा =** विद्वान्, विधान करने वाले **अस्मिन् =** इस, इसमें **क्षये =** निवास में, क्षय में (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **प्रतराम् =** तारने वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तृ - पार जाना, तैरना, जीतना)। **दीद्यानः =** प्रकाशवान् हुये (द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना) **॥ 9 ॥**

341. को अद्य युङ्क्ते धुरि गाः ऋतस्य,शिमीवतो भामिनो दुर्ह्णायून्।
आसन् एषाम् अप्सुवाहः मयोभून्, यः एषाम् भृत्याम् ऋणधत् सः जीवात्॥10॥ 1-84-16

मन्त्रार्थ - को = कौन **अद्य =** आज **ऋतस्य =** ऋत का **शिमीवतो** = शिमीवान् **भामिनो =** प्रकाशमान का **धुरि =** धुरी में **दुर्ह्णायून् =** दुःख का हरण करने वाली **गाः =** गान, वाणी को **युङ्क्ते =** युक्त करता है। **एषाम् =** इनके **मयोभून् =** गति-ज्ञान-स्वरूपों को **अप्सुवाहः =** पालन-रक्षण को वहन करने वाले **आसन् =** थे। **यः =** जो **एषाम् =** इनका **भृत्याम् =** भृत्य को, भरण-पोषण को **ऋणधत् =** जाते, जानते, पाते हैं, **सः =** वह **जीवात् =** जीवन हो **॥ 10 ॥**

पदार्थ - को = कौन (सर्वनाम)। **अद्य =** आज (अव्यय)। **युङ्क्ते =** युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। **धुरि =** धुरी (धुर् = मुख्य होना, धुरी होना, व्याप्त होना)। **गाः =** गान, गायक, वाणी को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **ऋतस्य =** ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **शिमीवतो** = शिमीवान् (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, शी - शयन करना)। **भामिनो =** प्रकाशमान प्रकाशित करने वाले (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **दुर्ह्णायून् =** दुःख का हरण करने वाले (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **आसन् =** बैठे हुए, थे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **एषाम् =** इनका (सर्वनाम)। **अप्सुवाहः =** पालन-रक्षण को वहन करने वाले (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, रक्षण करना, वा - गति करना, बहना)। **मयोभून ==** गति-ज्ञान-स्वरूप, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय् - जाना, जानना, पाना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **एषाम् =** इनका (सर्वनाम)। **भृत्याम् =** भृत को (भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **ऋणधत् =** जाते, जानते, पाते हैं (ऋ-ऋण्-ऋणु - जाना, जानना, पाना)। **सः =** वह, उसने। **जीवात् =** जीवन-यापन करता है (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना) **॥ 10 ॥**

(36) सूक्त 12

342. गायन्ति त्वा गायत्रिणो, अर्चन्ति अर्कम् अर्किणः।
ब्रह्माणः त्वा शतक्रतो, उत् वंशम् इव येमिरे॥ 1॥ 1-10-1

मन्त्रार्थ - त्वा = तुमको **गायत्रिणो =** गायत्री, गान, स्तुति करने वाले **गायन्ति =** गाते हैं। **अर्कम् =** अर्क, स्तोता, प्रशंसक को **अर्किणः =** स्तुति करने वाले **अर्चन्ति =** अर्चना करते हैं, पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं। **शतक्रतो =** हे सैकड़ों कर्म करने वाले, **ब्रह्माणः =** बृहत् होने वाले, ब्रह्ममय **त्वा =** तुमको **उत् =** ही **वंशम् =** वंश **इव =** के समान **येमिरे =**

संयुक्त करते हैं, मिलाते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ -**गायन्ति** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गायत्रिणो** = गायत्री, गान, स्तुति (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अर्चन्ति** = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं (अर्च -पूजा करना, मान करना)। **अर्कम्** = अर्क, स्तोता, प्रशंसक को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **अर्किणः** = स्तुति करने वाले (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **ब्रह्माणः** = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वंशम्** = वंश को (वंश् - बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। ॥ 1 ॥

343. इन्द्रम् विश्वा अवीवृधन्, समुद्रव्यचसम् गिरः।
रथीतमम् रथीनाम् वाजानाम्, सत्पतिम् पतिम् ॥ 2 ॥ 1-11-1

मन्त्रार्थ - **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ने **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली, **समुद्रव्यचसम्** = समुद्र, व्यापकतायुक्त, **रथीनाम्** = रथियों में **रथीतमम्** = उत्तम रथी, **वाजानाम्** = विद्या, बल, गतियों में **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक-रक्षक **पतिम्** = पति को, अधिपति को **अवीवृधन्** = वर्धित किया, बढ़ाया ॥ 2 ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अवीवृधन्** = व्यापकता, रक्षा से वर्धित, बढ़ा हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना, वृध् - बढ़ना)। **समुद्रव्यचसम्** = समुद्र, व्यापकतायुक्त को, (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, व्यच् - व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, ठगना, वि - विशेष, अच् - जाना, मरना, आदर करना, याचना करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **रथीतमम्** = उत्तम रथी, उत्तम रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **रथीनाम्** = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 2 ॥

344. इमम् इन्द्र सुतम् पिब, ज्येष्ठम् अमर्त्यम् मदम्।
शुक्रस्य त्वा अभ्यक्षरन्, धारा ऋतस्य सादने ॥ 3 ॥ 1-84-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वा** = तुम **इमम्** = इस **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उ**ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े, **अमर्त्यम्** = अमर्त्य, अमर, **मदम्** = आनन्द, हर्ष, तृप्ति को त्पन्न हुए को **पिब** = पी लो। **शुक्रस्य** = शुक्र का, शुद्ध, पवित्र, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी की **धाराः** = धाराएं, धारण-पोषण-रक्षण **ऋतस्य** = ऋत के **सादने** = स्थापन में **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **अक्षरन्** = क्षरित हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना,

बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **अमर्त्यम् =** अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **मदम् =** मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शुक्रस्य =** शुक्र का, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी का (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **अक्षरन् =** क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। **धाराः =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **ऋतस्य =** ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सादने** = स्थापन में (साद् = जाना, ले जाना, स्थापित करना, होना) **॥ 1 ॥ साम 949**

345. यत् इन्द्र चित्र मे इह, नः अस्ति त्वादातम् अद्रिवः।
राधः तत् नो विदद्वसः, उभया हस्त्या भर ॥ 4 ॥ 5-39-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत् =** जिसे, जो **मे =** मेरे लिए **इह =** यहाँ **चित्र =** चित्र, चेतना, आश्चर्य, (और) **त्वादातम् =** तुमसे प्राप्त **नः =** हमारा **अद्रिवः =** अहिंसक, भोजन **अस्ति =** है। **तत् =** वह **राधः =** शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धियुक्त **विदद्वसः =** धनवान् **उभया =** दोनों, पूर्णताओं द्वारा **हस्त्या =** हाथों द्वारा **नो =** हमारे लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** भरण-पोषण करें, पूर्ण करें **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **चित्र =** चित्र (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **मे =** मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **इह =** इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अस्ति =** है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **त्वादातम् =** प्राप्त, आदान-प्रदान (तु+आदातम्, तु = तो, परन्तु, अब (अव्यय), आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **अद्रिवः =** अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **राधः =** शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विदद्वसः =** लब्धवस, धनवान्, वस को जानने वाले (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, प्राप्त करना, सम्पादित करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **उभया =** दोनों, पूर्णताओं द्वारा (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **हस्त्य =** हाथ (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) **॥ 1 ॥ साम 1172**

346. श्रुधी हवम् तिरश्च्या, इन्द्र यः त्वा सपर्यति।
सुवीर्यस्य गोमतो, रायः पूर्धि महान् असि ॥ 5 ॥ 8-95-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **यः =** जो **श्रुधी =** श्रवणशील (विद्वान्), **त्वा =** तुमको **हवम् =** दान, आह्वान को, **तिरश्च्या =** तिरछा, तिर्यक् **सपर्यति =** सेवा, आराधना करता है, **सुवीर्यस्य =** उत्तम वीरता का **गोमतो =** वाणीयुक्त, मननशीलों के मत वाले का **रायः =** प्रगति, विद्या, वाणी **पूर्धि =** पूर्ण करो। **महान् =** पूज्य, महान् **असि =** हो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- श्रुधी = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम् =** दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **तिरश्च्या =** तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सपर्यति =** सेवा, आराधना करता है (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। **सुवीर्यस्य =** उत्तम वीरता का (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **गोमतो =** गोयुक्त का,

गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **रायः =** गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **पूर्धि =** पूर्ण करो (पृ - पूर् - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **असि =** हो (अस् - होना) **॥ 1 ॥**

347. असावि सोमः इन्द्र ते, शविष्ठ धृष्णो आ गहि।
आ त्वा पृणक्तु इन्द्रियम्, रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ 6 ॥ 1-84-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली **ते =** तुम्हारे लिए **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम ने **असावि =** ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया है। **शविष्ठ =** हे अत्यन्त समीपगामी **धृष्णो =** विजयी **आ =** समन्तात्, सम्यक् **गहि =** प्रगति, ज्ञान, गहन करें। **त्वा =** तुम **इन्द्रियम् =** इन्द्रियों को, ऐश्वर्य को **रजः =** रज को **सूर्यो =** सूर्य **न =** के समान **रश्मिभिः =** किरणों द्वारा **आ =** समन्तात्, सम्यक् **पृणक्तु =** पूर्ण करो ॥ **6** ।

पदार्थ - असावि = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शविष्ठ =** हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) **धृष्णो =** विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गहि =** गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **पृणक्तु =** पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **इन्द्रियम् =** इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **रजः =** रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **सूर्यो =** सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रश्मिभिः =** किरणों से (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना) **॥ 6 ॥**

348. आ इन्द्र याहि हरिभिः, उप कण्वस्य सुष्टुतिम्।
दिवो अमुष्य शासतो, दिवम् यय दिवावसो ॥ 7 ॥ 8-34-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **हरिभिः =** हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा **उप =** समीप **कण्वस्य =** कण्व के, शब्द करने वाले के **सुष्टुतिम् =** सुन्दर स्तुति को **आ याहि =** प्राप्त हों, प्राप्त करें। **दिवावसो =** हे दिव्यवसु, दिव्य आवास वाले, **अमुष्य =** इस **दिवो =** दिव्य **शासतो =** शासनयुक्त **दिवम् =** दिव्यता को **यय =** प्राप्त करो ॥ **7** ॥

पदार्थ -आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **याहि =** जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **हरिभिः =** हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **कण्वस्य =** कण्व, शब्द करने वाले के (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **सुष्टुतिम् =** सुन्दर स्तुति को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **दिवो =** दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अमुष्य =** यह, इसका (सर्वनाम)। **शासतो =** शासन करने वाले (शास् - शासन करना)। **दिवम् =** दिव को,

तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **यय =** प्राप्त करो (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **दिवावसो =** हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 7 ॥

349. आ त्वा गिरो रथीः इव, अस्थुः सुतेषु गिर्वणः।
अभि त्वा सम् अनूषत, गावो वत्सम् न धेनवः ॥ 8 ॥ 8-95-1

मन्त्रार्थ - **गिर्वणः =** हे वाणी, बोध, सिञ्चनयुक्त, **आ =** समन्तात्, सम्यक्, **त्वा =** तुम्हारा **गिरो =** बोध, वाणियाँ, सिञ्चन **रथीः =** रथी **इव =** के समान **सुतेषु =** ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में **आस्थुः =** स्थित है। **धेनवः =** प्रिय, पालक **गावो =** शब्दकर्ता **वत्सम् =** बोलने वाले **न =** के समान **त्वा =** तुमको **अभि =** अभिमुख, विशेष, सर्वथा **सम् =** सम्यक् **अनूषत =** स्तुति किया ॥ 8 ॥

पदार्थ -**आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गिरो =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **रथीः =** रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **अस्थुः =** अस्थि, अस्तित्व का आधार (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)। **सुतेषु =** ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **गिर्वणः =** वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सम् =** सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अनूषत =** अनुताप, स्तुति किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **गावो =** शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वत्सम् =** बोलने वाले को (वद् -वच्- बोलना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः =** धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना) ॥ 8 ॥

350. एत उ नु इन्द्रम् स्तवाम, शुद्धम् शुद्धेन साम्ना।
शुद्धैः उक्थैः वावृध्वांसम्, शुद्धैः आशीर्वान् ममत्तु ॥ 9 ॥ 8-95-7

मन्त्रार्थ - **उ =** निश्चय ही **एत =** प्राप्त हों, आएँ। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही **शुद्धेन =** शुद्ध, पवित्र **साम्ना =** साम द्वारा **शुद्धम् =** शुद्ध, पवित्र **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को **स्तवाम =** स्तवन करो। **शुद्धैः =** शुद्ध, पवित्र **उक्थैः =** उक्तियों द्वारा **वावृध्वांसम् =** वृद्धि करने वाले को **शुद्धैः =** शुद्ध, पवित्र द्वारा **आशीर्वान् =** आशीष युक्त **ममत्तु =** आनन्द दे ॥ 9 ॥

पदार्थ - **एत =** प्राप्त हो, आएँ (इ = जाना, पाना)। **उ =** निश्चय ही, भी। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तवाम =** स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **शुद्धम् =** शुद्ध, पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **शुद्धेन =** शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **साम्ना =** साम द्वारा (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। **शुद्धैः =** शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **उक्थैः =** कहते हैं, एकत्र होते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **वावृध्वांसम्, =** वृद्धि करने वाले को (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **शुद्धैः =** शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **आशीर्वान् =** विशेषताएं, आशीष देने वाले (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप

से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना)। **ममत्तु =** आनन्द दे, हर्षित हों (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) **॥ 9 ॥**

351. यो रयिम् वो रयिन्तमो, यो द्युम्नैः द्युम्नवत्तमः।
सोमः सुतः सः इन्द्र ते, अस्ति स्वधापते मदः॥ 10 ॥ 6-44-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **स्वधापते =** हे स्वधापति, स्वयम्, अपनत्व, आत्मीयता को धारण करने वाले ऐश्वर्यवान्, **वो =** तुम **यो =** जो **रयिन्तमो =** अत्यन्त विद्या, ज्ञान युक्त **रयिम् =** विद्या, ज्ञान को, **यो =** जो **द्युम्नैः =** प्रकाश द्वारा **द्युम्नवत्तमः =** अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (है), **सः =** वह **ते =** तुम्हारे लिए **मदः =** हर्ष, तृप्तिकारक **अस्ति =** है।**॥ 10 ॥**

पदार्थ - यो = जो। **रयिम् =** विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वो =** तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **रयिन्तमो =** विद्या, ज्ञान वाला (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **यो =** जो। **द्युम्नैः =** प्रकाश (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **द्युम्नवत्तमः =** अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सः =** वह, उसने। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अस्ति =** है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **स्वधापते =** हे स्वधापति, स्वयम्, अपनत्व, आत्मीयता को धारण करने वाले ऐश्वर्यवान् (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मदः =** मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)।**॥ 10 ॥**

इति तृतीयो अध्यायः सम्पूर्णः

ॐ

अथ चतुर्थो अध्यायः

ऐन्द्रम् पर्वम् काण्डम् वा

(37) सूक्त 1

352. प्रति अस्मै पिपीषते, विश्वानि विदुषे भर।
अरङ्गमाय जग्मये, अपश्चाद् अध्वने नरः ॥ 1 ॥ 6-42-1

मन्त्रार्थ - **अस्मै** = हमारे **प्रति** = प्रति **पिपीषते** = पीने की इच्छा करता है, **नरः** = नर, प्रेरक (उस) **अरङ्गमाय** = शब्द गामी के लिए, **विदुषे** = विद्वान् के लिए, **अपश्चात्** = पीछे नहीं **अध्वने** = जाने वाले (मार्ग) के लिए, **जग्मये** = प्रगतिशील के लिए **विश्वानि** = सभी **भर** = पोषण-भरण, पूर्ण करें ॥ **1** ॥

पदार्थ - **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **पिपीषते** = पीने की इच्छा करता है (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, पिष् - पीसना, चूर्ण करना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **विदुषे** = विद्वान् के लिए (विद् - समझना, जानना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **अरङ्गमाय** = विद्या, प्रगति, शब्द को जानने, पाने के लिए (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **जग्मये** = गम्य, जाने योग्य, गतिशील के लिए (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **अपश्चात्** = पीछे नहीं (अव्यय)। **अध्वने** = मार्ग के लिए (अधु = चलना, विचरण करना)। **नरः** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना) ॥ **1** ॥

353. आ नो वयो वयो-शयम्, महान्तम् गह्वरेष्ठाम्।
महान्तम् पूर्विनेष्ठाम्, उग्रम् वचो अपावधीः ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **वयो वयाःशयम्** = वय-वय में शयन करने वाले, जानने, वयन, उड्डयन में शयन करने वाले, **महान्तम्** = महान् **गह्वरेष्ठाम्** = घने स्थान में स्थित, भय-हिंसा में स्थित, **महान्तम्** = महान् **पूर्विनेष्ठाम्** = पूर्वस्थित **उग्रम्** = उग्र **वचो** = वचन को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, **अपावधीः** = दूर नष्ट करो ॥ **2** ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वयो** = जानने वाला, वयन, उड्डयन में (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वयाःशयम्** = वया में शयन करने वाले (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना शी-शय् = शयन करना, सोना)। **महान्तम्** = महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) **गह्वरेष्ठाम्** = घने स्थान में स्थित (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, निबिड़ होना, स्था - स्थित होना, ठहरना)। **महान्तम्** = महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) **पूर्विनेष्ठाम्** = पूर्णनिष्ठा को (पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **अपावधीः** = दूर नष्ट करो (अप-दूर, वध्-हन् = मारना) ॥ **2** ॥

354. आ त्वा रथम् यथा ऊतये, सुम्नाय वर्तयामसि।
तुवीकूर्मिम् ऋतीषहम्, इन्द्रम् शविष्ठ सत्पतिम् ॥ 3 ॥ 8-68-1

मन्त्रार्थ - **यथा** = जिस प्रकार **त्वा** = तुम **रथम्** = रथ को **ऊतये** = रक्षा के लिए, **सुम्नाय** = ऐश्वर्य के लिए **आ**

= समन्तात्, सम्यक् **वर्तयामसि** = वर्तमान करते हो, **तुवीकूर्मिम्** = बहुत कर्म करने वाले **ऋतीषहम्** = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित **शविष्ठ** = अत्यन्त बलशाली, समीपगामी **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **इन्द्रम्** = इन्द्र को (**आ** = समन्तात्, सम्यक् **वर्तयामसि** = वर्तमान करते हो)।**। 3।**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सुम्नाय** = ऐश्वर्य के लिए (सु = उत्पन्न कराना, ऐश्वर्य होना)। **वर्तयामसि** = वर्तमान हो (वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **तुवीकूर्मिम्** = बहुत, कर्म करने वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, कृ = करना)। **ऋतीषहम्** = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, ऋती - कृपा करना, दया करना, निन्दा करना, दोष लगाना, घृणा करना, सह -शक्ति-सामर्थ्य होना, साथ होना, तृप्त होना, प्रसन्न होना, सहन करना, सन्तुष्ट होना) **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)**॥ 3 ॥**

355. स पूर्व्यो महोनाम् वेनः, क्रतुभिः आनजे।
यस्य द्वारा मनुः पिता, देवेषु धियः आनजे॥ 4॥ 8-52-1

मन्त्रार्थ - **स** = वह **पूर्व्यो** = पूर्व, प्रथम, मुख्य, **महोनाम्** = महान् जनों का **वेनः** = विद्या, कान्ति **क्रतुभिः** = कर्मशीलों द्वारा **आनजे** = सम्यक् प्राप्त करता है। **यस्य** = जिसके **द्वारा** = द्वारा **मनुः** = विचारशील **पिता** = पिता, पालन करने वाला **देवेषु** = देवों में **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **आनजे** = सम्यक् प्राप्त करता है।**। 4॥**

पदार्थ - **स** = वह, उसने। **पूर्व्यो** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **महोनाम्** = महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वेनः** = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **क्रतुभिः** = क्रतुओं द्वारा (कृ = करना)। **आनजे** = सम्यक् लज्जा में, प्राप्त होते हैं (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नज् - लज्जा करना, नञ्ज् - गति करना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, विस्मरण करना, नाश होना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **द्वारा** = द्वारा (द्वृ-द्वृ - वरण करना, स्वीकार करना, आच्छादन करना, अपनाना, रोकना)। **मनुः** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **आनजे** = सम्यक् लज्जा में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नज् - लज्जा करना)**॥ 4॥**

356. यदि आ वहन्ति आशवो, भ्राजमाना रथेषु आ।
पिबन्तो मदिरम् मधु, तत्र श्रवांसि कृण्वते॥ 5॥

मन्त्रार्थ - **यदि** = यदि **आ** = समन्तात्, सम्यक् **भ्राजमाना** = भ्राजमान, प्रकाशित **आशवो** = आशुगण, आशुगामी, शीघ्रगामी **रथेषु** = रथो में **आ** = समन्तात्, सम्यक् **वहन्ति** = वहन करते हैं। **मधु** = मीठा, मधुर **मदिरम्** = आनन्द को **पिबन्तो** = पीते हुए **तत्र** = वहाँ **श्रवांसि** = श्रुति को, श्रवणीय को **कृण्वते** = करते हैं**॥ 5॥**

पदार्थ - **यदि** = यदि (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वहन्ति** = वहन करते हैं (वह

= वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **आशवो =** अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। **भ्राजमाना =** भ्राजमान, प्रकाशित (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। **रथेषु =** रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पिबन्तो =** पियें, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **मदिरम् =** आनन्दित को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मधु =** मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **तत्र =** वहाँ (सर्वनाम)। **श्रवांसि =** श्रवण (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **कृण्वते =** करते हैं (कृ = करना) **॥ 5 ॥**

357. त्यम् उ वो अप्रहणम्, गृणीषे शवसः पतिम्।
इन्द्रम् विश्वासाहम् नरम्, शचिष्ठम् विश्ववेदसम् ॥ 6 ॥ 6-44-4

मन्त्रार्थ - **उ =** निश्चय ही **वो =** तुम लोग **त्यम् =** उस **अप्रहणम् =** अप्रहार, अहिंसक, प्रहार न करने वाले, **शवसः =** शवस् का, गति, ज्ञान का **पतिम् =** अधिपति, रक्षक, पालक, **विश्वासाहम् =** विश्व को सहन करने में समर्थ, **नरम् =** नर, **शचिष्ठम् =** उत्तम वाणी युक्त, **विश्ववेदसम् =** विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को **गृणीषे =** स्तुति करते हो **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **त्यम् =** उस को (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अप्रहणम् =** अप्रहार, अहिंसक, प्रहार न करने वाले (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, हन् - मारना)। **गृणीषे =** शब्द, स्तुति करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **शवसः =** शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **पतिम् =** पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वासाहम् =** विश्व को सहन करने में समर्थ (विश्व - सभी, सह् - सहन करना, समर्थ होना)। **नरम् =** नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **शचिष्ठम् =** उत्तम वाणी को (शच- स्पष्ट बोलना)। **विश्ववेदसम् =** विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले (विश्व - सभी, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना) **॥ 6 ॥**

358. दधिक्राव्णो अकारिषम्, जिष्णोः अश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखा करत्, प्र ण आयूँषि तारिषत् ॥ 7 ॥ 4-39-6

मन्त्रार्थ - **दधि-क्राव्णो =** धारण, पालन, दान करने वाले, **जिष्णोः =** जिष्णु का, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले, **अश्वस्य =** अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का **वाजिनः =** बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले, वाजयुक्त, विद्यायुक्त ने **अकारिषम् =** किया। **नो =** हमारे लिए **सुरभि =** सुरभि, सुन्दर आनन्द **मुखा =** सम्मुख **करत् =** करते हैं। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **आयूंषि =** आयुषों ने **णः (नः) =** हमारे लिए **तारिषत् =** तार दिया, पार किया **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **दधि-क्राव्णो =** धारण, पालन, दान करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, कृ - करना)। **अकारिषम् =** किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **जिष्णोः =** जिष्णु का, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले का (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, जिष = सेवा करना, प्रोक्षण करना, सींचना।)। **अश्वस्य =** अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **वाजिनः =** बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना,

पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सुरभि** = सुरभि, सुन्दर आनन्द (सु = अच्छा (उपसर्ग)। रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मुखा** = मुख (मुख् - मुख्य होना, जाना, खाना)। **करत्** = करते हुए (कृ - करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **ण** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **आयूंषि** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, ग़ति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **तारिषत्** = चाहा, तार दिया, पार किया (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना, तृष - प्यास लगना, इच्छा करना, उत्कण्ठित होना, चाहना) **॥ 7 ॥**

359. पुराम् भिन्दुः युवा कविः, अमितौजा अजायत।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो, धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥ 8 ॥ 1-11-4

मन्त्रार्थ - **पुराम्** = पुरा को, पुराने को **भिन्दुः** = भेदन करने वाले **युवा** = युवा **कविः** = ज्ञानी, कवि **अमितौजाः** = अमित-ओज वाले, अतुल्य बलवान्, अमित प्रकाशवान् **विश्वस्य** = विश्व, सभी **कर्मणो** = कर्मों का **धर्त्ता** = धारणकर्ता, धारण करने वाला **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान **पुरुष्टुतः** = बहुत स्तुति किया हुआ **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **अजायत** = उत्पन्न हुए **॥ 8 ॥**

पदार्थ :- **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **भिन्दुः** = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **अमितौजाः** = अमित-ओज वाले, अतुल्य बलवान्, अमित प्रकाशवान् (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना, ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना, तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **अजायत** = उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वस्य** = विश्व, सभी, सब का (सर्वनाम)। **कर्मणो** = कर्मों का (कृ - करना)। **धर्त्ता** = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुष्टुतः** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना) **॥ 8 ॥**

(38) सूक्त 2

360. प्रप्र वः त्रिष्टुभम् इषम्, वन्दद्-वीराय इन्दवे।
धिया वो मेधसातये, पुरन्ध्या विवासति ॥ 1 ॥ 8-69-1

मन्त्रार्थ - **प्रप्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वः** = तुम लोग **त्रिष्टुभम्** = त्रिष्टुभ को, **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **वन्दद्-वीराय** = वीर-प्रशंसक, वन्दनीय वीर, वन्दना करने वाले वीर के लिए, **इन्दवे** = इन्दु, परम ऐश्वर्य के लिए **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **वो** = तुम लोग **मेधसातये** = मेधावी-सेवाभावी के लिए **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा **विवासति** = विशेष वास करते हो **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **प्रप्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **त्रिष्टुभम्** = त्रिष्टुभ को (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **वन्दद्-वीराय** = वीर प्रशंसक, वन्दनीय वीर,वन्दना करने वाले वीर के लिए (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **इन्दवे** = इन्दु ऐश्वर्य के लिए (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना,

आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मेधसातये =** मेधावी-सेवाभावी के लिए (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **पुरन्ध्या =** पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर् = आगे जाना, धि-धा = धारण करना)। **विवासति =** विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) **॥ 1 ॥**

361. कश्यपस्य स्वर्विदो, यौ आहुः सयुजौ इति।
ययो विश्वम् अपि व्रतम्, यज्ञम् धीरा निचाय्य ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - कश्यपस्य = कश्यप का **स्वर्विदो =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् **धीरा =** धीर जन, धैर्यवान् लोग **निचाय्य =** चयन कर **यौ =** जो दोनों **सयुजौ =** सहचर, सहयुक्त (हैं), **ययो =** जिनका **विश्वम् =** सब **अपि =** ही **व्रतम् =** व्रत **यज्ञम् =** यजन (है), **इति =** ऐसा **आहुः =** कहा **॥ 2 ॥**

पदार्थ - कश्यपस्य = कश्यप का (कश - प्रकाश होना, शासन करना, दण्ड देना, प्रकाश करना, गति करना, चलना)। **स्वर्विदो =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (स्वर् - शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **यौ =** जो दोनों (सर्वनाम)। **आहुः =** आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना)। **सयुजौ =** सहचरों, साथियों सहित अर्थात् समूह के साथ (स - सहित, साथ, युज - मिलाना, एकत्र करना, मिश्रित करना, अलग करना)। **इति =** ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **ययो =** पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना) **विश्वम् =** सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **अपि =** भी, निकट (अव्यय)। **व्रतम् =** व्रत को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **यज्ञम् =** यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **धीरा =** धीर जन, धैर्यवान् जन, धीर लोग (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धृ - धारण करना, सहना, स्थिर रहना)। **निचाय्य =** चयन कर (नि - निश्चित, निरन्तर, चि = चुनना, चयन करना) **॥ 2 ॥**

362. अर्चत प्रार्चता नरः, प्रियमेधासो अर्चत।
अर्चन्तु पुत्रकाः उत, पुरम् इत् धृष्णु अर्चत ॥ 3 ॥ 8-69-8

मन्त्रार्थ - नरः = हे नर, **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो। **प्रार्चता =** प्रकृष्ट पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो। **प्रियमेधासो =** हे प्रियमेध, प्रियबोधयुक्त, **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो। **पुत्रकाः =** अनेक पुत्रक **उत =** भी **अर्चन्तु =** अर्चना करें। **धृष्णु =** हे विजेता, **पुरम् =** अग्रगामी, अग्रणी को **इत् =** ही **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **॥ 3 ॥**

पदार्थ - अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **प्रार्चता =** प्रकृष्ट पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **नरः =** हे नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **प्रियमेधासो =** हे प्रियमेध, प्रियबोधयुक्त (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **अर्चन्तु =** अर्चना करें (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **पुत्रकाः =** अनेक पुत्रक (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उत =** ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **पुरम् =** पुर को, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **धृष्णु =** विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) **॥ 3 ॥**

363. उक्थम् इन्द्राय शंस्यम्, वर्धनम् पुरु-निःषिधे।
शक्रो यथा सुतेषु नो, रारणत् सख्येषु च॥ 4॥ 1-10-6

मन्त्रार्थ - **पुरु-निःषिधे** = परिपूर्ण, अग्रणी, सिद्ध, अध्येता **इन्द्राय** = इन्द्र, परम ऐश्वर्य के लिए **उक्थम्** = उक्ति, कथन, **शंस्यम्** = स्तुत्य, **वर्धनम्** = वृद्धि (है), **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ ने **यथा** = जिस प्रकार **नो** = हमारे **सुतेषु** = सुतों में, ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में **च** = और **सख्येषु** = मित्रों में **रारणत्** = रण, शब्द, प्रगति किया॥ **4**॥

पदार्थ - **उक्थम्** = उक्ति, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **शंस्यम्** = स्तुत्य को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **वर्धनम्** = बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **पुरु-निःषिधे** = परिपूर्ण, अग्रणी, सिद्ध, अध्येता के लिए (पुर - पूर्व होना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना। सिध- पूरा करना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना, समाप्त होना, चलना, पढ़ना, पढ़ाना)। **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **सुतेषु** = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **रारणत्** = रण, शब्द, प्रगति किया (रण - शब्द करना, जाना)। **सख्येषु** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **च** = और (अव्यय)॥ **4**॥

364. विश्वानरस्य वः पतिम्, अनानतस्य शवसः।
एवैः च चर्षणीनाम्, ऊती हुवे रथानाम्॥ 5॥ 8-68-4

मन्त्रार्थ - **वः** = तुम सबके लिए **अनानतस्य** = अनमित, नहीं झुकने वाले **विश्वानरस्य** = विश्व-नर के **शवसः** = बल, गति, ज्ञान के **पतिम्** = अधिपति, रक्षक, पालक को **एवैः** = प्रगतिशील, विद्वानों द्वारा **च** = और **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों के **रथानाम्** = रथों का **ऊती** = रक्षक **हुवे** = आह्वान, दान, आदान-प्रदान करते हैं॥ **5**॥

पदार्थ - **विश्वानरस्य** = विश्व-नर का (विश्व = सब, नृ = ले जाना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **अनानतस्य** = नही झुके हुये द्वारा (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **शवसः** = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **एवैः** = प्रगतिशील, विद्वानों द्वारा (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना)। **च** = और। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना)। **रथानाम्** = रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, खेलना)॥ **5**॥

365. स घा यः ते दिवो नरो, धिया मर्तस्य शमतः।
ऊती स बृहतो दिवो, द्विषो अंहो न तरति॥ 6॥ 6-2-4

मन्त्रार्थ - **स** = वह **घा** = ही **यः** = जो **ते** = तुम्हारे लिए **दिवो** = स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **नरो** = नर **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **मर्तस्य** = मरणशील का **शमतः** = कल्याणकारी, शमनकारी (है), **स** = वह **ऊती** = शब्द कर्ता, रक्षक, **बृहतो** = महान्, बृहत् **दिवो** = स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (है)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला **अंहो** = कुटिल **न** = नहीं **तरति** = तरते हैं॥ **6**॥

पदार्थ - **स** = वह, उसने। **घा** = ही (अव्यय, निपात)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार

करना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **मर्तस्य** = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **शमतः** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **स** = वह, उसने। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **अंहो** = प्रकाशमान, शब्दकर्ता, कुटिल (अंह् = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तरति** = तैरते हैं, तरते हैं (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना) **॥ 6 ॥**

366. विभोः ते इन्द्र राधसो, विभ्वी रातिः शतक्रतो।
अथा नो विश्वचर्षणे, द्युम्नम् सुदत्र मंहय॥ 7 ॥ 5-38-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **शतक्रतो** = हे सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील, **विभोः** = विभु का **ते** = तुम्हारे लिए **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, दान, वृद्धि का **विभ्वी** = विभु **रातिः** = अनुदान **अथा** = अथ, अब **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **विश्वचर्षणे** = हे सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील, **सुदत्र** = हे सुदत्र, उत्तम दानी **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को **मंहय** = पूजन, सम्मान करो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **विभोः** = विभु का (वि - विशेष, भू - होना, उत्पन्न होना, होना, प्राप्त होना, एकत्र करना, कल्पना करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **विभ्वी** = विभु (वि = विशेष, विना, विलोम, भू - होना, उत्पन्न होना, होना, प्राप्त होना, एकत्र करना, कल्पना करना)। **रातिः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **शतक्रतो** = हे सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। **अथा** = अथ (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **विश्वचर्षणे** = हे सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील, में, के लिए (विश्व - सभी, चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सुदत्र** = हे सुदत्र (सु - उत्तम, अच्छा, दा, दद् = देना)। **मंहय** = महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) **॥ 7 ॥**

367. वयः चित् ते पतत्रिणो, द्विपात् चतुष्पात् अर्जुनि।
उषः प्रारन् ऋतून् अनु, दिवः अन्तेभ्यः परि॥ 8 ॥

मन्त्रार्थ - **अर्जुनि** = लाभप्रद **उषः** = प्रभात, **ते** = तुम्हारे लिए **वयः** = रचनाशील **चित्** = चेतन, **पतत्रिणो** = उड्डयनशील, ऐश्वर्यशाली **द्विपात्** = द्विपद वाले, **चतुष्पात्** = चार पैर वाले **ऋतून्** = ऋतुओं के **अनु** = अनुकूल **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **अन्तेभ्यः** = जीवन के लिए **परि** = सभी ओर **प्रारन्** = प्रगति करते हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **वयः** = वय, रचना (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **चित्** = चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पतत्रिणो** = उड्डयनशील, ऐश्वर्य वाले (पत् = जाना, नीचे जाना, उड़ना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **द्विपात्** = द्विपद वाला (द्वि = दो, संख्या, पद - स्थानान्तर करना, चलना, जाना)। **चतुष्पात्** = चार पैर वाले (चतुः - चार, संख्या, पद - चलना, स्थानान्तर करना)। **अर्जुनि** = लाभ, प्राप्ति (अर्ज - लाभ करना, प्राप्त करना, पाना)। **उषः** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा

करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **प्रारन्** = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् – जाना, फैलाना, ॠ - जाना, चलना, जानना, पाना)। **ऋतून्** = ऋतुओं को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अन्तेभ्यः** = अन्त के लिए (अन्त् - अन्त होना, समाप्त होना, बाँधना, पाना, हिंसा करना, अन् - प्राण होना, चेतन होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग) ॥ **8** ॥

368. अमी ये देवा स्थन मध्ये, आ रोचने दिवः।
कत् वः ऋतम् कत् अमृतम्, का प्रत्ना वः आहुतिः ॥ 9 ॥ 1-105-5

मन्त्रार्थ - **अमी** = ये **ये** = जो **देवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **मध्ये** = मध्य **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, **रोचने** = प्रकाश में **स्थन** = स्थित हैं, **कत्** = कितना **वः** = तुम लोग **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को, **कत्** = कितना **अमृतम्** = अमृत को, **का** = कौन **प्रत्ना** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्ट **वः** = तुम लोग **आहुतिः** = आहुति, दान, आदान-प्रदान, आह्वान, व्यापक (हो) ॥ **9** ॥

पदार्थ - **अमी** = ये (सर्वनाम)। **ये** = जो। **देवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **स्थन** = स्थित हैं (स्था- स्थित होना, ठहरना)। **मध्य** = मध्य (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रोचने** = प्रकाश के लिए (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर (अ - नहीं, मृ = मरना)। **का** = कौन (सर्वनाम)। **प्रत्ना** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **आहुतिः** = आहुति, दान, आदान-प्रदान, आह्वान, व्यापकता (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना) ॥ **9** ॥

369. ऋचम् साम यजामहे, याभ्याम् कर्माणि कृण्वते।
वि ते सदसि राजतो, यज्ञम् देवेषु वक्षतः ॥ 10 ॥ 10-85-11

मन्त्रार्थ - **ऋचम्** = ऋचा को **साम** = साम को **यजामहे** = यजन करते हैं, **याभ्याम्** = जिसके लिए **कर्माणि** = कर्म **कृण्वते** = करते हैं। **ते** = तुम्हारे लिए **सदसि** = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में **वि** = विशेष **राजतो** = प्रकाशित **यज्ञम्** = यजन को **देवेषु** = देवों में **वक्षतः** = पालन-रक्षण करो ॥ **10** ॥

पदार्थ - **ऋचम्** = ऋचा को (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **साम** = साम (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। **यजामहे** = यजन करते हैं (यज् = पूजा करना, देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **याभ्याम्** = जिसके लिए (सर्वनाम)। **कर्माणि** = कर्मों को, कर्म (कृ - करना) **कृण्वते** = करते हैं (कृ = करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सदसि** = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **राजतो** = प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वक्षतः** = वक्ष, पालन करो (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) ॥ **10** ॥

(39) सूक्त 3

370. विश्वाः पृतना अभिभूतरम् नरः, सजूः ततक्षुः इन्द्रम् जजनुः च राजसे।
क्रत्वे वरे स्थेमनि आमुरीम् उत, उग्रम् ओजिष्ठम् तरसम् तरस्विनम्॥1॥8-97-10

मन्त्रार्थ - **विश्वाः** = सब **पृतनाः** = व्यापक, बल वाले **सजूः** = विचारशील, सेवाभावी **नरः** = नर ने **अभिभूतरम्** = अभिभूत करने वाले को **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्य को **राजसे** = राजस् के लिए, प्रकाश के लिए **क्रत्वे** = कृतु के लिए, कर्ता के लिए **वरे** = वरणीय **स्थेमनि** = स्थान में, स्थिति में **आमुरीम्** = घेरने वाले, लपेटने वाले **उत** = और **उग्रम्** = उग्र, **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, **तरस्विनम्** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाले **तरसम्** = रक्षक को **ततक्षुः** = आच्छादित, तीक्ष्ण किया **च** = और **जजनुः** = उत्पन्न किया॥1॥

पदार्थ :- **विश्वाः** = विश्व, सब (विश्व = सभी)। **पृतनाः** = व्यापक, बल वाले (पृत -व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **अभिभूतरम्** = अभिभूत को (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **नरः** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **सजूः** = विचारशील, सेवाभावी, गले लगाने वाला (स - साथ, सहित, संज्-सज् = गले लगाना, सम्बन्धी होना, स + जूः, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **ततक्षुः** = आच्छादित, तीक्ष्ण किया (तक्ष - आच्छादित करना, तीक्ष्ण करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जजनुः** = उत्पन्न, प्रकट करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **च** = और। **राजसे** = राजस् के लिए, प्रकाश के लिए (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **क्रत्वे** = कृतु के लिए, करने वाले के लिए (कृ = करना)। **वरे** = वर में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **स्थेमनि** = स्थान में, स्थिति में (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **आमुरीम्** = घेरने वाले, लपेटने वाले (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः (उपसर्ग), मुर - घेरना, लपेटना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **तरसम्** = तसर को, रक्षक को, खोदने, फेकने, उड़ाने वाले को (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, भेजना, फेकना, उड़ाना, खोदना, कुम्हलाना)। **तरस्विनम्** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाले को (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)॥1॥

371. श्रत् ते दधामि प्रथमाय मन्यवे, अहन् यत् दस्युम् नर्य्यम् विवेः अपः।
उभे यत्वा रोदसी धावताम् अनु, भ्यसात् ते शुष्मात् पृथिवी चित् अद्रिवः॥2॥10-147-1

मन्त्रार्थ - **अद्रिवः** = हे अद्रि, अहिंसक, ग्राही, **ते** = तुम्हारे **प्रथमाय** = प्रथम, विस्तार **मन्यवे** = मन्यु के लिए **श्रत्** = सत्य **दधामि** = धारण करता हूँ। **यत्** = जो **दस्युम्** = दस्यु को, रक्षणीय को, विनाशकारी **नर्य्यम्** = नर्य को, ले जाने योग्य, कोमल को **अहन्** = व्याप्त हुआ, हनन किया। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक **विवेः** = प्रगति करता है, बुनता है। **उभे** = दोनों, पूर्णता **यत्वा** = जिसे, जो, यद्यपि **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **अनु** = पश्चात्, पीछे **धावताम्** = दौड़ते हैं **ते** = तुम्हारे **शुष्मात्** = शुष्म से, सुखाने से **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तार **चित्** = भी **भ्यसात्** = भयभीत हुए॥2॥

पदार्थ - **श्रत्** = सत्य (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दधामि** = धारण करता हूँ (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **प्रथमाय** = प्रथम के लिए, विस्तार करने वाले के लिए (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अहन्** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना,

हन् - मारना, हिंसा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दस्युम्** = दस्यु को, रक्षणीय, को, विनाशकारी को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **नर्य्यम्** = नर्य को, ले जाने योग्य, कोमल को (नृ - ले जाना, नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **विवेः** = प्रगति करता है, बुनता है (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना, वे - बुनना, बटना)। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **यत्वा** = जिसे, जो, यद्यपि (अव्यय)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **धावताम्** = दौड़ते हैं (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **भ्यसात्** = भयभीत हुए (भ्यस - डरना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शुष्मात्** = शुष्म, सुखाने से (शुष् - सुखाना)। **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **चित्** = भी, ही। **अद्रिवः** = हे अद्रि, अहिंसक, ग्राही (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) **॥ 2 ॥**

372. समेत विश्वा ओजसा पतिम् दिवो, यः एक इत् भूः अतिथिः जनानाम्।
स पूर्व्यो नूतनम् आ जिगीषम् तम्, वर्तनीः अनु वावृते एक इत् ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - **विश्वा** = विश्व, सभी **ओजसा** = ओज द्वारा **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक को **समेत** = भलीभांति प्राप्त करो, **यः** = जो **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का **एक** = एक **इत्** = ही **अतिथिः** = अतिथि **भूः** = है। **स** = वह **पूर्व्यो** = पूर्व, **नूतनम्** = नूतन, नवीन (है)। **तम्** = उसको **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **जिगीषम्** = स्तुतिमान **वर्तनीः** = आवर्तमान, आवर्तन, व्यवहार करते हुए **एक** = एक **इत्** = ही **अनु** = पश्चात्, अनुकूल **वावृत** = वर्तमान है **॥ 3 ॥**

भावार्थ - ईश्वर एक ही है। वही पहले है, वही नवीन है, वही विविध रूपों में वर्तमान है **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **समेत** = भलीभांति आओ, साथ आओ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इ - जाना, जानना, पाना,)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **ओजसा** = ओज से (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **भूः** = भू, होना, भुवन, अस्तित्व, हो गया, हुआ (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अतिथिः** = अतिथि (अत् - सतत गमन करना)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **स** = वह, उसने। **पूर्व्यो** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **नूतनम्** = नूतन, नवीन, नये (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना, निश्चय करना, नया करना, नवीन करना, नूतन होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **जिगीषम्** = स्तुतिमान को, स्तुति करने वाले को (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **वर्तनीः** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **वावृते** = वर्तमान है (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय) **॥ 3 ॥**

373. इमे ते इन्द्र ते वयम् पुरुष्टुत, ये त्वा अरभ्य चरामसि प्रभूवसो।
न हि त्वत् अन्यो गिर्वणो गिरः सघत्, क्षोणीः इव प्रति तत् हर्य नो वचः ॥ 4 ॥ 1-57-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **पुरुष्टुत** = हे बहुत स्तुत, **इमे** = यह, **ते** = तुम्हारा, **ते** = तुम्हारे लिए (है)। **प्रभूवसो** = हे प्रभूवसु, प्रभूतवास देने वाले, **वयम्** = हम **ये** = जो **आरभ्य** = आरम्भ करके **त्वा** = तुमको **चरामसि** = विचरण करते हैं। **गिर्वणो** = हे वाणी, बोध, सिञ्चन कर्ता, **त्वत्** = तुमसे **अन्यो** = अन्य **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **न** = नहीं **हि** = ही **सघत्** = दुःख, पीड़ा दे। **क्षोणीः** = गति, ध्वनि करने वाली **इव** = के समान **तत्** = वह **प्रति** = प्रत्येक **हर्य** = हर्य, प्रकाश **नो** = हमारा **वचः** = वचन (है) ॥ **4** ॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **पुरुष्टुत** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **ये** = जो। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **आरभ्य** = आरम्भ करके (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना, आरम्भ करना)। **चरामसि** = विचरण करते हैं (चर -जाना, खाना, आचरण करना)। **प्रभूवसो** = हे प्रभूवसु, प्रभूतवास देने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **अन्यो** = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम)। **गिर्वणो** = हे वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **सघत्** = दुःख, पीड़ा दिया (सघ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। **क्षोणीः** = गति, ध्वनि करने वाली (क्षु - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **हर्य** = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)॥ **4** ॥

374. चर्षणीधृतम् मघवानम् उक्थ्याम्, इन्द्रम् गिरो बृहतीः अभ्यनूषत।
वावृधानम् पुरुहूतम् सुवृक्तिभिः, अमर्त्यम् जरमाणम् दिवे-दिवे॥ 5॥ 3-51-1

मन्त्रार्थ - **बृहतीः** = महान्, बृहत् **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ने **चर्षणीधृतम्** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाले **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **उक्थ्याम्** = कथनीय **वावृधानम्** = वृद्धि करने वाले **सुवृक्तिभिः** = सुवृक्तियों द्वारा **पुरुहूतम्** = पुरुहूत, बहुप्रदत्त, **अमर्त्यम्** = अमर्त्य, **जरमाणम्** = जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व आयु वाले **इन्द्रम्** = इन्द्र को **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन **अभ्यनूषत** = अनुताप किया॥ **5** ॥

पदार्थ - **चर्षणीधृतम्** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाले को (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, धृ - धारण करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **उक्थ्याम्** = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अभ्यनूषत** = अनुताप किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **वावृधानम्** = वृद्धि करने वाले (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सुवृक्तिभिः** = सुवृक्ति

द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, वृक- लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना)। **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **जरमाणम्** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व आयु वाले (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन (अव्यय) ॥ **5** ॥

375. अच्छा वः इन्द्रम् मतयः स्वर्युवः, सध्रीचीः विश्वा उशतीः अनूषत।
परिष्वजन्त जनयो यथा पतिम्, मर्यम् न शुन्ध्युम् मघवानम् ऊतये ॥ 6 ॥ 10-43-1

मन्त्रार्थ - **वः** = तुम लोगों ने **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, स्वच्छ **मतयः** = मतियाँ, मननशक्तियुक्त, **स्वर्युवः** = शब्द, स्तुति करने वाले, **सध्रीचीः** = सहगामी **विश्वा** = विश्व, व्याप्त, व्यापक **उशतीः** = इच्छा करने वाले, कामना करने वाले, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अनूषत** = स्तुति किया। **यथा** = जैसे **जनयो** = जन, लोग **मर्यम्** = मरणशील **न** = के समान **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक **शुन्ध्युम्** = शुद्ध, पवित्र **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को **ऊतये** = रक्षा के लिए **परिष्वजन्त** = आलिंगन करते हैं ॥ **6** ॥

पदार्थ - **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मतयः** = मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **स्वर्युवः** = शब्द, स्तुति करने वाली (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **सध्रीचीः** = सध्रीची, सहस्थान,सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, व्यापक (विश्व = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। विश् = प्रवेश करना, व्याप्त होना, सभी ओर फैलना)। **उशतीः** = उशती, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **अनूषत** = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **परिष्वजन्त** = चारो ओर से घेरते हुए, लपेटते हुए (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्वज - घेरना, लपेटना, आलिङ्गन करना, गले लगाना)। **जनयो** = उत्पन्न करो (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मर्यम्** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शुन्ध्युम्** = शुन्ध्यु शुद्धता, पवित्रता को (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ **6** ॥

376. अभि त्यम् मेषम् पुरुहूतम् ऋग्मियम्, इन्द्रम् गीर्भिः मदता वस्वो अर्णवम्।
यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषम्, भुजे मंहिष्ठम् अभि विप्रम् अर्चत ॥ 7 ॥ 1-51-1

मन्त्रार्थ - **वस्वो** = स्नेहपूर्वक निवास करने **अभि** = अभिमुख, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्यम्** = उस **मेषम्** = मेष को, सिञ्चन, प्रोक्षण करना, स्पर्धा करने वाले **पुरुहूतम्** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, बहुप्रदत्त, **ऋग्मियम्** = ऋचा, प्रशंसा, स्तुति युक्त **अर्णवम्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक **इन्द्रम्** = इन्द्र को **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **मदता** = मद, हर्ष, तृप्ति करो। **यस्य** = जिसका **द्यावो** = अग्रगामी, प्रकाश **न** = के समान, **मानुषम्** = मानुष, मनन करने वाले को **भुजे** = भोग के लिए **विचरन्ति** = विचरण करते हैं। **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित को **अभि** = अभिमुख **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ॥ **7** ॥

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **मेषम्** = मेष को, सिञ्चन, प्रोक्षण करना, स्पर्धा करने वाले को (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना, स्पर्धा करना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **ऋग्मियम्** = ऋचा, प्रशंसा, स्तुति युक्त को (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य

होना)। **गीर्भिः =** वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **मदता =** मद, हर्ष, तृप्ति करो (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वस्वो =** स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अर्णवम् =** अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **यस्य =** जिसका (सर्वनाम)। **द्यावो =** अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विचरन्ति =** विचरण करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम, चर् =-चलना, जाना, विचरण करना, संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **मानुषम् =** मानुष, मनन करने वाले को (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **भुजे =** भक्षण करो, भोग के लिए (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **मंहिष्ठम् =** महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विप्रम् =** विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) **॥ 7 ॥**

377. त्यम् सु मेषम् महया स्वर्विदम्, शतम् यस्य सुभुवः साकम् ईरते।
अत्यम् न वाजम् हवनस्यदम् रथम, इन्द्रम् ववृत्याम् अवसे सुवृक्तिभिः ॥ 8 ॥ 1-52-1

मन्त्रार्थ - त्यम् = उस **सु =** उत्तम **मेषम् =** मेष को **स्वर्विदम् =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् को **महया =** महान्, पूज्य, सम्मान करो **शतम् =** सौ **यस्य =** जिसका **सुभुवः** = अच्छा हो **साकम् =** साथ **ईरते =** कम्पित करता है **अत्यम् =** सतत गमनीय को **न =** नहीं, समान, उपमार्थक **वाजम् =** विद्या को, गति को **हवनस्यदम् =** दान, आदान-प्रदान, तृप्ति, आह्वान करने वाले **रथम् =** रथ को **इन्द्रम् =** इन्द्र को **अवसे =** रक्षा के लिए **सुवृक्तिभिः =** सुवृक्तियों द्वारा, उत्तम आदान द्वारा **ववृत्याम् =** वरण करे **॥ 8 ॥**

पदार्थ - त्यम् = उस को (सर्वनाम)। **सु =** सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **मेषम् =** मेष को (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। **महया =** महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **स्वर्विदम् =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **शतम् =** सौ (सर्वनाम)। **यस्य =** जिसका (सर्वनाम)। **सुभुवः** = अच्छा हो (सु = अच्छा (उपसर्ग)। भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **साकम् =** साथ (अव्यय)। **ईरते =** कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **अत्यम् =** सतत गमनीय को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजम् =** विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **हवनस्यदम् =** दान, आदान-प्रदान, तृप्ति, आह्वान करने वाले (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **रथम् =** रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इन्द्रम् =** इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ववृत्याम् =** वरण करे (वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **अवसे =** रक्षा के लिए **सुवृक्तिभिः =** सुवृक्ति द्वारा, उत्तम आदान (सु - सुन्दर, अच्छा, वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना) **॥ 8 ॥**

378. घृतवती भुवनानाम् अभि श्रिया उर्वी, पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा।

द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा, विष्कभिते अजरे भूरि रेतसा ॥ 9 ॥ 6-70-1

मन्त्रार्थ - **घृतवती** घृतवती, **भुवनानाम्** भुवनों की **अभि श्रिया** अभिश्रिया, **विष्कभिते** विस्तृत **पृथ्वी** पृथ्वी **मधुदुघे** मधु का दोहन करने वाली **उर्वी** सहनशील, समर्थ **सुपेशसा** सुन्दर गति वाली (है)। **द्यावापृथिवी** द्यावा-पृथिवी **वरुणस्य** वरुण के **धर्मणा** धर्म से **अजरे** अजर (और) **भूरि** बहु **रेतसा** रेतस् (है)॥ 9॥

भावार्थ- पृथ्वी तथा द्यावा-पृथिवी हमारे जीवन का आश्रय हैं। पृथ्वी पर तो हमारा प्रत्यक्षतः निवास है ही, द्यावा-पृथिवी अर्थात् सूर्य आदि नक्षत्र तथा पृथिवी जैसे निवास योग्य ग्रह मिलकर ही जीवन को उत्पन्न तथा संरक्षण करने में सक्षम हैं॥ 9॥

पदार्थ :- **घृतवती** = घृतवती (घृ = सींचना, चमकना, प्रकाशित होना)। **भुवनानाम्** = भुवनों की (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **अभि** = सभी ओर। **श्रिया** = अभिश्रिया (श्रि - सेवा करना)। **उर्वी** = सहनशील, समर्थ (उर्वी - सहना, समर्थ होना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। **पृथ्वी** = पृथ्वी (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना)। **मधुदुघे** = मधु का दोहन करने वाली (मध = मीठा होना, मधुर होना, दुह - दुहना)। **सुपेशसा** = सुन्दर गति वाली (सु - सुन्दर, पेश - जाना, भरना)। **द्यावापृथिवी** = आगे जाकर विस्तार करना, द्यावा और पृथिवी (द्यु = आगे जाना, प्रकाश होना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना)। **विष्कभिते** = विस्तृत (विष - व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **अजरे** = अजर (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, अ - नहीं, जृ - जीर्ण होना)। **भूरि** = बहुत। **रेतसा** = रेतस् (रि = जाना, जानना, पाना) **॥ 9 ॥**

379. उभे यत् इन्द्र रोदसी, आ पप्राथ उषा इव।
महान्तम् त्वा महीनाम्, सम्राजम् चर्षणीनाम्।
देवी जनित्री अजीजनत्, भद्रा जनित्री अजीजनत् ॥ 10 ॥ 10-134-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जो **उभे** = दोनो **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **उषा** = प्रभात **इव** = के समान **पप्राथ** = व्याप्त किया, **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **महीनाम्** = पूजनीय, महिमावानों में **महान्तम्** = महान्, **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों में **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान, **देवी** = दिव्य **जनित्री** = उत्पादक ने **अजीजनत्** = उत्पन्न किया। **भद्रा** = कल्याणकारी **जनित्री** = उत्पादक ने **अजीजनत्** = उत्पन्न किया **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पप्राथ** = व्याप्त किया (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **उषा** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **महान्तम्** = महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **महीनाम्** = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **देवी** = हे देवी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जनित्री** = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **भद्रा** = कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **जनित्री** = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न

करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥ 10 ॥

380. प्र मन्दिने पितुमत् अर्चत आ वचो, यः कृष्णगर्भा निरहन् ऋजिश्वना।
अवस्यवो वृषणम् वज्रदक्षिणम्, मरुत्वन्तम् सख्याय हुवेमहि ॥ 11 ॥ 1-101-2

मन्त्रार्थ - **पितुमत् =** हे गति, ज्ञानयुक्त, **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मन्दिने =** आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान के लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक् **वचो =** वचन को **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो। **यः** = जो। **कृष्णगर्भा =** कृष्णगर्भ वाले, आकर्षणयुक्त **ऋजिश्वना =** बलिष्ठो द्वारा **निरहन् =** निश्चित रूप से, निरन्तर हनन किया। **अवस्यवो =** रक्षा की कामना वाले **वृषणम् =** पराक्रमी, **वज्रदक्षिणम् =** वज्र में दक्ष, गति में दक्ष, **मरुत्वन्तम् =** मरुत्वान्, मरुत् युक्त, मरणशील युक्त को **सख्याय =** सखाभाव, मित्रता के लिए **हुवेमहि =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं।**॥ 11 ॥**

पदार्थ - **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मन्दिने =** आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान के लिए (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **पितुमत् =** पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **अर्चत =** पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वचो =** वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **यः** = जो। **कृष्णगर्भा =** कृष्णगर्भ वाले, आकर्षण वाले (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना, गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्तःवास करना)। **निरहन् =** निश्चित रूप से, निरन्तर हनन किया (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, हन् - मारना)। **ऋजिश्वना =** बलिष्ठो द्वारा (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अवस्यवो =** रक्षा करने वाले (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वृषणम् =** पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वज्रदक्षिणम् =** वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को (वज् - गति करना, जाना, दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **मरुत्वन्तम् =** मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सख्याय =** सखाभाव, मित्रता के लिए, मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। **हुवेमहि =** आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) **॥ 11 ॥**

(40) सूक्त 4

381. इन्द्र सुतेषु सोमेषु, क्रतुम् पुनीषे उक्थ्यम्।
विदे वृधस्य दक्षस्य महान् हि षः ॥ 1 ॥ 8-13-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **सुतेषु =** ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न **सोमेषु =** सोमों में, सौम्यताओं में, श्रद्धा व उपकार भावनाओं में **क्रतुम् =** कर्मशील को **उक्थ्यम् =** कथनीय को **पुनीषे =** पवित्र करते हो। **षः =** वह **महान् =** बड़े, पूज्य, महान् **हि =** ही **वृधस्य =** वृद्धिशील, **दक्षस्य =** दक्ष का **विदे =** जानवे वाला है **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सुतेषु =** ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमेषु =** सोमों में, सौम्यताओं में, श्रद्धा व उपकार की भावनाओं में (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू =

प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **पुनीषे** = पवित्र करते हो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उक्थ्यम्** = कथनीय को (उक् - उच्- वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **विदे** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **वृधस्य** = वृद्धि का (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **दक्षस्य** = दक्ष का (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **षः** = वह, उसने (सर्वनाम) **॥ 1 ॥**

382. तम् उ अभि प्र गायत, पुरुहूतम् पुरुष्टुतम्।
इन्द्रम् गीर्भिः तविषम् आ विवासत ॥ 2 ॥ 8-15-1

मन्त्रार्थ - **तम्** = उस **पुरुहूतम्** = पुरुहूत, अग्र-दत्त **पुरुष्टुतम्** = बहुस्तुतियुक्त को **उ** = निश्चय ही **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत** = गायन करो। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **तविषम्** = गति, वृद्धि, प्रकाशयुक्त को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, **विवासत** = विशेष वास करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पुरुष्टुतम्** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति करो (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तविषम्** = तविषी को, गति, वृद्धि, हिंसा, प्रकाशमान को (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **विवासत** = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) **॥ 2 ॥**

383. तम् ते मदम् गृणीमसि, वृषणम् पृक्षु सासहिम्।
उ लोककृत्नुम् अद्रिवो हरिश्रियम् ॥ 3 ॥ 8-15-4

मन्त्रार्थ - **अद्रिवो** = अद्रि, अहिंसक **तम्** = उस **ते** = तुम्हारे **मदम्** = मद, हर्ष, तृप्ति, **वृषणम्** = पराक्रमी, वर्षा करने वाले, **पृक्षु** = सम्पर्क, मिलन में **सासहिम्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ठ, सहने वाले **उ** = निश्चय ही **लोककृत्नुम्** = लोककर्ता, **हरिश्रियम्** = ले जाने वाले श्रेय को **गृणीमसि** = अभिसिंचित करते हैं, प्रशंसा करते हैं **॥ 3 ॥**

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **गृणीमसि** = शब्द करते हैं, अभिसिंचित करते हैं, प्रशंसा करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पृक्षु** = सम्पर्क (पृक् - मिलना)। **सासहिम्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ठ, सहने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना,

तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना, प्रसन्न होना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **लोककृत्नुम्** = लोककर्ता, लोगों द्वारा किया गया (लोक् = देखना, प्रकाशित होना, बोलना, कृ = करना)। **अद्रिवो** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **हरिश्रियम्** = ले जाने वाले श्रिय को, हरण करने वाले श्रिय को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना, श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 3 ॥

384. यत् सोमम् इन्द्र विष्णवि, यत् वा घ त्रिते आप्त्ये।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे सम् इन्दुभिः ॥ 4 ॥ 8-12-16

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यत्** = जिस **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्य-सृजन को **विष्णवि** = व्यापक में, **यत्** = जो **वा** = अथवा **घ** = ही **त्रिते** = त्रिविध **आप्त्ये** = व्यापकता के लिए **यद्वा** = जो **मरुत्सु** = मरुतों में, मरणशीलों में **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **इन्दुभिः** = परम ऐश्वर्य द्वारा **मन्दसे** = आनन्दित होते हो ॥ 4 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विष्णवि** = विस्तृत, व्यापक (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **घ** = ही, भी (अव्यय, निपात)। **त्रिते** = त्रित, तीन के लिए (संख्या, सर्वनाम)। **आप्त्ये** = आप, व्याप्त, व्यापक के लिए (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **यद्वा** = जिसे, जो, यद्यपि (अव्यय)। **मरुत्सु** = मरुत्, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **मन्दसे** = आनन्दित होते हो, विनाश करते हो (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **इन्दुभिः** = परम ऐश्वर्य द्वारा (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 4 ॥

385. आ इत् उ मधोः मदिन्तरम्, सिञ्च आ अध्वर्यो अन्धसः।
एवा हि वीर स्तवते सदावृधः ॥ 5 ॥ 8-24-16

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात् **इत्** = ही **उ** = निश्चय **मदिन्तरम्** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले **मधोः**= मधु का **सिञ्च** = सिञ्चन करो। **आ** = समन्तात्, सम्यक् **अध्वर्यो** = हे अध्वर्य, अहिंसनीय **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से **एवा** = ही **हि** = ही, निश्चय **वीर** = पराक्रमी, वीर **सदावृधः** = सदा वर्धित, बढ़ने वाले **स्तवते** = स्तुति करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इत्** = ही (अव्यय)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **मधोः** = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदिन्तरम्** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सिञ्च** = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **अध्वर्यो** = हे अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **एवा** = ही (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वीर** = पराक्रमी, वीर को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **स्तवते** = स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **सदावृधः** = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 5 ॥ **साम 1684**

386. आ इन्दुम् इन्द्राय सिञ्चत, पिबाति सोम्यम् मधु।
प्र राधांसि चोदयते महित्वना ॥ 6 ॥ 8-24-13

मन्त्रार्थ - **इन्दुम्** = इन्दु, परमेश्वरीय को **इन्द्राय** = इन्द्र, परमेश्वर के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक् **सिञ्चत** = सिञ्चन करो। **सोम्यम्** = सौम्य, ऐश्वर्य की **मधु** = मीठा, मधु **पिबाति** = पान, संरक्षण करते हैं। **राधांसि** = वृद्धियों को **महित्वना** = महत्व, महत्ता द्वारा **प्र** = प्रकृष्ट **चोदयते** = प्रेरित करता है **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्दुम्** = इन्दु, ऐश्वर्यवान को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सिञ्चत** = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **पिबाति** = पान, संरक्षण करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोम्यम्** = सौम्य, ऐश्वर्य की (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **राधांसि** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **चोदयते** = प्रेरित किया (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **महित्वना** = महित्व द्वारा (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) **॥ 6 ॥**

387. एतो नु इन्द्रम् स्तवाम, सखायः स्तोम्यम् नरम्।
कृष्टीः यो विश्वा अभ्यस्ति एक इत् ॥ 7 ॥ 8-24-19

मन्त्रार्थ - **एतो** = प्राप्त हो, आएँ। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **सखायः** = मित्रगण **स्तोम्यम्** = स्तुतियोग्य **नरम्** = नर **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **स्तवाम** = स्तुति करते हैं, **यो** = जो **एक** = एक **इत्** = ही **कृष्टीः** = कृष्टि, कर्षण करने वाले **विश्वा** = सभी **अभ्यस्ति** = सभी ओर विद्यमान है, प्रकाशमान है **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **एतो** = प्राप्त हो, आएँ (इ = जाना, पाना)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तवाम** = स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **सखायः** = हे मित्र (सख् = मित्र होना)। **स्तोम्यम्** = स्तोम, स्तुति को (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **कृष्टीः** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। **यो** = जो। **विश्वा** = सभी, सब (सर्वनाम)। **अभ्यस्ति** = सभी ओर प्रगति करते हैं, विद्यमान है, प्रकाशमान है (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), अस् - होना, रहना, जाना, लेना, चमकाना, फेंकना, बिखेरना, उड़ाना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय) **॥ 7 ॥**

388. इन्द्राय साम गायत, विप्राय बृहते बृहत्।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥ 8 ॥ 8-98-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **विप्राय** = विशेष पूर्ण कर्ता के लिए, **ब्रह्मकृते** = बृहत् कर्ता, शब्दकर्ता के लिए **विपश्चिते** = प्रेरित करने वाले के लिए **पनस्यवे** = प्रशंसा, स्तुतियोग्य के लिए **बृहते** = महान्, बृहत् के लिए **बृहत्** = महान्, बृहत् **साम** = साम **गायत** = गाओ, गायन करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **साम** = हे साम (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करो (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **विप्राय** = विप्र के लिए (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **ब्रह्मकृते** = ब्रह्मकृत, शब्दकर्ता के लिए (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, कृ = करना)। **विपश्चिते** = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त के लिए

(विप् = प्रेरित करना)। **पनस्यवे** = प्रशंसा, स्तुति के लिए (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)॥

389. यः एक इत् विदयते, वसु मर्ताय दाशुषे।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग॥ 9॥ 1-84-7

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **एक** = एक **इत्** = ही **वसु** = स्नेहपूर्वक निवास करने, वास देने वाले **अङ्ग** = अंग, विद्वान्, प्रगतिशील, **ईशानो** = शासन करने वाला **अप्रतिष्कुतः** = अप्रतिष्कुत, प्रतिकूल शब्दहीन, **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **मर्ताय** = मरणशील **दाशुषे** = दानी के लिए **विदयते** = ज्ञान देते हैं॥ **9**॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **विदयते** = विशेष देते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **मर्ताय** = मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **ईशानो** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **अप्रतिष्कुत** = अप्रतिष्कुत, प्रतिकूल शब्द हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु – शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौंरे के समान शब्द करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)॥ **9**॥

390. सखायः आ शिषामहे, ब्रह्म इन्द्राय वज्रिणे।
स्तुषे उ षु वो नृतमाय धृष्णवे॥ 10॥ 8-24-1

मन्त्रार्थ - **सखायः** = सखागण, **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बृहत् **वज्रिणे** = वज्रयुक्त, गतिमान के लिए **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक् **शिषामहे** = अनुशासन करते हैं। **उ** = निश्चय ही **षु** = उत्तम, **वो** = तुम सब **नृतमाय** = उत्तम नर, श्रेष्ठजन **धृष्णवे** = विजयी के लिए **स्तुषे** = स्तुति करते हैं॥ **10**॥

पदार्थ - **सखाय** = हे मित्र (सख् = मित्र होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **शिषामहे** = शिष द्वारा, प्रयोजन द्वारा, अनुशासन द्वारा (शिष् - प्रयोजन करना, शेष रखना, अनुशासन करना, आशीर्वाद देना, हिंसा करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **स्तुषे** = स्तुति करते हैं (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **नृतमाय** = नरों में उत्तम, श्रेष्ठजन (नृ - ले जाना)। **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)॥ **10**॥

(41) सूक्त 5

391. गृणे तत् इन्द्र ते शवः, उपमाम् देवतातये।
यत् हंसि वृत्रम् ओजसा शचीपते॥ 1॥ 8-62-8

मन्त्रार्थ - **शचीपते** = हे उत्तम वाणीयुक्त, ऐश्वर्यवान्, स्वामी, **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **तत्** =उस **ते** = तुम्हारे **शवः** = शव, गति, ज्ञान, **उपमाम्** = उपमा को **देवतातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए **गृणे** = बोध, अभिसिंचन, शब्द करता हूँ, **यत्** = जो **वृत्रम्** = हिंसा को **ओजसा** = ओज द्वारा **हंसि** = हनन करते हो, नष्ट करते हो॥ **1**॥

पदार्थ - **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं, शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शवः** = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले

में देना, विकार होना)। **उपमाम्** = उपमा को (उप- सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) **देवतातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **शचीपते** = हे उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी (शच- स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) **॥ 1 ॥**

392. यस्य त्यत् शम्बरम् मदे, दिवोदासाय रन्धयन्।
अयम् स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥ 2 ॥ 6-43-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **यस्य** = जिसके **त्यत्** = उस **मदे** = आनन्द में **दिवोदासाय** = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए **शम्बरम्** = शम्बर को, कल्याणकारी को **रन्धयन्** = आराधन करते हुए **अयम्** = यह **ते** = तुम्हारे लिए **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए, **स** = वह **सोमः** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता **पिब** = पी लो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **शम्बरम्** = शम्बर को, कल्याणकारी को (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, बृ - ढकना, आच्छादित करना)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **दिवोदासाय** = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **रन्धयन्** = हिंसा करता है (रन = अलग करना, मिलाना, रध – पूरा करना, समाप्त करना, अपकार करना, मार डालना या दुःख देना, पक्व होना, पकना, शुद्ध होना, निर्दोष होना, गलती न करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **स** = वह, उसने। **सोमः** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, ऐश्वर्य होना अमानवी पराक्रम होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) **॥ 2 ॥**

393. आ इन्द्र नो गधि प्रिय, सत्राजित् अगोह्य।
गिरिः न विश्वतः पृथुः पतिः दिवः ॥ 3 ॥ 8-98-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **प्रिय** = हे प्रिय **सत्राजित्** = हे विस्तार के विजेता, **अगोह्य** = हे अहिंसनीय, अनावरणीय, अगम्य **गिरिः** = स्तुति, वाणी **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक **नो** = हमारे लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक् **गधि** = मिश्रित करो, मिलाओ **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गधि** = मिश्रित करो, मिलाओ (गध् - मिश्रित होना, मिल जाना, मिश्रित करना, मिलाना)। **प्रिय** = हे प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **सत्राजित्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी, विजेता (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अगोह्य** = हे अहिंसनीय, अनावरणीय, न छिपाने योग्य, अगम्य (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गुह - गति करना, छिपाना, वस्त्रादि से ढांकना, हिंसा करना)। **गिरिः** = स्तुति, वाणी (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विश्वतः** = सबसे,

विश्व से (सर्वनाम)। **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥

394. यः इन्द्र सोमपातमो, मदः शविष्ठ चेतति।
येन आहंसि नि अत्रिणम् तम् ईमहे ॥ 4 ॥ 8-12-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **सोमपातमो** = हे अत्यन्त सोमपालक **शविष्ठ** = हे अत्यन्त समीपगामी, बलिष्ठ, **यः** = जो **मदः** = हर्ष, तृप्ति **चेतति** = चेतता है, चुनता है, **येन** = जिसके द्वारा **अत्रिणम्** = खाने वाले को, विनाशकारी को **नि** = निश्चित, निरन्तर **आहंसि** = नष्ट करते हो, **तम्** = उसे **ईमहे** = जानते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमपातमो** = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शविष्ठ** = हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **चेतति** = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **येन** = जिससे, जिसके द्वारा। **आहंसि** = नष्ट करते हो (हन् - मारना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना। अद्-अत् = खाना, नष्ट करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ईमहे** = जाते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 4 ॥

395. तुचे तुनाय तत् सु नो, द्राघीयः आयुः जीवसे।
आदित्यासः समहसः कृणोतन ॥ 5 ॥ 8-18-18

मन्त्रार्थ - **आदित्यासः** = आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी **समहसः** = सम्यक् व्याप्त **नो** = हमको **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश के लिए **तुनाय** = गति, वृद्धि, पूर्णता के लिए **जीवसे** = जीवन के लिए **तत्** = वह **सु** = उत्तम **द्राघीयः** = समर्थ, सरल **आयुः** = आयु **कृणोतन** = करे ॥ 5 ॥

पदार्थ - **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश के लिए (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **तुनाय** = गति, वृद्धि, पूर्ण करने के लिए (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सु** = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **द्राघीय** = समर्थ, सरल, सूचना देने वाले (द्राघ - सामर्थ्य होना, तानना, लम्बा करना, सूचना करना, पीडा होना, सरल होना)। **आयुः** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, ग़ति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **आदित्यासः** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **समहसः** = सम्यक् व्याप्त (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अह्-अह्नु - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, व्याप्त होना, विस्तार करना, अर्पण करना, समर्पण करना, देना, हस्-हंस् = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **कृणोतन** = करो (कृ = करना) ॥ 5 ॥

396. वेत्था हि निर्ऋतीनाम्, वज्रहस्त परिवृजम्।
अहरहः शुन्ध्युः परिपदाम् इव ॥ 6 ॥ 8-24-24

मन्त्रार्थ - **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, प्रगतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, **निर्ऋतीनाम्** = ऋतहीनों का **परिवृजम्** = परिवृज को, सब ओर वर्जित को **अहरहः** = व्यापक, दिनोदिन **हि** = ही **शुन्ध्युः** = शुद्ध, पवित्र **परिपदाम्** = सब ओर

प्रगतिशील **इव** = के समान **वेत्था** = जानते हो, विद्यमान हो ॥ 6 ॥

पदार्थ - **वेत्था** = जानें, जानते हो (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **निर्ऋतीनाम्** = ऋतहीनों का (निः - विना, बाहर, निश्चित, नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, हिंसा करना)। **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **परिवृजम्** = परिवृज को, सब ओर वर्जित को (परि - सब ओर, वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **अहरहः** = व्यापक, दिनोदिन (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **शुन्ध्युः** = शुन्ध्यू, शुद्ध होना, पवित्र होना (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **परिपदाम्** = सब ओर प्रगतिशील को (परि - सब ओर, पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। ॥ 6 ॥

397. अप अमीवाम् अप स्त्रिधम्, अप सेधत दुर्मतिम्।
आदित्यासो युयोतना नो अंहस ॥ 7 ॥ 8-18-10

मन्त्रार्थ - **अमीवाम्** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक, रोग को **अप** = दूर, **स्त्रिधम्** = हिंसक को **अप** = दूर, **दुर्मतिम्** = दुर्मति को **अप** = दूर **सेधत** = सिद्ध करो (ले जाओ)। **आदित्यासो** = हे आदित्यगण, अक्षय-अविनाशी **नो** = हमको **अंहस** = प्रकाशमान से **युयोतना** = मिलाये ॥ 7 ॥

पदार्थ - **अप** = दूर, नीचे, अपकार करो (उपसर्ग)। **अमीवाम्** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक, रोग को (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार करो (उपसर्ग)। **स्त्रिधम्** = स्त्रिध, हिंसा करने वाले को (सृधु - मर्दन करना, सम्पीडन करना, । सृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, स्रु = जाना, जानना, पाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **सेधत** = सिद्ध हो (सिध् = जाना, सिद्ध होना)। **दुर्मतिम्** = दुर्मति को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, मन् - मनन करना, विचार करना, जानना, समझना)। **आदित्यासो** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **युयोतना** = अलग करे, मिलाये (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अंहस** = प्रकाशमान से (अंह् = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना) ॥ 7 ॥

398. पिबा सोमम् इन्द्र मन्दतु त्वा, यम् ते सुषाव हर्यश्व अद्रिः।
सोतुः बाहुभ्याम् सुयतो न अर्वा ॥ 8 ॥ 7-22-1

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **हर्यश्व** = हे हर्यश्व, हरणशील, **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **पिबा** = पियो, पान करें, **त्वा** = तुमको **मन्दतु** = आनन्दित करे, प्रकाशित करे, **यम्** = जिसे **ते** = तुम्हारे लिए **अद्रिः** = अद्रि, अहिंसक **सोतुः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, आसवन करने वाले, **बाहुभ्याम्** = दोनों बाहुओं द्वारा **सुयतो** = सुयत्न, उत्तम प्रयत्न करने वाला **न** = के समान **अर्वा** = प्रगतिशील **सुषाव** = सृजित करते हैं ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मन्दतु** = आनन्दित हो प्रकाशित हो (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुषाव** = सृजित करना, आसवन करना (सु - अच्छा, सुन्दर, स - सहित, साथ, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **हर्यश्व** = हे हर्यश्व,

हरणशील (हृ - हरण करना)। **अद्रिः =** अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सोतुः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, आसवन करने वाले (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **बाहुभ्याम् =** दोनों बाहुओं द्वारा, के लिए, प्रयास करने वाले के लिए (बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। **सुयतो =** सुयत्न, उत्तम प्रयत्न करने वाला (सु - अच्छा, सुन्दर, यत -यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अर्वा =** प्रगतिशील (अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) **॥ 8 ॥**

(42) सूक्त 6

399. अभ्रातृव्यो अना त्वम्,अनापिः इन्द्र जनुषा सनात् असि।
युधा इत् आपित्वम् इच्छसे ॥ 1 ॥ 8-21-13

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वम् =** तुम **अभ्रातृव्यो =** भ्रातृव्यहीन, अभरणीय, भरण के अयोग्य, **अना =** जीवन, प्राण, चेतना, **जनुषा =** जनों द्वारा **सनात् =** सेवा से **अनापिः =** अपालित, अरक्षित **असि =** हो। **युधा =** युद्ध करने वाला **इत् =** ही **आपित्वम् =** पालन, रक्षण को **इच्छसे =** इच्छा करता है **॥ 1 ॥**

पदार्थ - अभ्रातृव्यो = भ्रातृव्यहीन, अभरणीय, भरण के अयोग्य (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भृ = भरना, भरण करना, तृ - तरना, पार करना, तैरना)। **अना =** जीवन, प्राण, चेतना (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, अन - चेतन होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **अनापिः =** अनापि, अरक्षित (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, अप- पालन करना, पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जनुषा =** जनों, लोगों, जन्म से (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सनात् =** सेवा से (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **असि =** हो (अस् - होना)। **युधा =** युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **आपित्वम् =** पालन, रक्षण करने को (अप - पालन करना, पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। **इच्छसे =** इच्छा करता है, चाहता है, कामना करता है (इच्छ = इच्छा करना, कामना करना, चाहना) **॥ 1 ॥**

400. यो नः इदम् इदम् पुरा, प्र वस्यः आनिनाय तम् उ व स्तुषे।
सखायः इन्द्रम् ऊतये ॥ 2 ॥ 8-21-9

मन्त्रार्थ - सखायः = हे मित्र, **यो =** जो **पुरा =** पहले **नः =** हमारे लिए **इदम् =** यह **इदम् =** यह **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वस्यः =** वस्य, वसने योग्य, वास, आवास, **आनिनाय =**सम्यक् लाया, **तम् =** उस **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को **ऊतये =** रक्षा के लिए **उ =** निश्चय ही **वः =** तुम लोग **स्तुषे =** स्तुति करते हो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - यो = जो। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इदम् =** यह, इसको (सर्वनाम)। **इदम् =** यह, इसको (सर्वनाम)। **पुरा =** पहले (अव्यय)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वस्यः =** वस्य, वसने योग्य (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आनिनाय =** सम्यक् चेतन किया, जीवन दिया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नी - ले जाना)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **वः =** तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **स्तुषे =** स्तुति करता है (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **सखाय =** हे मित्र (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ऊतये =** रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) **॥ 2 ॥**

401. आ गन्ता मा रिषण्यत, प्रस्थावानो मापस्थात समन्यवः।
दृढाचित् यमयिष्णवः ॥ 3 ॥ 8-20-1

मन्त्रार्थ - आ गन्ता = आओ। **मा =** नहीं, मत **रिषण्यत =** हिंसा करो। **प्रस्थावानो** = हे प्रकृष्ट स्थिति वाले **मा =** नहीं, मत **अपस्थात =** दूर स्थित हो। **समन्यवः =** साथ मनन करने वाले **दृढा =** दृढ़ **चित् =** ही। **यमयिष्णवः =** नियमन करने वाले, पोषण करने वाले (यम - आवरण करना, अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना) **॥ 3 ॥**

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गन्ता =** गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **रिषण्यत =** हिंसा करो (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **प्रस्थावानो** = हे प्रकृष्ट स्थिति वाले (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्थ = स्थित होना, ठहरना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **अप =** दूर (उपसर्ग)। **स्थात =** स्थित हो (स्था- स्थित होना, ठहरना)। **समन्यवः =** साथ मनन करने वाले (स- सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **दृढा =** दृढ़ (दृद्-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना) **चित् =** भी, ही। **यमयिष्णवः =** नियमन करने वाले, पोषण करने वाले हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना) **॥ 3 ॥**

402. आ याहि अयम् इन्दवे, अश्वपते गोपत उर्वरापते। सोमम् सोमपते पिब ॥ 4 ॥ 8-21-3

मन्त्रार्थ - अश्वपते = हे अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक पालक-रक्षक, **गोपते =** हे शब्द करने वालों, मननशीलों के पालक-रक्षक, **उर्वरापते =** हे समर्थ स्वामी, **इन्दवे =** इन्दु, परम ऐश्वर्य के लिए **अयम् =** यह **आ याहि =** प्राप्त करें। **सोमपते =** हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता, सोम के पालक, रक्षक, **सोमम् =** सोम को, सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता को **पिब =** पी लो **॥ 4 ॥**

पदार्थ -आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **याहि =** जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अयम् =** यह (सर्वनाम)। **इन्दवे =** इन्दु, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अश्वपते =** हे अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गति करना)। **गोपते =** हे शब्द करने वालों, मननशीलों के स्वामी (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - ऐश्वर्य होना, गति करना)। **उर्वरापते =** हे समर्थ स्वामी (उर्व = सहना, समर्थ होना, पीड़ा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गति करना)। **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सोमपते =** हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता सोम का पालक, रक्षक (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। **पिब =** पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) **॥ 4 ॥**

403. त्वया ह स्वित् युजा वयम्, प्रति श्वसन्तम् वृषभ ब्रुवीमहि। संस्थे जनस्य गोमतः ॥ 5 ॥ 8-21-11

मन्त्रार्थ - वृषभ = हे वर्षा करने वाले, पराक्रमी, **वयम् =** हम **त्वया =** तुम्हारे द्वारा **ह =** ही **स्वित् =** ही **युजा =** युक्त (हैं)। **गोमतः =** शब्दयुक्त, मननशील **जनस्य =** जन के **संस्थे =** सम्यक् स्थान में **श्वसन्तम् =** श्वसन करने वाले के **प्रति =** सम्बन्ध में **ब्रुवीमहि =** कहतें हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ -त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। **ह =** ही, निश्चय ही (अव्यय)। **स्वित् =** ही (इत् = ही (अव्यय)। **युजा =** युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वयम् =** हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **प्रति =** सम्बन्ध में, विषय

में, प्रत्येक में (अव्यय)। **श्वसन्तम्** = श्वनिन को (शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना, श्वित - श्वेत होना, शुभ्र होना, शो - तीक्ष्ण करना, पैना करना, शान धरना, छील के पैना करना, श्वि = जानना, जाना, बढ़ना)। **वृषभ** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **ब्रुवीमहि** = कहें (ब्रू - कहना, बोलना)। **संस्थे** = संस्था के लिए सम्यक् स्थित को, (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), स्था - स्थित होना, ठहरना)। **जनस्य** = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ **5** ॥

404. गावः चित् घा समन्यवः, सजात्येन मरुतः सबन्धवः।
रिहते ककुभो मिथः ॥ 6 ॥ 8-20-21

मन्त्रार्थ - **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **चित्** = ही **घा** = ही **समन्यवः** = साथ मनन करने वाले **सजात्येन** = सहजन्माओं द्वारा **मरुतः** = मरणशील, मरुत **सबन्धवः** = बन्धु सहित **ककुभो** = ककुभ, गर्वित, धारण करने वाला **मिथः** = एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी **रिहते** = स्तुति, दान करते हैं ॥ **6** ॥

पदार्थ -**गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **चित्** = भी, ही। **घा** = ही (अव्यय, निपात)। **समन्यवः** = साथ मनन करने वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **सजात्येन** = जन्मे लोगों, सहजन्माओं के (स - साथ, सहित, सज्, संज = सम्बन्धी होना, आलिंगन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सबन्धवः** = बन्धु सहित (बन्ध - बांधना)। **रिहते** = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। **ककुभो** = ककुभ, गर्वित, चञ्चल, प्यासा, धारण करने वाला (कक - गर्व करना, चञ्चल होना, प्यासा होना, कुभ- धारण करना, घर्षण करना)। **मिथः** = एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी (मिथ् - समझना, जानना, पीड़ा करना, दुःख देना, एकत्र करना, जोड़ना, जुड़ाना, संयुक्त करना) ॥ **6** ॥

405. त्वम् नः इन्द्र आ भर ओजो, नृम्णम् शतक्रतो विचर्षणे।
आ वीरम् पृतनासहम् ॥ 7 ॥ 8-98-10

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली!, **शतक्रतो** = हे सैकड़ों कर्म करने वाले, अत्यन्त कर्मशीले!, **विचर्षणे** = हे विशेष विचार करने वाले! **त्वम्** = तुम **नः** = हमारे लिए **ओजो** = ओज, **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले, **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वीरम्** = पराक्रमी, वीर, **पृतनासहम्** = व्यापक शक्तिमान, समर्थ बलवान् को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = भरण करो, पूर्ण करो ॥ **7** ॥

पदार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। **विचर्षणे** = हे! विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वीरम्** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **पृतनासहम्** = व्यापक शक्तिमान, समर्थ बलवान् (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ठ होना) ॥ **7** ॥

406. अधा हि इन्द्र गिर्वणः, उप त्वा काम ईमहे ससृग्महे।
उदः इव ग्मन्त उदभिः ॥ 8 ॥ 8-98-7

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली!, **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चनयुक्ते!, **अधा** = अथ, अब **हि** = ही **त्वा**

= तुमको **उप** = समीप **काम** = कामना, इच्छा **ससृग्महे** = सृजन करते हैं, **उदा** = उदा **इव** = के समान **उदभिः** = उदों द्वारा, आद्रों द्वारा **ग्मन्तः** = गति-ज्ञान-ग्रहण करते हुए **ईमहे** = प्राप्त करते हैं, जानते हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ :- अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **काम** = कामना, इच्छा (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **ईमहे** = जाते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **ससृग्महे** = सृजन करते हैं, सरकते हैं, प्राप्त करते हैं (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **उदा** = उदा के समान (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **ग्मन्तः** = गति-ज्ञान-ग्रहण करते हुए (अग् - जाना, जानना, पाना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **उदभिः** = उदों द्वारा, आद्रक को धारण करने वालों द्वारा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना) **॥ 8 ॥**

407. सीदन्तः ते वयो यथा, गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे।
अभि त्वाम् इन्द्र नोनुमः ॥ 9 ॥ 8-21-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली! **सीदन्तः** = प्रतिष्ठित, निवसित **ते** = तुम्हारा **वयो** = वय, रचना, विद्या **यथा** = जैसे **गोश्रीते** = शब्दों द्वारा व्याप्त, आश्रय में, **मधौ** = मधु में, **मदिरे** = आनन्दकर में **विवक्षणे** = विशेष पालन-रक्षण में **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **त्वाम्** = तुम्हारी **नोनुमः** = स्तुति करते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ - सीदन्तः = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **गोश्रीते** = शब्दों द्वारा व्याप्त, आश्रय में (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना,)। **मधौ** = मधु में (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदिरे** = अति आनन्दित करने वाले के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **विवक्षणे** = विशेष पालन-रक्षण में (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नोनुमः** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना) **॥ 9 ॥**

408. वयम् उ त्वाम् अपूर्व्य, स्थूरम् न कच्चित् भरन्तो अवस्यवः।
वज्रिन् चित्रम् हवामहे ॥ 10 ॥ 8-21-1

मन्त्रार्थ - अपूर्व्य = हे अपूर्व!, (जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण!) **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त!, प्रगतिशील!, गतिमानयुक्त!, **वयम्** = हम **उ** = निश्चय ही **स्थूरम्** = स्थूर, स्थूल **न** = के समान **कच्चित्** = किसी, **भरन्तो** = भरण करने वाले **अवस्यवः** = रक्षाकामी, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **त्वाम्** = तुमको **चित्रम्** = चेतन, विचित्र, अद्भुत्, आश्चर्यरूप को **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अपूर्व्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **स्थूरम्** = स्थूर को, स्थूल को (स्था - स्थित होना, ठहरना, स्थूल = मोटा होना, स्थूल होना, शरीर पुष्ट होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कच्चित्** = किसी, कोई (अव्यय)। **भरन्तो** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **अवस्यवः** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (अव् = रक्षा करना, पालन करना, अ = नहीं (उपसर्ग)।

वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वज्रिन् =** वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **चित्रम् =** चित्र को, अद्‌भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **हवामहे =** आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) **॥ 10 ॥**

(43) सूक्त 7 (स्वराज्य सूक्त, वैदिक राष्ट्रगान)

अर्चन् अनु स्वराज्यम्

409. स्वादोः इत्था विषूवतो, मधोः पिबन्ति गौर्यः।
या इन्द्रेण सयावरीः, वृष्णा मदन्ति शोभथा, वस्वीः अनु स्वराज्यम्॥ 1 ॥ 1-84-10

मन्त्रार्थ - गौर्यः = गुरुयोग्य, उद्योगी, प्रयत्नशील, मननशील, विद्वान् **इत्था =** इस प्रकार **स्वादोः =** स्वाद युक्त, **विषूवतो =** व्यापक, **मधोः =** मधु का **पिबन्ति =** पान करते हैं, **याः =** जो **इन्द्रेण =** इन्द्र द्वारा **सयावरीः** = सहगामी **वृष्णा =** पराक्रमी **शोभथा** = शोभित **वस्वीः =** वसुमय, वासयुक्त **अनु =** अनुकूल **स्वराज्यम् =** अपने राज्य को **मदन्ति =** आनन्दित करते हैं **॥ 01 ॥**

पदार्थ :- स्वादोः = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **इत्था =** इस प्रकार (अव्यय)। **विषूवतो =** व्यापक, अभिसिञ्चित (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। **मधोः =** मधु का (मध् = मधुर होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पिबन्ति =** पान करते हैं, पीते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **गौर्यः =** गुरुयोग्य, उद्योगी, प्रयत्नशील, विद्वान्, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना)। **याः =** जो (सर्वनाम)। **इन्द्रेण =** इन्द्र द्वारा (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सयावरीः** = सहगामी (स - सहित, साथ, या - जाना, चलना, गमन करना)। **वृष्णा =** पराक्रमी (वृष - विशिष्ट होना, पराक्रमी होना, वर्षा करना, सींचना, हिंसा करना)। **मदन्ति =** आनन्दित, हर्षित, तृप्त होते हैं (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शोभथा** = शोभित (शुभ - चमकना, प्रकाशित होना, देदीप्यमान होना, शोभा पाना, सुन्दर होना, शोभायमान होना, भाषण करना, बोलना)। **वस्वीः =** वसुमय, वासयुक्त, स्नेहपूर्वक निवास करने, वास देने वाले (वस् = वसना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-हरण करना, आच्छादन करना, कतरना, लेना)। **अनु =** पश्चात्, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम् =** अपने राज्य को, स्वयम् प्रकाशित को (स्व - स्वयम् का, अपना। राज् = चमकना, प्रकाशित, शोभित होना) **॥ 01 ॥**

410. इत्था हि सोम इत् मदो, ब्रह्म चकार वर्धनम्।
शविष्ठ वज्रिन् ओजसा, पृथिव्या निःशशा अहिम्, अर्चन् अनु स्वराज्यम्॥ 2 ॥1-80-1

मन्त्रार्थ - इत्था = इस प्रकार **हि =** ही **सोम =** सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता, **मदो =** आनन्दकारी, **ब्रह्म =** ब्रह्म, महान्, बृहत् ने **इत् =** ही **वर्धनम् =** वृद्धि **चकार =** किया। **शविष्ठ =** बलिष्ठ, अत्यन्त समीपगामी **वज्रिन् =** वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त ने **ओजसा =** ओज द्वारा **पृथिव्या =** पृथ्वी योग्य, पृथिवी पर **अहिम् =** व्यापक **अनु =** अनुकूल **स्वराज्यम्** =स्वराज्य को **अर्चन् =** अर्चना करते हुए **निः =** निरन्तर **शशा =** शासन करो **॥ 02 ॥**

पदार्थ -इत्था = इत्था, इस प्रकार (अव्यय)। **हि =** ही (अव्यय)। **सोम =** सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय = विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **मदो =** आनन्दकारी (मद = आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **चकार** = किया (कृ = करना)। **वर्धनम् =** वृद्धि को (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **शविष्ठ =** अत्यन्त समीपगामी (शव - बल होना, जाना, समीप जाना, आना, चलना)। **वज्रिन् =** वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **ओजसा =**

ओज द्वारा (ओज = शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **पृथिव्या =** पृथ्वी योग्य (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **निः =** बिना, बाहर, निश्चित (उपसर्ग)। **शशा =** शासन करो, कूर्दन करो (शास् = शासन करना, शश् - कूर्दन करना, कूदते हुए चलना)। **अहिम् =** व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, समर्पण करना)। **अर्चन् =** पूजा-अर्चना, सम्मान, सेवा करते हुए (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **अनु =** पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम् =** अपने राज्य को, स्वयम् प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) **॥ 02 ॥**

411. इन्द्रो मदाय वावृधे, शवसे वृत्रहा नृभिः।
तम् इत् महत्सु आजिषु, ऊतिम् अर्भे हवामहे।
सः वाजेषु प्र नो अविषत्, अर्चन् अनु स्वराज्यम् ॥ 3 ॥ 1-81-1

मन्त्रार्थ :- इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली, **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले ने **मदाय =** मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **शवसे =** बल के लिए, प्रगति के लिए **नृभिः =** नरों द्वारा **वावृधे =** वृद्धि किया। **तम् =** उस **ऊतिम् =** रक्षा को, वाणी को **इत् =** ही **महत्सु =** महान् **आजिषु =** विजयों में **अर्भे =** अर्भ में, हिंसा में **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **सः =** वह **नो =** हमारे लिए **वाजेषु =** बलों में **अनु =** अनुकूल **स्वराज्यम् =**स्वराज्य को **अर्चन् =** अर्चना करते हुए **प्र =** प्रकृष्ट **अविषत् =** व्याप्त हुआ **॥ 03 ॥**

पदार्थ :- इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय =** मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वावृधे =** वृद्धि किया (वृध् = वृद्धि करना, **शवसे =** बल के लिए, प्रगति के लिए (शव - बल होना, जाना, चलना)। **वृत्रहा =** वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृत् = हिंसा करना। हन् - हनन करना, मारना, हिंसा करना)। **नृभिः =** नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **इत् =** ही (अव्यय)। **महत्सु =** महानों में (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **आजिषु =** विजयों में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, जि - जीतना, पराभव करना)। **ऊतिम् =** रक्षा को, वाणी को (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ- अव् - रक्षा करना)। **अर्भे =** अर्भ में (ऋभ् = हिंसा करना, ऋ - सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सः =** वह, उसने (सर्वनाम)। **वाजेषु =** वाजों में, बलों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अविषत् =** व्याप्त हुआ, प्रोक्षण किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, विष - उपयोग न होने से अलग करना या निकाल देना, विष - सींचना, प्रोक्षण करना, विष- विविष - व्यापना, फैलना, प्रसृत होना) **॥ 03 ॥**

412. इन्द्र तुभ्यम् इत् अद्रिवो, अनुत्तम् वज्रिन् वीर्यम्।
यत् ह त्यम् मायिनम् मृगम्, तव त्यत् मायया अवधीः, अर्चन् अनु स्वराज्यम् ॥ 4 ॥ 1-80-7

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली! **वज्रिन् =** हे वज्रयुक्त, प्रगतिशील! **तुभ्यम् =** तुम्हारे लिए **इत् =** ही **अद्रिवो =** अहिंसक, ग्राही **अनुत्तम् =** अनाद्र, कष्टहीन, अप्रेरित, अकथित **वीर्यम् =** पराक्रम, वीरता, **यत् =** जो **ह** = निश्चय ही **त्यम् =** उस **मायिनम् =** मायावी **मृगम् =** मृग, अन्वेषी को **तव =** तुम्हारे **त्यत् =** उस **मायया =** माया द्वारा **अनु =** अनुकूल **स्वराज्यम् =** स्वराज्य को **अर्चन् =** अर्चना करते हुए **अवधीः =** वध किया **॥ 4 ॥**

पदार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **तुभ्यम् =** तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इत् =** ही (अव्यय)। **अद्रिवो =** अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना। अद् - खाना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। **अनुत्तम् =** अनाद्र, कष्टहीन, अप्रेरित, अकथित (अन् - नहीं। उद् - आद्र होना, कष्ट होना। नुद् - प्रेरित करना, कहना)। **वज्रिन् =** हे वज्रयुक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना)। **वीर्यम् =** पराक्रम, वीरता को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **यत् =** जो (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)।

त्यम् = उस को (सर्वनाम)। **मायिनम्** = मायावीं को (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मृगम्** = मृग, अन्वेषी को (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **त्यत्** = उस को (सर्वनाम)। **मायया** = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अवधीः** = वध किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वध-हन् - वध करना, मारना, हिंसा करना, गति करना, जाना, जानना, पाना)। **अर्चन्** = पूजा-अर्चना, सम्मान, सेवा करते हुए (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **अनु** = अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयम् प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना। राज् = चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना) **॥ 04 ॥**

413. प्रेहि अभीहि धृष्णुहि, न ते वज्रो नि यंसते।
इन्द्र नृम्णम् हि ते शवो, हनो वृत्रम् जयाः अपो, अर्चन् अनु स्वराज्यम् ॥ 5 ॥ 1-80-3

मन्त्रार्थ - **प्रेहि** = अधिक प्रगति करो। **अभीहि** = सभी ओर प्रगति करो। **धृष्णुहि** = विजय करो। **ते** = तुम्हारा **वज्रो** = वज्र, प्रगति **न** = नहीं **नि यंसते** = नियन्त्रित होता है। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली! **ते** = तुम्हारा **शवो** = बल, प्रगति, ज्ञान **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **अपो** = पालक, रक्षक **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले, नेता **हि** = ही **अनु** = अनुकूल **स्वराज्यम्** =स्वराज्य को **अर्चन्** = अर्चना करते हुए **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को **जयाः** = जीतने वाला, **हनो** = मारने वाला (है) **॥ 05 ॥**

पदार्थ - **प्रेहि** = अधिक प्रगति करो (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ = जाना, जानना, पाना)। **अभीहि** = सभी ओर प्रगति करो (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इ = जाना, जानना, पाना)। **धृष्णुहि** = विजय करो (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **न** = नहीं (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वज्रो** = वज्र, प्रगति (वज् = गति करना, जाना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **यंसते** = नियन्त्रित होता है (यम् - प्रतिबन्ध करना, रोकना, नियन्त्रित करना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले, नेता को (नृ - ले जाना)। **हि** = ही (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शवो** = बल, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना, बल होना, विकार होना)। **हनो** = मारने वाला (हन् = मारना)। **वृत्रम्** = वृत्र को, हिंसा को (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **जयाः** = विजय करो (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, जीतना, पराभव करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **अपो** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **अर्चन्** = पूजा-अर्चना, सम्मान, सेवा करते हुए (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **ननु** = निश्चय ही (अव्यय)। **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) **॥ 05 ॥**

414. यत् उदीरते आजयः, धृष्णवे धीयते धनम्।
युङ्क्ष्व आ मदच्युता हरी, कम् हनः कम् वसौ दधो,
अस्मान् इन्द्र वसौ दधः ॥ 6 ॥ 1-81-3

मन्त्रार्थ :- **यत्** = जो **आजयः** = विजयी **उदीरते** = उच्च गति करते हैं, उत्तम उच्चारण करते हैं, **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए **धनम्** = धन को **धीयते** = धारण करता है, **हरी** = हे हरि, ले जाने वाले, हरण करने वाले, **मदच्युता** = आनन्द-सिंचित में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **युङ्क्ष्व** = युक्त कीजिये। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **कम्** = किसको **हनः** = मारने वाले, **कम्** = किसको **वसौ** = वसु में **दधो** = धारण करने वाले हो, **अस्मान्** = हमको **वसौ** = वसु में **दधः** = धारण करो **॥ 3 ॥**

पदार्थ :- **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **उदीरते** = उत्तम उच्चारण करते हैं (उत्+ईर - कहना बोलना, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना,

फेकना, प्रेरणा करना)। **आजयः =** विजय (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। **धृष्णवे =** विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **धीयते =** धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **धनम् =** धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **युङ्क्ष्व =** युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मदच्युता =** आनन्द-सिंचित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। **हरी =** ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **कम् =** किसको (सर्वनाम)। **हनः =** मारने वाला (हन् - मारना)। **कम् =** किसको (सर्वनाम)। **वसौ =** वसु में (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **दधो =** धारण करने वाला (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) **अस्मान् =** हमें, हमको (सर्वनाम)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वसौ =** वसु में (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **दधः =** धारण करने वाला (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) **॥ 6 ॥**

415. अक्षन् अमीमदन्त हि, अव प्रिया अधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो, विप्रा नविष्ठया मती, योजा नु इन्द्र ते हरी ॥ 7 ॥ 1-82-2

मन्त्रार्थ : अक्षन् हे व्यापक! **अमीमदन्त** आनन्दमय! **अव** रक्षा करो। **प्रिया** प्रियजन **हि** ही **अधूषत** शोभित हुए। **स्वभानवो** स्वप्रकाशयुक्त, **विप्रा** प्रेरित करने वाले, पूर्ण करने वाले, तृप्त करने वाले **मती** विचारशीलों ने **नविष्ठया** नवीनतम द्वारा **अस्तोषत** स्तुति की। **इन्द्र** हे परम ऐश्वर्यवान्! **ते** तुम्हारे लिए **हरी** हरने वाले **नु** शीघ्र **योजा** युक्त होते हैं **॥ 7 ॥**

भावार्थ : अव् धातु के अनेक अर्थ हैं। रक्षा करना, जाना, जानना, कामना करना, प्यार करना, प्रिय होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्दित करना, प्रवेश करना, सुनना, सुनाना, स्वामी होना, आदेश मानना, माँगना, कर्म करना, शोभित होना, प्रकाशित होना, मिलना, पाना, गले लगाना, हिंसा करना, लेना, होना, बढ़ना आदि अर्थों में अव् धातु का प्रयोग होता है। ये सभी गुण या क्षमता परमात्मा में ही सम्भव हैं। नविष्ठ अर्थात् अतिशय नवीन मति से स्पष्ट है कि रूढ़िवादी होना उचित नहीं है, नवीन विचारों को समझने स्वीकार करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। परमात्मा में स्थिति करें, उसी में समाधिस्थ हों **॥ 7 ॥**

पदार्थ : अक्षन् = व्यापक (अक्ष् = व्याप्त होना)। **अमीमदन्त** = आनन्दयुक्त (मद् = आनन्द होना)। **हि** = निश्चय ही (अव्यय)। **अव** = रक्षा करो (अव् = रक्षा करना)। **प्रियाः** = प्रिय (प्री - प्रीति करना)। **अधूषत** =शोभित हुए (धूष् = शोभित होना, कान्ति होना, प्रकाश होना)। **अस्तोषत** = स्तुति की (स्तु = स्तुति-प्रशंसा करना)। **स्वभानवो** = स्वयम् प्रकाशयुक्त (भा = प्रकाश होना)। **विप्रा** = प्रेरित करने वाले, पूर्ण करने वाले, तृप्त करने वाले लोगों ने (वि = विशेष (अव्यय)। विप् = प्रेरित करना। प्रा = पूर्ण करना, तृप्त करना)। **नविष्ठया** =नवीनतम (नव् = नवीन होना)। **मती** = मति वाले (मन् = जानना, समझना)। **योजा** = समाधिस्थ हो, (युज् = समाधि होना)। **नु** = शीघ्र। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा। **हरी** = ले जाने वाले (हृ = ले जाना) **॥ 7 ॥**

416. उप उ षु शृणुही गिरो, मघवन् मा अतथा इव।
कदा नः सूनृतावतः, करः इत् अर्थयासः इत्, योजा नु इन्द्र ते हरी ॥ 8 ॥ 1-82-1

मन्त्रार्थ - मघवन् = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्! **उप =** समीप **उ =** निश्चय ही **षु =** उत्तम **गिरो =** वाणियाँ, बोध **शृणुही =** सुनो **अतथा =** सतत गतिशील **इव =** के समान **मा =** नहीं। **इन्द्र** हे परम ऐश्वर्यवान्! **कदा =** कब **नः =** हमको **सूनृतावतः =** उत्तम ले जाने वाले, **करः =** करने वाले **इत् =** ही **अर्थयासः =** अर्थों को **इत् =** ही **ते** तुम्हारे लिए **हरी**

हरने वाले **नु** शीघ्र **योजा** युक्त होते हैं॥ 8॥

पदार्थ - **उप** = समीप (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **शृणुही** = सुनो (श्रु-शृण् = सुनना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **अतथा** = गतिशील (अत् - चलना, निरन्तर चलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **कदा** = कब (सर्वनाम)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सूनृतावतः** = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना)। **करः** = करता है (कृ - करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अर्थयास** = अर्थों को (अर्थ - मांगना, याचना करना, चाहना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **योजा** = समाधिस्थ हो, सम्बन्धी हो, युक्त करता है (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)॥ 8॥

417. चन्द्रमा अप्सु अन्तरा, सुपर्णो धावते दिवि।
न वो हिरण्यनेमयः, पदम् विन्दन्ति विद्युतो, वित्तम् मे अस्य रोदसी॥ 9॥ 1-105-1

मन्त्रार्थ- **चन्द्रमा** आनन्ददायक **सुपर्णो** सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला **अप्सु** पालन-कर्मों में **दिवि** दिव्यता में **अन्तः** भीतर **आ धावते** दौड़ता है। **रोदसी** = हे रुदन करने वाले, करुणाशील! **वो** = तुम्हारे **हिरण्यनेमयः** = प्रकाशमय **विद्युतो** = विद्युत, प्रकाशमान, **वित्तम्** = दान, **पदम्** = पद को **अस्य** = इस **मे** = मेरे लिए, **न** = नहीं **विन्दन्ति** = प्राप्त करते हैं।॥ 9॥

भावार्थ - परमात्मा आनन्ददायक है, हमको हरा-भरा करने वाला है, वह पालन-कर्मों में तथा दिव्यता अर्थात् दिव्य, श्रेष्ठ कर्मों में भीतर दौड़ता है। इसका भाव है कि यदि हम इ गुणों को धारण करते हैं तो परमात्मा की कृपा, चेतना, प्रकाश स्वयम् हमारे भीतर दौड़ने लगता है।

पदार्थ - **चन्द्रमा** = आनन्ददायक (चन्द् - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना) **सुपर्णो** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना), **अप्सु** = पालन-कर्मों में (अप् - पालन करना) **दिवि** = दिव्यता में (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), **अन्तः** = भीतर **आ** = समन्तात्, **धावते** = दौड़ता है (धाव् - दौड़ना)। न = नहीं (अव्यय)। वो = तुम्हारा (सर्वनाम)। हिरण्यनेमयः = प्रकाशमय। , पदम् = पद को। विन्दन्ति = प्राप्त करते हैं (विन्द = लाभ होना, प्राप्त होना)। विद्युतो = विद्युत, प्रकाशमान (वि = विशेष (अव्यय)। द्युत् = चमकना, प्रकाश होना)। वित्तम् = दान (वित्त - देना)। मे = मेरा (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। रोदसी = रुदन करने वाले, करुणाशील (रुद् - रुदन करना, रोना, रुलाना)।॥ 9॥

418. प्रति प्रियतमम् रथम्, वृषणम् वसुवाहनम्।
स्तोता वाम् अश्विनौ ऋषि, स्तोमेभिः भूषति, प्रति माध्वी मम श्रुतम् हवम्॥ 10।5-75-1

मन्त्रार्थ - **स्तोता** = स्तुतिकर्ता **ऋषि** = ऋषि **प्रियतमम्** = प्रियतम, **वृषणम्** = पराक्रमी, **वसुवाहनम्** = वसु को वहन करने वाले **रथम्** = रथ के **प्रति** = सम्बन्ध में **वाम्** = तुम दोनों **अश्विनौ** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक युगल को **स्तोमेभिः** = प्रशंसाओं, स्तुतियों द्वारा **मम** = मेरे **माध्वी** = माध्वी, मधुरता युक्त **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए **हवम्** = दान, आह्वान, तृप्त के **प्रति** = सम्बन्ध में **भूषति** = भूषित करता है॥ 10॥

पदार्थ -**प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **प्रियतमम्** = प्रियतम को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **रथम्** = रथ को (रम् = जाना, ले जाना, रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या

पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वसुवाहनम् =** वसुवाह को, वसु को वहन करने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **स्तोता =** स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। **वाम् =** तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अश्विनौ =** अश्विन युगल, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **ऋषि =** ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **स्तोमेभिः =** प्रशंसाओं, स्तुतियों द्वारा (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **भूषति =** भूषित हो, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **प्रति =** सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **माध्वी =** माध्वी, मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **मम =** मेरा (सर्वनाम)। **श्रुतम् =** श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम् =** दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) **॥ 10 ॥ साम 1743**

(44) सूक्त 8

419. आ ते अग्ने इधीमहि, द्युमन्तम् देव अजरम्।
यत् ह स्या ते पनीयसी, समित् दीदयति द्यविः,
इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 1 ॥ 5-6-4

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि! **देव =** देव, तेजस्वी! **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ते =** तुम **द्युमन्तम् =** द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को **अजरम् =** अजर **इधीमहि** = गति, ज्ञान, प्रकाश करते हैं। **यत् =** क्योंकि **स्या =** वह **ह** = निश्चय ही **ते =** तुम्हारे लिए **पनीयसी =** प्रशंसा के योग्य **द्यवि =** द्यु में **समिद् =** सम्यक् प्रकाश **दीदयति =** देती है, प्रकाशित करती है। **इषम् =** इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **स्तोतृभ्यः =** स्तुतियों के लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इधीमहि** = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **द्युमन्तम् =** द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **देव =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अजरम् =** अजर को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **स्या =** वह, उसने। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पनीयसी =** प्रशंसा के योग्य (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **समिद् =** भलीभांति ही, सम्यक् प्रकाशित (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **दीदयति =** देती है, प्रकाशित करती है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **द्यवि =** द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **इषम् =** इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **स्तोतृभ्यः =** स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) **॥ 1 ॥**

420. आ अग्निम् न स्ववृक्तिभिः, होतारम् त्वा वृणीमहे।
शीरम् पावकशोचिषम्, वि वो मदे यज्ञेषु,
स्तीर्ण बर्हिषम् विवक्षसे ॥ 2 ॥ 10-21-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **न** = के समान **स्ववृक्तिभिः** = आत्म स्वीकृतियों द्वारा **होतारम्** = होता, दान करने वाले **त्वा** = तुमको **वृणीमहे** = वरण करते हैं। **शीरम्** = शीर, तीक्ष्ण, **पावकशोचिषम्** = पावक-पवित्र **वि** = विशेष **वो** = तुम सबके **मदे** = आनन्द के लिए **यज्ञेषु** = यजनों में **स्तीर्ण-बर्हिषम्** = आच्छादन करने वाले, पूर्ण करने वालों में प्रधान को **विवक्षसे** = विशेष पालन-रक्षण करता है **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्ववृक्तिभिः** = आत्म स्वीकृतियों द्वारा (स्व = निज, अपना। वृक - लेना, मान्य करना, स्वीकार करना,ा)। **होतारम्** = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **शीरम्** = शीर को (शि - तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिर - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना)। **पावकशोचिषम्** = पावक पवित्रता वाले (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **यज्ञेषु** = यजनों में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **स्तीर्ण-बर्हिषम्** = आच्छादन करने वाले, पूर्ण करने वालों में प्रधान, बड़े को (स्तृ = आच्छादित करना, ढकना, फैलाना, ठकना, पूर्ण करना। बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, उठाना, उद्योग करना, शब्द करना, रण करना)। **विवक्षसे** = विशेष पालन-रक्षण करता है (वि = विशेष (उपसर्ग), वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) **॥**

421. महे नो अद्य बोधय, उषो राये दिवित्मती।
यथा चित् नो अबोधय, सत्यश्रवसि वाय्ये, सुजाते अश्वसूनृते॥ 3॥ 5-79-1

मन्त्रार्थ - **महे** = हे महान्, पूज्य, **दिवित्मती** = दिव्यतायुक्त, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **उषो** =उषा, प्रभात, **नो** = हमारे लिए **अद्य** = आज **राये** = विद्या, गतिशीलता प्राप्ति के लिए **बोधय** = बोध करो। **सुजाते** = हे सुजाता, उत्तम सृजनकर्ता, **अश्वसूनृते** = हे तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली, **यथा** = जैसे **चित्** = ही **नो** = हमारे लिए **सत्यश्रवसि** = सत्य वाणी में, **वाय्ये** = प्रगतिशील, रचनाशील में **अबोधय** = बोध कराया था **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **बोधय** = बोध करो (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **उषो** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **दिवित्मती** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **चित्** = भी, ही। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अबोधय** = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। **सत्यश्रवसि** = सत्य वाणी (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वाय्ये** = गतिशील, रचनाशील में (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सुजाते** = सुजात को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), जागृ - जगना, नींद न लेना (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अश्वसूनृते** = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना,

भोजन करना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) **॥ 3 ॥ साम 1740**

422. भद्रम् नो अपि वातय, मनो दक्षम् उत क्रतुम्।
अथा ते सख्ये अन्धसो, वि वो मदे रणा, गावा न यवसे विवक्षसे॥ 4 ॥ 10-20-1

मन्त्रार्थ - **नो** = हमारे लिए **भद्रम्** = कल्याणकारी **अपि** = भी **दक्षम्** = दक्ष **मनो** = मन को **उत** = तथा, उसी प्रकार **क्रतुम्** = कर्म को **वातय** = सुख करो। **अथा** = अथ, अब **ते** = तुम्हारे लिए **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में **अन्धसो** = अन्न, प्राण **वि** = विशेष **वो** = तुम सबको, **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में **रणा** = रण **गावा** = शब्द, वाणी, वचन **न** = के समान **यवसे** = मिश्रित करो, पृथक् करो **विवक्षसे** = विशेष पालन-रक्षण करता है **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अपि** = भी, निकट (अव्यय)। **वातय** = वायु के समान तीव्र गति वाले, वात को (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **मनो** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दक्षम्** = दक्ष को (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **अथा** = अथ (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **रणा** = रण (रण् - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। **गावा** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यवसे** = मिश्रित करो, पृथक् करो (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **विवक्षसे** = विशेष पालन-रक्षण करता है (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) **॥ 4 ॥**

423. क्रत्वा महान् अनुष्वधम्, भीमः आ वावृते शवः।
श्रिये ऋष्व उपाकयोः, नि शिप्री हरिवान् दधे, हस्तयोः वज्रम् आयसम्॥ 5 ॥ 1-81-4

मन्त्रार्थ - **भीमः** = भयंकर **शवः** = बलवान्, प्रगतिशील, ज्ञानी **महान्** = पूज्य, महान् **क्रत्वा** = कर्म द्वारा **अनुष्वधम्** = अनुकूल स्वाद, आत्मधारण को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वावृते** = वरण करता है, वर्तमान होता है। **श्रिये** = श्रेय के लिए, सेवा के लिए **ऋष्वः** = ऋषि **उपाकयोः** = निकटवर्ती विद्वान के **नि** = निरन्तर **शिप्री** = शिप्र, तीव्र **हरिवान्** = हरि युक्त **हस्तयोः** = हाथों में **वज्रम्** = वज्र, प्रगति को **आयसम्** = शब्द, शासन को **दधे** = धारण करते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ -**क्रत्वा** = करें (कृ - करना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अनुष्वधम्** = अनुस्वध को (अनु = पश्चात्, पीछे, स्वद् - स्वाद लेना, प्रदसन्न होना, स्व - अपना, धा - धारण करना)। **भीम** = भयंकर (भी - डरना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वावृते** = वर्तमान है (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **शवः** = बल, शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **श्रिये** = श्रिय के लिए, सेवा के लिए (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **ऋष्व** = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **उपाकयोः** = समीप विद्या में, विद्वान के समीप में (उप - समीप, अक् = जाना, जानना, पाना, वक्र गति होना, कुटिल गति होना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)।

हरिवान् = हरि युक्त (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **दधे =** धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **हस्तयोः =** हाथों का (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **वज्रम् =** वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। **आयसम् =** शब्दकर्ता, शासक प्रगतिशील को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, अय्-ई - जाना) **॥ 5 ॥**

424. स घा तम् वृषणम् रथम्, अधि तिष्ठाति गोविदम्।
यः पात्रम् हारियोजनम्, पूर्णम् इन्द्र चिकेतति, योजा नु इन्द्र ते हरी ॥ 6 ॥ 1-82-4

मन्त्रार्थ - स = वह **घा =** ही **तम् =** उस **वृषणम् =** पराक्रमी **रथम् =** रथ के **अधि =** अधिगत, ऊपर **तिष्ठाति =** प्रतिष्ठित है, **यः =** जो **गोविदम् =** गोविद्, शब्द-ज्ञाता, विद्वान्, **पात्रम् =** पात्र, पालन, रक्षा करने वाले, **हारियोजनम् =** हरि-योजन युक्त, **पूर्णम् =** पूर्ण को **चिकेतति =** जानता है, **इन्द्र** हे परम ऐश्वर्यवान्! **ते** तुम्हारे लिए **हरी** हरने वाले **नु** शीघ्र **योजा** युक्त होते हैं **॥ 6 ॥**

पदार्थ -स = वह, उसने (सर्वनाम)। **घा =** ही, भी (अव्यय, निपात)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **वृषणम् =** पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **रथम् =** रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **तिष्ठाति =** प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। **गोविदम् =** गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना)।। **यः =** जो (सर्वनाम)। **पात्रम् =** पात्र को, पालन, रक्षा करने वाले को, पात्र को (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **हारियोजनम् =** हरि-योजन सम्बन्धी, हरि-मिलन (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना। यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **पूर्णम् =** पूर्ण को (पॄ - पूर् - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **इन्द =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **चिकेतति =** विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना)। **योजा** = समूह, मिलाने वाला, एकत्र करने वाला, सम्बन्ध वाला (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्र =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **हरी =** ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना) **॥ 6 ॥**

425. अग्निम् तम् मन्ये यो वसुः, अस्तम् यम् यन्ति धेनवः।
अस्तम् अर्वन्तः आशवो, अस्तम् नित्यासो वाजिनः, इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 7 ॥ 5-6-1

मन्त्रार्थ - तम् = उस **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **मन्ये =** मानता हूँ **यो =** जो **वसुः =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (हैं), **धेनवः =** धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **यम् =** जिस **अस्तम् =** प्रकाशमान को **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं। **अर्वन्तः =** प्रगतिशील, विद्वान् **आशवो =** आशुकारी, व्यापक **अस्तम् =** प्रकाशमान को, **नित्यासो =** नित्य, अविनाशी **वाजिनः =** बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले, विद्यायुक्त, **अस्तम् =** प्रकाशमान को (**यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं)। **इषम् =** इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को **स्तोतृभ्यः =** स्तुति के लिए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **भर =** पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **मन्ये =** मानता हूँ (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **यो =** जो (सर्वनाम)। **वसुः =** वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण

करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अस्तम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **अस्तम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अर्वन्तः** = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **आशवो** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। **अस्तम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **नित्यासो** = नित्य, निरन्तर (नि - निश्चित, निरन्तर,नी = पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **वजिनः** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इषम्** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **स्तोतृभ्यः** = स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) **॥ 7 ॥ साम 1737**

426. न तम् अंहो न दुरितम्, देवासो अष्ट मर्त्यम्।
सजोषसो यम् अर्यमा, मित्रो नयति वरुणो अति द्विषः ॥ 8 ॥ 10-126-1

मन्त्रार्थ - **अंहो** = व्यापक **देवासो** = देवगण **न** = नहीं **तम्** = उस **अति** = अत्यधिक **द्विषः** = द्वेष करने वाले **मर्त्यम्** = मरणशील **दुरितम्** = दुरित को, दुःख को **न** = नहीं **अष्ट** = प्राप्त हो सकता है, **यम्** = जिसे **सजोषसो** = विचारवान्, सेवाभावी, **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी **मित्रो** = मित्र, **वरुणो** = वरुण **नयति** = ले जाता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ -**न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अंहो** = व्यापक, दिनोदिन (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **दुरितम्** = दुरित को, दुःख को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **देवासो** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अष्ट** = व्याप्त हो सकता है, प्राप्त हो सकता है (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **मर्त्यम्** = मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सजोषसो** = विचारवान्, सेवाभावी (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **नयति** = ले जाता है (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **वरुणो** = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) **॥ 8 ॥**

(45) सूक्त 9

427. परि प्र धन्व आ इन्द्राय, सोम स्वादुः मित्राय, पूष्णे भगाय ॥ 1 ॥ 9-109-1

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **स्वादुः** = सुस्वादु (हो)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए, **मित्राय** = मित्र के लिए, **पूष्णे** = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए, **भगाय** = सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए **परि** = सभी ओर **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **स्वादुः** = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **मित्राय** = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **पूष्णे** = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **भगाय** = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना) ॥ 1 ॥

428. परि ऊ षु प्र धन्व वाजसातये, परि वृत्राणि सक्षणिः। द्विषः तरध्या ऋणया नः ईरसे ॥ 2 ॥ 9-110-1

मन्त्रार्थ - **सक्षणिः** = प्रकाश युक्त, शब्द युक्त **वाजसातये** = बलवान्, प्रगतिशील के लिए **परि** = सभी ओर **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को **परि** = सभी ओर **उ** = निश्चय ही **षु** = उत्तम, श्रेष्ठ **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो। **नः** = हमको **द्विषः** = द्वेष करने वाला **ऋणया** = ऋण द्वारा, गति द्वारा **तरध्या** = तारने के लिए, तरने के लिए **ईरसे** = प्राप्त हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **षु** = उत्तम, श्रेष्ठ (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सक्षणिः** = प्रकाश युक्त, शब्द युक्त (स = सहित, साथ (उपसर्ग), क्षण - शब्द करना, दीप्त करना)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **तरध्या** = तारने के लिए, तरने के लिए (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **ऋणया** = ऋण से, गति से (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ईरसे** = प्राप्त हो (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना) ॥ 2 ॥

429. पवस्व सोम महान् समुद्रः, पिता देवानाम् विश्व अभि धाम ॥ 3 ॥ 9-109-4

मन्त्रार्थ :- **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **महान्** = पूज्य, महान् **समुद्रः** = समुद्र **देवानाम्** = देवगणों के **पिता** = पिता, **विश्वा** = सभी **अभि** = अभिमुख **धाम** = धारण करने वाले, **पवस्व** = पवित्र करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य

होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **समुद्रः** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **धाम** = धारण करने वाले (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 3 ॥

430. पवस्व सोम महे दक्षाय, अश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥ 4 ॥ 9-109-10

मन्त्रार्थ :- सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = के समान **निक्तो** = शुद्ध, स्वच्छ, पालक, **वाजी** = बलयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त, **महे** = हे महान्, पूज्य, **दक्षाय** = दक्षता के लिए, **धनाय** = धन के लिए **पवस्व** = पवित्र करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **दक्षाय** = दक्ष के लिए (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **निक्तो** = शुद्ध, स्वच्छ, पालन (निक्-निज-निनिक् - शुद्ध करना, स्वच्छ करना, पालना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **धनाय** = धन के लिए (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 4 ॥

431. इन्दुः पविष्ट चारुः मदाय, अपाम् उपस्थे कविः भगाय ॥ 5 ॥ 9-109-13

मन्त्रार्थ - इन्दुः = इन्दु **चारुः** = चारु, भोज्य, प्रगति, **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए **अपाम्** = पालकों के **उपस्थे** = उपस्थ में, समीप स्थित **कविः** = ज्ञानी, कवि **भगाय** = सेवा, दान के लिए **पविष्ट** = पवित्र, करो ॥ 5 ॥

पदार्थ -इन्दुः = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **पविष्ट** = पवित्र, पालन, रक्षा का प्रकाश करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **उपस्थे** = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित (उप = समीप, स्थ = स्थित)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **भगाय** = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना) ॥ 5 ॥

432. अनु हि त्वा सुतम् सोम, मदामसि महे समर्यराज्ये।
वाजान् अभि पवमान प्र गाहसे ॥ 6 ॥ 9-110-2

मन्त्रार्थ :- सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **महे** = हे महान्, पूज्य, महिमावान्, **त्वा** = तुम्हारे **अनु** = अनुकूल **हि** = ही **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **समर्यराज्ये** = समतापूर्ण-राज्य में, सम-राज्य में **मदामसि** = मद, हर्ष, तृप्ति, आनन्दित करते हो। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **वाजान्** = बलों को, वाजो को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गाहसे** = विलोड़न करता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुतम् =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोम =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मदामसि =** मद, हर्ष, तृप्ति, आनन्दित करते हो (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **समर्यराज्ये =** समतापूर्ण-राज्य में, सम-राज्य में (सम = न घबराना, एक समान रहना, राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **वाजान् =** बलों को, वाजो को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **पवमान =** पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गाहसे =** विलोड़न करता है (गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना, गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) **॥ 6 ॥**

433. कः ईम् व्यक्ता नरः सनीडा, रुद्रस्य मर्याः अथा स्वश्वाः ॥ 7 ॥ 7-56-1

मन्त्रार्थ - कः = कौन **ईम् =** इस प्रकार **व्यक्ता =** व्यक्त **नरः =** नर **सनीडा =** नीडयुक्त, गृहयुक्त, ग्रहस्थ, **रुद्रस्य =** रुदनकर्ता के **मर्याः =** मरणशील **अथा =** और **स्वश्वाः =** उत्तम व्यापक (हैं) **॥ 7 ॥**

पदार्थ -कः = कौन (सर्वनाम)। **ईम् =** समान, इस प्रकार (अव्यय)। **व्यक्ता =** व्यक्त को (वि - विशेष, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, वि-अक् - व्यक्त होना, स्पष्ट करना)। **नरः =** नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **सनीडा =** समान पहुँचाना, समान मार्ग दिखाना (स - सहित, साथ, समान, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **रुद्रस्य =** रुद्र का (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। **मर्याः =** मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अथा =** अथ (अव्यय)। **स्वश्वाः =** उत्तम व्यापक (सु = उत्तम, अच्छा, अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, फैलना, फैलाना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, तीव्रता से पहुँचना) **॥ 7 ॥**

434. अग्ने तम् अद्य अश्वम् न स्तोमैः, क्रतुम् न भद्रम् हृदिस्पृशम्।
ऋध्यामा ते ओहैः ॥ 8 ॥ 4-10-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि, **अद्य =** आज **तम् =** उस **अश्वम् =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न =** के समान, **स्तोमैः =** स्तुतियों से **क्रतुम् =** कर्म को **न =** के समान **भद्रम् =** कल्याणकारी, **हृदिस्पृशम् =** हृदयस्पर्शी को **ते =** तुम्हारे लिए **ओहैः =** ऊहाओं द्वारा **ऋध्यामा =** समृद्ध करते हैं **॥** 8 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तम् =** उसको, उसे (सर्वनाम)। **अद्य =** आज (अव्यय)। **अश्वम् =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्तोमैः =** स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **क्रतुम् =** कर्म को (कृ = करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भद्रम् =** कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **हृदिस्पृशम् =** हृदिस्पृश को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। **ऋध्यामा =** बढ़े, समृद्धिशाली हो, वृद्धिगत हो, समृद्ध हो (ऋध् -वृद्धि होना, वृद्धि करना, समृद्धि होना, ऐश्वर्य होना, आनन्दित करना, पूर्ण करना)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **ओहैः =** ऊह द्वारा (ऊह् = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) **॥ 8 ॥**

435. आविः मर्या आ वाजम् वाजिनो, अग्मन् देवस्य सवितुः सवम्।
स्वर्गाम् अर्वन्तो जयत॥ 9॥

मन्त्रार्थ - **आविः** = सम्मुख, प्रत्यक्ष **मर्याः** = मरणशील **आ** = समन्तात्, सम्यक्, **वाजम्** = बल को, विद्या को, गति को **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, **अग्मन्** = प्राप्त होते हैं। **सवितुः** = उत्पादक, ऐश्वर्यवान् **देवस्य** = देव का **सवम्** = सृजनशील **स्वर्गाम्** = स्वर्ग को **अर्वन्तो** = प्रगतिशील, विद्वान् **जयत** = जीततें हैं॥ **9**॥

पदार्थ - **आविः** सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त (उपसर्ग)। **मर्याः** = मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले, विद्वान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अग्मन्** = गये (गम् = जाना)। **देवस्य** = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सवितुः** = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सवम्** = सवन को, उत्पन्न करने वाले को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **स्वर्गाम्** = स्वर्ग के लिए (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, गम् - जाना)। **अर्वन्तो** = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **जयत** = जीतें हैं (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)॥ **9**॥

436. पवस्व सोम द्युम्नि सुधारः, महान् अवीनाम् अनु पूर्व्यः॥ 10॥ 9-109-7

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता **द्युम्नि** = अभिगमन, प्रकाश में **सुधारः** = उत्तम धारण करने वाले **महान्** = पूज्य, महान् **अवीनाम्** = व्याप्तों का, रक्षकों का **अनु** = अनुकूल **पूर्व्यः** = पूर्व **पवस्व** = पवित्र करो॥ **10**॥

पदार्थ - **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्युम्नि** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सुधारो** = भलीभाँति धारण करने वाले (सु - उत्तम, अच्छा, धा - धारण करना, रक्षण करना, देना) **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अवीनाम्** = व्याप्तों का, रक्षकों का (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **पूर्व्यः** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)॥ **10**॥

(46) सूक्त 10

437. विश्वतोदावन् विश्वतो नः आ भर, यम् त्वा शविष्ठम् ईमहे॥ 1॥

मन्त्रार्थ - **विश्वतोदावन्** = हे सर्वदानी, प्रगतिशील **विश्वतो** = सबसे, **नः** = हमारे लिए **आ** = समन्तात् **भर** = पोषण करो, पूर्ण करो **यम्** = जिस **त्वा** = तुम **शविष्ठम्** = बलिष्ठ, अत्यन्त समीप को **ईमहे** = प्राप्त होते हैं॥ **1**॥

पदार्थ - **विश्वतोदावन्** = हे सब दानशील, प्रगतिशील (विश्व = सब, दु-दव् - जाना, सुगन्ध लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **विश्वतो** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)।

यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शविष्ठम्** = अत्यन्त समीपगामी को (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 1 ॥

438. एष ब्रह्मा यः ऋत्वियः, इन्द्रो नाम श्रुतो गृणे ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - **एष** = यह **ब्रह्मा** = ब्रह्म, महान्, बृहत् **यः** = जो **ऋत्वियः** = ऋतुमय **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **नाम** = नाम वाला **श्रुतो** = श्रुत, सुना हुआ **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिंचन, शब्द करता हूँ ॥ 2 ॥

पदार्थ - **एष** = यह (सर्वनाम)। **ब्रह्मा** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **ऋत्वियः** = ऋतुओं का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **श्रुतो** = श्रुत, सुना हुआ (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं, शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) ॥ 2 ॥

439. ब्रह्माणः इन्द्रम् महयन्तो अकैः, अवर्धयन् अहये हन्तवा उ ॥ 3 ॥ 5-31-4

मन्त्रार्थ - **ब्रह्माणः** = ब्रह्म, महान् **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली का **महयन्तो** = सम्मान करता हुआ **अकैः** = प्रगतिशीलों द्वारा **अहये** = व्यापकता के लिए **हन्तवा** = हनन करने वाला **उ** = निश्चय ही **अवर्धयन्** = बढ़ायें ॥ 3 ॥

पदार्थ - **ब्रह्माणः** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **महयन्तो** = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) **अकैः** = गतिशील (अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना)। **अवर्धयन्** = बढ़ायें (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना)। **अहये** = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **हन्तवा** = मारने वाला (हन् - मारना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय) ॥ 3 ॥

440. अनवः ते रथम् अश्वाय तक्षुः, त्वष्टा वज्रम् पुरुहूत द्युमन्तम् ॥ 4 ॥ 5-31-4

मन्त्रार्थ - **पुरुहूत** = हे पुरुहूत, अग्र-दत्त, **अनवः** = प्राणवान् **त्वष्टा** = प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला **ते** = तुम्हारे **अश्वाय** = तीव्र गति, व्यापकता के लिए **रथम्** = रथ को **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, अग्रगामी को, तेजस्वी को **तक्षुः** = आच्छादित करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अनवः** = अनव, जो नव न हो (अन् - जीना, समर्थ होना, जाना, नु-नव - शब्द करना, निश्चय करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अश्वाय** = अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **तक्षुः** = आच्छादित करने वाले (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **त्वष्टा** = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। **पुरुहूत** = हे पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना) ॥ 4 ॥

441. शम् पदम् मघम् रयीषिणे न कामम्, अव्रतो हिनोति न स्पृशत् रयिम् ॥ 5 ॥

मन्त्रार्थ - **अव्रतो** = अव्रती, व्रतहीन **रयीषिणे** = विद्या, प्रगति का इच्छुक **शम्** = सुख, कल्याण, शान्ति **पदम्** =

पद, **मघम्** = धन, ऐश्वर्य, **कामम्** = कामना, इच्छा को **न** = नहीं **हिनोति** = प्राप्त, वृद्धि करता है, **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **स्पृशत्** = स्पर्श करता है ॥ 5 ॥

पदार्थ - **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **पदम्** = पद (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **मघम्** = मघ को, धन को, ऐश्वर्य को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **रयीषिणे** = विद्या, गतिशीलता का (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कामम्** = कामना, इच्छा को (कम - चाहना, इच्छा करना)। **अव्रतो** = अव्रती को (अ = नहीं, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **हिनोति** = गतिशील करो, बढाओ, वृद्धि करो (हि - जाना, जानन् **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्पृशत्** = स्पर्श से (स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना) ॥ 5 ॥

442. सदा गावः शुचयो विश्वधायसः, सदा देवाः अरेपसः ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - **सदा** = सदा, सर्व काल में **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **शुचयो** = पवित्र **विश्वधायसः** = विश्व को धारण करने वाले (होते हैं)। **सदा** = सदा, सर्वदा **देवाः** = देवगण **अरेपसः** = अहिंसक, व्यापक (होते हैं) ॥ 6 ॥

पदार्थ - **सदा** = सदा, सर्व काल में। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **शुचयो** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **विश्वधायसः** = सबको, विश्व को धारण करने वाला (विश्व - सब कुछ, सभी, धा - धारण करना)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अरेपसः** = अहिंसक, गमनीय, रेणु-हीन, हिंसा, गति, व्यापक होते हैं (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, ऋ = जाना, पाना, मिलाना, अ - नहीं, रिण - शब्द करना, चूर्ण होना, अल्प होना, रेप - जाना, शब्द करना, रि-हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 6 ॥

443. आ याहि वनसा सह गावः, सचन्त वर्तनिम् यत् ऊधभिः ॥ 7 ॥ 10-172-1

मन्त्रार्थ - **वनसा** = वाणी **सह** = के साथ **आ याहि** = आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें। **यत्** = जो **ऊधभिः** = वाणी, शब्द द्वारा **गावः** = शब्दकर्ता **वर्तनिम्** = वर्तमान को **सचन्त** = अभिसिञ्चन करते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **वनसा** = वन (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **सचन्त** = अभिसिञ्चन करते हैं (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना, पूर्णतया समझना, सम्बन्धी होना)। **वर्तनिम्** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ऊधभिः** = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द् = भिगोना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना) ॥ 7 ॥

444. उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः, पुष्येम रयिम् धीमहे ते इन्द्र ॥ 8 ॥

मन्त्रार्थ :- **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **ते** = तुम्हारे लिए **उप** = समीप **मधुमति** = मधुयुक्त **प्रक्षे** = निवास में **क्षियन्तः** = निवास करते हुए **पुष्येम** = पुष्ट हों। **रयिम्** = विद्या, प्रगति को **धीमहे** = धारण करें ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **उप** = समीप (उपसर्ग)। **प्रक्षे** = निवास, क्षति, क्षय में (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **मधुमति** = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द

होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **क्षियन्तः** = निवास करने वाले, क्षति, क्षय करने वाले (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **पुष्येम** = पुष्ट करें (पुष् = पोषण करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **धीमहे** = धारण करें (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) ॥

445. अर्चन्ति अर्कम् मरुतः, स्वर्का आ स्तोभति, श्रुतो युवा सः इन्द्रः ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ :- मरुतः = मरणशील **अर्कम्** = स्तुत्य, प्रशंसनीय को **अर्चन्ति** = अर्चना करते हैं, सम्मान करते हैं। **स्वर्का** = सुन्दर स्तुतियों वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **स्तोभति** = स्तुति करते हैं। **श्रुतो** = श्रुत है, सुना जाता है, **सः** = वह **युवा** = युवा **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (है) ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अर्चन्ति = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं (अर्च -पूजा करना, मान करना)। **अर्कम्** = अर्क को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **स्वर्का** = सुन्दर स्तुतियों वाले (सु+अर्का, स्वर्+का, सु = अच्छा (उपसर्ग), अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **स्तोभति** = स्तुत किया जाता है (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **श्रुतो** = श्रुत, सुना हुआ (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 9 ॥

446. प्र वः इन्द्राय वृत्रहन्तमाय, विप्राय गाथम् गायत यम् जुजोषते ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ :- वः = तुम **इन्द्राय** = परम ऐश्वर्यशाली के लिए **वृत्रहन्तमाय** = वृत्र (हिंसा) का अत्यन्त हनन करने वाले के लिए **विप्राय** = विशेष पूर्ण करने वाले के लिए **गाथम्** = गाथा को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत** = गाते हैं, **यम्** = जिसको **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है ॥ 10 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = परम ऐश्वर्यशाली के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वृत्रहन्तमाय** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **विप्राय** = विप्र के लिए (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। **गाथम्** = गाथा को (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है (जुष - विचार करना, सेवा करना, चाहना, दुलारना) ॥ 10 ॥

(47) सूक्त 11

447. अचेति अग्निः चिकितिः, हव्यवाड् न सुमद्रथः ॥ 1 ॥ 8-56-5

मन्त्रार्थ - चिकितिः = विद्वान् **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी **हव्यवाड्** = हव्य को वहन करने वाले **न** = के समान **सुमद्रथः** =उत्तम आनन्द वाले **अचेति** = आदर करते हैं, मानते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - अचेति = अचेत है, आदर करते हैं, मानते हैं (अ = नहीं, अच् - जाना, चलना, आदर करना, मांगना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **चिकितिः** = विद्वान् (चिकित् - जानना)। **हव्यवाड्** = हव्य को वहन करने वाले (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सुमद्रथः** = सुमति, सुबुद्धि रथ (सु - उत्तम, अच्छा, मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, रम् = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना) ॥ 1 ॥

448. अग्ने त्वम् नो अन्तमः उत, त्राता शिवो भुवो वरूथ्यः ॥ 2 ॥ 5-24-1

मन्त्रार्थ :- अग्ने हे अग्नि! **त्वम्** तुम **नो** हमारे लिए **अन्तमः** जीवनदाता, **उत** = ही **त्राता** रक्षक, पालक, **शिवो** कल्याणकारी, **वरूथ्यः** वरणीय **भुवा** हो ॥ 2 ॥

भावार्थ : अग्नि परमात्मा ही जीवनदाता, रक्षक तथा वरण करने योग्य है। उपासना से श्रेष्ठ विद्या, सद्गुण तथा सुख-साधन प्राप्त होते हैं।।

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि! (अग् = गति करना, आगे जाना)। **त्वम्** = तुम। **नः** = हमारे लिए। **अन्तमः** = जीवनदाता,(अन् = प्राणवान् होना)। **उत** = ही। **त्राता** = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **शिवः** = कल्याणकारी (शिव् = कल्याण करना)। **भुवा** = हो (भू = होना)। **वरूथ्यः** = वरण करने योग्य (वृ = वरण करना) ॥ 2 ॥

449. भगो न चित्रो अग्निः, महोनाम् दधाति रत्नम् ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - भगो = भग **न** = के समान **चित्रो** = चित्र, आश्चर्यकर, चेतन **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **महोनाम्** = महान् का **रत्नम्** = मूल्यवान्, रत्न को **दधाति** = धारण करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ - भगो = भग (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **चित्रो** = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महोनाम्** = महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **दधाति** = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रत्नम्** = मूल्यवान् को, रत्न को (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना) ॥ 3 ॥

450. विश्वस्य प्र स्तोभ पुरो वा सन्, यदि वा इह नूनम् ॥ 4 ॥

मन्त्रार्थ - यदि = यदि **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का **पुरो** = पहले **वा** = अथवा **सन्** = वर्तमान, **वा** = अथवा **इह** = यहाँ **नूनम्** = निश्चय ही **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **स्तोभ** = स्तुत किया जाता है ॥ 4 ॥

पदार्थ -विश्वस्य = विश्व का, सभी का (सर्वनाम) **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **स्तोभ** = स्तुत किया जाता है (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **पुरो** = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **सन्** = ही। **यदि** = यदि (अव्यय)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय) ॥ 4 ॥

451. उषाः अप स्वसुः तमः, सम् वर्तयति वर्तनिम् सुजातता ॥ 5 ॥ 10-172-4

मन्त्रार्थ - उषाः = प्रभात **सुजातता** = उत्तम सृजन द्वारा **स्वसुः** = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य के **तमः** = अन्धकार, इच्छा, दुःख को **अप** = दूर (करती है), **वर्तनिम्** = व्यवहार को **सम्** = सम्यक् **वर्तयति** = वर्तमान करती है ॥ 5 ॥

पदार्थ - उषाः = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **स्वसुः** = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना)। **तमः** = अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **वर्तयति** = वर्ताव किया (वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **वर्तनिम्** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, व्यवहार करना, हिंसा करना)। **सुजातता** = उत्तम सृजन द्वारा (सु = उत्तम, अच्छा, जागृ - जगना, नींद न लेना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 5 ॥

452. इमा नु कम् भुवना सीषधेम्, इन्द्रः च विश्वे च देवाः ॥ 6 ॥ 10-157-1

मन्त्रार्थ :- इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली **च** = और **इमा** = ये **विश्वे** = सभी **च** = और **देवाः** = तेजस्वी, देवगण, **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **कम्** = किस **भुवना** = भुवन, वर्तमान को **सीषधेम** = सिद्ध करें ॥ 6 ॥

पदार्थ :- इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **कम् =** किसको (सर्वनाम)। **भुवना =** हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **सीषधेम =** संसिद्ध करें (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **इन्द्रः =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **च =** और। **विश्वे =** सभी (सर्वनाम)। **च =** और। **देवाः =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) **॥ 6 ॥**

453. वि स्रुतयो यथा पथा, इन्द्र त्वत् यन्तु रातयः ॥ 7 ॥

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **त्वत् =** तुमसे **वि =** विशेष **स्रुतयो =** अभिसिञ्चित, स्रवित **रातयः =** अनुदान **यथा =** जैसे **पथा =** पथ **यन्तु =** पोषण करें, उद्धार करें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें। **॥ 7 ॥**

पदार्थ - वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **स्रुतयो =** अभिसिञ्चित, स्रवित (स्रु = जाना, जानना, पाना, सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **यथा =** जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **पथा =** पथ (पथ, पन्थ् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। **इन्द्र =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वत् =** तुमसे (सर्वनाम)। **यन्तु =** पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **रातयः =** अनुदान (रा - देना, मिल जाना) **॥ 7 ॥**

454. अया वाजम् देवहितम् सनेम, मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥ 8 ॥ 6-17-15

मन्त्रार्थ - शतहिमाः = सैकड़ों हिमों वाले (शतायु) **सुवीराः =** उत्तम वीर **अया =** प्रगति, प्रेरणा द्वारा **वाजम् =** बल, विद्या, प्रगति को **देवहितम् =** देवहित में **सनेम =** दान, सेवा करें। **मदेम =** आनन्दित, तृप्त करें **॥ 8 ॥**

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **वाजम् =** विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **देवहितम् =** देवहित को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, हि = गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **सनेम =** सनेम, दान, सेवा, सत्कार (सन = सेवा करना, चाकरी करन, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **मदेम =** आनन्दित करते हैं, तृप्त करें। (मद् – हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना)। **शतहिमाः =** सैकड़ों हिम (शत = सौ, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। **सुवीराः =** अच्छे वीर, सुवीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) **॥ 8 ॥**

455. ऊर्जा मित्रो वरुणः पिन्वत इडाः, पीवरीम् इषम् कृणुही नः इन्द्र ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली, **ऊर्जा =** ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना, **मित्रो =** मित्र, **वरुणः =** वरुण, **इडाः =** स्तुत, स्तुति योग्य **पिन्वत =** चलो, जानो, शब्द करो, सेवा करो, गति, ज्ञान, प्राप्ति करे। **नः =** हमारे लिए **पीवरीम् =** सेवा, सिंचन, प्रकाश, **इषम् =** इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि **कृणुही =** करो **॥ 9 ॥**

पदार्थ - ऊर्जा = ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **मित्रो =** मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **वरुणः =** वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पिन्वत =** चलो, जानो, शब्द करो, सेवा करो, गति, ज्ञान, प्राप्ति करो (पि = गति करना, जाना, जानना, पाना, पिन्व = सेवा करना, सेचन करना, प्रोक्षण करना, पिण् - शब्द करना)। **इडाः =** स्तुत, स्तुति योग्य (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **पीवरीम् =** पीवरी को (पिव् - सेवा करना, सिंचन करना, बीज बोना, प्रकाश करना)। **इषम् =** इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष्

- इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **कृणुही** = करो (कृ = करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) ॥ **9** ॥

456. इन्द्रो विश्वस्य राजति ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रो** इन्द्र **विश्वस्य** विश्व में **राजति** प्रकाशित होता है ॥ **10** ॥

भावार्थ :- इन्द्र का अर्थ है परम ऐश्वर्यवान्। परमात्मा को ही इन्द्र कहा गया है। वही सर्वत्र प्रकाशति है ॥ **10** ॥

पदार्थ :- **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का। **राजति** = प्रकाशित होता है (राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ **10** ॥

(48) सूक्त 12

457. त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरम्, तुविशुष्मः तृम्पत् सोमम् अपिबत्,
विष्णुना सुतम् यथावशम्।
स ईम् ममाद महि कर्म-कर्तवे महाम् उरुम्,
स एनम् सश्चत् देवः देवम्, सत्यः इन्दुः सत्यम् इन्द्रम् ॥ 1 ॥ 2-12-1

मन्त्रार्थ - **तुविशुष्मः** = महाबली, अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले, **त्रिकद्रुकेषु** = तीन भ्रमों में, त्रिकद्रुकों में **महिषो** = महान्, पूजित, सम्मानित ने **यवाशिरम्** = मिलन के श्रेय को **तृम्पत्** = संतृप्त करते हुए **विष्णुना** = विष्णु द्वारा **यथावशम्** = यथेच्छ, इच्छानुसार **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्य को **अपिबत्** = पिया, पान किया। **स** = उसने **ईम्** = इस प्रकार **महि** = महत्, पूज्य, महान् **कर्म** = कर्म या कार्य **कर्तवे** = कर्ता के लिए **महाम्** = बड़े, पूज्य, महान् **उरुम्** = गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को **ममाद** = आनन्द, हर्षित, प्रसन्न किया। **स** = वह **देवः** = देव **एनम्** = इस **देवम्** = देव को **सत्यः** = सत्य **इन्दुः** = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् **सत्यम्** = सत्य **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **सश्चत्** = प्राप्त होता है, जाता है ॥ **1** ॥

पदार्थ - **त्रिकद्रुकेषु** = तीन भ्रमों में, त्रिकद्रों में (त्रि - तीन (संख्या), कद - भ्रमित होना, घबरा जाना, व्याकुल होना)। **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **यवाशिरम्** = यवाशिर को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना, श्रि-श्री = - सेवा करना, श्रेय होना, आश्रय होना)। **तुविशुष्मः** = महाबली, अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले (तुवि - बहुत (वैदिक उपसर्ग)। शुष् - सुखाना, बल होना)। **तृम्पत्** = संतृप्त होता हुआ, शान्त होता हुआ (तृम्प - तृप्त होना या करना, शान्त होना, प्रेम करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अपिबत्** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **विष्णुना** = विष्णु द्वारा (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **यथावशम्** = यथावश, जैसा भी वश है (सर्वनाम)। **स** = वह, उसने। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **ममाद** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **कर्म** = कर्म या कार्य (कृ = करना)। **कर्तवे** = करे, करते हैं (कृ - करना)। **महाम्** = बड़े, पूज्य, महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **उरुम्** = गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। **स** = वह (सर्वनाम)।

एनम् = इसको (सर्वनाम)। **सश्चत्** = प्राप्त होता है, जाता है (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। **देवः** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सत्यः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना) **॥ 1 ॥**

458. अयम् सहस्रमानवो दृशः, कवीनाम् मतिः ज्योतिः विधर्म।
ब्रध्न समीचीः उषसः समैरयत् अरेपसः, सचेतसः स्वसरे मन्युमन्तः चिता गोः ॥ 2।

मन्त्रार्थ - **अयम्** = यह **सहस्रमानवो** = बहुमननशील, हजारों मानवयुक्त, **दृशः** = दर्शनीय, देखने वाले, **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का **मतिः** = मति, मननशक्ति, **ज्योतिः** = प्रकाशरूप, **विधर्म** = विधर्ता, विशेष धारणकर्ता, **ब्रध्न** = बृद्धिशील, **समीचीः** = समान, अविकल **अरेपसः** = अविचल, अगमनीय, निःशब्द, **सचेतसः** = समान चित्त वाले, **स्वसरे** = स्वगति में **मन्युमन्तः** = मन्युमान् **चिता** = चेतन, चुना गया, एकत्र **गोः** = शब्दर्ता, मननशील **उषसः** = उषा, प्रभात को **समैरयत्** = सम्यक् प्रेरित करता है **॥ 2 ॥**

पदार्थ - उषा, प्रभात को प्रेरित करने वाला सूर्य कहा जाता है, परन्तु यहाँ जिन गुणों का वर्णन किया गया है, वे इस भौतिक सूर्य के नहीं हो सकते हैं। वह तो परमात्मा ही हो सकता है **॥ 2 ॥**

पदार्थ - **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सहस्रमानवो** = हजारों मन वाला (सहस्र = हजार,मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दृशः** = देखने वाले (दृश्-पश्य -देखना)। **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **मतिः** = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **विधर्म** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **ब्रध्न** = बृद्धि करने वाला (बृध् - बढ़ना, वृद्धि होना, बृद्धि करना)। **समीचीः** = समान, अविकल (सम् - समान रहना, विकल न होना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **समैरयत्** = सम्यक् रूप से प्रेरित करता है (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, ईर - जाना, कम्पन करना, प्रेरणा देना, फेंकना)। **अरेपसः** = अविचल, अगमनीय, निःशब्द (अ - नहीं, रेप - जाना, शब्द करना। रिप् - चलना, जाना)। **सचेतसः** = समान चित्त वाले (चित - विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **स्वसरे** = स्वगति को, उत्तम गति को, उत्तम गृह, उत्तम प्रकाश को (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **मन्युमन्तः** = मन्युमन्त (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **चिता** = चेतन, चुना गया, एकत्र (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना)। **गोः** = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) **॥**

459. आ इन्द्र याहि उप नः, परावतो न अयम् अच्छा,
विदथानि इव सत्पतिः, अस्ता राजा इव सत्पतिः।
हवामहे त्वा प्रयस्वन्तः, सुतेषु आ पुत्रासो न,
पितरम् वाजसातये, मंहिष्ठम् वाजसातये ॥ 3 ॥ 1-130-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, स्वच्छ, **विदथानि** = विद्वान् **इव** = के समान **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक, **अस्ता** = प्रकाशमान, **राजा** = राजा **इव** = के समान **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **अयम्** = यह **परावतो** = दूर हुए **न** = के समान **नः** = हमारे लिए **उप** = समीप **आ याहि** =

आयें, प्राप्त हों, प्राप्त करें। **त्वा** = तुमको **प्रयस्वन्तः** = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले **सुतेषु** = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में **पुत्रासो** = पुत्र गण **न** = के समान **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए, **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित को **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **परावतो** = दूर (परावतः = दूर (सर्वनाम, अव्यय)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **विदथानीव** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **अस्ता** = प्रकाशमान (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **राजेव** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **प्रयस्वन्तः** = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यस - उपक्षय करना, वास करना, चलना, यत्न करना)। **सुतेषु** = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पुत्रासो** = पुत्र गण (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **वाजसातये** = बल, प्रगति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना। सन् - सेवा करना, अलग करना, दान करना)। **मंहिष्ठम्** = हे महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वाजसातये** = बल, प्रगति के लिए (वाज् = गति करना, जानना, पाना, बल होना। सन् - सेवा करना, अलग करना, दान करना) **॥ 3 ॥**

460. तम् इन्द्रम् जोहवीमि मघवानम् उग्रम्, सत्रा दधानम् अप्रतिष्कुतम् श्रवांसि भूरि। मंहिष्ठो गीर्भिः आ च यज्ञियो ववर्त, राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥ 4 ॥ 8-97-13

मन्त्रार्थ - **तम्** = उस **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **उग्रम्** = उग्र को, उच्च शब्दकर्ता को **सत्रा** = विस्तारयुक्त, सत्य, **दधानम्** = धारण करने वाले, **अप्रतिष्कुतम्** = अप्रतिष्कुत, अप्रतिकूल शब्दकृत, **भूरि** = बहुत **श्रवांसि** = श्रवण को **जोहवीमि** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **मंहिष्ठो** = मंहिष्ठ, महानतम **च** = और **यज्ञियो** = यजनकर्ता **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चनों द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, **ववर्त** = वर्तमान हुआ। **वज्री** = हे वज्री, वज्रयुक्त, गतिमान, **राये** = विद्या, गतिशीलता में, वाणी में **नो** = हमारे लिए **विश्वा** = सभी **सुपथा** = अच्छे मार्ग **कृणोतु** = करो **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जोहवीमि** = दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू-जुहू = दान करना, आदान-प्रदान करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **उग्रम्** = उग्र को, उच्च शब्दकर्ता को (उ-उत् - उच्च (उपसर्ग)। ग्रु - शब्द करना)। **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, सत् - सत्य होना)। **दधानम्** = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अप्रतिष्कुतम्** = अप्रतिष्कुत, प्रतिकूल शब्द हीन को (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु – शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौंरे के समान शब्द करना)। **श्रवांसि** = श्रवण (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **भूरि** = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। **मंहिष्ठो** = मंहिष्ठ का,

महिमावान् का, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **च** = और। **यज्ञियो** = यजनकर्ता (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **ववर्त** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **सुपथा** = अच्छे मार्गों पर (सु - अच्छा, सुन्दर, पथ - चलना)। **कृणोतु** = करो (कृ = करना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना) **॥ 4 ॥**

461. अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निम्, धिया दधे आ नु त्यत्,
शर्धो दिव्यम् वृणीमहे, इन्द्रवायू वृणीमहे।
यत् ह क्राणा विवस्वते, नाभा सन्दाय नव्यसे।
अध प्र नूनम् उप यन्ति धीतयः, देवान् अच्छ न धीतयः ॥ 5 ॥ 1-139-1

मन्त्रार्थ - **पुरो** = पहले **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी को **श्रौषट्** = श्रवणकर्ता, सुनने वाले **अस्तु** = हो। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक् **नु** = ही **त्यत्** = उसे **दधे** = धारण करते हैं। **दिव्यम्** = दिव्य **शर्धो** = विजय, बल को **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं। **इन्द्रवायू** = इन्द्र तथा वायु को **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं। **यत्** = जो **ह** = निश्चय ही **विवस्वते** = विवस्वत् के लिए, विशेष वासयुक्त के लिए **क्राणा** = कर्ता (है), **सन्दाय** = सम्यक् दानी के लिए, **नव्यसे** = नवीन, स्तुतियोग्य के लिए **नाभा** = नाभि (है) **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर **नूनम्** = निश्चय ही **धीतयो** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **उप** = समीप **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **अच्छ** = अच्छा, श्रेष्ठ, स्वच्छ **न** = के समान **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले **उप** = समीप **यन्ति** = प्राप्त होते हैं **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **श्रौषट्** = श्रवण, स्रोता, सुनने वाले (श्रु -सुनना, श्रवण करना, जाना)। **पुरो** = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नु** = ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **शर्धो** = विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **दिव्यम्** = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **इन्द्रवायू** = इन्द्र तथा वायु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना, वा - गति करना, बहना, वे - बुनना, रचना करना)। **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **क्राणा** = करने वाले (कृ - करना)। **विवस्वते** = विवस्वत् के लिए, विशेष वास के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **नाभा** = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। **सन्दाय** = सन्दान के लिए, सम्यक् रूप से दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **नव्यसे** = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति

करना, नूतन होना, नया होना)। **अध =** अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नूनम् =** निश्चय ही (अव्यय)। **उप =** समीप (उपसर्ग)। **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **धीतयो =** ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **देवान् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अच्छ =** अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धीतयः =** ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) **॥ 5 ॥**

462. प्र वो महे मतयो यन्तु विष्णवे, मरुत्वते गिरिजा एवयामरुत्।
प्र शर्धाय प्र यज्यवे सुखादये तवसे, भन्ददिष्टये धुनिव्रताय शवसे ॥ 6 ॥ 5-87-1

मन्त्रार्थ - एवया = प्रगतिशील, विद्वान **मरुत् =** मरुत्, मरणशील, **वो =** तुम लोग **गिरिजा =** स्तुति, वाणी से उत्पन्न **मतयो =** मतियाँ, मननशक्ति **महे =** महान्, पूज्य के लिए **विष्णवे =** व्यापक के लिए **मरुत्वते =** मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **शर्धाय =** विजय, शर्द्ध, बल के लिए **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **यज्यवे =** यजन के लिए **सुखादये =** उत्तम खाना, भोजन के लिए **तवसे =** गति, वृद्धि के लिए **भन्ददिष्टये =** कल्याण, सुख, शुभ कर्म के लिए **धुनिव्रताय =** धुनि-व्रत के लिए, कम्पित व्रती के लिए **शवसे =** बल के लिए, समीप जाने के लिए **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **यन्तु =** पोषण करें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें **॥ 6 ॥**

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **मतयो =** मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **यन्तु =** पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **विष्णवे =** व्यापक के लिए (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। **मरुत्वते =** मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **गिरिजा =** स्तुति, वाणी से उत्पन्न (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **एवया =** हे प्रगतिशील, विद्वान (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना)। **मरुत् =** मरुत (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उ पसर्ग)। **शर्धाय =** विजय, शर्द्ध, बल के लिए (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **यज्यवे =** यजन, यज्ञ के लिए (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **सुखादये =** उत्तम खाना, भोजन के लिए (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), खद्-खाद् - खाना, हिंसा करना, स्थिर रहना)। **तवसे =** तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **भन्ददिष्टये =** कल्याण, सुख, शुभ कर्म के लिए (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **धुनिव्रताय =** धुनि-व्रत के लिए, कम्पित करने वाले का वरण के लिए (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **शवसे =** शवस् के लिए, समीप जाने के लिए (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) **॥ 6 ॥**

463. अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि,
तरति सयुग्वभिः सूरो न सयुग्वभिः।
धारा पृष्ठस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः।

विश्वा यत् रूपा परियासि ऋक्वभिः, सप्ताः येभिः ऋक्वभिः ॥ 7 ॥ 9-111-1

मन्त्रार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा **रुचा =** रुचि, प्रकाश द्वारा **हरिण्या =** हरिणी द्वारा, हरण करने वाले द्वारा **पुनानो =** पवित्रकर्ता **विश्वा =** विश्व, सभी **द्वेषांसि =** द्वेषों को **सयुग्वभिः =** समान योगों द्वारा **सूरो =** सूर्य, उत्पन्न करने वाले **न =** के समान **सयुग्वभिः =** समान योगों द्वारा **तरति =** तैरते हैं, तरते हैं, पार होते हैं। **हरिः =** हरि **पृष्ठस्य =** पृष्ठ का **धारा =** धारण, पोषण, रक्षण **पुनानो =** पवित्रकरते हुए **अरुषो =** अहिंसक, रोष-रहित, गतिशील, व्यापक **(है)। विश्वा =** विश्व, सभी **यत् =** जो **रूपा =** रूप **ऋक्वभिः =** ऋचाओं द्वारा **सप्ताः =** सात **येभिः** = जिन **ऋक्वभिः =** ऋचाओं द्वारा **परियासि =** सभी ओर जाते हो, जानते हो, प्राप्त करते हो **॥ 7 ॥**

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **रुचा =** रुचि (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **हरिण्या =** हरिण्य, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **पुनानो =** पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **द्वेषांसि =** द्वेष करते हैं (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना, मत्सर करना)। **तरति =** तैरते हैं, तरते हैं (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सयुग्वभिः =** समान योगों द्वारा (स - सहित, साथ, यू -मिलाना, यु - मिलाना, अलग करना)। **सूरो =** सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्‌भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सयुग्वभिः =** समान योगों द्वारा (स - सहित, साथ, यू -मिलाना, यु - मिलाना, अलग करना)। **धारा =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **पृष्ठस्य =** पृष्ठ का (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् - पृच्छ - पूछना, जानने की इच्छा करना, प्रश्न करना, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **रोचते =** प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **पुनानो =** पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अरुषो =** अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **हरिः =** हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **रूपा =** रूप (रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रुपाकृति लाना)। **परियासि =** सभी तरफ जाते हो, जानते हो, प्राप्त होता है (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, यस् - प्रयास करना, या - जाना, जानना, पाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **ऋक्वभिः =** ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **सप्ताः =** सात (संख्या)। **येभिः** = जिनसे (सर्वनाम)। **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना) **॥ 7 ॥**

464. अभि त्यम् देवम् सवितारम् ओण्योः कविक्रतुम्,
अर्चामि सत्यसवम् रत्नधाम् अभि प्रियम् मतिम्।
ऊर्ध्वा यस्य अमतिः भाः अदिद्युतत् सवीमनि,
हिरण्यपाणिः अमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः ॥ 8 ॥

मन्त्रार्थ : देवम् देव **सवितारम्** सृष्टिकर्ता **ओण्योः** नायक **कविक्रतुम्** कवि **सत्यसवम्** सत्य को उत्पन्न करने वाले, सत्य ऐश्वर्य वाले **रत्नधाम्** रत्नधारक को **अभि प्रियम्** प्रिय **मतिम्** मति **ऊर्ध्वा** ऊर्ध्व **त्यम्** तुमको **अभि अर्चामि** पूजता हूँ। **यस्य** जिसका **ऊर्ध्वा** ऊर्ध्व **अमतिः** सेवाभावी विद्वान् **भाः** प्रकाश **अदिद्युतत्** प्रकाशमान **सवीमनि** सृष्टिकर्ता की स्तुति की है। **हिरण्यपाणिः** प्रकाशमय **सुक्रतुः** सत्कर्म कर्ता **कृपा** कृपा, ऐश्वर्य **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य करो **॥ 8 ॥**

भावार्थ : परमात्मा के गुणों, ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए उपासना, स्तुति करने की प्रेरणा है। हम उपासना कर अपने जीवन में परमात्मा को प्राणवान् जीवन्त करते हैं तो परमात्मा हमें प्राणवान् करता है, जीवन्त ऊर्जावान् बनाता है॥ 8॥

पदार्थ : अभि = सब ओर (उपसर्ग)। **त्यम्** = तुमको। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति

करना)। सवितारम् = सृष्टिकर्ता (सु = उत्पन्न करना)। **ओण्योः** = नायक (ओण् = दूर ले लाना, ले जाना)। **कविक्रतुम्** = कवि (कव् = वर्णन करना, कविता करना, चित्र बनाना)। **अर्चामि** = पूजता हूँ (अर्च् = पूजन करना, सेवा करना, मान करना)। **सत्यसवम्** = सत्य को उत्पन्न करने वाला, सत्य ऐश्वर्यवाला (सत् = सदा रहना, चिर अस्तित्व होना, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। **रत्नधामभिः** = रत्नधारक को (रत् = जुड़ना, धा = धारण करना)। **प्रियम्** = प्रिय को (प्री - प्रीति करना, दुलारना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना)। **मतिम्** = मति को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **ऊर्ध्वा** = ऊर्ध्व। **यस्य** = जिसका। **अमतिः** = सेवाभावी विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना)। **भाः** = प्रकाश (भा - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर दीखना)। **अदिद्युतत्** = प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाश होना)। **सवीमनि** = सृष्टिकर्ता की स्तुति की (सु = उत्पन्न करना)। **हिरण्यपाणिः** = प्रकाशमय (हिरण् = प्रकाश होना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **अमिमीत** = बोला (मीम् = जाना, जानना, शब्द करना)। **सुक्रतुः** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **कृपा** = सहायता, ऐश्वर्य (कृप - कल्पना करना, विचार करना)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य (सु = ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना) **॥ 8 ॥**

465. अग्निम् होतारम् मन्ये दास्वन्तम्,
वसोः सूनुम् सहसो जातवेदसम्, विप्रम् न जातवेदसम्।
यः ऊर्ध्वया सु अध्वरो, देवो देवाच्या कृपा।
घृतस्य विभ्राष्टिम् अनु शुक्र-शोचिषः, आजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ 9 ॥ 1-127-1

मन्त्रार्थ - **अग्निम्** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान्, **होतारम्** = आदान-प्रदान, दान, आह्वान करने वाले, **दास्वन्तम्** = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी, **वसोः** = वसु के **सूनुम्** = सूनु, सृजन, को **सहसो** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, **जातवेदसम्** = जातवेद को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले, **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले, **न** = के समान **जातवेदसम्** = वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को **मन्ये** = मानता हूँ। **यः** = जो **ऊर्ध्वया** = ऊर्ध्व **देवाच्या** = देव-पूजन, **कृपा** = कृपा, दया द्वारा, **आजुह्वानस्य** = दानी के **सर्पिषः** = सरणशील, प्रगतिशील **घृतस्य** = घृत, प्रकाश के **विभ्राष्टिम्** = विशेष चमक को **अनु** = अनुकूल **शुक्र-शोचिषा** = शुक्र, शुद्ध विद्वान् द्वारा **सु** = उत्तम **अध्वरो** = अध्वर, अहिंसक **देवो** = देव **(है) ॥ 9 ॥**

पदार्थ - **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **होतारम्** = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्ये** = मानता हूँ (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दास्वन्तम्** = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी को (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **वसोः** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सूनुम्** = सूनु को (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **ऊर्ध्वया** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **सु** = अच्छा (उपसर्ग)। **अध्वरो** = अध्वर, अहिंसक (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवाच्या** = देवाच्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा

करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **कृपा** = कृपा, दया (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **घृतस्य** = घृत का, प्रकाश का (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **विभ्राष्टिम्** = विशेष चमकना (वि - विशेष, भ्रास - चमकना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **शुक्र** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **आजुह्वानस्य** = दानी का (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, हु = देना, दान करना, आदान-प्रदान करना)। **सर्पिषः** = सर्प (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना) **॥ 9 ॥**

466. तव त्यत् नर्यम् नृतो अपः इन्द्र, प्रथमम् पूर्व्यम् दिवि प्रवाच्यम् कृतम्।
यो देवस्य शवसा प्रारिणा असु रिणन् अपः।
भुवो विश्वम् अभि अदेवम् ओजसा,
विदेत् ऊर्जम् शतक्रतुः विदेत् इषम् ॥ 10 ॥ 2-22-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **नृतो** = ले जाने वाला, नचाने वाला **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक **तव** = तुम्हारे **त्यत्** = उस **नर्यम्** = ले जाने योग्य, **प्रथमम्** = प्रथम **पूर्व्यम्** = पूर्व **दिवि** = दिव्यता में **प्रवाच्यम्** = प्रवाच्य, वर्णनयोग्य **कृतम्** = किया, **यो** = जो **देवस्य** = तेजस्वी, देव के **शवसा** = बल, गति, ज्ञान द्वारा **प्रारिणा** = व्याप्त होते हुए **असु** = ऐश्वर्यमय, सृजनशील **रिणन्** = शब्द करते हुए **अपः** = पालक, रक्षक् **शतक्रतुः** = सैकड़ों कर्म करने वाला **भुवो** = वर्तमान **विश्वम्** = सभी **अभि** = अभिमुख **अदेवम्** = अदेव, अविद्वान् को **ओजसा** = ओज द्वारा **विदेत्** = जाने, प्राप्त हो, **ऊर्जम्** = ऊर्जा, **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **विदेत्** = जाने, प्राप्त हो **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नर्यम्** = नर्य को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **नृतो** = ले जाने वाला, नचाने वाला (नृ- ले जाना, नृत - नाचना, नृत्य करना)। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रथमम्** = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **पूर्व्यम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **प्रवाच्यम्** = प्रकृष्ट वाणी को, प्रकृष्ट विद्वान् को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **देवस्य** = विद्वान्, तेजस्वी, देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शवसा** = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **प्रारिणा** = व्याप्त होते हुए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, अर्-ऋ- गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रिण- शब्द करना, अल्प होना, चूर्ण होना)। **असु** = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न करने वाला (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **रिणन्** = शब्द करते हुए (रिण- शब्द करना, अल्प होना, चूर्ण होना)। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **भुवो** = भुवः (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **विश्वम्** = विश्व, सभी, सब को (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **अदेवम्** = अदेव, अविद्वान् को (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)।

ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **विदेत् =** जाने, प्राप्त हो (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **ऊर्जम् =** ऊर्जा को (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **शतक्रतुः =** सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **विदेत् =** जाने, प्राप्त हो (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) **॥ 10 ॥**

इति चतुर्थ अध्यायः

ॐ

अथ पञ्चमो अध्यायः

पावमानम् पर्वम् काण्डम् वा

(49) सूक्त 1

467. उच्चा ते जातम् अन्धसो, दिवि सत् भूम्या ददे।
उग्रम् शर्म महि श्रवः ॥ 1 ॥ 9-61-10

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा **अन्धसो =** अन्न, प्राण-धारणयुक्त **दिवि =** दिव्य, **सत् =** सत्य, नित्य **उग्रम् =** उग्र, उत्तम, प्रभावी **शर्म =** सुख, सम्मान, समृद्धि **महि =** पूज्य, महान् **श्रवः =** श्रवणशील **उच्चा =** उच्च **जातम् =** जन्म **भूम्या =** भूमि पर **ददे =** दिया है ॥ 1 ॥

भावार्थ :- हमारा जीवन परमात्मा की कृपा से महान् है। मन्त्र में कहा गया है कि तुम्हारा जन्म दिव्य तथा उच्च है। सत्य-स्वरूप है। महान् उग्र सुख भी प्राप्त है। ऐसे दिव्य जीवन को सार्थक बनाना हमारा कर्तव्य है ॥ 1 ॥

पदार्थ- उच्चा = ऊँचे (उच्च - ऊँचा, सर्वनाम)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **जातम् =** उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अन्धसो =** अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **दिवि =** दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सत् =** सत्य, नित्य (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **भूमि =** भूमि (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ददे =** दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **उग्रम् =** उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **शर्म =** सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म् = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। **महि =** महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **श्रवः =** श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 1 ॥

468. स्वादिष्ठया मदिष्ठया, पवस्व सोम धारया।
इन्द्राय पातवे सुतः ॥ 2 ॥ 9-1-1

मन्त्रार्थ :- सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **स्वादिष्ठया =** स्वादिष्ठ, **मदिष्ठया =** अत्यन्त आनन्द द्वारा **धारया =** धारण द्वारा **पवस्व =** पवित्र करो। **पातवे =** पालन करने वाले **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 2 ॥

भावार्थ :- हे सोम, ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता परमात्मा, स्वाद, आनन्द, धारणा द्वारा पवित्र करो। पालन करने वाले इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा के लिए उत्पन्न हुआ है, ऐश्वर्यवान् है ॥ 2 ॥

पदार्थ- स्वादिष्ठया = स्वादिष्ठ द्वारा (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **मदिष्ठया =** अत्यन्त आनन्दित द्वारा (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा

करना, दान करना)। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पातवे =** पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) **॥ 2 ॥**

469. वृषा पवस्व धारया, मरुत्वते च मत्सरः।
विश्वा दधानः ओजसा ॥ 3 ॥ 9-65-10

मन्त्रार्थ - वृषा = पराक्रमी **मरुत्वते =** मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए **च =** और **मत्सरः =** अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी **विश्वा =** सभी **दधानः =** धारण करते हुए **ओजसा =** ओज द्वारा, **धारया =** धार द्वारा **पवस्व =** पवित्र करो **॥ 3 ॥**

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मरुत्वते =** मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **च =** और। **मत्सरः =** अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दधानः =** धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **ओजसा =** ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) **॥ 3 ॥**

470. यः ते मदो वरेण्यः, तेना पवस्व अन्धसा।
देवावीः अघशंसहा ॥ 4 ॥ 9-61-19

मन्त्रार्थ - यः = जो **ते =** तुम्हारा **मदो =** आनन्द **वरेण्यः =** वरणीय, वरण करने योग्य, **देवावीः =** देवों को प्राप्त करने वाला, **अघशंसहा =** पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करने वाला (है) **तेना =** उस **अन्धसा =** अन्न, प्राण-धारण द्वारा **पवस्व =** पवित्र करो **॥ 4 ॥**

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदो =** आनन्दकारी (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वरेण्यः =** वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **तेना =** उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अन्धसा =** अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, आँखें मूंदना)। **देवावीः =** देवों को प्राप्त करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **अघशंसहा =** पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला (अघ् - पाप करना, अपराध करना, गिरना, शंस् - स्तुति करना, प्रशंसा करना, हन् - मारना) **॥ 4 ॥**

471. तिस्रो वाचः उदीरते, गावो मिमन्ति धेनवः।
हरिः एति कनिक्रदत् ॥ 5 ॥ 9-33-4

मन्त्रार्थ :- तिस्रो = तीन **वाचः =** वाणी **उदीरते =** उच्च गति करते हैं, उच्चारण करते हैं **गावो =** शब्द, वाणी, वचन **धेनवः =** धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **मिमन्ति =** गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं। **हरिः =** हरि, हरने वाला **कनिक्रदत् =** प्रकाश करते हुए **एति =** जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- तिस्रो = तीन (संख्या)। **वाचः =** वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **उदीरते =** उत्तम उच्चारण करते हैं (उत्+ईर - कहना बोलना, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **गावो =** शब्द, वाणी,

वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **मिमन्ति** = गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मीम - जाना, शब्द करना)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ **5** ॥

472. इन्द्राय इन्दो मरुत्वते, पवस्व मधुमत्तमः।
अर्कस्य योनिम् आसदम् ॥ 6 ॥ 9-64-22

मन्त्रार्थ :- **इन्दो** = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्यवान् के लिए, **मरुत्वते** = मरुत्वत् के लिए, मरणशील के लिए **पवस्व** = पवित्र करो। **अर्कस्य** = स्तोता का, प्रशंसक के **योनिम्** = बन्धन, संयोग-वियोग स्थल पर **आसदम्** = आसीन करो। **6** ॥

पदार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **मरुत्वते** = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **अर्कस्य** = अर्क का, स्तोता का, प्रशंसक का (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आसदम्** = बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ **6** ॥

473. असावि अंशुः मदाय, अप्सु दक्षो गिरिष्ठाः।
श्येनो न योनिम् आसदत् ॥ 7 ॥ 9-62-4

मन्त्रार्थ :- **असावि** = ऐश्वर्यमय हुआ, उत्पन्न किया **अंशुः** = अंशयुक्त **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **अप्सु** = पालन-रक्षण में **दक्षो** = दक्ष **गिरिष्ठाः** = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित **श्येनो** = श्येन **न** = के समान **योनिम्** = बन्धन, संयोग-वियोग स्थल पर **आसदत्** = आसीन हुआ, बैठता है ॥ **7** ॥

पदार्थ :- **असावि** = ऐश्वर्यमय हुआ या किया, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अंशुः** = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **अप्सु** = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **दक्षो** = दक्ष (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **गिरिष्ठाः** = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, स्थ = स्थित होना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आसदत्** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ **7** ॥

474. पवस्व दक्षसाधनो, देवेभ्यः पीतये हरे।
मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥ 8 ॥ 9-25-1

मन्त्रार्थ :- **हरे** = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले, **दक्षसाधनो** = दक्षता के साधन, **देवेभ्यः** = देवों के लिए **मरुद्भ्यो** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए, **वायवे** = वायु के **पीतये** = पान के लिए **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति

कारक को **पवस्व** = पवित्र करो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **दक्षसाधनो** = दक्षता के साधन (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **हरे** = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **मरुद्भ्यो** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वायवे** = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 8 ॥

475. परि स्वानो गिरिष्ठाः, पवित्रे सोमो अक्षरत्।
मदेषु सर्वधा असि ॥ 9 ॥ 9-18-1

मन्त्रार्थ :- सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **स्वानो** = शब्दकर्ता, **गिरिष्ठाः** = वाणी में स्थित, **पवित्रे** = पवित्र में **परि** = सभी ओर **अक्षरत्** = क्षरित हुआ (बरस गया)। **मदेषु** = आनन्दों में **सर्वधा** = सबको धारण करने वाले, सबका पोषण करने वाले **असि** = हो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्वानो** = स्वान (स्वन - शब्द करना)। **गिरिष्ठाः** = वाणी में स्थिर (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, शी-शय् - शयन करना, स्था - स्थित, स्थिर होना)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अक्षरत्** = क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सर्वधा** = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला (सर्व = सब, सबने (सर्वनाम)। धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **असि** = हो (अस् - होना) ॥ 9 ॥

476. परि प्रिया दिवः कविः, वयांसि नप्त्योः हितः।
स्वानैः याति कविक्रतुः ॥ 10 ॥ 9-9-1

मन्त्रार्थ :- कविक्रतुः = शब्दकर्ता, **प्रिया** = प्रिय, **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **कविः** = ज्ञानी, कवि, **वयांसि** = रचनाओं को **नप्त्योः** = प्रगतिशील, प्रदीप्त, शब्दकर्ता, विद्वान् का **हितः** = हितकारी, प्रगति, वृद्धि करने वाला **स्वानैः** = शब्दों द्वारा **परि** = सभी ओर **याति** = प्राप्त होता है ॥ 10 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **वयांसि** = रचनाशील को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, प्रेरणा करना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **नप्त्योः** = प्रगतिशील, प्रदीप्त, शब्दकर्ता, विद्वान् (नप् - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार

करना, चमकना)। **हितः** = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **स्वानैः** = शब्दों द्वारा (स्वन - शब्द करना)। **याति** = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **कविक्रतुः** = शब्द करने वाले (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना, कृ - करना) ॥ 10 ॥

(50) सूक्त 2

477. प्र सोमासो मदच्युतः, श्रवसे नो मघोनाम्।
सुता विदथे अक्रमुः ॥ 1 ॥ 9-32-1

मन्त्रार्थ :- नो = हमारे लिए **मदच्युतः** = आनन्द-सिंचित **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **श्रवसे** = कीर्ति, श्रवण, वाणी के लिए **मघोनाम्** = धनों, ऐश्वर्यों का **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **विदथे** = विद्या में **सोमासो** = ऐश्वर्यमय, सृष्टिकर्ता, सोमों ने **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोमासो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मद-च्युतः** = आनन्द-सिंचित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। **श्रवसे** = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मघोनाम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **विदथे** = विद्या में (विद - समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

478. प्र सोमासो विपश्चितो, अपो नयन्ते ऊर्मयः।
वनानि महिषा इव ॥ 2 ॥ 9-33-1

मन्त्रार्थ :- सोमासो = ऐश्वर्यमय, सृजनशील, **विपश्चितो** = प्रेरणादायी, मेधावी, **अपो** = पालन करने वाले, **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ, शब्दयुक्त, विद्वान्, **वनानि** = वनों को, वाणियों को **महिषा** = महिमावान्, महान् **इव** = के समान **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नयन्ते** = ले जाते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोमासो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य-सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विपश्चितो** = प्रेरणादायी, मेधावी (वि = विशेष, विना, विलोम, पश् = देखना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **नयन्ते** = ले जाते हैं (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **वनानि** = अनेक वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **महिषा** = महिष, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **इव** = की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 2 ॥

479. पवस्व इन्दो वृषा सुतः, कृधी नो यशसो जने।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥ 3 ॥ 9-61-28

मन्त्रार्थ - इन्दो = हे इन्दु **वृषा** = पराक्रमी **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **पवस्व** = पवित्र करो। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **यशसो** = यश, कीर्ति **जने** = जन में, लोग में **कृधी** = करो। **विश्वा** = सभी **द्विषो** = द्वेषी को **अप** = दूर **जहि** = हनन करो, नष्ट करो ॥ 3 ॥

पदार्थ - **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इन्दो** = हे इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **कृधी** = करो (कृ = करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **यशसो** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **जने** = जन में, लोग में (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा – परित्याग करना, छोड़ना) **॥ 3 ॥**

480. वृषा हि असि भानुना, द्युमन्तम् त्वा हवामहे।
पवमान स्वर्दृशम् ॥ 4 ॥ 9-65-4

मन्त्रार्थ - **पवमान** = हे पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले, **हि** = निश्चय ही **भानुना** = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा **वृषा** = पराक्रमी **असि** = हो। **त्वा** = तुम **द्युमन्तम्** = अग्रगामी, तेजस्वी, **स्वर्दृशम्** = ऐश्वर्यदृष्टा को **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **वृषा** = पराक्रमी (वृष - विशिष्ट होना, पराक्रमी होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, हिंसा करना, दुःख देना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **भानुना** = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, समीप जाना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **पवमान** = हे पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **स्वर्दृशम्** = ऐश्वर्यदृष्टा को (स्वः = सुख (अव्यय)। सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना। दृश्-पश्य = देखना) **॥ 4 ॥**

481. इन्दुः पविष्ट चेतनः, प्रियः कवीनाम् मतिः।
सृजत् अश्वम् रथीः इव ॥ 5 ॥ 9-64-10

मन्त्रार्थ - **इन्दुः** = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् **चेतनः** = चेतन, चुना गया, एकत्र **प्रियः** = प्रिय **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का **मतिः** = मति, मननशक्ति **पविष्ट** = पवित्र करो, पालन करो। **अश्वम्** = अश्व को, तीव्रामी, व्यापक को **रथीः** = रथी **इव** = के समान **सृजत्** = सृजन करो **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **पविष्ट** = पवित्र, पालन,करने वाले (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चेतनः** = चेतन, चुना गया, एकत्र (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **प्रियः** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **मतिः** = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **सृजत्** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) **॥ 5 ॥**

482. असृक्षत प्र वाजिनो, गव्या सोमासो अश्वया।

शुक्रासो वीरया आशवः ॥ 6 ॥ 9-64-4

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, विद्यायुक्त, **गव्या** = कथनीय **सोमासो** = सृजनशील, ऐश्वर्यमय, **अश्वया** = बलवान्, व्यापक, आशुगामी, **शुक्रासो** = शुक्र, शुद्ध, पवित्र, शीघ्रकारी **वीरया** = वीरता युक्त **आशवः** = बलवान्, व्यापक, आशुगामी **असृक्षत** = संचरण किया, पाया ॥ 6 ॥

पदार्थ :- असृक्षत = संचरण किया, गये, पाया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **गव्या** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **सोमासो** = सृजनशील, ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **शुक्रासो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **वीरया** = वीरता युक्त (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **आशवः** = बलवान्, व्यापक, आशुगामी (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - बल होना, जाना, जानना, पाना, विकार होना) ॥ 6 ॥

483. पवस्व देवः आयुषक्, इन्द्रम् गच्छतु ते मदः।
वायुम् आरोह धर्मणा ॥ 7 ॥ 9-63-22

मन्त्रार्थ :- आयुषक् = आयुष्, आयुदाता, मिलाने वाले **देवः** = तेजस्वी, देव, **पवस्व** = पवित्र करो। **ते** = तुम्हारा **मदः** = हर्ष, तृप्ति **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **गच्छतु** = जाये, प्राप्त हो। **वायुम्** = वायु को **धर्मणा** = धर्म द्वारा **आरोह** = समन्तात्, सम्यक्, आरोहण करें, बढ़ें ॥ 7 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आयुषक्** = आयुष (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गच्छतु** = जाये (गम्-गच्छ् = जाना, जानना, पाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रोह** = चढ़ें, बढ़ें (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ 7 ॥

484. पवमानो अजीजनत्, दिवः चित्रम् न तन्यतुम्।
ज्योतिः वैश्वानरम् बृहत् ॥ 8 ॥ 9-61-16

मन्त्रार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **चित्रम्** = विचित्र, अद्भुत, चेतन, **तन्यतुम्** = विस्तार **न** = के समान **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **ज्योतिः** = प्रकाश, **बृहत्** = महान्, बृहत् **वैश्वानरम्** = विश्वजन को, वैश्वानर को **अजीजनत्** = उत्पन्न किया ॥ 8 ॥

पदार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज -

जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **चित्रम् =** चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र् - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तन्यतुम् =** विस्तार (तन्- तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **ज्योतिः =** प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वैश्वानरम् =** विश्वजन को, वैश्वानर को (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **॥ 8 ॥**

485. परि स्वानासः इन्दवो, मदाय बर्हणा गिरा।
मधो अर्षन्ति धारया॥ 9 ॥ 9-10-4

मन्त्रार्थ :- स्वानासः = शब्दकर्ता **इन्दवो =** इन्दुगण **मदाय =** मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **मधो =** मधुर, आनन्द, हर्ष, तृप्ति, **बर्हणा =** महान् **गिरा =** वाणी, बोध, सिञ्चन द्वारा, **धारया =** धारा द्वारा **परि =** सभी ओर **अर्षन्ति =** अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं **॥ 9 ॥**

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्वानासः =** शब्द करते हुए (स्वन - शब्द करना)। **इन्दवो =** इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय =** मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **बर्हणा =** बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **गिरा =** वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **मधो =** मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **अर्षन्ति =** अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) **॥ 9 ॥**

486. परि प्रासिष्यदत् कविः, सिन्धोः ऊर्मौ अधि श्रितः।
कारुम् बिभ्रत् पुरुस्पृहम्॥ 10 ॥ 9-14-1

मन्त्रार्थ - कविः = ज्ञानी, कवि **सिन्धोः =** सिन्धु की **ऊर्मौ =** ऊर्मि में **अधि =** अधिगत **श्रितः =** सेवित, आश्रय, आश्रित **कारुम् =** कर्मशील, **बिभ्रत् =** भरण, धारण करता हुआ **पुरुस्पृहम् =** बहुत इच्छा करने वाले को **परि =** सभी ओर **प्रासिष्यदत् =** सिञ्चन किया **॥ 10 ॥**

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रासिष्यदत् =** सिञ्चन किया (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, सिष्-सिच् - सिंचन करना, सेचन करना) **कविः =** ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **सिन्धोः =** समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **ऊर्मौ =** ऊर्मि का (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **श्रितः =** सेवित, परिपक्व, आश्रित (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। **कारुम् =** कर्मशील (कृ = करना)। **बिभ्रत् =** भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **पुरुस्पृहम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुरु - बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) **॥ 10 ॥**

(51) सूक्त 3

487. उपो षु जातम् अप्तुरम्, गोभिः भङ्गम् परिष्कृतम्।
इन्दुम् देवाः अयासिषुः ॥ 1 ॥ 9-61-13

मन्त्रार्थ :- **देवाः** = देव **उपो** = समीप **षु** = उत्तम **जातम्** = उत्पन्न, **अप्तुरम्** = पालन करने वाले, **भङ्गम्** = प्रकाशमान **परिष्कृतम्** = परिष्कृत **इन्दुम्** = परम ऐश्वर्य को **गोभिः** = शब्दों द्वारा **अयासिषुः** = प्राप्त होते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **उपो** = समीप (उपसर्ग)। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अप्तुरम्** = पालन करने वाले को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - शब्द करना, मनन करना)। **भङ्गम्** = भङ्ग को, प्रकाश को, भञ्जन को (भञ्ज् = प्रकाशित होना, चमकना, बोलना, कहना, हिंसा करना, गति करना, खेलना, भञ्जन करना, नष्ट करना)। **परिष्कृतम्** = परिष्कृत, परिष्कार को (परिः - सब ओर, कृ - करना)। **इन्दुम्** = इन्दु को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **देवाः** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अयासिषुः** = प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना) ॥ 1 ॥

488. पुनानो अक्रमीत् अभि, विश्वा मृधो विचर्षणिः।
शुम्भन्ति विप्रम् धीतिभिः ॥ 2 ॥ 9-40-1

मन्त्रार्थ :- **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **विश्वा** = विश्व, सभी **मृधो** = हिंसक, आद्र **विचर्षणिः** = विशेष विचारशील **पुनानो** = रक्षक, पवित्रकर्ता ने **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को **धीतिभिः** = धारणा, बुद्धि, प्रज्ञा द्वारा **शुम्भन्ति** = शोभित करते हैं, प्रकाशित करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विश्वा** = विश्व, सभी (सर्वनाम)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **शुम्भन्ति** = शोभित होते हैं, प्रकाशित होते हैं (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **धीतिभिः** = धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 2 ॥

489. आविशन् कलशम् सुतो, विश्वा अर्षन् अभि श्रियः।
इन्दुः इन्द्राय धीयते ॥ 3 ॥ 9-62-19

मन्त्रार्थ - **कलशम्** = कलश को **आविशन्** = प्रवेश करते हुए, प्रवेश करने वाले **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **विश्वा** = सभी **अर्षन्** = अन्तर्दर्शन करने हुए, विद्यमान **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **श्रियः** = श्री, श्रेय, शोभाओं को **इन्दुः** = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् **इन्द्राय** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् के लिए **धीयते** = धारण किया जाता है ॥ 3 ॥

पदार्थ - **आविशन्** = प्रवेश करते हुए, प्रवेश करने वाले (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, विश् = प्रवेश करना, फैलना)। **कलशम्** = कलश को (कल - गणना करना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, छेदन करना)। **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, अमानवी पराक्रम होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी (सर्वनाम)। **अर्षन्** = अन्तर्दर्शन करने हुए, विद्यमान (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **श्रियः** = श्री, शोभाओं को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **धीयते** = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना) ॥ 3 ॥

490. असर्जि रथ्यो यथा, पवित्रे चम्वोः सुतः।
कार्ष्मन् वाजी न्यक्रमीत्॥ 4॥ 9-36-1

मन्त्रार्थ - **यथा** = जैसे **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **रथ्यो** = रथी ने **पवित्रे** = पवित्र में **चम्वोः** = भोजन, प्राप्ति से **असर्जि** = सृजन किया, **कार्ष्मन्** = आकर्षक **वाजी** = बलवान् ने **न्यक्रमीत्** = निरन्तर वृद्धि की, रक्षा की॥ **4**॥

पदार्थ - **असर्जि** = सृजन किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, उत्पादन करना)। **रथ्यो** = रथ्य (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चम्वोः** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला (चम - खाना, पाना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, अमानवी पराक्रम होना)। **कार्ष्मन्** = आकर्षण (कृष् - कर्षण करना, आकर्षण करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **न्यक्रमीत्** = निरन्तर, वृद्धि की, रक्षा की (नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय) अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)॥ **4**॥

491. प्र यत् गावो न भूर्णयः, त्वेषा अयासो अक्रमुः।
घ्नन्तः कृष्णाम् अप त्वचम्॥ 5॥ 9-41-1

मन्त्रार्थ :- **यत्** = जो **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **न** = के समान **भूर्णयः** = धारण-पोषण करने वाले, **त्वेषा** = प्रकाशवान्, **अयासो** = प्रगतिशील, प्राप्तकर्ता ने **कृष्णाम्** = कृष्णा **त्वचम्** = आवरण को **अप** = दूर **घ्नन्तः** = नष्ट करते हुए **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की॥ **5**॥

पदार्थ :- **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भूर्णयः** = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। **त्वेषा** = प्रकाशवान् (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। **अयासो** = प्राप्त करता हूँ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **घ्नन्तः** = नष्ट करते हुए (हन् - मारना)। **कृष्णाम्** = कृष्ण को (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **त्वचम्** = त्वचा, चर्म, खाल को (त्वच - आच्छादित करना, लपेटना, ढांकना)॥ **5**॥

492. अपघ्नन् पवसे मृधः, क्रतुवित् सोम मत्सरः।
नुदस्व अदेवयुम् जनम्॥ 6॥ 9-63-24

मन्त्रार्थ :- **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम! **क्रतुवित्** = कर्मवेत्ता, **मत्सरः** = आनन्दगामी, **मृधः** = हिंसक को **अपघ्नन्** = अपहनन करते हुए, दूर कर मारते हुए **पवसे** = पवित्र करते हो, पालन-रक्षा करते हो। **अदेवयुम्** = अविद्वान्, अदेवयुक्त **जनम्** = जन को **नुदस्व** = प्रेरित करें, भेजें॥

पदार्थ :- **अपघ्नन्** = अपहनन करते हुए, मारते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार, हन् - मारना)। **पवसे** = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मृधः** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **क्रतुवित्** = कर्मवेत्ता, कर्म को जानने वाले (कृ = करना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना,

मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **नुदस्व =** भेजें (नुद् = भेजना, प्रेरणा करना, जाना)। **अदेवयुम् =** अदेवयु, अविद्वान् को, अदेवयुक्त को (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **जनम् =** जन को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **॥ 6 ॥**

493. अया पवस्व धारया, यया सूर्यम् अरोचयः।
हिन्वानो मानुषीः अपः ॥ 7 ॥ 9-63-7

मन्त्रार्थ :- मन्त्रार्थ :- अया = इस **धारया =** धारा द्वारा **पवस्व =** पवित्र करो, **यया =** जिससे **मानुषीः =** मननशील **अपः =** पालनकर्ता को **हिन्वानो** = प्रेरणा करते हुए **सूर्यम् =** सूर्य, सृजनशील को **अरोचयः =** प्रकाशित करते हो **॥ 7 ॥**

पदार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **यया =** पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना)। **सूर्यम् =** सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अरोचयः =** प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता है (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **मानुषीः =** मानुषी, मनन करने वाले (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **अपः =** पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना) **॥ 7 ॥**

494. सः पवस्व यः आविथः, इन्द्रम् वृत्राय हन्तवे।
वव्रिवांसम् महीः अपः ॥ 8 ॥ 9-61-22

मन्त्रार्थ - सः = वह **पवस्व =** पवित्र करे **यः =** जो **वृत्राय =** हिंसा के **हन्तवे =** हन्ता के लिए **आविथः =** रक्षक, **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली, **वव्रिवांसम्** = प्रिय, आच्छादन कर्ता, **महीः =** महान्, **अपः =** पालन कर्ता (है) **॥ 8 ॥**

पदार्थ - सः = वह, उसने (सर्वनाम)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **आविथ =** रक्षक, रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **इन्द्रम् =** परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वृत्राय =** वृत्र, हिंसा के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हन्तवे =** मारने के लिए (हन् - मारना)। **वव्रिवांसम्** = नियोजित, आच्छादित करने वाले (व्री = ढूँढ़ के निकालना, प्रिय होना, बीनना, आच्छादन करना, ढकना)। **महीः =** महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अपः =** पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना) **॥ 8 ॥**

495. अया वीती परि स्रव, यः ते इन्दो मदेषु आ।
अवाहन् नवतीः नव ॥ 9 ॥ 9-61-1

मन्त्रार्थ - मन्त्रार्थ - इन्दो = हे इन्दु, परम ऐश्वर्यशाली, **अया =** इस **वीती =** गति, व्याप्ति, प्रकाश द्वारा **परि =** सभी ओर **स्रव =** प्रवाह करो, **यः =** जिसने **ते =** तुम्हारा **नवतीर्नव =** नये-नये **मदेषु =** आनन्दों में **आ =** समन्तात्, सम्यक्, **अवाहन् =** वहन किया **॥ 9 ॥**

पदार्थ - अया = इस (सर्वनाम)। **वीती =** गति, व्याप्ति, प्रकाश (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश

होना, चमकना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्दो** = हे इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **अवाहन्** = वहन किया, अवाहित करते हुए, हनन करता है (अ+वह्, अव+आ+हन्, अ - नहीं, अव - नीचे, दूर, प्राप्त, अव् - रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, आ - समन्तात्, सम्यक्, आगम (उपसर्ग), वह् - वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना)। **नवतीः** = नब्बे (संख्या)। **नव** = नौ (संख्या) **॥ 9 ॥**

496. परि द्युक्षम् सनद् रयिम्, भरत् वाजम् नो अन्धसा।
स्वानो अर्ष पवित्रे आ ॥ 10 ॥ 9-52-1

मन्त्रार्थ - **परि** = सभी ओर **सनद्** = सेवा, दान, पूजा करते हुए, **द्युक्षम्** = प्रकाशमान **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **भरत्** = भरण करते हुए, **वाजम्** = बल, विद्या, प्रगति को **अन्धसा** = अन्न, प्राण-धारण द्वारा **नो** = हमारे लिए **स्वानो** = शब्दकर्ता **पवित्रे** = पवित्र में **आ** = समन्तात्, सम्यक् **अर्ष** = अन्तर्दर्शन करे। **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **द्युक्षम्** = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **सनद्** = सेवा, दान, पूजा कर (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **भरत्** = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अन्धसा** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **स्वानो** = स्वान, शब्द करने वाला (स्वन - शब्द करना)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पवित्रे** = पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) **॥ 10 ॥**

(52) सूक्त 4

497. अचिक्रदत् वृषा हरिः, महान् मित्रो न दर्शतः।
सम् सूर्येण दिद्युते ॥ 1 ॥ 9-2-6

मन्त्रार्थ :- **हरिः** हरि ने **वृषा** पराक्रमी **अचिक्रदत्** किया, **महान्** महान् **मित्रः** मित्र **न** के समान **दर्शतः** दिखायी पड़ता है। **सूर्येण** सूर्य, प्रकाशमान, ऐश्वर्यवान् द्वारा **सम्** सम्यक् **दिद्युते** प्रकाशित करता है **॥ 1 ॥**

भावार्थ :- परमात्मा मित्र के समान है। हम सबको उसने ही पराक्रमी किया है। उसकी शक्ति से ही हम पराक्रम करने में समर्थ हैं। **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- **अचिक्रदत्** = किया (कृ- करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **महान्** = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। **मित्रः** = मित्र (मिद - स्निग्ध होना, पिघलना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, प्रीति करना, प्यार करना)। **न** = नहीं। **दर्शतः** = दिखता (दृश् - देखना)। **सम्** = साथ, सम्यक् रूप से, भलीभाँति (उपसर्ग)। **सूर्येण** = सूर्य के (सुर् = प्रकाश होना, ऐश्वर्य होना)। **दिद्युते** = प्रकाशित करता है (द्युत - चमकना, प्रकाशित होना) **॥ 1 ॥**

498. आ ते दक्षम् मयोभुवम्, वह्निम् अद्य आ वृणीमहे।
पान्तम् आ पुरुस्पृहम् ॥ 2 ॥ 9-65-28

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारे लिए **अद्य =** आज **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दक्षम् =** दक्ष, **मयोभुवम् = प्र**गतिजन्य, ज्ञानभूत, **वह्निम् =** वहन करने वाले, **पान्तम् =** रक्षण करते हुए, पीते हुए **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **पुरुस्पृहम् =** बहु इच्छा करने वाले को **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वृणीमहे =** वरण करते हैं **॥ 2 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ते =** तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दक्षम् =** दक्ष को (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **मयोभुवम् =** विद्वान्, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले को (मय् - जाना, जानना, पाना)। **वह्निम् =** वहन करने वाले को (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **अद्य =** आज (अव्यय)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वृणीमहे =** वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **पान्तम् =** रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पुरुस्पृहम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) **॥ 2 ॥**

499. अध्वर्यो अद्रिभिः सुतम्, सोमम् पवित्रे आ नय।
पुनाहि इन्द्राय पातवे ॥ 3 ॥ 9-51-1

मन्त्रार्थ :- अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय **अद्रिभिः =** आदरणीयों द्वारा **सुतम् =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को **पवित्रे =** पवित्र में **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नय =** ले जाओ। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **पातवे =** पालन करने वाले के लिए **पुनाहि =** पवित्र करो **॥ 3 ॥**

पदार्थ :- अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **अद्रिभिः =** अद्रियों द्वारा (दृ - आदर-सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सुतम् =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **पवित्रे =** पवित्र में (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नय =** ले जाओ (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **पुनाहि =** पवित्र करो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पातवे =** पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना) **॥ 3 ॥**

500. तरत् सः मन्दी धावति, धारा सुतस्य अन्धसः।
तरत् सः मन्दी धावति ॥ 4 ॥ 9-58-1

मन्त्रार्थ :- सः = वह **मन्दी =** आनन्ददायक, तुष्टिदायक **तरत् =** तैरते हुए, तरते हुए **धावति =** दौड़ता है। **सुतस्य =** ऐश्वर्यवान्, सृजनशील के **अन्धसः =** प्राणवान् द्वारा **धारा =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो। **तरत् =** तैरते हुए, तरते हुए **सः =** वह **मन्दी =** आनन्ददायक, तुष्टिदायक **धावति =** दौड़ता है **॥ 4 ॥**

पदार्थ :- तरत् = तैरता है, तरता है (तॄ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सः =** वह, उसने (सर्वनाम)। **मन्दी =** आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धावति =** दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **धारा =** धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **सुतस्य =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **अन्धसः =** प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **तरत् =** तैरता है,

तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सः =** वह, उसने (सर्वनाम)। **मन्दी =** आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धावति =** दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) **॥ 4 ॥**

501. आ पवस्व सहस्रिणम्, रयिम् सोम सुवीर्यम्।
अस्मे श्रवांसि धारय ॥ 5 ॥ 9-63-1

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **सहस्रिणम् =** सहस्री **रयिम् =** विद्या, **सुवीर्यम् =** उत्तम वीरता को **आ =** सम्यक् **पवस्व =** पवित्र करो। **अस्मे =** हमारे लिए **श्रवांसि =** श्रवणीय को **धारय =** धारण करो **॥ 5 ॥**

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सहस्रिणम् =** सहस्री को (संख्या)। **रयिम् =** विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **सोम =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुवीर्यम् =** उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अस्मे =** हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **श्रवांसि =** श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **धारय =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) **॥ 5 ॥**

502. अनु प्रत्नासः आयवः, पदम् नवीयो अक्रमुः।
रुचे जनन्त सूर्यम् ॥ 6 ॥ 9-23-2

मन्त्रार्थ - प्रत्नासः = प्रसिद्ध, प्राचीन, पूर्व **आयवः =** आयु वाले, शासक, मिलाने वाले ने **नवीयो =** नवीन **पदम् =** पद को **अनु =** अनुकूल **अक्रमुः =** बढाया, वृद्धि की, रक्षा की। **रुचे =** रुचि के लिए, प्रकाश के लिए **सूर्यम् =** सूर्य, सृजनशील को **जनन्त =** उत्पन्न करता है **॥ 6 ॥**

पदार्थ - अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **प्रत्नासः =** प्रसिद्ध, पूर्व (प्रत्न = प्राचीन, पूर्व (सर्वनाम)। प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना) **आयवः =** उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय - शब्द करना, चलना, जाना, जानना, पाना। आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना)। **पदम् =** पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **नवीयो =** उत्तम स्तुति को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **अक्रमुः =** वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **रुचे =** रुचि के लिए, प्रकाश के लिए, रुचि में, प्रकाश में (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **जनन्त =** उत्पन्न करता है (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्यम् =** सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) **॥ 6 ॥**

503. अर्षा सोम द्युमत्तमो, अभि द्रोणानि रोरुवत्।
सीदन् योनौ वनेषु आ ॥ 7 ॥ 9-65-19

मन्त्रार्थ :- सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **द्युमत्तमो =** अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान **अर्षा =** अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन करो। **द्रोणानि =** प्रगतिशील **अभि =** अभिमुख **रोरुवत् =** शब्द करता है। **योनौ =** योनि में, स्थान में, गृह में, मिलन में **वनेषु =** वाणी में, वनों में **आ =** समन्तात्, सम्यक् **सीदन् =** संचरित, प्रतिष्ठित होते हैं **॥ 7 ॥**

पदार्थ :- अर्षा = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन

करना)। **सोम =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, अर्क निकालना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्युमत्तमो =** अत्यन्त अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्रोणानि =** हिंसा, प्रगति, कुटिलता (द्रु - जाना, शीघ्रता से जाना, चलना, बहना, प्रवाहित होना, द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिल होना)। **रोरुवत्** = शब्द करते हुए (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **सीदन् =** बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **योनौ =** योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **वनेषु =** वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) **॥ 7 ॥**

504. वृषा सोम द्युमान् असि, वृषा देव वृषव्रतः।
वृषा धर्माणि दधिषे ॥ 8 ॥ 9-64-1

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **वृषा =** पराक्रमी, **द्युमान् =** प्रकाशमान, तेजस्वी **असि =** हो। **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **वृषा =** पराक्रमी **वृषव्रतः =** पराक्रम व्रती, सिंचक व्रती **वृषा =** पराक्रमी **धर्माणि =** धर्मों को **दधिषे =** धारण करते हो **॥ 8 ॥**

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सोम =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्युमान् =** प्रकाशमान, तेजस्वमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **असि =** हो (अस् - होना)। **वृषा =** पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वृषव्रतः =** पराक्रम व्रती, सिंचक व्रती (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, वृत् - रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ - नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **वृषा =** पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **धर्माणि =** धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **दधिषे =** धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) **॥ 8 ॥**

505. इषे पवस्व धारया, मृज्यमानो मनीषिभिः।
इन्दो रुचा अभि गाः इहि ॥ 9 ॥ 9-64-13

मन्त्रार्थ :- इन्दो = हे इन्दु, परम ऐश्वर्यवान्, **इषे =** प्रगति, ज्ञान, इच्छा के लिए **धारया =** धार द्वारा, धारण द्वारा **मनीषिभिः =** मनीषियों द्वारा **मृज्यमानो** = अलंकृत करता हुआ, अलंकृत होता हुआ **रुचा =** रुच द्वारा **गाः =** गान, गायक **अभि =** अभिमुख **इहि =** आएँ **॥ 9 ॥**

पदार्थ :- इषे = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना,

जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मृज्यमानो** = अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा (मन् = जानना, समझना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **रुचा** = रुच को, रुच द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **इहि** = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना) ॥ 9 ॥

506. मन्द्रया सोम धारया, वृषा पवस्व देवयुः।
अव्या वारेभिः अस्मयुः ॥ 10 ॥ 9-6-1

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **वृषा** = पराक्रमी, **अस्मयुः** = हमारे **अव्या** = पालनीय, रक्षणीय **देवयुः** = देव, **मन्द्रया** = स्तुति द्वारा, **धारया** = धारा द्वारा **वारेभिः** = इच्छाओं द्वारा **पवस्व** = पवित्र करो ॥ **10** ॥

पदार्थ - **मन्द्रया** = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देवयुः** = देव-यु, देव-मिलन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **अव्या** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारेभिः** = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अस्मयुः** = हमारा (सर्वनाम) ॥ **10** ॥

507. अया सोम सुकृत्यया, महान् सन् अभ्यवर्धथाः।
मन्दानः इत् वृषायसे ॥ 11 ॥ 9-47-1

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **अया** = गति, प्रेरणा, **सुकृत्यया** = उत्तम कृत्य, **महान्** = पूज्य, महान् **सन्** = ही **अभ्यवर्धथाः** = सभी ओर, सर्वथा बढ़ता हुआ, चमकता हुआ **मन्दानः** = आनन्दित होता हुआ **इत्** = ही **वृषायसे** = पराक्रम करता है, वर्षा करता है ॥ **11** ॥

पदार्थ - **अया** = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुकृत्यया** = उत्तम कृत्यों द्वारा (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग) कृ = करना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **सन्** = ही। **अभ्यवर्धथाः** = सभी ओर, सर्वथा बढ़ता हुआ, चमकता हुआ (अभि = अभिमुख, विशेष,

प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, आ - समन्तात्, पूर्णतः, वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **मन्दानः =** आनन्दित होता हुआ (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **वृषायसे =** पराक्रमी है (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) ॥ **11** ॥

508. अयम् विचर्षणिः हितः, पवमानः स चेतति।
हिन्वानः आप्यम् बृहत् ॥ 12 ॥ 9-62-10

मन्त्रार्थ - **अयम् =** यह **विचर्षणिः =** विशेष विचार करने वाले **हितः =** हित, गति, वृद्धि कर्ता (है)। **स =** वह **पवमानः =** पवित्र कर्ता, पालक-रक्षक **हिन्वानः =** संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा करता हुआ **आप्यम् =** व्याप्त, व्यापक को **बृहत् =** महान्, बृहत् **चेतति =** चेतता है, चेतन करता है, चुनता है, एकत्र करता है ॥ **12** ॥

पदार्थ - **अयम् =** यह (सर्वनाम)। **विचर्षणिः =** विशेष विचार करने वाले (चर्ष्-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **हितः =** हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **पवमानः =** पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **स =** वह, उसने (सर्वनाम)। **चेतति =** चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **हिन्वानः =** संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **आप्यम् =** आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ **12** ॥

509. प्र नः इन्दो महे तु नः, ऊर्मि न बिभ्रत् अर्षसि।
अभि देवान् अयास्यः ॥ 13 ॥ 9-44-1

मन्त्रार्थ - **इन्दो =** हे इन्दु, **महे =** हे महान्, पूज्य, **नः =** हमारे लिए **तु =** तो, **नः =** हमारे लिए **ऊर्मि =** ऊर्मि **न =** के समान **बिभ्रत् =** भरण, धारण करते हुए **देवान् =** देवगणों को **अभि =** अभिमुख **अयास्यः =** प्राप्य होकर **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख **अर्षसि =** अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो। ॥ **13** ॥

पदार्थ - **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्दो =** हे इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **तु =** तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **ऊर्मि =** ऊर्मि (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **बिभ्रत् =** भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **अर्षसि =** अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **देवान् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अयास्यः =** प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना) ॥ **13** ॥

510. अपघ्नन् पवते मृधो, अप सोमो अराव्णः।
गच्छन् इन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ 14 ॥ 9-61-25

मन्त्रार्थ :- इन्द्रस्य = इन्द्र का **निष्कृतम् =** निष्कृत, निश्चित कृत **सोमो =** ऐश्वर्य, सृष्टि, सोम **मृधो =** हिंसक को **अपघ्नन् =** अपहनन करते हुए, मारते हुए, **अराव्णः =** अदानी, अप्रगतिशील, शब्दहीन को **अप गच्छन् =** दूर ले जाते

हुए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **॥ 14 ॥**

पदार्थ :- अपघ्नन् = अपहनन करते हुए, मारते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार, हन् - मारना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अराव्णः** = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रा - देना, रव - जाना, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, ध्वनि करना)। **गच्छन्** = जाते हुए (गम्-गच्छ् = जाना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना) **॥ 14 ॥**

(53) सूक्त 5

511. पुनानः सोम धारया, अपो वसानो अर्षसि।
आ रत्नधा योनिम् ऋतस्य, सीदसि उत्सो देवो हिरण्ययः ॥ 1 ॥ 9-107-4

मन्त्रार्थ :- सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **पुनानः** = पवित्रकर्ता **उत्सो** = उत्स, आद्र, द्रव, प्रवाहमान, **देवो** = देव, **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, प्रगतिशील, स्तुतिकर्ता, **अपो** = पालन करने वाले **वसानो** = वास करते हुए, धारण करते हुए **धारया** = धारण द्वारा **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो। **आ** = समन्तात्, सम्यक् **रत्नधा** = रत्न को धारण करने वाले **ऋतस्य** = ऋत का **योनिम्** = योनि में **सीदसि** = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित होते हो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रत्नधा** = रत्न, रमणीय को धारण करने वाला (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा् - धारण करना, पहनना, पोषण करना)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सीदसि** = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, शुष्क होना, भग्न करना, नष्ट करना)। **उत्सो** = उत्स, आद्र (उद् - आद्र होना, कष्ट होना। उत् = ही, उत्कृष्ट, उच्च, सु = उत्पन्न करना, जनना, अमानवी पराक्रम होना)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) **। 1 ।**

512. परि इतो षिञ्चता सुतम्, सोमो यः उत्तमम् हविः।
दधन्वान् यो नर्यो अप्सु अन्तः, आ सुषाव सोमम् अद्रिभिः ॥ 2 ॥ 9-107-1

मन्त्रार्थ :- परि = सभी ओर **इतो** = यहां **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **सोमो** = ऐश्वर्यमय **षिञ्चता** = सिञ्चन करे, **यः** = जो **उत्तमम्** = उत्तम **हविः** = हवि, दान योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (है)। **यो** = जिसने **सोमम्** =

सोम को, सृष्टिकर्ता, ऐश्वर्यवान् को **नर्यो** = ले जाने योग्य, नर के योग्य **अप्सु** = पालको के **अन्तः** = भीतर **दधन्वान्** = धारण किया, **अद्रिभिः** = अद्रियों, अहिंसकों द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक् **सुषाव** = सृजन किया ॥ 2 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **इतो** = यहां से। **षिञ्चता** = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **दधन्वान्** = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **नर्यो** = नर्य (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अप्सु** = अपः का, पालन करने वाले (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सुषाव** = सृजित करना, आसवन करना (सु - अच्छा, सुन्दर, स - सहित, साथ, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों, अहिंसकों द्वारा (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) ॥

513. आ सोम स्वानो अद्रिभिः, तिरो वाराणि अव्यया।
जनो न पुरि चम्वो विशत्, हरिः सदो वनेषु दधिषे ॥ 3 ॥ 9-107-10

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, अन्तकर्ता, सोम! **आ** = समन्तात्, सम्यक् **स्वानो** = स्वान, ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता **अद्रिभिः** = अहिंसकों द्वारा **अव्यया** = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षण द्वारा **तिरो** = पार कराने वाले **वाराणि** = वरणीय **जनो** = जन **न** = के समान **पुरि** = पूर्व, अग्रणी **चम्वो** = प्राप्त करने वाला **विशत्** = प्रविष्ट हो। **हरिः** = हरि, हरणशील **सदो** = प्रतिष्ठित, प्रगतिशील **वनेषु** = वाणी में, वनों में **दधिषे** = धारण करते हो ॥ 3 ॥

पदार्थ -आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, अन्तकर्ता, सोम! (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **स्वानो** = स्वान, ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना। सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना। स्वन् - शब्द करना)। **अद्रिभिः** = अहिंसकों द्वारा (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **तिरो** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वाराणि** = वरण, वरणीय, वरण करने वाले (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यया** = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षणीय द्वारा, बन्धन द्वारा (अ = नहीं, वि - विशेष (उपसर्ग), इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना, अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **जनो** = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पुरि** = पहले हुआ, पूर्व हुआ, पुरा-भूत, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चम्वो** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला (चम्ब् - मर्दन करना, भय दिखाना, चम - खाना, पाना)। **विशत्** =

प्रविष्ट हो (विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना, चारों ओर फैलना)। **हरिः =** हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सदो =** स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **वनेषु =** वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **दधिषे =** धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) **॥ 3 ॥**

514. प्र सोम देववीतये, सिन्धुः न पिप्ये अर्णसा।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविः, अच्छा कोशम् मधुश्चुतम् ॥ 4 ॥ 9-107-12

मन्त्रार्थ :- सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **देववीतये =** देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **अर्णसा =** प्रगतिशील, अहिंसक द्वारा **सिन्धुः =** समुद्र **न =** के समान **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **पिप्ये =** बढ़ता है। **अंशोः =** अंशु का **पयसा =** विस्तार, प्रगति, प्रवाह द्वारा **मदिरो =** आनन्दकारी **न =** के समान **जागृविः =** जाग्रत **मधुश्चुतम् =** मधुप्रवाहित **कोशम् =** कोश को **अच्छा =** अच्छा बनाओ, स्वच्छ करो **॥ 4 ॥**

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोम =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **देववीतये =** देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। **सिन्धुः =** समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पिप्ये =** बढ़ता है (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बड़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना)। **अर्णसा =** अर्ण, प्रगतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक द्वारा (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **अंशोः =** अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **पयसा =** पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **मदिरो =** आनन्दकारी (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जागृविः =** जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **अच्छा =** अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **कोशम् =** कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुश्चुतम् =** मधुश्चुत, मधुप्रवाहित को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना) **॥ 4 ॥**

515. सोमः उ ष्वाणः सोतृभिः, अधि ष्णुभिः अवीनाम्।
अश्वया इव हरिता याति धारया, मन्द्रया याति धारया ॥ 5 ॥ 9-107-8

मन्त्रार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **उ =** निश्चय ही **ष्वाणः =** ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता **सोतृभिः =** ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ताओं द्वारा **अधि =** अधिगत, अधिक **ष्णुभिः =** झरने वाले **अवीनाम् =** व्याप्तों, रक्षकों के **अश्वया =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **इव =** के समान **हरिता =** हरित् **धारया =** धार द्वारा **याति =** जाता है, **मन्द्रया =** स्तुत्य द्वारा, आनन्दकर **धारया =** धार द्वारा **याति =** जाता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **उ =** निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **ष्वाणः =** ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना। सू =

प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना। स्वन् - शब्द करना)। **सोतृभिः** = उत्पन्न करने वाले द्वारा (सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **ष्णुभिः** = झरने वाले (स्नु - भाप से टपकना, झरना, चूना)। **अवीनाम् =** व्याप्तों का, रक्षकों का (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना)। **अश्वया =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **हरिता =** हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **याति =** जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मन्द्रया =** स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **याति =** जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) **॥ 5 ॥**

516. तव अहम् सोम रारण, सख्ये इन्दो दिवेदिवे।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति, माम् अव, परिधीन् रति तान् इहि ॥ 6 ॥ 9-107-19

मन्त्रार्थ :- सोम = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता! **इन्दो =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **अहम् =** मैं **दिवेदिवे =** प्रतिदिन **तव =** तुम्हारे **सख्ये =** सखाभाव में, मित्रभाव में **रारण =** रण, शब्द, प्रगति करता हूँ। **बभ्रो =** हे भरण-पोषण करने वाले, **पुरूणि =** परिपूर्ण, अग्रणी **नि =** निश्चित, निरन्तर **चरन्ति =** विचरण करते हैं, चलते हैं **माम् =** मुझको **अव =** रक्षा करो। **तान् =** उन **परिधीन् =** परिधियों को, परितः धारण को **रति =** रति **इहि =** प्राप्त करो **॥ 6 ॥**

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अहम् =** मैं (सर्वनाम)। **सोम =** सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **रारण =** दान, रण, शब्द, प्रगति किया (रण - शब्द करना, जाना)। **सख्ये =** सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रो =** परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **दिवेदिवे =** प्रतिदिन (अव्यय)। **पुरूणि =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **बभ्रो =** भरण-पोषण करने वाले (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। **नि =** निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **चरन्ति =** विचरण करते हैं, चलते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **माम् =** मुझको (सर्वनाम)। **अव =** नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **परिधीम् =** परिधियों को, सब ओर से धारण करने वालों को, परितः धारण को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, धा = धारण करना)। **रति =** रति (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **ताम् =** उसको (सर्वनाम)। **इहि =** प्राप्त करो, जानों (इ = जाना, जानना, पाना) **॥ 6 ॥**

517. मृज्यमानः सुहस्त्या, समुद्रे वाचम् इन्वसि।
रयिम् पिशङ्गम् बहुलम्, पुरुस्पृहम् पवमान अभि अर्षसि ॥ 7 ॥ 9-107-21

मन्त्रार्थ :- मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ **सुहस्त्या =** सुहस्ति द्वारा **समुद्रे =** समुद्र में **वाचम् =** वाणी को **इन्वसि =** व्याप्त करता है, तृप्त करता है। **पवमान =** हे पवित्रकर्ता, पालक-रक्षक, **रयिम् =** विद्या, ज्ञान, **बहुलम् =** बहुत **पिशङ्गम् =** प्रकाशगामी, **पुरुस्पृहम् =** अग्रणी इच्छा करने वाले को **अभि =** अभिमुख, सर्वथा **अर्षसि =** अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो **॥ 7 ॥**

पदार्थ :- मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **सुहस्त्या =** सुहस्ति द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, हस्त - आदान करना, लेना

दान करना, ग्रहण करना)। **समुद्रे =** समुद्र में (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **वाचम् =** वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **इन्वसि =** व्याप्त करता है, तृप्त करता है (इन्व् - व्याप्त होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **रयिम् =** विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **पिशङ्गम् =** प्रकाशगामी, विखण्डन करने वाला, टुकड़े करने वाला (पिश् - जाना, प्रकाश होना, चीरना, टुकड़े करना)। **बहुलम् =** बहुत (सर्वनाम)। **पुरुस्पृहम् =** परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **पवमान =** पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **अर्षसि =** अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) **॥ 7 ॥**

518. अभि सोमासः आयवः, पवन्ते मद्यम् मदम्।
समुद्रस्य अधि विष्टपे, मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः ॥ 8 ॥ 9-107-14

मन्त्रार्थ :- सोमासः = अनेक ऐश्वर्यमय **आयवः =** उपसंहार, मिश्रित, पृथक्, शासन कर्ता **मनीषिणो =** मनीषियों का **मत्सरासो =** आनन्ददायक **मदच्युतः =** आनन्द-सिंचित **मद्यम् =** आनन्दित करने योग्य को **मदम् =** मद को, हर्ष को, तृप्ति को **समुद्रस्य =** समुद्र का **अधि =** अधिगत **विष्टपे =** विस्तृत, विष्टप में **अभि =** अभिमुख, सर्वथा **पवन्ते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सोमासः =** अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आयवः =** उपसंहार, मिश्रित, पृथक्, शासन कर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **पवन्ते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मद्यम् =** आनन्दित करने योग्य को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदम् =** मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **समुद्रस्य =** समुद्र का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **विष्टपे =** विस्तृत, विष्टप में (विश् - प्रवेश, सूचना, प्रेरणा करना, विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, पा - पालन करना)। **मनीषिणो =** मनीषियों का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **मत्सरासो =** आनन्ददायक (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **मदच्युतः =** आनन्द-सिंचित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना) **॥ 8 ॥**

519. पुनानः सोम जागृविः, अव्या वारैः परि प्रियः।
त्वम् विप्रो अभवो अङ्गिरस्तम, मध्वा यज्ञम् मिमिक्ष णः ॥ 9 ॥ 9-107-6

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **त्वम् =** तुम **पुनानः =** पवित्रकर्ता **जागृविः =** जाग्रत **अव्या =** पालनीय, रक्षणीय **वारैः =** वरण, इच्छाओं द्वारा **परि =** सभी ओर **प्रियः =** प्रिय **विप्रो =** विशेष पूर्ण कर्ता **अभवो =** हो। **अङ्गिरस्तम =** हे अत्यन्त प्रगतिशील, **णः =** हमारे लिए **मध्वा =** मधु द्वारा **यज्ञम् =** यजन को **मिमिक्ष =** सिंचन करें **॥ 9 ॥**

पदार्थ - पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोम =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना,

ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **जागृविः =** जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **अव्या** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारैः =** वरण, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **परि =** सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रियः =** प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **विप्रो =** विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अभवो =** हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **अङ्गिरस्तम =** हे अत्यन्त विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **मध्वा =** मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **यज्ञम् =** यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **मिमिक्ष =** सिंचन करें (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मिह - गीला करना, सींचना, प्रोक्षण करना)। **णः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) **॥ 9 ॥**

520. इन्द्राय पवते मदः, सोमो मरुत्वते सुतः।
सहस्त्रधारो अति अव्यम् अर्षति, तम् ईम् मृजन्ति आयवः ॥ 10 ॥ 9-107-17

मन्त्रार्थ - **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मरुत्वते** = मरणशील के लिए **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हआ। **सहस्त्रधारो** = हजारों धाराओं वाला **अति** = बहुत, अत्यधिक **अव्यम्** = रक्षणीय, पालनीय **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, **तम्** = उसको **ईम्** = इस प्रकार **आयवः** = उपसंहार, मिश्रित, पृथक्, शासन कर्ता **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मरुत्वते** = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सहस्त्रधारो** = हजारों धाराओं वाला (सहस्त्र = हजार, संख्या, धाः- धारा होना, धार बाँधना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **अव्यम्** = रक्षणीय, पालनीय (अव् = रक्षा करना, पालन करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **आयवः** = उपसंहार, मिश्रित, पृथक्, शासन कर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना) **॥ 10 ॥**

521. पवस्व वाजसातमो, अभि विश्वानि वार्या।
त्वम् समुद्रः प्रथमे विधर्मन्, देवेभ्यः सोम मत्सरः ॥ 11 ॥ 9-107-23

मन्त्रार्थ - **वाजसातमो** = अत्यन्त बल-विद्यावान् **विश्वानि** = सभी **वार्या** = वरणीयों को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **पवस्व** = पवित्र करो। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **त्वम्** = तुम **समुद्रः** = समुद्र, **प्रथमे** = प्रथम, **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण, धर्म, **देवेभ्यः** = देवों के लिए **मत्सरः** = अत्यन्त आनन्दकारी (हो) **॥ 11 ॥**

पदार्थ - **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वाजसातमो** = अत्यन्त बल-विद्यावान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **वार्या** = वार्या, वरणीय, वरण करने योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **समुद्रः** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मत्सरः** = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना) **॥ 11 ॥**

522. पवमाना असृक्षत, पवित्रम् अति धारया।
मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया हया, मेधाम् अभि प्रयांसि च॥ 12॥ 9-107-25

मन्त्रार्थ - **पवमाना** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **मरुत्वन्तो** = मरुत्वान्, मरुत् युक्त, मरणशील युक्त **इन्द्रिया** = इन्द्रमय, परम ऐश्वर्यवान् **हया** = प्रगतिशील, सेवाभावी **मत्सरा** = आनन्दकारी ने **पवित्रम्** = पवित्र को **अति** = अत्यधिक **धारया** = धारण द्वारा **मेधाम्** = मेधा को **च** = और **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **प्रयांसि** = प्रयासों को **असृक्षत** = संचरित किया, प्रवाहति किया **॥ 12 ॥**

पदार्थ -**पवमाना** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **पवित्रम्** = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मरुत्वन्तो** = मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **मत्सरा** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **इन्द्रिया** = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हया** = गतिशील, सेवाभावी (हय् - चलना, कूदना, नृत्य करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, सेवा करना) **मेधाम्** = मेधा को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रयांसि** = प्रयाणों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **च** = और **॥ 12 ॥**

(54) सूक्त 6

523. प्र तु द्रव परि कोशम् नि षीद, नृभिः पुनानो अभि वाजम् अर्ष।
अश्वम् न त्वा वाजिनम् मर्जयन्तो, अच्छा बर्ही रशनाभिः नयन्ति॥ 1॥ 9-87-1

मन्त्रार्थ :- **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **तु** = तो **द्रव** = प्रवाही, ज्ञान **कोशम्** = कोश के **परि** = सभी ओर **नि** = निश्चित, निरन्तर **षीद** = बैठो, संचरण करो, प्रतिष्ठित हो। **नृभिः** = नरों द्वारा **पुनानो** = पवित्रकर्ता **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **वाजम्** = विद्या, बल, गति को **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन करो। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** =

के समान **त्वा** = तुम **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, स्वच्छ **बर्ही** = बृहत्, महान् **वाजिनम्** = बल-विद्यायुक्त को **मर्जयन्तो** = शुद्ध करते हुए **रशनाभिः** = रश्मियों द्वारा **नयन्ति** = ले जाते हैं **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **द्रव** = प्रवाहकामी, ज्ञान (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **कोशम्** = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **षीद** = बैठो, संचरण करो, प्रतिष्ठित हो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मर्जयन्तो** = शुद्ध करते हुए (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना। मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **बर्ही** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **रशनाभिः** = रश्मियों द्वारा, रश्मियों का केन्द्र (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। **नयन्ति** = ले जाते हैं (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना) **॥ 1 ॥**

524. प्र काव्यम् उशना इव ब्रुवाणो, देवो देवानाम् जनिमा विवक्ति।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः, पदा वराहो अभि एति रेभन्॥ 2॥ 9-97-7

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख **काव्यम्** = काव्य को **उशना** = कामनायुक्त, इच्छुक **इव** = के समान **ब्रुवाणो** = कहता हुआ **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देव **देवानाम्** = देवों का **जनिमा** = उत्पन्न करने वाला **विवक्ति** = विशेष बोलता है, कहता है। **महिव्रतः** = महिव्रत, महान् व्रती, **शुचिबन्धुः** = पवित्र बन्धु, पवित्र बन्धनयुक्त, **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, **पदा** = पद, पद द्वारा **वराहो** = वरणीय, व्यापक इच्छा **रेभन्** = शब्द करते हुए **अभि ऐति** = प्राप्त होता है **॥ 2 ॥**

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **काव्यम्** = काव्य को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **उशना** = कामनाएँ, इच्छाएँ (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **ब्रुवाणो** = कहता हुआ, बोलता हुआ (ब्रू - कहना, बोलना)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जनिमा** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विवक्ति** = विशेष बोलता है, कहता है (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **महिव्रतः** = महिव्रत, महान व्रत वाले (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **शुचिबन्धुः** = पवित्र बन्धु, पवित्र बन्धन करने वाला (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना, बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना)। **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पदा** = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना,

जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **वराहो =** वराह, वरणीय, व्यापक इच्छा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, नियोजित करना, आच्छादित करना, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अभ्येति =** जाता है, प्राप्त होता है (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **रेभन् =** शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना)। **2 ॥**

525. तिस्रो वाचः ईरयति प्र वह्निः, ऋतस्य धीतिम् ब्रह्मणो मनीषाम्।
गावो यन्ति गोपतिम् पृच्छमानाः, सोमम् यन्ति मतयो वावशानाः ॥ 3 ॥ 9-97-34

मन्त्रार्थ :- वह्निः = वहनकारी **तिस्रो =** तीन **वाचः =** वाणी, वचन **ऋतस्य =** ऋत का **धीतिम् =** धारणा शक्ति को, **ब्रह्मणो =** महान्, बृहत् **मनीषाम् =** मनीषा को **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख **ईरयति =** प्रेरणा करता है, कम्पित करता है। **पृच्छमानाः =** पृच्छमान, पूछते हुए **गावो =** शब्द, वाणी, वचन **गोपतिम् =** गोपति को, शब्दकर्ता, मननशील को **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं। **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को **वावशानाः =** इच्छुक **मतयो =** मतियाँ, मननशक्ति **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **॥ 3 ॥**

पदार्थ :- तिस्रो = तीन (संख्या)। **वाचः =** वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ईरयति =** प्रेरणा करता है, कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वह्निः =** वहन करने वाला (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **ऋतस्य =** ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **धीतिम् =** धारणा शक्ति को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **ब्रह्मणो =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **मनीषाम् =** मनीषा को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **गावो =** शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **गोपतिम् =** गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - गति करना, उड़ना, श्रीमान् होना, ऐश्वर्य होना)। **पृच्छमानाः =** पृच्छमान, प्रश्न पूछने वाला (पृश्-पृच्छ् - पूछना, प्रश्न करना)। **सोमम् =** सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **मतयो =** मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **वावशानाः =** इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना) **॥ 3 ॥**

526. अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो, देवो देवेभिः समपृक्त रसम्॥
सुतः पवित्रम् परि एति रेभन्, मिता इव सद्म पशुमन्ति होता॥ 4 ॥ 9-97-1

मन्त्रार्थ :- अस्य = इसका **प्रेषा =** प्रेषित, भेजा हुआ **हेमना =** गति-वृद्धि युक्त **पूयमानो =** पवित्रता युक्त, रक्षा करता हुआ **देवो =** तेजस्वी, देव **देवेभिः =** देवों द्वारा **रसम् =** रस को **समपृक्त =** भलीभांति मिलाता है। **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, सृजनशील **रेभन् =** शब्द करते हुए **पवित्रम् =** पवित्र को **परि एति =** परिगमन करता है (पवित्र की परक्रिमा करता है)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **मिता =** मित, मीत, मित्र **इव =** के समान **सद्म =** सदन, स्थान पर **पशुमन्ति =** दृष्टि, बन्धन करते हैं **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- अस्य = इसका (सर्वनाम)। **प्रेषा =** प्रेषित, भेजा हुआ (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इष्-ईष् - जाना, जानना,

पाना, देना, प्रेष् - जाना, जानना, पाना, आना, भेजना)। **हेमना =** हिम, गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। **पूयमानो =** पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **देवो =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवेभिः =** देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **समपृक्त =** भलीभांति मिलाता है (सम् = सम्यक्, भलीभांति, पृक् - मिलना)। **रसम् =** रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **सुतः =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पवित्रम् =** पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पर्येति =** सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। **रेभन् =** शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना)। **मिता =** मित, मीत, मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सद्म =** सदन, स्थान (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **पशुमन्ति =** पशु, दृष्टि, बन्धन वाले (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)। **होता =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) **॥ 1 ॥**

527. सोमः पवते जनिता मतीनाम्, जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।
जनिता अग्नेः जनिता सूर्यस्य, जनित इन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥ 5 ॥ 9-96-5

मन्त्रार्थ :- मतीनाम् = मतियों के **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **दिवो =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **पृथिव्याः =** पृथ्वी योग्य, पृथिवी के **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **अग्नेः =** अग्नि का **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **सूर्यस्य =** सूर्य, उत्पन्न करने वाले का **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **इन्द्रस्य =** इन्द्र का **जनिता =** उत्पन्न करने वाला, **उत** = उसी प्रकार **विष्णोः =** विष्णु का, सर्वव्यापी का **जनिता =** उत्पन्न करने वाला **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, अन्तकर्ता, सोम **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मतीनाम् =** मतियों के (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **दिवो =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पृथिव्याः =** पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अग्नेः =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्यस्य =** सूर्य, उत्पन्न करने वाले का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **इन्द्रस्य =** इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **जनिता =** उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **उत** = तथा, ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **विष्णोः =** विष्णु का, सर्वव्यापी का (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना) **॥ 5 ॥**

528. अभि त्रिपृष्ठम् वृषणम् वयोधाम्, अङ्गोषिणम् अवावशन्त वाणीः।
वना वसानो वरुणो न सिन्धुः, वि रत्नधा दयते वार्याणि॥ 6॥ 9-90-2

मन्त्रार्थ - **वाणीः** = वाणी **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ, **वृषणम्** = पराक्रमी, **वयोधाम्** = सृजनशील, रचना को धारण करने वाले, **अङ्गोषिणम्** = अङ्गोषी को, जानने योग्य, अङ्गों को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **अवावशन्त** = रक्षण, प्रकाश की कामना करता है। **वना** = वन में, वाणी में **वसानो** = वास करते हुए, धारण करते हुए **वरुणो** = वरुण, वरणीय **न** = के समान, **सिन्धुः** = सिद्ध, पूर्ण **वि** = विशेष **रत्नधा** = रत्न, रमणीय को धारण करने वाले **वार्याणि** = वरणीयों को, वरण करने योग्य **दयते** = देते हैं॥ 6॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ को (त्रि = तीन (संख्या), पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वयोधाम्** = वय या रचना को धारण करने वाले को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, धा - धारण करना)। **अङ्गोषिणम्** = अङ्गोषी को, जानने योग्य को, अङ्गों को (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **अवावशन्त** = रक्षण की कामना, प्रकाश की कामना (अव+आ+वशन्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना, वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **वाणीः** = वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **वना** = वन (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वरुणो** = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सिन्धुः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **रत्नधा** = रत्न, रमणीय को धारण करने वाला (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना)। **दयते** = देते हैं (दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वार्याणि** = वार्यों, वरणीयों को, वरण करने योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)॥ 6॥

529. अक्रान् समुद्रः प्रथमे विधर्मन्, जनयन् प्रजा भुवनस्य गोपाः।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये, बृहत् सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः॥ 7॥ 9-97-40

मन्त्रार्थ :- **समुद्रः** = समुद्र **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले **प्रजा** = सन्तति, प्रजा **भुवनस्य** = भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का **गोपाः** = पालक-रक्षक **प्रथमे** = प्रथम, प्रसिद्ध, विस्तार में **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारणकर्ता ने **अक्रान्** = आक्रान्त किया। **वृषा** = पराक्रमी **पवित्रे** = पवित्र में **अधि** = अधिगत **सानो** = दानी **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय में **बृहत्** = महान्, बृहत् **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **स्वानो** = ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता **अद्रिः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **वावृधे** = वृद्धि करता है॥ 7॥

पदार्थ :- **अक्रान्** = आक्रान्त किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **समुद्रः** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, द्रु - चलना, प्रवाह होना। उद्-उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना,

टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **जनयन् =** उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **प्रजा =** सन्तति, प्रजा (प्र - प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न करना)। **भुवनस्य =** भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **गोपाः =** रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **वृषा =** पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवित्रे =** पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानो =** दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वावृधे =** वृद्धि किया (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **स्वानो =** स्वान, ऐश्वर्यमान, सृजनशील, शब्दकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना। सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना। स्वन् - शब्द करना)। **अद्रिः =** अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) **॥ 7 ॥**

530. कनिक्रन्ति हरिः आ सृज्यमानः, सीदन् वनस्य जठरे पुनानः।
नृभिः यतः कृणुते निर्णिजम् गाम्, अतो मतिम् जनयत स्वधाभिः ॥ 8 ॥ 9-95-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक् **सृज्यमानः** = सृजनशील, **वनस्य** = वन का **जठरे** = धारण में **सीदन्** = प्रतिष्ठित, **पुनानः** = पवित्र करता हुआ **हरिः** = हरि ने **कनिक्रन्ति** = प्रकाश किया, आक्रान्त किया। **यतः** = जिससे **नृभिः** = नरों द्वारा **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को **गाम्** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को **कृणुते** = करता है, **अतो** = इससे **मतिम्** = मति को **स्वधाभिः** = स्वयम् धारण करने द्वारा, स्वधा द्वारा **जनयत** = उत्पन्न करता है **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **कनिक्रन्ति** = प्रकाश किया, आक्रान्त किया (क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना, कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सृज्यमानः** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **सीदन्** = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **वनस्य** = वन का (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **जठरे** = धारण में (जठ् - धारण करना)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **यतः** = जिससे (सर्वनाम)। **कृणुते** = करता है। (कृ = करना)। **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निञ्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **गाम्** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अतो** = इससे (अव्यय)। **मतिम्** = मति को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जनयत** = उत्पन्न करता है (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **स्वधाभिः** = स्वयम् धारण करने द्वारा, स्वधा द्वारा (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना) **॥ 8 ॥**

531. एषः स्य ते मधुमान् इन्द्र सोमो, वृषा वृष्णः परि पवित्रे अक्षाः।
सहस्त्रदाः शतदा भूरिदावा, शश्वत्तमम् बर्हि आ वाजी अस्थात्॥ 9॥ 9-87-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **एषः** = यह **स्य** = वह **ते** = तुम्हारे लिए **मधुमान्** = मधुरता युक्त **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **वृषा** = पराक्रमी, **वृष्णः** = वर्षा करने वाला, **परि** = सभी ओर **पवित्रे** = पवित्र में **अक्षाः** = व्यापक **सहस्त्रदाः** = सहस्त्र-दाता, **शतदा** = सैकड़ों दाता, **भूरिदावा** = बहुदाता **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत, अत्यन्त पुरातन **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, महान् **आ** = समन्तात्, सम्यक् **वाजी** = बल-विद्यायुक्त **अस्थात्** = स्थित हैं॥ 9॥

पदार्थ - **एषः** = यह (सर्वनाम)। **स्य** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृष्णः** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक हुआ (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। **सहस्त्रदाः** = सहस्त्र-दाता (सहस्त्र = हजार, संख्या, दा, दद् = देना)। **शतदा** = सैकड़ों दाता (शत = सौ, दा, दद् = देना)। **भूरिदावा** = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, दु-दव् - जाना, सुगन्ध लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)॥ 9॥

532. पवस्व सोम मधुमान् ऋतावा अपो, वसानो अधि सानो अव्ये।
अव द्रोणानि घृतवन्ति रोह, मदिन्तमो मत्सरः इन्द्रपानः॥ 10॥ 9-96-13

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **मधुमान्** = मधुरता युक्त, **ऋतावा** = ऋत-रक्षक, **अपो** = पालन करने वाला, **वसानो** = वास दाता **अधि** = अधिक **सानो** = दानी **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय में **पवस्व** = पवित्र करो। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में **घृतवन्ति** = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त **मदिन्तमो** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो **इन्द्रपानः** = इन्द्रपान का **अव** = प्राप्त **रोह** = चढ़ें, बढ़ें॥ 10॥

पदार्थ - **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा

होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **ऋतावा =** ऋत का रक्षक (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, अव - रक्षा करना)। **अपो =** पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वसानो =** वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानो =** दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अव =** नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **द्रोणानि =** हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **घृतवन्ति =** घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **रोह =** चढ़ें, बढ़ें (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **मदिन्तमो** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मत्सरः =** आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **इन्द्रपानः =** इन्द्रपान का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, पा- पालन करना, पोषण करना, पी- पीना, पाशन करना) **॥ 10 ॥**

(55) सूक्त 7

533. प्र सेनानीः शूरो अग्ने रथानाम्, गव्यन् एति हर्षते अस्य सेना।
भद्रान् कृण्वन् इन्द्रहवान् सखिभ्य, आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते॥ 1 ॥ 9-96-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने =** हे अग्नि, **सेनानीः =** सेनानी **शूरो =** शूर, वीर, पराक्रमी **प्र रथानाम् =** प्रतिष्ठितों का **गव्यन् =** कथनीय **एति =** प्राप्त होता है, प्रगति, प्रेरणा करता है, **अस्य =** इसका **सेना =** सेना **हर्षते =** हर्षित होता है। **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **भद्रान् =** भद्र, कल्याण **कृण्वन् =** करते हुए **इन्द्रहवान् =** इन्द्र के लिए दान, आहवान करने वाले **सखिभ्यः =** मित्रों के लिए **वस्त्रा =** वस्त्र **रभसानि =** आनन्द **आ =** समन्तात्, सम्यक् **दत्ते =** दिया **॥ 1 ॥**

पदार्थ - **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सेनानीः =** सेनानी (सि–सिन् = बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **शूरो =** शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **अग्ने =** हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथानाम् =** रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **गव्यन् =** गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **एति =** जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **हर्षते =** हर्षित होता है (हृष् = हर्ष होना, प्रसन्न होना)। **अस्य =** इसका (सर्वनाम)। **सेना =** सेना (सि–सिन् = बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **भद्रान् =** भद्र, कल्याणकारी (भदि-भन्द - सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **कृण्वन् =** करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। **इन्द्रहवान् =** इन्द्र के लिए दान करने वाले, इन्द्र का आहवान करने वाले को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करन)। **सखिभ्यः =** मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वस्त्रा** = वस्त्र (वस्त - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **रभसानि =** आनन्द। (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। **दत्ते =** दिया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना) **॥ 1 ॥**

534. प्र ते धारा मधुमतीः असृग्रन्, वारम् यत् पूतो अत्येषि अव्यम्।
पवमान पवसे धाम गोनाम्, जनयन् सूर्यम् अपिन्वो अर्केः ॥ 2 ॥ 9-97-31

मन्त्रार्थ - **ते** = तुम्हारे लिए **मधुमतीः** = मधुयुक्त **धारा** = धारा **प्र** = प्रकृष्ट **असृग्रन्** = सृजित किया। **यत्** = जो **पूतो** = पवित्र, रक्षित **वारम्** = वरणीय **अव्यम्** = रक्षणीय-पालनीय को **अत्येषि** = अतिक्रम कर जाता है। **पवमान** = हे पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले, **गोनाम्** = शब्दकर्ताओं, मननशीलों के **धाम** = धाम, **पवसे** = पवित्र करो, **सूर्यम्** = सूर्य, सृजनशील को **अर्केः** = स्तुतियों द्वारा **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए **अपिन्वो** = सेवा, प्रोक्षण किया ॥ 2 ॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **मधुमतीः** = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **असृग्रन्** = सृजित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, उत्पादन करना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पूतो** = पवित्रता युक्त, रक्षित (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अत्येषि** = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है (अति-ऐति, इ = जाना, जानना)। **अव्यम्** = रक्षणीय-पालनीय (अव् = रक्षण-पालन करना)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पवसे** = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धाम** = धारण करने योग्य (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला को (सुर - ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अपिन्वो** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **अर्केः** = अर्क द्वारा (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना) ॥ 2 ॥

535. प्र गायता अभ्यर्चाम देवान्, सोमम् हिनोत महते धनाय।
स्वादुः पवताम् अति वारम्, अव्यम् आ सीदतु कलशम् देव इन्दुः ॥ 3 ॥ 9-97-4

मन्त्रार्थ - **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगणों को **प्र** = प्रकृष्ट **गायता** = गायन करो, **अभ्यर्चाम** = सर्वथा स्तुति करो, प्रशंसा करो। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृजनशील, सोम को **महते** = महत् **धनाय** = धन के लिए **हिनोत** = गतिमान करो, वृद्धि करो। **देव** = हे तेजस्वी, देव, **इन्दुः** = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् **स्वादुः** = स्वाद युक्त **अति** = बहुत, अत्यधिक **वारम्** = वरणीय को **पवताम्** = पवित्र करो। **अव्यम्** = रक्षणीय-पालनीय **कलशम्** = कलश को, प्रगतिशील, शाब्दिक, गणमान्य को **आ** = समन्तात्, सम्यक् **सीदतु** = प्रतिष्ठित करो ॥ 3 ॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायता** = गायन करते हुए, गाने वाले, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अभ्यर्चाम** = सभी ओर, सर्वथा स्तुति करो, प्रशंसा करो (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **हिनोत** = गतिशील करो, बढाओ, वृद्धि करो (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **महते** = महत् के लिए, महान्, पूज्य के लिए (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **धनाय** = धन के लिए (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना)।

स्वादुः = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **पवताम्** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यम्** = रक्षणीय-पालनीय (अव् = रक्षण-पालन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सीदतु** = बैठो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **कलशम्** = कलश को, प्रगतिशील, शाब्दिक, गणमान्य को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) **॥ 3 ॥**

536. प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो, रथो न वाजम् सनिषन् अयासीत्।
इन्द्रम् गच्छन् आयुधा संशिशानो, विश्वा वसु हस्तयोः आदधानः ॥ 4 ॥ 9-90-1

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट **हिन्वानो** = तृप्ति, प्रेरणा देने वाला **रोदस्यो** = रोदसी का **जनिता** = उत्पन्न करने वाला, **रथो** = रथ **न** = के समान **वाजम्** = बल, विद्या, प्रगति की **सनिषन्** = सेवा, स्तुति करने की इच्छा करते हुए **अयासीत्** = प्रयत्न किया। **विश्वा** = सभी **वसु** = निवासी, वास दाता **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **गच्छन्** = जाते हुए, **आयुधा** = आयुध **संशिशानो** = तीक्ष्ण करते हुए **हस्तयोः** = हाथों में **आ** = सम्यक् **दधानः** = धारण करते हैं **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **रोदस्यो** = रोदसी के (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **रथो** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सनिषन्** = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए (स - सहित, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना)। **अयासीत्** = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गच्छन्** = जाते हुए (गम्-गच्छ् = जाना)। **आयुधा** = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध कऱना, प्रहार करना, काटना)। **संशिशानो** = तीक्ष्ण करने वाले (सम् - सम्यक्, भलीभांति, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **वसु** = निवासी, वास देने वाले (वस् = वसना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण, आच्छादन करना, कतरना, लेना)। **हस्तयोः** = हाथों का (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **आदधानः** = धारण करते हुए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दध - धारण करना, पालन करना) **॥ 4 ॥**

537. तक्षत् यदी मनसो वेनतो वाग्, ज्येष्ठस्य धर्मन् द्युक्षोः अनीके।
आत् ईम् आयन् वरम् आ वावशाना, जुष्टम् पतिम् कलशे गावः इन्दुम् ॥ 5 ॥ 9-97-22

मन्त्रार्थ - **यदी** = यदि **मनसो** = मन का **वेनतो** = विद्वान्, कान्तिमान् **वाग्** = वाक्, वाणी **ज्येष्ठस्य** = ज्येष्ठ का **धर्मन्** = धर्म **द्युक्षोः** = अत्यन्त प्रकाशवान् **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में **तक्षत्** = तक्षण करता है। **ईम्** = इस प्रकार **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **इन्दुम्** = ऐश्वर्यवान्, **वरम्** = वरणीय, **आ** = समन्तात्, सम्यक् **वावशाना** = इच्छा करते हुए **जुष्टम्** = सुविचारित सेवा, **पतिम्** = अधिपति, रक्षक, पालक को **कलशे** = कलश में **आत्** = समन्तात्, सम्यक् **आयन्** = प्राप्त किया **॥ 5 ॥**

पदार्थ - **तक्षत्** = तक्षण करता है (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **यदी** = यदि (अव्यय)।

मनसो = मन का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **वेनतो =** विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **वाग् =** वाक्, वाणी (वच, वद - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ज्येष्ठस्य =** ज्येष्ठ, बड़ा (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **धर्मन् =** धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **द्युक्षोः =** अत्यन्त प्रकाशवान् (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **अनीके =** स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **आत् =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। **ईम् =** समान, इस प्रकार (अव्यय)। **आयन् =** प्राप्त किया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय्-ई - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **वरम् =** वर को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वावशाना =** इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना)। **जुष्टम् =** सुविचारित सेवा को (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **पतिम् =** पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **कलशे =** कलश में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **गाव =** शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **इन्दुम् =** इन्दु को, ऐश्वर्यवान् को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) **॥ 5 ॥**

538. साकम् उक्षो मर्जयन्त स्वसारो, दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः।
हरिः परि अद्रवत् जाः सूर्यस्य, द्रोणम् ननक्षे अत्यो न वाजी॥ 6॥ 9-93-1

मन्त्रार्थ :- साकम् = साथ **उक्षो =** प्रोक्षण, सिञ्चन, दृढ़ करने वाला **स्वसारो =** स्वगति, उत्तम गतिमय **धीरस्य =** धीर का **दश =** दश **धनुत्रीः =** धनवान्, प्रगतिशील **धीतयो =** धीतियाँ, धारणाएँ **मर्जयन्त** = शुद्ध करते हैं। **सूर्यस्य =** सूर्य का **जाः** = उत्पन्न करने वाला **हरिः =** हरि **परि अद्रवत्** = सर्वत्र प्रवाहित हुआ। **अत्यो =** सतत गमनीय **न =** के समान **वाजी =** बल-विद्यायुक्त, गतियुक्त **द्रोणम् =** प्रगति को **ननक्षे =** प्राप्त किया **॥ 6 ॥**

पदार्थ :- साकम् = साथ (अव्यय)। **उक्षो =** प्रोक्षण, सिञ्चन, दृढ़ करने वाले (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **मर्जयन्त** = शुद्ध करते हैं (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **स्वसारो =** स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **दश =** दश (दश = दश, संख्या)। **धीरस्य =** धीर का (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, धृ - धारण करना, सहना, स्थिर रहना)। **धीतयो =** ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **धनुत्रीः =** धनवान्, गतिकारक (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **हरिः =** हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **परि अद्रवत्** = सर्वत्र प्रवाहित हुआ (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, अ - नहीं, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **जाः** = उत्पन्न होने वाले, विद्वान्, गति वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना)। **सूर्यस्य =** सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **द्रोणम् =** हिंसक, गति, कुटिलता को (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **ननक्षे =** गति, ज्ञान, प्राप्त किया (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **अत्यो =** सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजी =** बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना) **॥ 6 ॥**

539. अधि यत् अस्मिन् वाजिनीव शुभः, स्पर्धन्ते धियः सूरे न विशः।
अपो वृणानः पवते कवीयान्, व्रजम् न पशुवर्धनाय मन्म॥ 7॥ 9-94-1

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **अस्मिन्** = इसमें **वाजिनि** = बला-विद्यायुक्त, प्रगतिशील **इव** = के समान **शुभः** = शुभ, **सूरे** = सूर्य **न** = के समान **विशः** = प्रतिष्ठित, प्रवेशी **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **अधि** = अधिक **स्पर्धन्ते** = स्पर्धा करते हैं। **अपो** = पालनकर्ता **वृणानः** = वरण करता हुआ **कवीयान्** = कवियों को **व्रजम्** = पूर्ण सिद्ध **न** = के समान **पशुवर्धनाय** = पशु बढ़ाने के लिए **मन्म** = मनन, विचार **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है॥ 7॥

पदार्थ - **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **वाजिनि** = बल-विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इव** = की भाँति, के समान (अव्यय)। **शुभः** = शुभ (शुभ् - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। **स्पर्धन्ते** = स्पर्धा करते हैं (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **सूरे** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वृणानः** = वरण करता है (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कवीयान्** = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **व्रजम्** = पूर्ण सिद्ध (व्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पशुवर्धनाय** = पशु, बन्धन, दृष्टा, देखने को बढ़ाने के लिए (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना, वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **मन्म** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)॥ 7॥

540. इन्दुः वाजी पवते गोन्योघा, इन्द्रे सोमः सहः इन्वन् मदाय।
हन्ति रक्षो बाधते परि अरातिम्, वरिवः कृण्वन् वृजनस्य राजा॥ 8॥ 9-97-10

मन्त्रार्थ :- **इन्दुः** = इन्दु **वाजी** = बल-विद्यायुक्त, गतियुक्त **गोन्योघा** = प्रगतिशील, विद्वानों का समूह **इन्द्रे** = परम ऐश्वर्यशाली में **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **इन्वन्** = व्याप्त करते हुए, तृप्त करते हुए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है। **रक्षो** = रक्षक **वृजनस्य** = वर्जित करने वाले का **वरिवः** = वरणीय **राजा** = राजा **कृण्वन्** = करते हुए **अरातिम्** = अदानी को **बाधते** = बाधित करता है **परि** = सभी ओर **हन्ति** = मारता है॥ 8॥

पदार्थ :- **इन्दुः** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **वाजी** = बल-विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **गोन्योघा** = विद्वानों का समूह (गोन्+योघा, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, जानना, पाना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **इन्द्रे** = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सहः**

= सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **इन्वन् =** व्याप्त करते हुए, तृप्त करते हुए (इन्व् - व्याप्त होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **मदाय =** मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **हन्ति =** मारता है (हन् - मारना)। **रक्षो =** रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, बचाना)। **बाधते =** बाधित करता है, दु:ख देता है (बाध - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दु:ख देना)। **परि =** सभी तरफ (उपसर्ग)। **अरातिम् =** अदानी (अ - नहीं, रा = देना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **वरिवः =** वरणीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **कृण्वन् =** करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। **वृजनस्य =** वर्जित करने वाले का, वृजन का (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **राजा =** राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) **॥ 8 ॥**

541. अया पवा पवस्व एना वसूनि, माँश्चत्वे इन्दो सरसि प्र धन्व।
ब्रध्नः चित् यस्य वातो न जूतिम्, पुरुमेधाः चित् तकवे नरम् धात् ॥ 9 ॥ 9-97-52

मन्त्रार्थ :- इन्दो = हे इन्दु, परम ऐश्वर्यवान्, **अया =** इस **पवा =** पवित्र द्वारा **एना =** प्रकाशित **वसूनि =** वसुओं को **पवस्व =** पवित्र करो। **मांश्चत्वः** = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला **सरसि =** प्रगति में, प्रवाह में **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख **धन्व =** चलो, शब्द करो, जानो। **पुरुमेधाः** = अत्यन्त मेधावी **चित् =** ही **ब्रध्नः =** बृद्धि **चित् =** ही **यस्य =** जिसका **वातो =** वात, तीव्र गति वाले **न =** के समान **जूतिम् =** वेग को **तकवे** = सहन करने के लिए **नरम् =** नर को, प्रेरक को **धात् =** धारण करे **॥ 9 ॥**

पदार्थ :- अया = इसके द्वारा (सर्वनाम)। **पवा =** पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पवस्व =** पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **एना =** प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। **वसूनि =** वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **मांश्चत्वः** = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना, चत - मांगना, याचना करना, जाना, श्चुत - टपकना, झरना, सींचना, प्रोक्षण करना, छींटा देना)। **इन्दो =** इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **सरसि =** सरस में (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धन्व =** चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **ब्रध्नः =** बृद्धि (बृध् - बढ़ना, वृद्धि होना, बृद्धि करना)। **चित् =** भी, ही। **यस्य =** जिसका (सर्वनाम)। **वातो =** वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जूतिम् =** वेगवान् चंचल को (जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **पुरुमेधाः** = अग्रणी मेधा वाले, अत्यन्त मेधावी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **चित् =** भी, ही। **तकवे** = सहन करने के लिए (तक - सहन करना, उपहास करना)। **नरम् =** नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **धात् =** धारण करे (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) **॥ 9 ॥**

542. महत् तत् सोमो महिषः चकारः, अपाम् यत् गर्भो अवृणीत देवान्।
अदधात् इन्द्रे पवमानः ओजो, अजनयत् सूर्ये ज्योतिः इन्दुः ॥ 10 ॥ 9-97-41

मन्त्रार्थ :- तत् = वह **महत् =** महान् **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **महिषः =** महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित **चकारः =** करता है। **यत् =** जो **अपाम् =** पालकों का **गर्भो =** गर्भ **देवान् =** तेजस्वी, देवों को **अवृणीत =** वरण करता है। **इन्द्रे =** परम ऐश्वर्यशाली में **पवमानः =** पवित्र करने वाला, पालन करने वाला **ओजो =** ओज **अदधात्**

= धारण किया। **इन्दुः** = ऐश्वर्यशाली ने **सूर्ये** = सूर्य **ज्योतिः** = प्रकाश **अजनयत्** = उत्पन्न किया ॥ **10** ॥

पदार्थ :- महत् = महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **महिषः** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **चकारः** = किया (कृ = करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गर्भो** = गर्भ (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **अवृणीत** = वरण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृ = वरण करना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अदधात्** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना)। **इन्द्रे** = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **अजनयत्** = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना)। **सूर्ये** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले में (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥

543. असर्जि वक्वा रथ्ये यथा आजौ, धिया मनोता प्रथमा मनीषा ।
दश स्वसारो अधि सानो अव्ये, मृजन्ति वह्निम् सदनेषु अच्छ ॥ 11 ॥ 9-91-1

मन्त्रार्थ - **यथा** = जिस प्रकार **मनोता** = मननशील **प्रथमा** = प्रथम **मनीषा** = विचारशील **वक्वा** = वक्ता **रथ्ये** = रथ्य में **आजौ** = आजि में, प्रगति में **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **असर्जि** = सृजन करते हैं। **दश** = दश **स्वसारो** = स्वगति, उत्तम गतिमय **अधि** = अधि **सानो** = दानी, सेवक **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय में **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं। **वह्निम्** = वहन करने वाले, वाहन को **सदनेषु** = सदनों में, स्थानों में **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो ॥ **11** ॥

पदार्थ - **असर्जि** = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वक्वा** = वक्वा, वचनों द्वारा, वक्ताओं द्वरा (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **रथ्ये** = रथ्य में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **आजौ** = प्रगति में (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **मनोता** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **प्रथमा** = प्रथम (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **मनीषा** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दश** = दश (दश = दश, दस, संख्या)। **स्वसारो** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानो** = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **वन्हिम्** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग

करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सदनेषु** = सदनों में, स्थानों में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना) ॥ 11 ॥

544. अपाम् इव इत् ऊर्मयः तर्तुराणाः, प्र मनीषा ईरते सोमम् अच्छ।
नमस्यन्तीः उप च यन्ति सम् च, आ च विशन्ति उशतीः उशन्तम् ॥ 12 ॥ 9-95-3

मन्त्रार्थ - **अपाम्** = पालकों **इव** = के समान **इत्** = ही **तर्तुराणाः** = शीघकारी **ऊर्मयः** = शब्दमय, गतिमय **मनीषा** = विचारशील **प्र ईरते** = प्रेरित करता है **सोमम्** = सृजनशील, ऐश्वर्यवान् को **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो। **च** = और **च** = और **नमस्यन्तीः** = नमनशील **उप** = समीप **सम्** = सम्यक् **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं। **च** = और **उशतीः** = कामना करती हुई **उशन्तम्** = कामनायुक्त को **आ विशन्ति** = आवेश, प्रवेश करते हैं ॥ 12 ॥

पदार्थ - **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **इत्** = ही (अव्यय)। **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **तर्तुराणाः** = शीघ्रता से पार करने वाले (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मनीषा** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **नमस्यन्तीः** = नमन करते हैं (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **च** = और। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **च** = और। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **च** = और। **विशन्ति** = प्रवेश करते हैं (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **उशतीः** = उशती, इच्छा, कामना करती हुई (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **उशन्तम्** = कामनायुक्त, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना) ॥ 12 ॥

(56) सूक्त 8

545. पुरोजिती वो अन्धसः, सुताय मादयित्नवे।
अप श्वानम् श्नथिष्टन, सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥ 1 ॥ 9-101-1

मन्त्रार्थ :- **वो** = तुम लोग **पुरोजिती** = पुरोजित, अग्र विजेता **सखायो** = मित्र **दीर्घजिह्व्यम्** = दीर्घजिह्वा, प्रगतिशील, विद्वान् को **अन्धसः** = प्राणवान्, **सुताय** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न के लिए, **मादयित्नवे** = आनन्द, हर्ष, तृप्ति प्रदायक के लिए **अप-श्वानम्** = निम्नगामी, अधोगामी को **श्नथिष्टन** = नष्ट करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **पुरोजिती** = पुरोजित, अग्र विजेता (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **सुताय** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए के लिए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मादयित्नवे** = आनन्द प्राप्त के लिए, हर्ष, तृप्ति प्रदान के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **अप-श्वानम्** = निम्नगामी, अधोगामी को (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **श्नथिष्टन** = नष्ट करो (श्नथ - हिंसा करना, मारना)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **दीर्घजिह्व्यम्** = दीर्घजिह्वा को, प्रगतिशील, विद्वान् को (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना, जिह = जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

546. अयम् पूषा रयिः भगः, सोमः पुनानो अर्षति।
पतिः विश्वस्य भूमनो, व्यख्यत् रोदसी उभे॥ 2॥ 9-101-7

मन्त्रार्थ - **अयम्** = यह **पूषा** = पोषणकर्ता **रयिः** = प्रगतिशील, शब्दमय **भगः** = सेवा, सेवित, सेवनीय **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पुनानो** = पवित्रकर्ता **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व करता है। **विश्वस्य** = विश्व का **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **भूमनो** = उत्पत्ति, अस्तित्व **रोदसी** = प्रकाश दाता, वाणी-गति युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **उभे** = दोनों, पूर्णता **व्यख्यत्** = व्याख्यान किया॥ 2॥

पदार्थ - **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **रयिः** = प्रगतिशील, शब्दमय (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **भगः** = भग, सेवा, सेवित, सेवनीय (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **भूमनो** = उत्पत्ति, अस्तित्व (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **व्यख्यत्** = व्याख्यान किया (वि - विशेष, अख्यन्, ख्या = कहना, व्याख्यान करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना, दा - देना, दान करना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो (सर्वनाम), उभ् - पूर्ण करना, भरना)॥ 2॥

547. सुतासो मधुमत्तमाः, सोमा इन्द्राय मन्दिनः।
पवित्रवन्तो अक्षरन्, देवान् गच्छन्तु वो मदाः॥ 3॥ 9-101-4

मन्त्रार्थ - **सुतासो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **मधुमत्तमाः** = अत्यन्त मधुयुक्त **सोमा** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मन्दिनः** = आनन्दमय, प्रकाशमान **पवित्रवन्तो** = पवित्रवान् **इन्द्राय** = परम ऐश्वर्यवान् के लिए **अक्षरन्** = बरसते हैं, झरते हैं। **वो** = तुम सब **मदाः** = आनन्दमय, हर्ष, तृप्ति **देवान्** = तेजस्वी, देवगणों को **गच्छन्तु** = जाओ, प्राप्त करो॥ 3॥

पदार्थ - **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मधुमत्तमाः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **सोमा** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मन्दिनः** = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान हों (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **पवित्रवन्तोः** = पवित्रवान् (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अक्षरन्** = क्षरित हुए (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **गच्छन्तु** = जाओ, जाये (गम्, गच्छ् = जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मदाः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)॥ 3॥

548. सोमाः पवन्ते इन्दवो, अस्मभ्यम् गातुवित्तमाः।
मित्राः स्वाना अरेपसः, स्वाध्यः स्वर्विदः॥ 4॥ 9-101-10

मन्त्रार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यमय **इन्दवो** = इन्दुगण, परम ऐश्वर्यवान् जन **गातुवित्तमाः** = स्तुति जानने वाले, गायन को जानने वाले **मित्राः** = मित्रगण **स्वाना** = स्वान, शब्द करने वाले। **अरेपसः** = अगमनीय, अगति, निःशब्द **स्वाध्यः** = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **पवन्ते** = पवित्र-पालन-रक्षा करते हैं॥ **4॥**

पदार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न करना, पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, अर्क निकालना। सू = प्रेरणा देना। सो–स्य, सय् - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवन्तः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इन्दवो** = इन्दुगण, परम ऐश्वर्यवान् जन (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **गातुवित्तमाः** = स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, विद् = जानना)। **मित्राः** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, मृदुल होना)। **स्वाना** = स्वान, शब्द करने वाला (स्वन - शब्द करना, ध्वनि करना, सजाना)। **अरेपसः** = अगमनीय, अगति, निःशब्द (अ - नहीं, रेप - जाना, शब्द करना)। **स्वाध्यः** = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले (सु - उत्तम, अच्छा, आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, ध्यै - ध्यान करना, चिन्तन करना, मनन करना, विचार करना)। **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (स्वर् - शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)॥ **4॥**

549. अभी नो वाज-सातमम्, रयिम् अर्ष शतस्पृहम्।
इन्दो सहस्र-भर्णसम्, तुविद्युम्नम् विभासहम्॥ 5॥ 9-98-1

मन्त्रार्थ :- इन्दो = हे इन्दु, **अभी** = अभिमुख **नो** = हमारे लिए **वाज-सातमम्** = अत्यन्त बल-विद्यादाता, **रयिम्** = विद्या, ज्ञान, **शतस्पृहम्** = शत-कामनायुक्त, **सहस्र-भर्णसम्** = सहस्रधा पूर्णकर्ताओं, भरण-पोषण-दानी, **तुविद्युम्नम्** = अत्यन्त प्रकाशमान, **विभासहम्** = विशेष प्रकाश में समर्थ को **अर्ष** = अन्तर्दर्शन करो (अपने भीतर देखो)॥ **5॥**

पदार्थ :- अभी = अभिमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वाजसातमम्** = अत्यन्त बल-विद्यादाता को (वाज् - गति करना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, सन् - देना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् - जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **शतस्पृहम्** = सौ इच्छाओं को, शत-कामनाओं को (शत - सौ (सर्वनाम), स्पृह - इच्छा करना, चाहना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **सहस्र-भर्णसणम्** = सहस्र पूर्णकताओं को, अनेक भरण-पोषण-दानी को (सहस्र - हजार, संख्या, भृ - पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **तुविद्युम्नम्** = अत्यन्त प्रकाशमान को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, द्युत् - प्रकाशित होना, द्यु - अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **विभासहम्** = विशेष प्रकाश में समर्थ को (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, सह - शक्तिमान् करना, सहना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)॥ **5॥**

550. अभी नवन्ते अद्रुहः, प्रियम् इन्द्रस्य काम्यम्।
वत्सम् न पूर्व आयुनि, जातम् रिहन्ति मातरः॥ 6॥ 9-100-1

मन्त्रार्थ - अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला **प्रियम्** = प्रिय **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **काम्यम्** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को **अभी** = अभिमुख **नवन्ते** = स्तुति करते हैं। **मातरः** = माता, मानयुक्त **पूर्व** = पूर्व **आयुनि** = आयु में, **जातम्** = उत्पन्न **वत्सम्** = बोलने वाले **न** = के समान **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं॥ **6॥**

पदार्थ - अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नवन्ते** = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा

करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **अद्रुहः** = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह् - द्रोह करना)। **प्रियम्** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **काम्यम्** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को (कम - चाहना, इच्छा करना)। **वत्सम्** = बोलने वाले को (वद् -वच्- बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पूर्व** = पूर्व, पहले (सर्वनाम)। **आयुनि** = आयु से, जीवन द्वारा, जीवन से (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, ग़ति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) **॥ 6 ॥**

551. आ हर्यताय धृष्णवे, धनुः तन्वन्ति पौंस्यम्।
शुक्रा वि यन्ति असुराय, निर्णिजे विपाम् अग्रे महीयुवः ॥ 7 ॥ 9-99-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक् **हर्यताय** = प्रकाशमान, प्रगतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने वाले, **धृष्णवे** = विजयी के लिए **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले, **धनुः** = धनवान्, प्रगतिकारक को **तन्वन्ति** = विस्तार देते हैं। **अग्रे** = अग्र, पहले **महीयुवः** = पूजनीय युवा, महिमावान् युवा **शुक्रा** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, शीघ्रकारी **असुराय** = असुर, प्रकाशमान के लिए **निर्णिजे** = निरन्तर शुद्धि के लिए **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले, विशेष रक्षक, पालक को **वि** = विशेष **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हर्यताय** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले के लिए, हरण करने वाले के लिए (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **धनुः** = धनवान्, गतिकारक (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **तन्वन्ति** = विस्तार करते हैं (तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को (पुंस – बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **शुक्रा** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **असुराय** = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश देने वाले के लिए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **निर्णिजे** = निरन्तर शुद्ध करने के लिए (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निञ्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महीयुवः** = पूजनीय युव, महीयुव, महिमावान् युव (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना) **॥ 7 ॥**

552. परि त्यम् हर्यतम् हरि, बभ्रुम् पुनन्ति वारेण।
यो देवान् विश्वान् इत् परि, मदेन सह गच्छति ॥ 8 ॥ 9-98-7

मन्त्रार्थ - **त्यम्** = उस **हर्यतम्** = प्रकाश करने वाले, प्रगतिशील, इच्छुक, हरण योग्य, **हरिम्** = हरि, **बभ्रुम्** = बभ्रु को, भरण-पोषण करने वाले को **वारेण** = वरणीय द्वारा **परि** = सभी ओर **पुनन्ति** = पवित्र करते हैं। **यो** = जो **विश्वान्** = सभी **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगणों को **इत्** = ही **मदेन** = मद द्वारा, आनन्द द्वारा **सह** = साथ, सहित **परि** = सभी ओर **गच्छति** = जाता है ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **हर्यतम्** = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण योग्य को (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **हरिम्** = हरि को (हृ = प्रसहय करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, पहुँचाना, चुराना)। **बभ्रुम्** = बभ्रु को, भरण-पोषण करने वाले को (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। **पुनन्ति** = पवित्र करते हैं (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वारेण** = वरणीय, वरण करने वाले द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **विश्वान्** = सभी को (विश् = भीतर जाना, सभी तरह फैलना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **मदेन** = मद द्वारा, आनन्द द्वारा (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **गच्छति** = जाता है (गम्-गच्छ् = जाना) ॥ 8 ॥

553. प्र सुन्वानाय अन्धसो, मर्त्तो न वष्ट तद् वचः।
अप श्वानम् अराधसम्, हता मखम् न भृगवः ॥ 9 ॥ 9-101-13

मन्त्रार्थ :- **सुन्वानाय** = सवनयुक्त के लिए **अन्धसो** = प्राणवान् **मर्तो** = मरणशील **न** = के समान **तत्** = उस **वचः** = वचन की **प्र** = प्रकृष्ट **वष्ट** = इच्छा करे। **भृगवः** = पोषण करने वालों **न** = के समान **श्वानम्** = भागने वाले, **अराधसम्** = अराधक, असिद्ध, आराधना हीन की **मखम्** = गति को **अप हता** = अपहनन करें ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सुन्वानाय** = सुन्वान के लिए, स्नानवान् के लिए, सवनयुक्त के लिए (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मर्तो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वष्ट** = वष्ट, इच्छा (वश - इच्छा करना, चाहना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **श्वानम्** = श्वान को, प्रगतिशील को (शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **अराधसम्** = अराधक को, अहिंसक को (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **हता** = मारा गया (हन् - मारना)। **मखम्** = मख को (मख - जाना, स्थानान्तर करना)। **न** = नहीं, के समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भृगवः** = पोषण करने वाले (भृज् - भृग् = भूँजना, तलना, सेंकना, चमकना, तेज होना, जानना) ॥ 9 ॥

(57) सूक्त 9

554. अभि प्रियाणि पवते चनोहितो, नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन् अधि, रथम् विश्वञ्चम् अरुहद् विचक्षणः ॥ 1 ॥ 9-75-1

मन्त्रार्थ :- **चनोहितो** = शब्दकर्ता, विश्वास तथा स्मरण करने वालों का हित करने वाला **प्रियाणि** = प्रिय को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है, **येषु** = जिनमें **यह्वो** = महान् **नामानि** = नाम **अधि** = अधिक **वर्धते** = बढ़ता है। **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणीयुक्त **सूर्यस्य** = सूर्य का **बृहतो** = महान्, बृहत् **बृहन्** = महान्, बृहत् **विष्वञ्चम्** = व्यापक **रथम्** = रथ को **अधि** = अधिगत **आ अरुहद्** = आरोहण किया ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रियाणि** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन

करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **चनोहितो =** शब्दकर्ता, विद्वान्, विश्वास तथा स्मरण करने वालों का हित करने वाला (चन् - स्मरण करना, शब्द करना, विश्वास करना, मिलाना, अलग करना, हिंसा करना, हि - जाना, जानना, पाना, हित करना)। **नामानि =** नाम (नाम - नाम होना, नाम रखना, नम् = नमन करना, सम्मान करना, शब्द करना)। **यह्वो =** महान् (यह्व्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **येषु =** जिनमें। **वर्धते** = बढ़ता है (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सूर्यस्य =** सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **बृहतो =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **बृहन् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अधि =** अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **रथम् =** रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **विष्वञ्चम् =** व्यापक को (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **अरुहद् =** आरोहण किया, उत्पन्न हुआ, हिंसक को मारने वाला, गतिशील, व्यापक हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुह् - बीज से उत्पन्न होना, जन्म होना, हन् - मारना, नष्ट करना, हिंसा करना)। **विचक्षणः =** विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) **॥ 1 ॥**

555. अचोदसो नो धन्वन्तु इन्दवः, प्र स्वानासो बृहद् देवेषु हरयः।
वि चित् अश्नाना इषयो अरातयो, अर्यो नः सन्तु सनिषन्तु नो धियः ॥ 2 । 9-79-1

मन्त्रार्थ - इन्दवः = इन्दुगण **अचोदसो =** अप्रेरित (स्वबुद्धिगामी) **स्वानासो =** शब्दकर्ता **हरयः =** हरिगण, **नो =** हमारे लिए **बृहद् =** महान्, बृहत् **देवेषु =** देवों में **प्र धन्वन्तु =** प्रगति करें, प्रवचन करे। **अश्नाना =** व्याप्त, व्यापक, प्राप्त **इषयो =** इच्छा, प्रगति, ज्ञान युक्त **अरातयो =** अदानी **अर्यो =** हिंसक **नः =** हमसे **वि =** विलग **चित् =** ही **सन्तु =** हों। **नो =** हमारी **धियः =** धारणा शक्ति, बुद्धियाँ **सनिषन्तु =** सेवा, स्तुति करें **॥ 2 ॥**

पदार्थ - अचोदसो = अप्रेरित करे,अप्रेरणा के बिना किसी प्रेरणा के (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **धन्वन्तु =** गति, शब्द करने वाले का (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **इन्दवः =** इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **स्वानासो =** शब्दकर्ता (स्वन - शब्द करना)। **बृहद् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **देवेषु =** देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हरयः =** हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **चित् =** भी, ही। **अश्नाना =** व्याप्त, व्यापक, प्राप्त होता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **इषयो =** इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **अरातयो =** अदानी (अ - नहीं, रा = देना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **अर्यो =** अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सन्तु =** हों (अस् - होना)। **सनिषन्तु =** सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **धियः =** धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) **॥ 2 ॥**

556. एष प्र कोशे मधुमान् अचिक्रदत्, इन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टमः।
अभि ऋतस्य सुदुघा घृश्चुतो, वाश्रा अर्षन्ति पयसा च धनेवः॥ 3॥ 9-77-1

मन्त्रार्थ - **एष** = यह **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **वज्रो** = प्रगतिमान **वपुषो** = बोने वालों में **वपुष्टमः** = अत्यन्त बोने वाले ने **कोशे** = कोश में **मधुमान्** = मधुरता युक्त **प्र** = प्रकृष्ट **अचिक्रदत्** = चिन्तन किया। **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **ऋतस्य** = ऋत का **सुदुघा** = सुदुघा, दानी **घृश्चुतो** = प्रकाशयुक्त **वाश्राः** = प्रगतिशील, व्याप्त, प्रकाशमान **पयसा** = विस्तार द्वारा, गति-प्रवाहमान द्वारा **च** = और **धनेवः** = धनी **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं॥ 3॥

पदार्थ - **एष** = यह (सर्वनाम)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **कोशे** = कोश (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **अचिक्रदत्** = किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृद् - चिन्तन करना, विकल होना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रो** = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **वपुषो** = वपुष (वप - बीज बोना, उत्पन्न करना, बुनना, अन्नादि काटना, बाल काटना)। **वपुष्टमः** = वपुष्टम (वप - बीज बोना, उत्पन्न करना, बुनना, अन्नादि काटना, बाल काटना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सुदुघा** = सुदुघा, दानी (सु - सुन्दर, अच्छा, दा, दद् = देना)। **घृश्चुतो** = प्रकाशयुक्त (घृ - गीला करना, तरडा देना, सींचना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, घृ - टपकना, क्षरित होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वाश्राः** = प्रगतिशील, व्याप्त करते हुए, व्याप्त होते हुए, प्रकाश करते हुए (वश - प्रकाश करना, इच्छा करना, चाहना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पयसा** = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **च** = और। **धनेवः** = धन द्वारा (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)॥ 3॥

557. प्रो अयासीत् इन्दु इन्द्रस्य निष्कृतम्, सखा सख्युः न प्र मिनाति संगिरम्।
मर्य इव युवतिभिः समर्षति, सोमः कलशे शतयामना पथा॥ 4॥ 9-86-16

मन्त्रार्थ :- **प्रो** = पूर्ण, तृप्त **अयासीत्** = प्रयत्न किया, प्राप्त हुआ **इन्दुः** = इन्दु **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **निष्कृतम्** = निष्कृत, संस्कृत, निश्चित रूप से किया हुआ **सखा** = मित्र **सख्युः** = सखाभाव, मित्रभाव **न** = के समान **सङ्गिरम्** = सङ्गिर को, योग्य, सहगामी को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मिनाति** = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मर्यः** = मरणशील **इव** = के समान **युवतिभिः** = युवतियों द्वारा, मिलाने वालों द्वारा **कलशे** = कलश में, प्रगतिशील, शाब्दिक, गणमान्य में **शतयामना** = शतयाम द्वारा **पथा** = पथ पर **समर्षति** = सम्यक् अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है॥ 4॥

पदार्थ :- **प्रो** = पूर्ण, तृप्त (प्रा - पूर्ण करना, भरना। प्रा - तृप्त करना)। **अयासीत्** = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **सख्युः** = सखाभाव, मित्रभाव (सख् = मित्र होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मिनाति** = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **सङ्गिरम्** = सङ्गिर को, योग्य, सहगामी को (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना, साथ चलना)। **मर्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **युवतिभिः** = युवतियों द्वारा, मिलाने वालों द्वारा

(यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **समर्षति =** सम्यक् रूप से अन्तर्गमन करता है, सम्यक् रूप से अन्तर्दर्शन करता है, सम्यक् रूप से ऋषित्व प्राप्त करता है (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **कलशे =** कलश में, प्रगतिशील, शाब्दिक, गणमान्य में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **शतयामना =** शतयाम द्वारा (शत = सौ, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **पथा =** पथ (पथ, पन्थ् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना) **॥ 4 ॥**

558. धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो, दक्षो देवानाम् अनुमाद्यो नृभिः।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिः, वृथा पाजांसि कृणुषे नदीषु आ ॥ 5 ॥ 9-76-1

मन्त्रार्थ :- धर्ता = धारणकर्ता **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **कृत्व्यो =** कर्त्तव्य **रसो =** रस **देवानाम् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगणों में **दक्षो =** दक्ष **नृभिः =** नरों, प्रेरकों द्वारा **अनुमाद्यो =** आनन्दमय **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है। **हरिः =** हरि **सृजानो =** सृजनशील, त्यागी **अत्यो =** सतत गमनीय **न =** के समान, **सत्वभिः =** सत्वों द्वारा, सत्यों द्वारा **नदीषु =** नदियों में **वृथा** = व्यर्थ **पाजांसि =** प्रकाश **आ =** समन्तात्, सम्यक् **कृणुषे =** करता है **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- धर्ता = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कृत्व्यो =** कर्त्तव्य (कृ - करना, कृत - कतरना, काटना)। **रसो =** रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **दक्षो =** दक्ष (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **देवानाम् =** विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अनुमाद्यो =** आनन्दप्रद, आनन्द योग्य (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। **नृभिः =** नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **हरिः =** हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सृजानो =** सृजनशील, त्यागी (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। **अत्यो =** सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सत्वभिः =** सत्वों द्वारा, सत्यों द्वारा (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **वृथा** = वरण द्वारा (वृ - वरण करना)। **पाजांसि =** प्रकाश (पञ्ज् - उत्पन्न होना, प्रकाश करना)। **कृणुषे =** करता है (कृ = करना)। **नदीषु =** नदियों में (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **आ =** समन्तात्, सम्यक् (उपसर्ग) **॥ 5 ॥**

559. वृषा मतीनाम् पवते विचक्षणः, सोमो अह्नाम् प्रतरीता उषसाम् दिवः।
प्राणा सिन्धूनाम् कलशाम् अचिक्रदत्, इन्द्रस्य हार्दि अविशन् मनीषिभिः ॥ 6 ॥ 9-86-19

मन्त्रार्थ - वृषा = पराक्रमी **मतीनाम् =** मतियों, विचारशील, ज्ञानियों में **विचक्षणः =** विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **अह्नाम् =** व्यापक को **प्रतरीता =** तारने वाले, **उषसाम् =** प्रभातों को **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है। **सिन्धूनाम् =** सिन्धुओं का, समुद्रों का **प्राणा =** प्राण **कलशाम् =** कलशों को **अचिक्रदत् =** पुकारता है। **मनीषिभिः =** मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा **इन्द्रस्य =** इन्द्र के **हार्दि =** हृदय में **आविशन् =** प्रवेश करता है **॥**

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति

करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **मतीनाम् =** मतियों का, ज्ञान का (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **विचक्षणः =** विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अह्नाम् =** व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **प्रतरीता =** तारने वाले, तैरने वाले, तरने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तॄ - पार जाना, तैरना, जीतना)। **उषसाम् =** प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **दिवः =** दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **प्राणा =** प्राण (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अन- जीवन होना, चेतन होना, प्रा- पूर्ण करना, तृप्त करना)। **सिन्धूनाम् =** सिन्धुओं का, समुद्रों का (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **कलशाम् =** कलशों को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **अचिक्रदत् =** किया, पुकारा (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रद – विकल होना, घबरा जाना, क्रन्द - पुकारना, जोर से बुलाना, रोना)। **इन्द्रस्य =** इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **हार्दि =** हृदय में (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना) **आविशन् =** प्रवेश करता है (आ - समन्तात्, सम्यक्, विश् = प्रवेश करना)। **मनीषिभिः =** मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना) **॥ 6 ॥**

560. त्रिः अस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे, सत्याम् आशिरम् परमे व्योमनि।
चत्वारि अन्या भुवनानि निर्णिजे, चारूणि चक्रे यद् ऋतैः अवर्धत ॥ 7 ॥ 9-70-1

मन्त्रार्थ - **अस्मै =** हमारे लिए **त्रिः =** तीन, **सप्त =** सात **धेनवो =** प्रिय, प्रसन्नतादायक, धेनुओं ने **सत्याम् =** सत्य, **आशिरम् =** आश्रय को **परमे =** परम **व्योमनि =** व्योम, वाणी में **दुदुहिरे =** दोहन किया। **चत्वारि =** चार **अन्या =** अन्य **भुवनानि =** भुवनों को **निर्णिजे =** निरन्तर शुद्ध करने के लिए **चारूणि =** आचरण **चक्रे =** किया **यत् =** जो **ऋतैः =** ऋतों द्वारा **अवर्धत =** बढ़ा॥ 7॥

पदार्थ :- **त्रिः =** तीन (संख्या)। **अस्मै =** हमारे लिए (सर्वनाम)। **सप्त =** सात (संख्या)। **धेनवो =** धेनु, प्रिय, प्रसन्न करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **दुदुहिरे =** दोहन किया (दुह् = दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **सत्याम् =** सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **आशिरम् =** आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, श्री - आश्रय होना, श्री होना, शि = तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **परमे =** परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में (सर्वनाम)। **व्योमनि =** व्योम में, विशेष रक्षक में (वि - विशेष, उ - शब्द करना, रक्षा करना, सुखाना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। **चत्वारि =** चार (चतुः - चार, संख्या)। **अन्या =** अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **भुवनानि =** भुवों का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **निर्णिजे =** निरन्तर शुद्ध करने के लिए (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निञ्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **चारूणि =** आचरण (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **चक्रे =** किया (कृ - करना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **ऋतैः =** ऋतों द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **अवर्धत =** बढ़ा (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना) **॥ 7 ॥**

561. इन्द्राय सोम सुषुतः परि स्रव, अप अमीवा भवतु रक्षसा सह।

मा ते रसस्य मत्सत द्वयाविनो, द्रविणस्वन्त इह सन्तु इन्दवः ॥ 8 ॥ 9-85-1

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **सुषुतः** = उत्तम सृजित **परि** = सभी ओर **स्रव** = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो। **अमीवा** = रोग **रक्षसा** = रक्षकों के **सह** = साथ, सहित **अप** = दूर **भवतु** = हो, हो जाये। **द्वयाविनो** = द्विधा आचरण वाले **ते** = तुम्हारे **रसस्य** = रस का **मा** = नहीं **मत्सत** = आनन्द लें। **द्रविणस्वन्तः** = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी **इन्दवः** = इन्दुगण, ऐश्वर्यवान् लोग **इह** = यहाँ **सन्तु** = हों ॥ 8 ॥

पदार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुषुतः** = उत्तम उत्पन्न किया (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **अमीवा** = रोग (अम् = रोग होना)। **भवतु** = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **रक्षसा** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **रसस्य** = रस का (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **मत्सत** = आनन्दित हो, हर्षित हो, तृप्त हो, विचारशील हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना। मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **द्वयाविनो** = दो वाले (द्वि = दो, संख्या)। **द्रविणस्वन्तः** = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इह** = इसमें, यहां (सर्वनाम)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 8 ॥

562. असावि सोमो अरुषो वृषा हरी, राज इव दस्मो अभि गा अचिक्रदत्।
पुनानो वारम् अत्येषि अयव्यम्, श्येनो न योनिम् घृतवन्तम् आसदत् ॥ 9 ॥ 9-82-1

मन्त्रार्थ :- सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **अरुषो** = अहिंसक, प्रगतिशील, व्यापक **वृषा** = पराक्रमी **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले ने **असावि** = ऐश्वर्य, सृजन किया। **राजा** = राजा **इव** = के समान **दस्मो** = रक्षक ने **गाः** = गान, गायक को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **अचिक्रदत्** = पुकारा। **पुनानो** = पवित्रकर्ता **वारम्** = वरणीय को **अत्येषि** = अतिक्रम कर जाता है। **श्येनो** = श्येन **न** = के समान **घृतवन्तम्** = घृतयुक्त, प्रकाशमय **अव्ययम्** = अव्यय **योनिम्** = मिलन, स्थान को **आसदत्** = प्राप्त होता है ॥ 9 ॥

पदार्थ :- असावि = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अरुषो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **दस्मो** = रक्षा करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा

(उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अचिक्रदत्** = पुकारा (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्रद – विकल होना, घबरा जाना, क्रन्द - पुकारना, जोर से बुलाना, रोना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अत्येषि** = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है (अति-ऐति, इ = जाना, जानना)। **अव्ययम्** = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **घृतवन्तम्** = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त (घृ -गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **आसदत्** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) **॥ 9 ॥**

563. प्र देवम् अच्छा मधुमन्तः इन्दवो, असिष्यदन्त गावः आ न धेनवः।
बर्हिषदो वचनावन्तः ऊधभिः, परिस्रुतम् उस्रिया निर्णिजम् धिरे॥ 10 ॥ 9-68-1

मन्त्रार्थ - **देवम्** = देव को **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **मधुमन्तः** = मधुरता युक्त **इन्दवो** = इन्दुगण **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **न** = के समान **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालक ने **प्र** = प्रकृष्ट **आ** = समन्तात्, सम्यक् **असिष्यदन्त** = सिञ्चन किया। **बर्हिषदो** = बृहत्, महान् **वचनावन्तः** = वचनयुक्त **ऊधभिः** = वाणी, शब्द, आद्रता द्वारा **परिस्रुतम्** = सर्वत्रगामी को **उस्रिया** = प्रभातकर्ता वाले को **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को **धिरे** = धारण करता है **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **मधुमन्तः** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्दवो** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **असिष्यदन्त** = सिञ्चन किया (स्यन्द - टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना)। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **बर्हिषदो** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह् - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, षद्-सद् - बैठना)। **वचनावन्तः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ऊधभिः** = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द् = भिगोना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **परिस्रुतम्** = सर्वत्रगामी को, विद्वान् को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्रु = जाना, बहना, जानना, पाना)। **उस्रिया** = उस्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निञ्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **धिरे** = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) **॥ 10 ॥**

564. अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते, क्रतुम् रिहन्ति मध्वा अभ्यञ्जते।
सिन्धोः उच्छ्वासे पतयन्तम् उक्षणम्, हिरण्यपावाः पशुम् अप्सु गृभ्णते॥ 11 ॥ 9-86-43

मन्त्रार्थ - **मध्वा** = मधु **क्रतुम्** = कर्म को **अञ्जते** = स्वच्छ करता है, प्रकाश करता है, **व्यञ्जते** = विशेष स्वच्छ करता है, विशेष प्रकाश करता हैं, **समञ्जते** = सम्यक् स्वच्छ करता है,, सम्यक् प्रकाश करता है, **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं, **अभ्यञ्जते** = सर्वथा स्वच्छ करता है, सर्वथा प्रकाश करता है, **सिन्धोः** = सिन्धु के **उच्छ्वासे** = उच्छ्वास

में **पतयन्तम्** = पराक्रमी, पतनशील, ऐश्वर्यमान, **उक्षणम्** = प्रोक्षण, स्वच्छता, दृढ़ता, सिञ्चन को **हिरण्यपावाः** = हिरण्य से पवित्र, स्तुति से पवित्र **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को **अप्सु** = पालन-रक्षण में **गृभ्णते** = ग्रहण करता है **॥ 11 ॥**

पदार्थ - **अञ्जते** = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है (अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **व्यञ्जते** = विशेष स्वच्छ किया जाता है, विशेष प्रकाश किया जाता है (वि - विशेष, अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **समञ्जते** = सम्यक् स्वच्छ किया जाता है, सम्यक् प्रकाश किया जाता है (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। **मध्वा** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **अभ्यञ्जते** = सर्वथा स्वच्छ किया जाता है, सर्वथा प्रकाश किया जाता है (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **सिन्धोः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **उच्छ्वासे** = उच्छ्वास में (उत्+श्वास, उत् - भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय), श्वस - श्वास लेना, श्वासोच्छ्वास करना, जीना, जीते रहना)। **पतयन्तम्** = पराक्रम करो, पतनशील, ऐश्वर्यमान हो (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **उक्षणम्** = प्रोक्षण, स्वच्छता, दृढ़ता, सिञ्चन को (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **हिरण्यपावाः** = हिरण्य से पवित्र होते हुए, स्तुति से पवित्र होते हुए (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)। **अप्सु** = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **गृभ्णते** = गृभ करता है, ग्रहण करता है (गृह् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना, निवास करना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ् - ग्रहण करना, लेना, अन्दर होना, अन्तःवास करना) **॥ 11 ॥**

565. पवित्रम् ते विततम् ब्रह्मणस्पते, प्रभुः गात्राणि पर्येषि विश्वतः।
अतप्ततनूः न तत् आमो अश्नुते, शृतासः इत् वहन्तः सम् तत् आशत॥ 12 ॥ 9-83-1

मन्त्रार्थ :- **ब्रह्मणस्पते** = हे महान् स्वामी, बृहमणस्पति, **ते** = तुम्हारा **विततम्** = विस्तार **पवित्रम्** = पवित्र (है)। **प्रभुः** = प्रभु **गात्राणि** = स्तुतिमय **विश्वतः** = सबसे **पर्येषि** = सर्वत्रगमन करते हो, प्राप्त होते हो। **तत्** = वह **अतप्त-तनूः** = अतप्त-विस्तार वाला **आमो** = रोगी **न** = नहीं **अश्नुते** = भोग करता है, प्राप्त करता है। **शृतासः** = परिपक्व, वाणियाँ **इत्** = ही **तत्** = उस को **वहन्तः** = वहन करते हुए **सम्** = सम्यक् **आशत** = प्राप्त करती हैं, भोग करती हैं **॥ 12 ॥**

भावार्थ :- तपना भी आवश्यक है। हमारा तन या विस्तार तप न करे, तपा हुआ न हो तो केवल वाणी से अथवा कुछ सेवा करके भी वह आध्यात्मिक पवित्रता नहीं प्राप्त हो सकती है।**॥ 12 ॥**

पदार्थ :- **पवित्रम्** = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **विततम्** = विस्तृत (वि - विशेष, तन् - विस्तार करना, वर्णन करना, शब्द करना, आश्रय देना, वित्त - देना, दान करना, धर्म में व्यय करना)। **ब्रह्मणस्पते** = विराट, महान्, बृहमणस्पति (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **प्रभुः** = अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **गात्राणि** = स्तुति, गान, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **पर्येषि** = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **अतप्त-तनूः** = अतप्त-तन वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना, तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आमो** = वाणी, सेवा (अम् - शब्द करना, सेवा करना, जाना, खाना,

भूखा होना, रोगी होना)। **अश्नुते =** भोग करता है, प्राप्त करता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **शृतासः =** सुने हुए, वाणियाँ (शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **वहन्तः =** वहन करते हुए (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सम् =** सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **तत् =** वह, उस को (सर्वनाम)। **आशत =** अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) **॥ 12 ॥**

(58) सूक्त 10

566. इन्द्रम् अच्छ सुता इमे, वृषणम् यन्तु हरयः।
श्रुष्टे जातासः इन्दवः स्वर्विदः॥ 1 ॥ 9-106-1

मन्त्रार्थ :- श्रुष्टे = हे श्रुष्टि, **हरयः =** हरने वाले, पहुँचाने वाले **अच्छ =** अच्छा, निर्मल **सुता =** ऐश्वर्यवान् **जातासः =** उत्पन्न **इन्दवः =** इन्दुगण **स्वर्विदः =** शब्दज्ञानी **इमे =** इस **वृषणम् =** पराक्रमी **इन्द्रम् =** इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् को **यन्तु =** पोषण करें, उद्धार करें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अच्छ =** अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **सुता =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इमे =** यह, इस, ये (सर्वनाम)। **वृषणम् =** पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **यन्तु =** पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **हरयः =** हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **श्रुष्टे =** हे श्रुष्टि (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **जातासः =** उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **इन्दवः =** इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **स्वर्विदः =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना) **॥ 1 ॥**

567. प्र धन्वा सोम जागृवि, इन्द्राय इन्दो परि स्रव।
द्युमन्तम् शुष्मम् आभर स्वर्विदम्॥ 2 ॥ 9-106-4

मन्त्रार्थ - सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **इन्दो =** हे परम ऐश्वर्यशाली, **प्र =** प्रकृष्ट **धन्वा =** गति, शब्द युक्त, **जागृविः =** जाग्रत, **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए **परि =** सभी ओर **स्रव =** प्रवाह करो, स्रवित करो। **द्युमन्तम् =** अग्रगामी, तेजस्वी, **शुष्मम् =** शुष्म, बलवान्, **स्वर्विदम् =** शब्दज्ञानी को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **भर =** भरण करो **॥ 2 ॥**

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धन्वा =** गति, शब्द करने वाले (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **सोम =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **जागृविः =** जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **इन्द्राय =** इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इन्दो =** हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **परि =** सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव =** प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। **द्युमन्तम् =** द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **शुष्मम् =** शुष्म, सुखाने वाले को (शुष् - सुखाना)। **आ-भर =** भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना)। **स्वर्विदम् =** शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना) **॥ 2 ॥**

568. सखायः आ नि षीदत, पुनानाय प्रगायत।
शिशुम् न यज्ञैः परि भूषत श्रिये॥ 3॥ 9-104-1

मन्त्रार्थ :- सखायः = मित्र **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नि** = निश्चित, निरन्तर **षीदत** = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों, **पुनानाय** = पवित्रकर्ता के लिए **प्रगायत** = प्रकृष्ट गायन करते हैं। **श्रिये** = हे श्रेय, आश्रय, **शिशुम्** = शिशु को **न** = के समान **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा **परि** = सभी ओर **भूषत** = भूषित हो, भूषित करो॥ 3॥

पदार्थ :- सखायः = मित्र (सख् = मित्र होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **षीदत** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **पुनानाय** = पवित्रकर्ता के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **प्रगायत** = प्रकृष्ट गाते हैं, गायन करते हैं (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **शिशुम्** = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **भूषत** = भूषित हो, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **श्रिये** = श्रिया (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)॥ 3॥

569. तम् वः सखायो मदाय, पुनानम् अभि गायत।
शिशुम् न हव्यैः स्वदयन्त गूर्तिभिः॥ 4॥ 9-105-1

मन्त्रार्थ :- वः = तुम सब **सखायो** = मित्र **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **तम्** = उस **पुनानम्** = पवित्रकर्ता को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **गायत** = गायन करो। **शिशुम्** = शिशु **न** = के समान **हव्यैः** = दान योग्य **गूर्तिभिः** = प्रयत्न, उद्योगों द्वारा **स्वदयन्त** = स्वाद युक्त करो॥ 4॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पुनानम्** = पवित्रकर्ता को (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **शिशुम्** = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **न** = नहीं, समान (अव्यय)। **हव्यैः** = दान योग्य द्वारा (हू = दान करना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **स्वदयन्त** = स्वाद युक्त करो (स्वद - स्वाद लेना, तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **गूर्तिभिः** = प्रयत्न, उद्योग द्वारा (गूर - प्रयत्न करना, उद्योग करना)॥ 1॥

570. प्राणा शिशुः महीनाम्, हिन्वन् ऋतस्य दीधितिम्।
विश्व परि प्रिया भुवत् अध द्विता॥ 5॥ 9-102-1

मन्त्रार्थ :- प्राणा = प्राण **महीनाम्** = पूजनीयों का, महिमावान् का **शिशुः** = शिशु **ऋतस्य** = ऋत के **दीधितिम्** = प्रकाश को **हिन्वन्** = संतृप्त करता हुआ **अध** = अथ, अब **द्विता** = द्विधा, दो प्रकार से **विश्वा** = विश्व **प्रिया** = प्रिय **परि** = परितः, सर्वतः **भुवत्** = होता हैं॥ 5॥

पदार्थ :- प्राणा = प्राण (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अन- जीवन होना, चेतन होना, प्रा- पूर्ण करना, तृप्त करना)। **शिशुः** = शिशु (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **महीनाम्** = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **हिन्वन्** = संतृप्त करता हुआ (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **दीधितिम्** = दीधित, प्रकाशित को (दीध - चमकना, प्रकाशित होना, खेलना, क्रीडा करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रिया**

= प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **द्विता** = द्वित (द्वि = दो, संख्या) ॥ 5 ॥

571. पवस्व देववीतये, इन्दो धाराभिः ओजसा।
आ कलशम् मधुमान् सोम नः सदः ॥ 6 ॥ 9-106-7

मन्त्रार्थ :- इन्दो = हे इन्दु, **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **धाराभिः** = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा, **ओजसा** = ओज द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक् **कलशम्** = कलश को **मधुमान्** = मधुरता युक्त **नः** = हमारे **सदः** = प्रतिष्ठित, प्रगतिशील, गन्तव्य को **पवस्व** = पवित्र करो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **धाराभिः** = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **कलशम्** = कलश को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सदः** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 6 ॥

572. सोमः पुनानः ऊर्मिणा, अव्यम् वारम् वि धावति।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥ 7 ॥ 9-106-10

मन्त्रार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा **पुनानः** = पवित्र कुरता हुआ **अव्यम्** = अव्य, रक्षणीय **वारम्** = वरणीय को **अग्रे** = अग **वाचः** = वाणी **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए **वि** = विशेष **धावति** = दौड़ता है ॥ 7 ॥

पदार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाचः** = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ 7 ॥

573. प्र पुनानाय वेधसे, सोमाय वचः उच्यते ।

भृतिम् न भरा मतिभिः जुजोषते ॥ 8 ॥ 9-103-1

मन्त्रार्थ - **पुनानाय** = पवित्रकर्ता, **वेधसे** = विधान करने वाले **सोमाय** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए **वचः** = वचन **प्र** = प्रकृष्ट **उच्यते** = कहते हैं। **भृतिम्** = भृति, भरण **न** = के समान **भरा** = भरण-पोषण-करो **मतिभिः** = मतियों, विचारों द्वारा **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है ॥ 8 ॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **पुनानाय** = पवित्रकर्ता के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) **सोमाय** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **उच्यते** = उच्चारण करते हैं, कहते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **भृतिम्** = भृत को (भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भरा** = पोषण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है (जुष - विचार करना, सेवा करना, चाहना, दुलारना) ॥ 8 ॥

574. गोमत् नः इन्द्रो अश्ववत्, सुतः सुदक्ष धनिव।
शुचिम् च वर्णम् अधि गोषु धारय ॥ 9 ॥ 9-105-4

मन्त्रार्थ :- **इन्दो** = हे इन्दु, **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान्, हे सुसमृद्ध, **गोमत्** = गो युक्त, शब्दकर्ता, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त **नः** = हमको **अश्ववत्** = अश्व, तीव्र गति, व्यापक के समान **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न **धनिव** = प्राप्त कराओ। **शुचिम्** = पवित्र **च** = और **वर्णम्** = वरण, स्वीकार को **गोषु** = शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **अधि** = अधिगत, **धारय** = धारण करो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **गोमत्** = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अश्ववत्** = अश्व, तीव्र गति, व्यापक के समान (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान्, हे सुसमृद्ध (सु - उत्तम, अच्छा, दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **धनिव** = प्राप्त कराओ (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **च** = और (अव्यय)। **वर्णम्** = वरण, स्वीकार को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **धारय** = धारण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना) ॥ 9 ॥

575. अस्मभ्यम् त्वा वसुविदम्, अभि वाणीः अनूषत।
गोभिः वर्णम् अभि वासयामसि ॥ 10 ॥ 9-104-4

मन्त्रार्थ - **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **त्वा** = तुम **वाणीः** = वाणी ने **वसुविदम्** = वसुविद् को **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **अनूषत** = स्तुति की। **गोभिः** = वाणी द्वारा **वर्णम्** = वरण, स्वीकार को **अभि** = अभिमुख **वासयामसि** = वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं ॥ 10 ॥

पदार्थ - **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वसुविदम्** = वसुविद् (वस्

= वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वाणीः =** वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **अनूषत =** स्तुति की (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **गोभिः =** गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **वर्णम् =** वर्ण को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वासयामसि =** वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) **॥ 10 ॥**

576. पवते हर्यतो हरिः, अति ह्वरांसि रंह्या।
अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवत् यशः ॥ 11 ॥ 9-106-13

मन्त्रार्थ :- हर्यतो = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य **हरिः =** हरि **ह्वरांसि =** अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल को **रंह्या =** प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा **अति =** बहुत, अत्यधिक **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है। **स्तोतृभ्यो =** स्तुतियों के लिए **वीरवत् =** वीर के समान **यशः =** यश, कीर्ति **अभ्यर्ष** = अन्तर्दर्शन करो, प्राप्त करो। **॥ 11 ॥**

पदार्थ :- पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **हर्यतो =** हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **हरिः =** हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **अति =** बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **ह्वरांसि =** अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल (ह्वे = पुकारना, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। **रंह्या =** प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा (रंह = चलना, वेग से जाना, रंह = चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, सम्भाषण करना)। **अभ्यर्षन्** = अन्तर्दर्शन करता हुआ (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ऋष् - जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **स्तोतृभ्यो =** स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **वीरवत् =** वीर के समान (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **यशः =** यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) **॥ 11 ॥**

577. परि कोशम् मधुश्चुतम्, सोमः पुनानो अर्षति।
अभि वाणीः ऋषीणाम् सप्त अनूषत ॥ 12 ॥ 9-103-3

मन्त्रार्थ - सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पुनानो =** पवित्रकरते हुए **मधुश्चुतम् =** मधुश्चुत **कोशम् =** कोश को **परि =** सभी ओर **अर्षति =** अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है। **ऋषीणाम् =** ऋषियों का **सप्त =** सात, समूह **वाणीः =** वाणी **अभि =** अभिमुख, सर्वथा **अनूषत =** स्तुति की, स्तुति करते हैं॥ 12 ॥

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **कोशम् =** कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुश्चुतम् =** मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना)। **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानो =** पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अर्षति =** अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अभि =** अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वाणीः =** वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **ऋषीणाम् =** ऋषियों का (ऋष् - जानना,

जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **सप्त** = सात (संख्या)। **अनूषत** = स्तुति की, स्तुति करते हैं (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना) **॥ 12 ॥**

(59) सूक्त 11

578. पवस्व मधुमत्तमः इन्द्राय, सोम क्रतुवित्तमो मदः।
महि द्युक्षतमो मदः ॥ 1 ॥ 9-108-1

मन्त्रार्थ :- सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **क्रतुवित्तमो** = कर्मवेत्ता, कर्म को अत्यन्त जानने वाले, **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति युक्त **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **पवस्व** = पवित्र करे। **द्युक्षतमो** = अत्यन्त प्रकाशवान् **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति **महि** = सम्मान करे **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मधुमत्तमः** = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **क्रतुवित्तमो** = कर्मवेत्ता, कर्म को अत्यन्त जानने वाले (कृ = करना, विद - सुध रखना, समझना, जानना, समझाना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **महि** = सम्मान करे, पूजे (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना)। **द्युक्षतमो** = अत्यन्त प्रकाशवान् (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) **॥ 1 ॥**

579. अभि द्युम्नम् बृहत् यशः, इषस्पते दिदीहि देव देवयुम्।
वि कोशम् मध्यमम् युव ॥ 2 ॥ 9-108-9

मन्त्रार्थ :- इषस्पते = हे इच्छापति, प्रगति, इच्छा के स्वामी, **देव** = हे तेजस्वी, देव, **अभि** = अभिमुख **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को **बृहत्** = महान्, बृहत् **यशः** = यश, कीर्ति **देवयुम्** = देवयुक्त को **दिदीहि** = बढ़ाओ, दो। **मध्यमम्** = मध्यम **कोशम्** = कोश को **वि** = विशेष **युव** = मिलाओ **॥ 2 ॥**

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **यशः** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **इषस्पते** = इच्छापति, प्रगति, इच्छा के स्वामी (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **दिदीहि** = बढ़ाओ, रूप बनाओ (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना)। **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवयुम्** = देवयु को, देवयुक्त को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **कोशम्** = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मध्यमम्** = मध्यम को (सर्वनाम)। **युव** = युव (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना) **॥ 2 ॥**

580. आ सोता परि षिञ्चत अश्वम्, न स्तोमम अग्रुरम् रजस्तुरम्।
वनप्रक्षम् उदप्रुतम् ॥ 3 ॥ 9-108-7

मन्त्रार्थ :- अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न =** के समान **स्तोमम् =** स्तोम को, **अप्तुरम् =** पालक को, **रजस्तुरम् =** रज को तीव्र करने वाले **वनप्रक्षम् =** वन-निवासी, **उदप्रुतम् =** आद्र को गति देने वाले, उदक द्वारा गतिशील को **आ =** समन्तात्, सम्यक् **सोता =** उत्पन्न करो, **परि =** सभी ओर **षिञ्चत =** सिञ्चन करो **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोता =** अभिसुत करो, उत्पन्न होने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **परि =** सभी तरफ (उपसर्ग)। **षिञ्चत =** सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **अश्वम् =** अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न =** नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्तोमम् =** स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अप्तुरम् =** पालक को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **रजस्तुरम् =** रजातुर को, विलीनता के लिए आतुर को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना, तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **वनप्रक्षम् =** वन-प्रक्ष को, वन-निवासी को (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **उदप्रुतम् =** आद्रक को गति देने वाले, उदक द्वारा गतिशील को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, प्रु - अधिक होना, गति करना, हिलना) **॥ 1 ॥**

581. एतम् उ त्यम् मदच्युतम्, सहस्रधारम् वृषभम् दिवो दुहम्।
विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥ 4 ॥ 9-108-11

मन्त्रार्थ - एतम् = यह **उ =** निश्चय ही **त्यम् =** उस **मदच्युतम् =** आनन्द-सिंचित, **सहस्रधारम् =** हजारों धाराओं वाले **वृषभम् =** वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को **दिवो =** दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **दुहम् =** दुहने वाले, **विश्वा =** सभी **वसूनि =** वसुओं को **बिभ्रतम् =** भरण, धारण करो **॥ 4 ॥**

पदार्थ - एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। **उ =** निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्यम् =** उस को (सर्वनाम)। **मदच्युतम् =** आनन्द-सिंचित को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। **सहस्रधारम् =** हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः- धारा होना, धार बाँधना)। **वृषभम् =** वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **दिवो =** दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **दुहम् =** दुहने वाले को (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **वसूनि =** वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **बिभ्रतम् =** भरण, धारण करने वाले को (भृ - भरना, भरण करना, धारण करना) **॥ 4 ॥**

582. स सुन्वे यो वसूनाम्, यो रायाम् आनेता यः इडानाम्।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥ 5 ॥ 9-108-13

मन्त्रार्थ :- स = वह **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सुन्वे =** सृजन करता है **यो =** जो **वसूनाम् =** वसुओं का, घरों का **यो =** जो **रायाम् =** गति, विद्या, वाणी का, **यः =** जो **इडानाम् =** स्तुतियों का, **यः =** जो **सुक्षितीनाम् =** उत्तम निवासों का **आनेता =** लाने वाला (है) **॥ 5 ॥**

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **सुन्वे =** आसवन किया जाये (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **यो =** जो (सर्वनाम)। **वसूनाम् =** वसुओं का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **यो =** जो (सर्वनाम)। **रायाम् =** गति, विद्या, वाणी को (रा-देना, दान करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **आनेता =** लाने वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नी = ले जाना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **इडानाम् =** स्तुतियों का (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **सोमो =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **यः =** जो (सर्वनाम)। **सुक्षितीनाम् =** सुन्दर निवास वाले को (सु = उत्तम, अच्छा, उपसर्ग, क्षि = निवास करना, रहना) **॥ 5 ॥**

583. त्वम् हि अङ्ग दैव्यम्, पवमान जनिमानि द्युमत्तमः।
अमृतत्वाय घोषयन् ॥ 6 ॥ 9-108-3

मन्त्रार्थ :- अङ्ग = हे विद्वान्, प्रगतिशील, **त्वम् =** तुम **हि =** ही **दैव्य =** दिव्य **पवमान =** पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले, **द्युमत्तमः =** अत्यन्त अग्रगामी **अमृतत्वाय =** अमृतत्व के लिए, अमरता के लिए **घोषयन् =** घोष करते हुए **जनिमानि =** उत्पन्न करते हो **॥ 6 ॥**

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **अङ्ग =** अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **दैव्य =** दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पवमान =** पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **जनिमानि =** उत्पन्नों को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **द्युमत्तमः =** अत्यन्त अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अमृतत्वाय =** अमृतत्व के लिए, अमरता के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। **घोषयन् =** घोष करते हुए (घुष् - घोषणा करना, शब्द करना, प्रशंसा करना) **॥ 6 ॥**

584. एष स्य धारया सुतो अव्याः, वारेभिः पवते मदिन्तमः।
क्रीडन् ऊर्मिः अपाम् इव ॥ 7 ॥ 9-108-5

मन्त्रार्थ - एष = यह **स्य =** वह **धारया =** धार द्वारा **सुतो =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न, **अव्याः =** पालनीय, रक्षणीय, **वारेभिः =** वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा **मदिन्तमः =** अत्यन्त आनन्दित करने वाले **क्रीडन् =** क्रीडा करते हुए **ऊर्मिः =** ऊर्मि **अपाम् =** पालकों **इव =** के समान **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **॥ 7 ॥**

पदार्थ - एष = यह (सर्वनाम)। **स्य =** वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। **धारया =** धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **सुतो =** ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **अव्याः =** पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारेभिः =** वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पवते =** पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मदिन्तमः =** अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **क्रीडन् =** क्रीडा करते हुए (क्रीड् - खेलना)। **ऊर्मिः =** ऊर्मि (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **अपाम् =** अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय) **॥ 7 ॥**

585. यः उस्रियाः अपि या अन्तः, अश्मनि निर्गा अकृन्तत् ओजसा।

अभि व्रजम् तत्निषे गव्यम्, अश्व्यम् वर्मीव धृष्णव आरुज।
ओ3म् वर्मीव धृष्णवा रुज ।।। 8 ।। 9-108-6

मन्त्रार्थ - यः = जो **उस्रियाः** = उस्रिय, प्रभातकर्ता, तपाने वाले **अपि** = भी, **या** = जो **अन्तः** = बीच में, भीतर **अश्मनि** = व्याप्त, व्यापक **निः** = निश्चित, निरन्तर **गाः** = गान, गायक **ओजसा** = ओज द्वारा **अकृन्तत्** = कतरते हैं, (उन) **व्रजम्** = गतिशील को **तत्निषे** = विस्तार के लिए **गव्यम्** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय **अश्व्यम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **वर्मीव** = वर्म, आच्छादन की भाँति **धृष्णवा** = विजय, गर्व द्वारा **रुज** = हिंसित करो। **ओ3म्** = परमात्मा **वर्मीव** = वर्म, आच्छादन की भाँति **धृष्णवा** = विजय, गर्व द्वारा **अभि** = अभिमुख **रुज** = हिंसा करो ।। 8 ।।

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **उस्रियाः** = उस्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **अपि** = भी, निकट (अव्यय)। **या** = जो (सर्वनाम)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **अश्मनि** = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त का (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **निः** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय), ऋ - जाना, जानना, पाना)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अकृन्तत्** = कतर दिया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृत - कतरना, काटना, घेर लेना, वेष्टित करना, कृ = करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **व्रजम्** = प्रगतिशील, पूर्ण सिद्ध को (व्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। **तत्निषे** = तत्व के लिए, विस्तार के लिए (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना)। **गव्यम्** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अश्व्यम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **वर्मीव** = वर्म, आच्छादन (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **धृष्णवा** = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **रुज** = हिंसा करने वाले (रुज - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना)। **ओ3म्** = परमात्मा (अव्यय)। **वर्मीव** = वर्म, आच्छादन (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **धृष्णवा** = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **रुज** = हिंसा करने वाले (रुज - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना) ।। 8 ।।

इति पञ्चमो अध्यायः

ॐ

अथ षष्ठो अध्यायः

आरण्यम् पर्वम् काण्डम् वा

(60) सूक्त 1

586. इन्द्र ज्येष्ठम् न आ भर, ओजिष्ठम् पुपुरि श्रवः।
यत् दिधृक्षेम वज्रहस्त, रोदसी उभे सुशिप्र पप्राः॥ 1॥ 6-46-5

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** =हे परम ऐश्वर्यशाली, **पुपुरि** = हे पालन, रक्षा, पूर्ण, तृप्त करने वाले, **श्रवः** = श्रवणशील (विद्वान्) **नः** = हमारे लिए **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े, **ओजिष्ठम्** = अतिशय ओजयुक्त को **आ** = समन्तात्, सम्यक् **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो। **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले, **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **सुशिप्र** = हे उत्तम विद्वान् **यत्** = जिसे **दिधृक्षेम** = (हम) धारण करने के इच्छुक हैं, **उभे** = दोनो (हम और परमात्मा) **पप्राः** = पालन करते हैं, पूर्ण करते हैं॥ 1॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना) **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **पुपुरि** = पालन, रक्षा, पूर्ण, तृप्त करने वाले (पृ-पूर - पालन करना, रक्षा करना, पूर्ण करना, तृप्त करना)। **श्रवः** = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दिधृक्षेम** = धारण किये हुए, धैर्ययुक्त (धृ - स्थिर रहना, धारण करना, युक्त होना)। **वज्रहस्त** = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **सुशिप्र** = हे उत्तम विद्वान् (सु - अच्छा, उत्तम, शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **पप्राः** =पालन करते हैं, पूर्ण करते हैं (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)॥

587. इन्द्रो राजा जगतः चर्षणीनाम्, अधि क्षमा-विश्वरूपम् यत् अस्य।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदत्, राधः उपस्तुतम् चित् अर्वाक्॥ 2॥ 7-29-30

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **अस्य** = इस **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचारवानों का **राजा** = राजा **अधि** = अधिक **क्षमा-विश्वरूपम्** = क्षमा का विश्वरूप (है), **ततो** = उससे, उसके अनन्तर **दाशुषे** = दानी के लिए **वसूनि** = वसुओं को **चोदत्** = प्रेरित करता है, प्रेरणा देता है। **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धिकर्ता **उपस्तुतम्** = समीप स्तुत्य को **चित्** = ही **अर्वाक्** = पहले **ददाति** = देता है॥ 2॥

पदार्थ - **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **क्षमा** = क्षमा (क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **विश्वरूपम्** = विश्वरूप को (विश्व - सब कुछ, रूप - आकार बनाना, रचना करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **ततो** = उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **ददाति** = देता है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस्

= वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **चोदत् =** प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **राधः =** शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **उपस्तुतम् =** उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य को (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **चित् =** भी, ही। **अर्वाक् =** पहले (अव्यय) **॥ 2 ॥**

588. यस्य इदम् आ रजोयुजः, तुजे जने वनम् स्वः।
इन्द्रस्य रन्त्यम् बृहत् ॥ 3 ॥

मन्त्रार्थ - **यस्य =** जिस **इन्द्रस्य =** इन्द्र का **इदम् =** यह **आ =** समन्तात्, सम्यक् **रजोयुजः =** तेजस्वी, प्रकाशवान्, **तुजे =** दानी के लिए **जने =** जन में **वनम् =** वन, **स्वः =** उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि **रन्त्यम् =** रमणीय, प्रसन्न, प्रिय **बृहत् =** महान्, बृहत् (है) **॥ 3 ॥**

पदार्थ -**यस्य =** जिसका (सर्वनाम)। **इदम् =** यह, इसको (सर्वनाम)। **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रजोयुजः =** तेजस्वी, प्रकाशवान्, प्रकाश युक्त (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना,चमकना, प्रकाशित होना। युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **तुजे** = प्रकाशमान, दानी के लिए (तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **जने =** जन में, लोग में (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **वनम् =** वन को (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **स्वः =** उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **इन्द्रस्य =** इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **रन्त्यम् =** रमण, प्रसन्न, प्रिय को (रन = अलग करना, मिलाना। रम = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना। रम = रमना, क्रीडा करना, खेलना। प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **बृहत् =** महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) **॥ 3 ॥**

589. उत उत्तमम् वरुण पाशम् अस्मत्, अव अधमम् वि मध्यमम् श्रथाय।
अथ आदित्य व्रते वयम्, तव अनागसो अदितये स्याम ॥ 4 ॥ 1-24-15

मन्त्रार्थ - **वरुण =** हे वरणीय, वरण करने वाले, **अस्मत् =** हमसे **उत =** ही **उत्तमम् =** उत्तम, श्रेष्ठ, **अव =** निम्न, **अधमम् =** अधम, **मध्यमम् =** मध्यम **पाशम् =** पाश को, बन्धन को **वि =** विशेष **श्रथाय =** शिथिल करो। **अथ =** अथ, अब **आदित्य =** हे आदित्य, अक्षय-अविनाशी, **वयम् =** हम **तव =** तुम्हारे **अदितये =** अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी **व्रते =** व्रत में **अनागसो =** अपराध रहित, निष्पाप, निर्दोष **स्याम =** हों **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **उत् =** ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उत्तमम् =** उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **वरुण =** वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पाशम् =** पाश को, दिखाने वालें को, बन्धन को (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)। **अस्मत् =** हमसे (सर्वनाम)। **अव =** रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अधमम् =** अधम को, न फूँकने वाले को (अधः = नीचे, अव्यय। धम्-ध्मा - फूँकना, फूँक कर आग जलाना, फूँककर वंशी आदि वाद्य बजाना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। मध्यमम् = मध्य को (सर्वनाम)। **श्रथाय =** श्रथ के लिए (श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अथ =** अथ (अव्यय)। **आदित्य =** हे आदित्य, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **व्रते =** वरण करने के लिए, व्रत के लिए, व्रत में (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण

करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अनागसो** = अपराध रहित, निष्पाप, निर्दोष (अन्- नही, अग- कुटिल चाल चलना, अनुचित आचरण करना)। **अदितये** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **स्याम** = हों (अस् - होना) ॥ 4 ॥

590. त्वया वयम् पवमानेन सोम, भरे कृतम् वि चिनुयाम शश्वत्।
तत् नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्, अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 5 ॥ 9-97-58

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **वयम्** = हम **त्वया** = तुम्हारे **पवमानेन** = पवित्र **भरे** = भरण में **शश्वत्** = शश्वत **कृतम्** = कृतित्व, कर्म को **वि** = विशेष **चिनुयाम** = चुनते हैं। **तत्** = वह **मित्रो** = मित्र, **वरुणो** = वरणीय, **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी, **सिन्धुः** = सिन्धु, **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तार **उत** = भी **द्यौः** = द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी **नो** = हमको **मामहन्ताम्** = पूजनीय, महान् करे ॥ 5 ॥

पदार्थ - **त्वया** = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **पवमानेन** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **चिनुयाम** = चुनते हो (चि - चयन करना, ढूँढ़ना, बटोरना, एकत्र करना)। **शश्वत्** = शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मामहन्ताम्** = पूजनीय को, महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **सिन्धुः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना) **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना) ॥ 5 ॥

591. इमम् वृषणम् कृणुत, एकम् इत् माम् ॥ 6 ॥

मन्त्रार्थ - **इमम्** = इस **एकम्** = एक **माम्** = मुझको **इत्** = ही **वृषणम्** = पराक्रमी **कृणुत** = करो ॥ 6 ॥

पदार्थ - **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - विशिष्ट होना, पराक्रम करना, पराक्रमी होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना, पीड़ा करना, दुःख देना)। **कृणुत** = करो (कृ - करना)। **एकम्** = एक (एक = एक, एक - विचार करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **माम्** = मुझको (सर्वनाम) ॥ 6 ॥

592. स न इन्द्राय यज्यवे, वरुणाय मरुद्भ्य।
वरिवोवित् परिस्रव ॥ 7 ॥ 9-61-12

मन्त्रार्थ :- **सः** = वह **नः** = हमारे लिए **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **यज्यवे** = यजन के लिए **वरुणाय** = वरुण के लिए **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए **वरिवोवित्** = इच्छा को जानने वाला **परि स्रव** = परिसिञ्चन करें, परिस्रवित हों ॥ 7 ॥

भावार्थ :- वह परमात्मा हमारे इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्य के लिए, यजन के लिए, वरुण अर्थात् वरणयोग्य के लिए, **मरुद् अर्थात्** मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए इच्छा को जानने वाला है। वह सभी ओर से हमारा अभिसिञ्चन करें ॥

पदार्थ- सः = वह, उसने। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यज्यवे** = यजन, यज्ञ के लिए (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **वरुणाय** = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वरिवोवित्** = इच्छा को जानने वाले (वर् - इच्छा करना, आशा करना, विद् - जानना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = अभिसिञ्चन करें, स्रवित हों (स्रु = जाना, जानना, पाना, सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना) **॥ 7 ॥**

593. एना विश्वानि अर्य आ, द्युम्नानि मानुषाणाम्।
सिषासन्तो वनामहे ॥ 8 ॥ 9-61-11

मन्त्रार्थ :- **एना** = ये **विश्वानि** = सभी **अर्यः** = प्रगतिशील, गमनीय **मानुषाणाम्** = मानुषों के, मननशीलों के **आ** = समन्तात्, सम्यक् **द्युम्नानि** = प्रकाश को **सिषासन्तः** = शुद्ध करते हुए **वनामहे** = शब्द करते हैं, स्मरण करते हैं **॥ 8 ॥**

भावार्थ :- सभी मनुष्यों के प्रकाश स्वरूप अर्य को शुद्ध करते हुए शब्द करते हैं, स्मरण करते हैं। ऋ धातु का अर्थ है जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना। अर्य तथा आर्य शब्द में ये अर्थ समाहित हैं **॥ 8 ॥**

पदार्थ- एना = प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **अर्यः** = गम्य (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **द्युम्नानि** = प्रकाश, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **मानुषाणाम्** = मानुषों का, मनन करने वालों का (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **सिषासन्तः** = शुद्ध करने वाले (सिष्-सस् = शुद्ध करना)। **वनामहे** = शब्द करते हैं (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) **॥ 8 ॥**

594. अहम् अस्मि प्रथमजा ऋतस्य, पूर्व देवेभ्यो अमृतस्य नाम।
यो मा ददाति स इत् एवम् आवत्, अहम् अन्नम् अन्नम् अदन्तम् अद्मि ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ - **अहम्** = मैं **ऋतस्य** = ऋत का **प्रथमजा** = प्रथम उत्पन्न, **पूर्व** = पूर्व **देवेभ्यो** = देवों, विद्वानों के लिए **अमृतस्य** = अमृत, अविनाशी का **नाम** = नाम **अस्मि** = हूँ। **यो** = जो **मा (माम्)** = मुझको **ददाति** = देता है **स** = वह **इत्** = ही **एवम्** = इस प्रकार **आवत्** = रक्षा करे, पालन करे। **अहम्** = मैं **अन्नम्** = अन्न, **अन्नम्** = अन्न को **अदन्तम्** = खाने वाले को **अद्मि** = खाता हूँ **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **अस्मि** = हूँ (सर्वनाम)। **प्रथमजा** = प्रथम उत्पन्न (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **पूर्व** = पूर्व, पहले (सर्वनाम)। **देवेभ्यो** = देवों, विद्वानों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अमृतस्य** = अमृत, अविनाशी का (मृ - मरना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **ददाति** = देता है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **एवम्** = इस प्रकार, इस तरह (अव्यय)। **आवत्** = रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **अन्नम्** = अन्न को (अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **अन्नम्** = अन्न को (अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **अदन्तम्** = खाने वाला को (अद् - खाना)। **अद्मि** = खाता है (अद् = खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) **॥ 9 ॥**

(61) सूक्त 2

595. त्वम् एतत् अधारयः, कृष्णासु रोहिणीषु च।
परुष्णीषु रुशत् पयः ॥ 1 ॥ 8-93-13

मन्त्रार्थ - **त्वम्** = तुमने **एतत्** = इस **पयः** = ज्ञान, रक्षण, प्रगति, प्रवाह को **कृष्णासु** = कृष्णाओं में, आकर्षणों में, **रोहिणीषु** रोहिणियों में, आरोहण करने वालों में **च** = और **परुष्णीषु** = परुष्णियों में **रुशत्** = प्रकाशमान **अधारयः** = धारण किया ॥ 1 ॥

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **एतत्** = यह (सर्वनाम)। **अधारयः** = धारण किया (अधः = नीचे, अव्यय, धृ - धारण करना)। **कृष्णासु** = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **रोहिणीषु** रोहिणियों में, आरोहिणियों में (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **च** = और। **परुष्णीषु** = परुष्णियों में (पा = रक्षा करना, पालन करना, पॄ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **रुशत्** = प्रकाशमान (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **पयः** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पि-पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना) ॥ 1 ॥

596. अरूरुचत् उषसः पृश्निः अग्रियः, उक्षा मिमेति भुवनेषु वाजयुः।
मायाविनो ममिरे अस्य मायया, नृचक्षसः पितरो गर्भम् आदधुः ॥ 2 ॥ 9-83-3

मन्त्रार्थ :- **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का **पृश्निः** = प्रश्नकर्ता **अग्रियः** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य **अरूरुचत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ। **उक्षा** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन करने वाला **वाजयुः** = वाजयुक्त, प्रगतिशील, बलवान् **भुवनेषु** = भुवनों में **मिमेति** = शब्द करता है, प्रगति करता है, रक्षा करता है। **मायाविनो** = मायावी **अस्य** = इसकी **मायया** = माया द्वारा **ममिरे** = मान करते हैं। **नृचक्षसः** = नरों के द्रष्टा **पितरो** = पालन करने वाले **गर्भम्** = गर्भ को **आ** = समन्तात्, सम्यक् **दधुः** = धारण करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **अरूरुचत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ (रुच् - चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **पृश्निः** = प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूंछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। **अग्रियः** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उक्षा** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **मिमेति** = शब्द करता है, प्रगति करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **भुवनेषु** = भुवनों में (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वाजयुः** = वाजयुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **मायाविनो** = मायावी (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना)। **ममिरे** = मान किया (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मायया** = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **नृचक्षसः** = नरों के द्रष्टा (नृ- ले जाना, चक्ष - देखना)। **पितरो** = पितर, पालन करने वाले (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **गर्भम्** = गर्भ को (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दधुः** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 2 ॥

597. इन्द्रः इत् हर्योः, सचा सम्मिश्लः आ वचोयुजा।
इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ 3 ॥ 1-7-2

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **इत्** = ही **हर्योः** = प्रकाश का, प्रगति का **सचा** = जानकार, सहगामी। **सम्मिश्लः** = सम्यक् वाणी **आ** = समन्तात्, सम्यक् **वचोयुजा** = वचन-युक्त, **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **वज्री** = वज्र युक्त, गतिमान **हिरण्ययः** = प्रकाशमान है ॥ 3 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **हर्योः** = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का (हर्य् - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **सम्मिश्लः** = सम्यक् वाणी (सम् = सम्यक् (उपसर्ग), मिश् - शब्द करना, क्रोध करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वचोयुजा** = वचन-युक्त, वाणी-युक्त (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला है (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) ॥ 3 ॥

598. इन्द्र वाजेषु नो अव, सहस्त्रप्रधनेषु च।
उग्रः उग्राभिः ऊतिभिः ॥ 4 ॥ 1-7-4

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **उग्रः** = उग्र, **नो** = हमको **वाजेषु** = वाजों, बलों में **च** = और **सहस्त्रप्रधनेषु** = सहस्त्र-प्रधनों में **उग्राभिः** = उग्रों द्वारा, **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों, रक्षाओं द्वारा **अव** = रक्षा करो ॥ 4 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **वाजेषु** = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **सहस्त्रप्रधनेषु** = सहस्त्र-धनों में (सहस्त्र = हजार (संख्या), प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **च** = और। **उग्रः** = उग्र (उग-उग्र = उग्र होना, अधृष्य होना, अदम्य होना)। **उग्राभिः** = उग्रों द्वारा (उग-उग्र = उग्र होना, अधृष्य होना, अदम्य होना)। **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 4 ॥

599. प्रथः च यस्य सप्रथः च नाम, आनुष्टुभस्य हविषो हविः यत्।
धातुः द्युतानात् सवितुः च विष्णो, रथन्तरम् आ जभारा वसिष्ठः ॥ 5 ॥ 10-181-1

मन्त्रार्थ - **विष्णो** = हे विष्णु, हे सर्वव्यापी, **यस्य** = जिसका **प्रथः** = विस्तार **च** = और **सप्रथः** = पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत **नाम** = नाम वाले **च** = और **यत्** = जो **आनुष्टुभस्य** = अनुष्टुप् का, **हविषो** = दान, आदान-प्रदान का **हविः** = दान योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य **(है)**, **वसिष्ठः** = वसिष्ठ, अत्यन्त वासयुक्त, **धातुः** = धारण करने वाला **द्युतानात्** = द्योतमान, प्रकाशमान **च** = और **सवितुः** = सविता, उत्पादक, ऐश्वर्यवान के **रथन्तरम्** = रथ को **आ** = समन्तात्, सम्यक् **जभारा** = परिहास किया, विनोद किया ॥ 5 ॥

पदार्थ - **प्रथः** = विस्तार करे (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **च** = और। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **सप्रथः** = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **च** = और। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **आनुष्टुभस्य** = अनुष्टुप् का (अनु - पीछे, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **हविषो** = हविष का, दान व आदान-प्रदान का (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **धातुः** = धारण करने वाला (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **द्युतानात्** = द्योतमान, प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सवितुः** = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्,

उत्पन्न करने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **च** = और। **विष्णो** = विष्णु, हे सर्वव्यापी (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **रथन्तरम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **जभारा** = परिहास किया, विनोद किया (जभ् - परिहास करना, विनोद करना, मैथुन करना, भृ - भरण करना)। **वसिष्ठः** = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) **॥ 5 ॥**

600. नियुत्वान् वायो आगहि, अयम् शुक्रो अयामि ते।
गन्तासि सुन्वतो गृहम् ॥ 6 ॥ 2-41-2

मन्त्रार्थ - **नियुत्वान्** = हे नियुक्त **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान, **आगहि** = प्राप्त हो, प्राप्त करें। **ते** = तुम्हारा **अयम्** = यह **शुक्रो** = शुद्धता, पवित्रता **अयामि** = प्राप्त करता हूँ। **सुन्वतो** = ऐश्वर्यवान्, सृजनशील **गृहम्** = गृह, घर को **गन्ता** = जाने वाले **असि** = हो **॥ 6 ॥**

पदार्थ - **नियुत्वान्** = नियुक्त किया, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त किया (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, यु - मिलाना, युक्त करना, जोड़ना, अलग करना)। **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आगहि** = प्राप्त, गति, ज्ञान, घना करें (**आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **शुक्रो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **अयामि** = प्राप्त करता हूँ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जाना, जानना, पाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गन्तासि** = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। **सुन्वतो** = ऐश्वर्यवान्, सृजनशील, स्नान करने वाले, सवन करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **गृहम्** = गृह, घर को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना) **॥ 6 ॥**

601. यत् जायथाः अपूर्व्य, मघवन् वृत्रहत्याय।
तत् पृथिवीम् अप्रथयः, तत् अस्तभ्नाः उतो दिवम् ॥ 7 ॥ 8-89-5

मन्त्रार्थ :- **यत्** = जो **अपूर्व्य** = अपूर्व **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **वृत्रहत्याय** = हिंसक की हत्या के लिए **जायथाः** = उत्पन्न हुए, **तत्** = वह **पृथिवीम्** = पृथिवी को **अप्रथयः** = प्रसिद्ध, विस्तार करता है। **तत्** = वह **उतो** = ही **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को **अस्तभ्नाः** = स्तम्भित, सुस्थिर करता है **॥ 1 ॥**

पदार्थ :- **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **जायथाः** = उत्पन्न होने वाले, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अपूर्व्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **वृत्रहत्याय** = वृत्रहत्या के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अप्रथयः** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया, प्रसिद्ध न करें, न फैलायें (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **अस्तभ्नाः** = स्तम्भित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तम्भ - दृढ़ होना, अचल होना, स्तब्ध होना)। **उतो** = ही (अव्यय)। **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) **॥ 1 ॥**

(62) सूक्त 3

602. मयि वर्चो अथो यशो, अथो यज्ञस्य यत् पयः।
परमेष्ठी प्रजापतिः, दिवि द्यामिव दृहंतु॥ 1॥

मन्त्रार्थ - **मयि** = मुझमें **वर्चो** = प्रकाश **अथो** = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर **यशो** = यश, कीर्ति **अथो** = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर **यज्ञस्य** = यजन का **यत्** = जिसे, जो **पयः** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण **परमेष्ठी** = परम् में स्थित **प्रजापतिः** = प्रजापति, प्रजा का रक्षक, पालक **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **द्याम्** = सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय **इव** = के समान **दृहंतु** = दृढ़ करे, बढ़ाये॥ 1॥

पदार्थ - **मयि** = मुझमें (सर्वनाम)। **वर्चो** = प्रकाश (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **अथो** = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर (अव्यय)। **यशो** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **अथो** = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर (अव्यय)। **यज्ञस्य** = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पयः** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **परमेष्ठी** = परम् में स्थित (परम् = परन्तु, फिर, परम् (अव्यय)। **प्रजापतिः** = प्रजापति, प्रजा का रक्षक, पालक (प्र - प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न करना, पत - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **द्यामिव** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **दृहंतु** = दृढ़ करो, बढ़ाओ (दृंह् = बढ़ना, दृढ़ होना, दृढ़ करना)॥ 1॥

603. सम् ते पयांसि सम् उ यन्तु वाजाः, सम् वृष्ण्यानि अभिमातिषाहः।
आप्यायमानो अमृताय सोम, दिवि श्रवांसि उत्तमानि धिष्व॥ 2॥ 1-91-18

मन्त्रार्थ - **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, **ते** = तुम्हारे लिए **सम्** = सम्यक् **पयांसि** = विस्तृत, प्रगतिशील, प्रवाहमान, **उ** = निश्चय ही **सम्** = सम्यक् **वाजाः** = बल, विद्या, प्रगति, **सम्** = सम्यक् **वृष्ण्यानि** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी **अभिमातिषाहः** = अभिमान को सहन करने में समर्थ **यन्तु** = पोषण करे, नियमन-नियन्त्रण करें। **आप्यायमानो** = सम्यक रूप से बढ़ा **अमृताय** = अमृत के लिए **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, ज्योतिर्मय में **उत्तमानि** = श्रेष्ठ, उत्तम **श्रवांसि** = श्रवणीय **धिष्व** = शब्द करो, बोलो॥ 2॥

पदार्थ - **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पयांसि** = विस्तृत, विस्तारयुक्त, गतिशील, प्रवाहमान (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **वाजाः** = बल, विद्या, प्रगति (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **वृष्ण्यानि** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अभिमातिषाहः** = अभिमान को सहन करने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, मा = मान करना, मापना, सह - सहन करना, समर्थ होना, तृप्त होना)। **आप्यायमानो** = सम्यक रूप से बढ़ाओ (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), प्याय् = बढ़ना, आप्यायी – भूँख लगना, भूँखा होना)। **अमृताय** = अमृत के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)।**दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना,

चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **श्रवांसि =** श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **उत्तमानि =** श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **धिष्व =** शब्द करो, बोलो (धिष् = शब्द करना, बोलना) **॥ 2 ॥**

604. त्वम् इमा ओषधीः सोमः विश्वा, त्वम् अपो अजनयः त्वम् गाः।
त्वम् आतनोः उरुर्वा अन्तरिक्षम्, त्वम् ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥ 3 ॥ 1-91-21

मन्त्रार्थ - **त्वम् =** तुम **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इमा =** ये **विश्वा =** सभी **ओषधीः =** ओषधियाँ, **त्वम् =** तुम **अपो =** पालन करने वाले को **अजनयः =** उत्पन्न करते हो। **त्वम् =** तुम **गाः =** गान, गायक को, **त्वम् =** तुम **आतनोः =** विस्तार, आश्रय, वाणी, **उरु =** विस्तृत **अन्तरिक्षम् =** अन्तरिक्ष, **त्वम् =** तुम **ज्योतिषा =** ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा **वि =** विशेष **तमो =** इच्छा, दुःख, अन्धकार को **ववर्थ =** दूर करते हो **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **इमा =** यह, इसको (सर्वनाम)। **ओषधीः =** ओषधी (उषध् - चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना)। **सोमः =** हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विश्वा =** विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **अपो =** पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अजनयः =** उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **गाः =** गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **आतनो =** विस्तार, आश्रय, वाणी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, शब्द करना, दुःख देना)। **उरुर्वा** गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। **अन्तरिक्षम् =** अन्तरिक्ष या आकाश, अन्तर्दशी (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **त्वम् =** तुम (सर्वनाम)। **ज्योतिषा =** ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वि =** विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **तमो =** इच्छा, दुःख, अन्धकार को (तम - इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, अन्धकार होना)। **ववर्थ =** दूर किया (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, आच्छादित करना) **॥ 3 ॥**

605. अग्निम् ईडे पुरोहितम्, यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम्।
होतारम् रत्नधातमम् ॥ 4 ॥ 1-1-1

मन्त्रार्थ - **अग्निम् =** अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान्, **पुरोहितम् =** पुरोहित, **यज्ञस्य =** यजन का **देवम् =** देव, **ऋत्विजम् =** ऋत्विज, ऋत को उत्पन्न करने वाले, **होतारम् =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले, **रत्नधातमम् =** रत्न, रमणीय को धारण करने वाले को **ईडे =** स्तुत करता हूँ **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **अग्निम् =** अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ईडे =** स्तुति करता हूँ (ईड् = स्तुति करना)। **पुरोहितम् =** पुरोहित को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। **यज्ञस्य =** यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **देवम् =** देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ऋत्विजम् =** ऋत्विज को, ऋतु से उत्पन्न को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **होतारम् =** आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **रत्नधातमम् =** रत्न, रमणीय को धारण करने वाले

को (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा् - धारण करना, पहनना, पोषण करना) ॥ 4 ॥

606. ते मन्वत प्रथमम् नाम गोनाम्, त्रिः सप्त परमम् नाम जानन्।
ता जानतीः अभि अनूषत क्षा, आविः भुवन् अरुणीः यशसा गावः ॥ 5 ॥ 4-1-16

मन्त्रार्थ - **ते** = तुम्हारे लिए **प्रथमम्** = प्रथम **नाम** = नाम, **गोनाम्** = शब्द करने वालों, मननशीलों के **त्रिः** = तीन **सप्त** = सात **परमम्** = परम **नाम** = नाम **जानन्** = जानते हैं। **ता** = वे **क्षा** = प्रगतिशील, निवासी **जानतीः** = जानते हुए **अभ्यनूषत** = अभि स्तुति करते हैं। **अरुणीः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **यशसा** = यश, कीर्ति द्वारा **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **आविः** - सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त **भुवन्** = हो रहा है ॥ 5 ॥

पदार्थ - **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मन्वत** = जानें, समझें, विचार करें, स्वीकार करें, मानें (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **प्रथमम्** = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **त्रिः** = तीन (संख्या)। **सप्त** = सात (संख्या)। **परमम्** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **जानन्** = जानते हुए (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **ता** = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। **जानतीः** = जानते हुए (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अभ्यनूषत** = अनुताप किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **क्षा** = प्रगतिशील, विद्वान्, निवासी (क्षि - जाना, चलना, निवास करना, रहना, बसना)। **आविः** - सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त (उपसर्ग)। **भुवन्** = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अरुणीः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **यशसा** = यश, कीर्ति द्वारा (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 5 ॥

607. सम् अन्या यन्ति उपयन्ति अन्याः, समानम् ऊर्वम् नद्यः पृणन्ति।
तम् उ शुचिम् शुचयो दीदिवांसम्, अपाम् नपातम् उप यन्ति आपः ॥ 6 ॥ 2-35-3

मन्त्रार्थ - **अन्या** = अन्य **सम्** = सम्यक् **यन्तिः** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं, **अन्याः** = अन्य **उपयन्ति** = निकट गमन, उपनियमन करते हैं, **नद्यः** = नदियाँ **समानम्** = समान **ऊर्वम्** = सहनशील, समर्थ को **पृणन्ति** = पालन, पूर्ण करते हैं। **आपः** = व्याप्त, व्यापक, **शुचयो** = पवित्र, **उ** = निश्चय ही **तम्** = उस **शुचिम्** = पवित्र, **दीदिवांसम्** = प्रकाश करने वालें, **अपाम्** = रक्षा, पालन को, **न पातम्** = अपतित को **उप** = समीप **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ - **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अन्या** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **यन्तिः** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **उपयन्ति** = निकट गमन अथवा उपनियमन (उप - समीप, या - जाना, यम - नियमन करना, नियन्त्रण करना)। **अन्याः** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **ऊर्वम्** = सहनशील, समर्थ, हिंसक को (उर्व - हिंसा करना, सहन करना)। **नद्यः** = नदियाँ (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **पृणन्ति** = पालन, पूर्ण करते हैं (पृ - पूर्ण करना, पालन करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना,जाना)। **शुचयो** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **दीदिवांसम्** = प्रकाश करने वालों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति

करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अपान्नपातम् =** अपान रक्षा, पालन को (अ - नहीं, पा-पान - पीना, पान करना, अप - पालन करना, अन - जीना, समर्थ होना, जाना, पा = रक्षा करना, पालन करना) **उप =** समीप (उपसर्ग)। **यन्ति =** प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **आपः =** आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना) **॥ 6 ॥**

608. आ प्रागाद् भद्रा युवतिः, अह्नः केतून् समीर्त्सति।
अभूत् भद्रा निवेशनी, विश्वस्य जगतो रात्री॥ 7 ॥

मन्त्रार्थ - **भद्रा =** कल्याणकारी **युवतिः =** युवती, मिलाने वाली **आ प्रागाद् =** आती है, **अह्नः =** व्यापक **केतून् =** ज्ञानियों, निवासों को **समीर्त्सति =** प्राप्त करते हैं। **रात्री =** रात्रि **विश्वस्य =** सभी **जगतो =** जगत् का, संसार का **भद्रा =** कल्याणकारी **निवेशनी =** निवेशनी, निवेश करने वाली **अभूत् =** हो गयी **॥ 7 ॥**

पदार्थ - **आ =** समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **प्रागाद् =** आती है (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। गम् = जाना अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, लेना, ग्रहण करना,)। **भद्रा =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **युवतिः =** युवतियों, मिलाने वालों (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अह्नः =** व्यापक, व्याप्त होने के समय, दिन (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **केतून् =** ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **समीर्त्सति =** जानते हो, जाते हो, प्राप्त करते हो (सम् = सम्यक्, भलीभांति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **अभूत् =** हो गया, हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **भद्रा =** कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द् = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **निवेशनी =** निवेशनी, निवेश करने वाली (नि - निश्चित, विश - प्रवेश करना, भीतर जाना, धंसना)। **विश्वस्य =** विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **जगतो =** जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **रात्री =** रात्रि (रा - देना, मिल जाना) **॥ 7 ॥**

609. प्रक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू महः, प्र नो वचो विदथा जातवेदसे।
वैश्वानराय मतिः नव्यसे शुचिः, सोमः इव पवते चारुः अग्नये॥ 8 ॥ 6-8-1

मन्त्रार्थ - **नो =** हमारे **वचो =** वचन **प्रक्षस्य =** निवास के लिए **वृष्णो =** वर्षा, पराक्रम, **अरुषस्य =** अहिंसक, रोष-रहित का **नू =** निश्चय ही **महः =** पूज्य, महान्, **जातवेदसे =** वेद को जानने, उत्पन्न करने वाले के लिए **प्र =** प्रकृष्ट **विदथा =** जानने वाले हैं। **वैश्वानराय =** विश्वनायक के लिए **मतिः =** मति, मननशक्ति, **नव्यसे =** नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए **शुचिः =** शुद्धता, **सोमः =** ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इव =** के समान **चारुः =** चारु, कल्याणकारी, **अग्नये =** अग्नि के लिए **पवते =** पवित्रकर्ता, पालन कर्ता, रक्षक है **॥ 8 ॥**

पदार्थ - **प्रक्षस्य =** निवास, क्षति, क्षय का (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **वृष्णो =** वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - पराक्रम करना, पराक्रमी होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अरुषस्य =** प्रगतिशील, व्यापक, अहिंसक, रोष-रहित का (अ - नहीं, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **नू =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **महः =** बड़े, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नो =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वचो =** वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **विदथा =** विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **जातवेदसे =** विद्वान्, वेद को जानने वाले,

वेद को उत्पन्न करने वाले के लिए (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **वैश्वानराय** = विश्वनायक के लिए (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। **मतिः** = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **नव्यसे** = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **शुचिः** = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो–स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) **॥ 8 ॥**

610. विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञम्, उभे रोदसी अपाम् नपात् च मन्म।
मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचम्, सुम्नेषु इत् वो अन्तमा मदेम ॥ 9 ॥ 6-52-14

मन्त्रार्थ - **विश्वे** = सभी **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **मम** = मेरा **यज्ञम्** = यजन को **शृण्वन्तु** = सुनें। **उभे** = दोनों **रोदसी** = करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **च** = और **मन्म** = विचार **अपाम्** = पालकों को **नपात्** = प्राप्त करते हैं। **वो** = तुम्हारा **परिचक्ष्याणि** = परिदर्शनीय, परिवाद योग्य **वचांसि** = वचन **मा** = नहीं **वोचम्** = बोलूँ। **सुम्नेषु** = उत्तम चिन्तनों में **इत्** = ही **वो** = तुम्हारे **अन्तमा** = निकट **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें **॥ 9 ॥**

पदार्थ - **विश्वे** = सभी (सर्वनाम)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **शृण्वन्तु** = सुनें (शृ - सुनना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **रोदसी** = करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **नपात्** = प्राप्त किया (नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। **च** = और। **मन्म** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वचांसि** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **परिचक्ष्याणि** = परिचक्ष्य, परिदर्शनीय, बोलने योग्य (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **वोचम्** = वाणी का (वच् - बोलना, कहना)। **सुम्नेषु** = उत्तम चिन्तनों, ऐश्वर्यों, सृजनों में (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अन्तमा** = निकट (अन्तम = निकट, सर्वनाम)। **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें (मद् – हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना) **॥ 9 ॥**

611. यशो मा द्यावा-पृथिवी, यशो मा इन्द्र-बृहस्पती।
यशो भगस्य विन्दतु, यशो मा प्रतिमुच्यताम्।
यशस्वी अस्याः संसदो, अहम् प्रवदिता स्याम् ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - **मा** = मुझे **द्यावा-पृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी **यशो** = यश, कीर्ति, **मा** = मुझे **इन्द्र-बृहस्पती** = इन्द्र-बृहस्पती, परम ऐश्वर्यवान्, महान ईश्वर **यशो** = यश, कीर्ति, **भगस्य** = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य का **यशो** = यश, कीर्ति **विन्दतु** = प्राप्त कराये। **मा** = मुझे **यशो** = यश, कीर्ति **प्रतिमुच्यताम्** = दे। **अस्याः** = इसका **संसदो** = संसद्, सम्यक् विद्वान्, प्रतिष्ठित **यशस्वी** = यशस्वी (हो), **अहम्** = मैं **प्रवदिता** = प्रवक्ता **स्याम्** = हों **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **यशो** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **मा** = नहीं, मत, मुझे (मा

- नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **द्यावा-पृथिवी =** अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करन, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **यशो =** यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **इन्द्र-बृहस्पती =** इन्द्र-बृहस्पती, परम ऐश्वर्यवान्, महान ईश्वर (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **यशो =** यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **भगस्य =** भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य का (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **विन्दतु =** प्राप्त करता है (विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **यशो =** यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **मा =** नहीं, मत (अव्यय)। **प्रतिमुच्यताम् =** बोलने, छोड़ने, देने वाले (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, मुंच् = बोलना, कहना, छोड़ना, प्रसन्न होना, देना)। **यशस्वी =** यशवान् हो, यश के समान, यश युक्त (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **अस्याः =** इसका (सर्वनाम)। **संसदो** = सम्यक् विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अहम् =** मैं (सर्वनाम)। **प्रवदिता =** प्रवदा, प्रवक्ता, प्रकृष्ट बोलने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वद - कहना, समझाना)। **स्याम् =** हों (अस् = होना) **॥ 10 ॥**

612. इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्, यानि चकार प्रथमानि वज्री।
अहन् अहिम् अनु अपः ततर्द, प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम् ॥ 11 ॥ 1-32-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रस्य = इन्द्र का **नु =** निश्चय ही **प्रथमानि =** प्रथम, विस्तृत **वीर्याणि =** वीरकर्मों को **प्रवोचम् =** कहें, **वज्री =** वज्री, वज्र युक्त, गतिमान ने **यानि =** जो **चकार =** किया। **अहिम् =** व्यापक को **अहन् =** व्याप्त किया, **अनु =** पश्चात् **अपः =** पालक, रक्षक ने **ततर्द =** हिंसा की, **पर्वतानाम् =** पर्वतों का **वक्षणा =** संगठनकर्ता ने **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **अभिनत् =** अभिनत किया **॥ 11 ॥**

पदार्थ - इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **वीर्याणि =** वीरकर्मों को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **प्रवोचम् =** कहें (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वच - बोलना, कहना, समझाना)। **यानि =** जो (सर्वनाम)। **चकार =** किया (कृ = करना)। **प्रथमानि =** प्रथम, विस्तार (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, विस्तार करना)। **वज्री =** वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **अहन् =** व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **अहिम् =** व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अनु =** पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **अपः =** पालन करने वाला, पालक, रक्षक् (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **ततर्द =** विस्तार करता हुआ, हिंसा करता हुआ (तर्द = हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना)। **प्र =** प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वक्षणा =** वक्षना (वक्ष = क्रोध करना, एकत्र करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **अभिनत् =** सभी ओर, सर्वथा, नत, विनयी, विनम्र (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, नम् - नमना, नमन करना)। **पर्वतानाम् =** पर्वतों को (पर्व् - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) **॥ 11 ॥**

613. अग्निः अस्मि जन्मना जातवेदाः, घृतम् मे चक्षुः अमृतम् मे आसन्।
त्रिधातुः अर्को रजसो विमानो, अजस्रम् ज्योतिः हविः अस्मि सर्वम् ॥ 12 । 3-26-7

मन्त्रार्थ - अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **जन्मना =** जन्म से **जातवेदाः =** विद्वान्, वेद को जानने, उत्पन्न करने वाला **अस्मि =** हूँ। **घृतम् =** घृत, प्रकाश **मे =** मेरा **चक्षुः =** दृष्टि, वाणी (है), **अमृतम् =** अमृत **मे =** मेरे लिए **आसन् =** है। **त्रिधातुः =** त्रिधातुयुक्त **अर्को =** अर्क **रजसो =** रजस् का **विमानो =** विशेष मान करने वाला, निर्माण करने वाला, **अजस्रम् =** सतत, निरन्तर **ज्योतिः =** प्रकाश **हविः =** हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य

सर्वम् = सब कुछ **अस्मि** = हूँ ॥ **12** ॥

पदार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अस्मि** = हूँ (सर्वनाम)। **जन्मना** = जन्म से, जन्म द्वारा (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **जातवेदाः** = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **घृतम्** = घृत को, प्रकाशमान को (घृ -गीला करना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **चक्षुः** = दृष्टि, वाणी (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **अमृतम्** = न मरने वाले, अमर, अमृत को (अ - नहीं, मृ = मरना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **आसन्** = बैठे हुए, थे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **त्रिधातुः** = त्रिधातु (त्रि - संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अर्को** = अर्क (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **रजसो** = रजस् का (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **विमानो** = विशेष मान करने वाला (वि = विशेष, विना, विलोम, मान - मान करना, पूजा करना, ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा करना, शोध करना, सत्कार करना, मनाना, तोलना, तुलना करना, मापना)। **अजस्रम्** = सतत, निरन्तर (सर्वनाम, अव्यय)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अस्मि** = हूँ (सर्वनाम)। **सर्वम्** = सब कुछ (सर्वनाम) ॥ **12** ॥

614. पाति अग्निः विपो अग्रम् पदम् वेः, पाति यह्वः चरणम् सूर्यस्य।
पाति नाभा सप्तशीर्षाणम् अग्निः, पाति देवानाम् उपमादम् ऋष्वः ॥ 13 ॥ 3-5-5

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **विपो** = विशेष अर्चना करने वाले, विशेष रक्षक, पालक **वेः** = गमनशील, सृजनशील **अग्रम्** = अग **पदम्** = पद को **पाति** = पालन करता है। **यह्वः** = महान् **चरणम्** = विचरण करने वाले को **सूर्यस्य** = सूर्य का **पाति** = पालन करता है। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **नाभा** = नाभि में **सप्तशीर्षाणम्** = सप्तशीर्षयुक्त को **पाति** = पालन करता है। **ऋष्वः** = ऋषि, विद्वान् **देवानाम्** = देवों के **उपमादम्** = आनन्द को **पाति** = पालन करते हैं ॥ **13** ॥

पदार्थ - **पाति** = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **विपो** = विशेष अर्चना करने वाले, विशेष रक्षक, पालक (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अग्रम्** = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पदम्** = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **वेः** = गमनशील, सृजनशील (वे = बुनना, वी = जानना, पाना)। **पाति** = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **यह्वः** = महान् (यह्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **चरणम्** = विचरण करने वाले को (चर -जाना, खाना, आचरण करना)। **सूर्यस्य** = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **पाति** = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **नाभा** = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। **सप्तशीर्षाणम्** = सप्तशीर्ष का (सप्त = सात (संख्या, शीर्ष = शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पाति** = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **उपमादम्** = उपमान, निकट मान-मापन (उप- समीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **ऋष्वः** = ऋषि, विद्वान् (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तदृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना) ॥ **13** ॥

(63) सूक्त 4

615. भ्राजन्ती अग्ने समिधान दीदिवो, जिव्हा चरति अन्तः आसनि।
स त्वम् नो अग्ने पयसा, वसुविद् रयिम् वर्चो दृशे दाः ॥ 1 ॥

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि, **समिधान** = हे सम्यक् प्रकाशमान, **भ्राजन्ती** = प्रकाशयुक्त **दीदिवो** = तेजस्वी **जिह्वा** = जिह्वा **अन्तः** = भीतर **आसनि** = आसन में, स्थान में **चरति** = विचरण करता है। **अग्ने** = हे अग्नि, **स** = वह **त्वम्** = तुम **वसुविद्** = वसु को जानने वाले **नो** = हमारे लिए **पयसा** = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, प्रवाहमान द्वारा **रयिम्** = विद्या, **दृशे** = देखने के लिए **वर्चो** = प्रकाश **दाः** = दो ॥ 1 ॥

पदार्थ - **भ्राजन्ती** = प्रकाशयुक्त (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **समिधान** = सम्यक् प्रकाश, प्रकाशित होता हुआ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **दीदिवो** = तेजस्वी! (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **जिव्हा** = जिह्वा (जिह = जाना, जानना, पाना)। **चरति** = विचरण करता है (चर - जाना, आचरण करना)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **आसनि** = बैठने के साधन में, आसन में, स्थान में (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पयसा** = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **वसुवित** = वसु को जानने वाला (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वर्चो** = प्रकाश (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। **दाः** = दानी, दो (दा, दद् = देना) ॥ 1 ॥

616. वसन्तः इत् नु रन्त्यो, ग्रीष्मः इत् नु रन्त्यः।
वर्षाणि अनु शरदो हेमन्तः, शिशिर इत् नु रन्त्यः ॥ 2 ॥

मन्त्रार्थ - **वसन्तः** = वसन्त **इत्** = ही **नु** = निश्चय **रन्त्यो** = रमणीय (हो)। **ग्रीष्म** = ग्रीष्म **इत्** = ही **नु** = निश्चय **रन्त्यः** = रमणीय (हो)। **वर्षाणि** = वर्षा **अनु** = अनुकूल, **शरदो** = शरद्, **हेमन्तः** = हेमन्त, **शिशिर** = शिशिर **इत्** = ही **नु** = निश्चय **रन्त्यः** = रमणीय (हो) ॥ 2 ॥

पदार्थ - **वसन्तः** = वसन्त, वसते हुए, वास करते हुए, वास करने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **रन्त्यो** = रन्ति, रमण, प्रसन्न है (रन = अलग करना, मिलाना। रम = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना। रम = रमना, क्रीडा करना, खेलना। प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **ग्रीष्म** = ग्रीष्मकाल, ग्रसने वाला (ग्रस - ग्रसना, घेरना, लेना, ग्रहण करना, खाना, भक्षण करना, ग्रीष् - तपना, ऊष्म होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **रन्त्यः** = रन्ति, रमण, प्रसन्न (रन = अलग करना, मिलाना। रम = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना। रम = रमना, क्रीडा करना, खेलना। प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **वर्षाणि** = बरसो, वर्षा करो (वर्ष् = बरसना, सींचना, अति पराक्रम करना, हिंसा करना, क्लेश देना, उत्पीड़न करना) **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **शरदो** = शरद् (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। **हेमन्तः** = हिम, गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। **शिशिर** =

शिशिर (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **इत् =** ही (अव्यय)। **नु =** निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **रन्त्यः =** रन्ति, रमण, प्रसन्न होता है (रन = अलग करना, मिलाना। रम = रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना। रम = रमना, क्रीडा करना, खेलना। प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना) **॥ 2 ॥**

617. सहस्रशीर्षाः पुरुषः, सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिम् सर्वतो वृत्वा, अति अतिष्ठत् दशाङ्गुलम् ॥ 3 ॥ 10-90-1

मन्त्रार्थ - सहस्रशीर्षाः हजारों शिरों वाला **पुरुषः** पुरुष (सर्वत्र परिपूर्ण व्यापक परमात्मा), **सहस्राक्षः** हजारों नेत्र वाला, **सहस्रपात्** हजारों पाद अर्थात् पैरों वाला (है)। **स** वह **भूमिम्** भूमि को **सर्वतः** सब ओर **वृत्वा** आवृत कर **दशाङ्गुलम्** दश अंगुल **अति** अधिक **अतिष्ठत्** स्थित है **॥ 3 ॥**

भावार्थ - परमात्मा अनादि-अनन्त है। प्रतीकात्मक रूप से कहा जाता है कि उसके अनन्त शिर, अनन्त हाथ, अनन्त नेत्र, अनन्त पैर आदि हैं। वह सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त होने के साथ ही उससे भी अधिक है। परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि से भी अधिक विराट है **॥ 3 ॥**

पदार्थ - सहस्रशीर्षा = हजारों शिरों वाला (सहस्र - हजार, शीर्ष - शीर्ष होना, उच्च होना, मुख्य होना)। **पुरुषः =** पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **सहस्राक्षः =** हजारों नेत्र वाला (अक्ष् - देखना, खेलना)। **सहस्रपात्** = हजारों पाद अर्थात् पैरों वाला (पद् - चलना, पत् - चलना, ऐश्वर्य होना)। **स =** वह। **भूमिम् =** भूमि को (भू - होना)। **सर्वतः** = सब ओर (अव्यय)। **वृत्वा =** आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **दशाङ्गुलम् =** दश अंगुल (दश - दस, अङ्ग - चलना, अंकुरित होना, अंग होना, अवयव होना)। **अति** - अधिक। **अतिष्ठत् =** स्थित है (तिष्ठ् - ठहरना, स्थित होना) **॥ 3 ॥**

618. त्रिपात् उर्ध्व उदैत् पुरुषः, पादो अस्य इह अभवत् पुनः।
तथा विष्वङ् वि अक्रामत्, अशनानशने अभि ॥ 4 ॥ 10-90-4

मन्त्रार्थ- अस्य इसका (परमात्मा का) **त्रिपात्** तीन पाद (अंश) **ऊर्ध्व** ऊपर या उच्च अवस्था **उत्** ही **ऐत्** प्राप्त है। **पुरुषः** पुरुष (परमात्मा), **पादो** पाद (एक भाग) **इह** यह (सृष्टि) **अभवत्** हुआ **पुनः** फिर। **तथा =** उसी प्रकार **विष्वङ्** विश्व अथवा व्याप्त **वि-अक्रामत्** विशेष रूप से प्राप्त हुआ, **अशनानशने** खाने वाले और न खाने वाले **अभि** प्रति **॥ 4 ॥**

भावार्थ - परमात्मा का तीन पाद या अंश तो उच्च अवस्था अर्थात् शुद्ध स्वरूप में अवस्थित रहता है, केवल एक पाद या अंश ही सृष्टि के रूप में व्यक्त होता है। इस एक पाद में खाने वाले तथा न खाने वाले सभी रूप सम्मिलित हैं। साशन तथा अनशन अर्थात् खाने वाले और न खाने वाले, इसका एक भावार्थ तो यह है कि भोजन कर जीवन यापन करने वाले अर्थात् जीव तथा विना भोजन के रहने वाले अर्थात् निर्जीव पदार्थ। सामाजिक दृष्टि से इसका भावार्थ खाने वाले, नष्ट करने वाले, अन्य लोगों अधिकार या भाग छीनने वाले दुर्जन तथा सहजता से सरल जीवन जीने वाले सज्जन। इस प्रकार से अन्य तर्कसंगत भावार्थ भी लिये जा सकते हैं।

पदार्थ - अस्य = इसका। **त्रिपात् =** तीन पाद (त्रि - तीन, पद् - चलना, भूषित होना)। **ऊर्ध्व =** ऊपर, उच्च अवस्था **उत् =** ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **ऐत् =** प्राप्त है (इ - जाना, जानना, पाना)। **पुरुषः =** पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **पादो =** पाद (पद् - चलना, भूषित होना) **इह =** यह, **अभवत् =** हुआ, **पुनः =** फिर। **तथा =** उसी प्रकार (अव्यय)। **विष्वङ् =** विश्व अथवा व्याप्त (विष्- विविष् - व्याप्त होना) **वि-अक्रामत् =** विशेष रूप से प्राप्त हुआ (क्रम् - चलना, निर्भयता से जाना, रक्षा करना)। **अशनानशने =** खाने वाले और न खाने वाले (अशन-अन्-अशन्, अश् - खाना, अन् - नहीं) **अभि =** प्रति **॥ 4 ॥**

619. पुरुष एव इदम् सर्वम्, यत् भूतम् यत् भाव्यम्।
पादो अस्य सर्वा भूतानि, त्रिपात् अस्य अमृतम् दिवि ॥ 5 ॥ 10-90-2

मन्त्रार्थ- इदम् यह **सर्वम्** सब (समस्त जगत्), **यत्** जो **भूतम्** उत्पन्न हुआ **यत्** जो **च** और **भाव्यम्** उत्पन्न होने वाला (है), **पुरुष** पुरुष अर्थात् परिपूर्ण परमात्मा **पादो** पाद को (अंश) **अस्य** इसका **सर्वा** सब **भूतानि** सृष्टि एक, **त्रिपाद्** तीन पाद (तीन अंश) **अस्य** इसका **अमृतम्** अमृत **दिवि** दिव (द्योतनात्मक स्वरूप) में (है) **॥ 2 ॥**

भावार्थ - जो कुछ है, जो भविष्य में हो सकता है, वह सबकुछ पुरुष अर्थात् परिपूर्ण परमात्मा ही है, उसके अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नहीं। वही अमृतत्व अर्थात् अमरता का शासक है, उसके अतिरिक्त सबकुछ मरणशील है, नाशवान् है। विभिन्न रूपों में वहीं वृद्धि कर रहा है, शेष सभी तो नाशवान् हैं, क्षरणशील हैं। सम्पूर्ण सृष्टि तो मात्र एक पाद या अंश है, तीन अंश तो सृष्टि से परे उससे भी अधिक केवल परमात्मा ही है। परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त तो है ही, उस से भी कई गुना अधिक विराट रूप परमात्मा का है।

पदार्थ- इदम् यह **सर्वम्** सब, **यत्** जो **भूतम्** उत्पन्न हुआ (भू - होना, उत्पन्न होना) **यत्** जो **च** और **भाव्यम्** उत्पन्न होने वाला (भू - होना, उत्पन्न होना), **पुरुष** पुरुष अर्थात् परिपूर्ण परमात्मा (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **एव** ही, **उत** ही **पादो** पाद (पद् - चलना, भूषित होना) **अस्य** इसका सर्वा सब **भूतानि** सृष्टि, **त्रिपाद्** तीन पाद (त्रि - तीन, पद् - चलना, भूषित होना) **अस्य** इसका **अमृतम्** अमृत (अ - नहीं, मृ - मरना) **दिवि** दिव में (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना) **॥ 5 ॥**

620. तावान् अस्य महिमा, ततो ज्यायान् च पूरुषः।
उत अमृतत्वस्य ईशानो, यत् अन्नेन अतिरोहति॥ 6 ॥ 10-90-2

मन्त्रार्थ - **तावान्** उतना **अस्य** इसका (परमात्मा का) **महिमा** महिमा है, **ततो =** उससे **ज्यायान्** अति प्रशंसित और बड़ा **च** और **पूरुषः** परिपूर्ण परमात्मा (है), **उत =** और **अमृतत्वस्य =** अमृतत्व का **ईशानो =** अधिकार, शासन करने वाला **यत् =** जो **अन्नेन =** अन्न द्वारा **अतिरोहति =** अत्यन्त बढ़ता है **॥ 3 ॥**

भावार्थ - सम्पूर्ण सृष्टि परमात्मा का ही महत्व प्रकट कर रही है।

पदार्थ - **तावान्** उतनी, उतना (सर्वनाम) **अस्य** इसका **महिमा** महिमा (मह् - महत्व होना, पूज्य होना) है, **ततो =** उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **ज्यायान्** अति प्रशंसित और बड़ा (ज्या - ज्येष्ठ होना, बड़ा होना, वृद्ध होना) **च** और **पूरुषः** परिपूर्ण परमात्मा (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना) **उत =** ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **अमृतत्वस्य =** अमृतत्व का (अ - नहीं, मृ - मरना)। **ईशानो =** अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **यत् =** जिसे, जो (सर्वनाम)। **अन्नेन =** अन्न द्वारा (अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **अतिरोहति =** अत्यन्त बढ़ता है (अति - अधिक, रुह् - जन्म होना, बढ़ना, चढ़ना) **॥ 6 ॥**

621. ततो विराट् अजायत, विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अति अरिच्यत्, पश्चात् भूमिम् अथो पुरः॥ 7 ॥ 10-90-5

मन्त्रार्थ- ततो उससे, उसके अनन्तर **अधि** अधिष्ठाता **पूरुषः** पुरुष (परमात्मा) से **विराट्** विराट (ब्रह्माण्ड रूप परमात्मा) **विराजो** विराज अर्थात् विशेष तेज या ज्योति अथवा ऊर्जा **अजायत्** उत्पन्न हुआ। **स** उसने पश्चात् पीछे **भूमिम्** भूमि को **अति-अरिच्यत्** अतिशय रचा **अथो** इसके अनन्तर **पुरः** पुरों अर्थात् **शरीरों** या वन, ग्राम, नगर आदि **जातो** उत्पन्न हुआ **॥ 7 ॥**

भावार्थ - इस मन्त्र से पूर्व यह स्पष्ट किया जा चुका है कि परमात्मा का एक अंश ही सम्पूर्ण सृष्टि के रूप में व्यक्त हुआ है। इस मन्त्र में सृष्टि के सृजन का क्रम या प्रक्रिया बतायी जा रही है। सर्वव्यापी परम चेतन स्वरूप परमात्मा से सबसे पहले विराट् तेज उत्पन्न हुआ। उसके पश्चात् उस विराट् तेज से भूमि तथा पुर उत्पन्न हुए। पुर शब्द का अर्थ अभिगमन होता है। सामान्यतः इस शब्द का प्रयोग अभिगमन के आधारभूत माध्यम या लक्ष्य जीव शरीर, ग्राम नगर आदि के अर्थ में होता है।

पदार्थ- ततो उससे, उसके अनन्तर **अधि** अधिष्ठाता **पूरुषः** पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना,

भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **विराट्** विराट (ब्रह्माण्ड रूप परमात्मा) **विराजो** विराज से (वि - विशेष, राज् - चमकना, शोभित होना, तेज होना) **अजायत्** उत्पन्न हुआ (जन् - उत्पन्न होना)। **स** उसने **पश्चात्** पीछे **भूमिम्** भूमि को (भू - होना) **अति-अरिच्यत्** अतिशय रचा (रिच् - एकत्र करना, जोड़ना, फैलाना, अलग करना) **अथो** इसके अनन्तर **पुरः** पुर (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **जातो** उत्पन्न हुआ (जन् - उत्पन्न होना)॥ **7** ॥

622. मन्ये वाम् द्यावापृथिवी सुभोजसौ, ये अप्रथेथाम् अमितम् अभि योजनम्।
द्यावापृथिवी भवतम् स्योने, ते नो मुञ्चतम् अंहसः ॥ 8 ॥

मन्त्रार्थ - **वाम्** = तुम दोनों को **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी **सुभोजसौ** = उत्तम भोजन, संरक्षण, पालन **मन्ये** = मानता हूँ। **ये** = जो **अमितम्** = अमित को, अतुल्य, वाणी को **योजनम्** = योजना, सम्बन्ध को **अभि** = अभिमुख, सभी ओर, सर्वथा **अप्रथेथाम्** = प्रसिद्ध किया। **द्यावापृथिवी** = द्यावा और पृथिवी **ते** = तुम्हारे लिए **स्योने** = सुखकारक **भवतम्** = हों। **नो** = हमारे लिए **अंहसः** = प्रकाश **मुञ्चतम्** = मुक्त करें॥ **8** ॥

पदार्थ - **मन्ये** = मानता हूँ (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करन, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **सुभोजसौ** = उत्तम भोजन, संरक्षाण, पालन (सु - सुन्दर, अच्छा, भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **ये** = जो (सर्वनाम)। **अप्रथेथाम्** = प्रसिद्ध किया, प्रसिद्ध न करें, न फैलायें (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **अमितम्** = अमित को, अतुल्य, वाणी को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **योजनम्** = योजना, सम्बन्ध को (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करन, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **भवतम्** = होवें, बनें (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **स्योने** = सुख में (स्योन् = सुख होना, सुख देना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मुञ्चतम्** = मुक्त करें (मुञ्च् - बोलना, कहना, मुक्त करना, त्याग करना)। **अंहसः** = प्रकाशमान (अंह् = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)॥ **8** ॥

623. हरी ते इन्द्र श्मश्रूणि, उतो ते हरितौ हरी।
तम् त्वा स्तुवन्ति कवयः, पुरुषासो वनर्गवः ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **ते** = तुम्हारे **हरी** = ले जाने वाले **श्मश्रूणि** = शमनकारी, शान्तिपूर्ण श्रवण करने वाले, **उतो** = वैसे ही **ते** = तुम्हारे **हरितौ** = हरित में **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **तम्** = उस **त्वा** = तुमको **कवयः** = बोलने वाले, कवि, **पुरुषासो** = पुरुष, अग्रणी, **वनर्गवः** = विद्वान्, वक्ता **स्तुवन्ति** = स्तुति करते हैं॥ **8** ॥

पदार्थ - **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **श्मश्रूणि** = शमनकारी, शान्तिपूर्ण श्रवण करने वाले (शम = शमन करना, शान्त करना, प्रसिद्ध करना, स्पष्टता से दिखाना। शम = विचार करना। शम = शमन करना, सहन करना। शम = सान्त्वना करना, शमन करना, शान्त होना, ठण्डा होना, मन स्वाधीन रखना, स्वस्थ होना, क्षुब्ध नहीं होना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **उतो** = ही (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **हरितौ** = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना,

ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **स्तुवन्ति** = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **कवयः** = बोलने वाले, कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **पुरुषासो** = पुरुष, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **वनर्गवः** = वनवासी , विद्वान्, वाणी वाले (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 9 ॥

624. यत् वर्चो हिरण्यस्य, यत् वा वर्चो गवाम् उत।
सत्यस्य ब्रह्मणो वर्चः, तेन मा सम् सृजामसि ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **हिरण्यस्य** = हिरण्य का, प्रकाशमान का **वर्चो** = प्रकाश, **वा** = अथवा **यत्** = जो **गवाम्** = वाणी का **उत** = ही **वर्चो** = प्रकाश (है), **ब्रह्मणो** = महान्, बृहत् **सत्यस्य** = सत्य का **वर्चः** = प्रकाश (है), **तेन** = उसके द्वारा **मा** = मुझे **सम्** = सम्यक् **सृजामसि** = रचो, उत्पन्न करो ॥ 10 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वर्चो** = प्रकाश (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **हिरण्यस्य** = हिरण्य का, प्रकाशमान का (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **वर्चो** = प्रकाश (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **गवाम्** = गवा को, गौ को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **सत्यस्य** = सत्य का (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **ब्रह्मणो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **वर्चः** = प्रकाश (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)।, **तेन** = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। **मा** = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **सृजामसि** = त्याग, रचना, उत्पन्न करता हूँ (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना) ॥ 10 ॥

625. सहः तत् नः इन्द्र दद्धि ओजः ईशे, हि अस्य महतो विरप्शिन्।
क्रतुम् न नृम्णम् स्थविरम् च वाजम्, वृत्रेषु शत्रून् सहना कृधि नः ॥ 11 ॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **तत्** = वह **सहः** = सहनशीलता, क्षमता, सामर्थ्य, तृप्ति, सन्तुष्टि, **ओजः** = ओज **नः** = हमारे लिए **दद्धि** = दो। **महतो** = महान् **विरप्शिन्** = स्पष्ट वक्ता **हि** = निश्चय **अस्य** = इसका **ईशे** = शासन करता है। **नः** = हमको **क्रतुम्** = कर्मशील **न** = के समान **नृम्णम्** = प्रेरक, ले जाने वाले, **स्थविरम्** = स्थिर **च** = और **वाजम्** = बल, विद्या, प्रगतियुक्त, **वृत्रेषु** = वृत्रों, हिंसकों में **शत्रून्** = शत्रुओं को **सहना** = सहने वाले, सक्षम, समर्थ, प्रतिरोध करने वाले **कृधि** = करो ॥ 11 ॥

पदार्थ - **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, साथ, सहित (सर्वनाम) (सह = साथ, सहित (सर्वनाम), सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **दद्धि** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **ओज** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **महतो** = महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **विरप्शिन्** = हे स्पष्ट वक्ता (वि = विशेष, विना, विलोम, रप् = स्पष्ट बोलना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **नृम्णम्** = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। **स्थविरम्** = स्थिर को (स्था - स्थित होना, ठहरना)। **च** = और। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना,

जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वृत्रेषु** = वृत्रों में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **शत्रून्** = शत्रुओं को (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **सहना** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध करने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **कृधि** = करो (कृ = करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) **॥ 11 ॥**

626. सहर्षभाः सहवत्सा उदेत, विश्वा रूपाणि बिभ्रतीः द्व्यूध्नीः।
उरुः पृथुः अयम् वो अस्तु लोक, इमा आपः सुप्रपाणाः इह स्त ॥ 12 ॥

मन्त्रार्थ - **सहर्षभाः** = आनन्द के साथ **सहवत्सा** = वत्स सहित **विश्वा** = सभी **रूपाणि** = रचना, आकार, रूप **बिभ्रतीः** = भरण, धारण कर्ता **द्व्यूध्नीः** = द्विविध ऊधन वाली, पालन, रक्षण, शब्द करने वाली **उदेत** = उदय, प्राप्त हो। **अयम्** = यह **वो** = तुम लोग **उरुः** = बहुत **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत **अस्तु** = हो। **इमा** = ये **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक **सुप्रपाणाः** = उत्तम अधिक पीने योग्य **लोकः** = लोक **इह** = यहाँ **स्त** = है **॥ 12 ॥**

पदार्थ - **सहर्षभाः** = आनन्द के साथ (स = सहित, साथ (उपसर्ग)। हृष - हृष्ट होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना, झूठ बोलना, मिथ्या बोलना)। **सहवत्सा** = वत्स सहित, साथ सहित (सह = साथ, सहित (सर्वनाम), वद् - वच्- बोलना)।। **उदेत** = उदय, प्राप्त हो (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, इ - जाना, जानना, पाना, उदि - उन्द् = भिगोना, गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **रूपाणि** = रचना, आकार, रूप (रूप - आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। **बिभ्रतीः** = भरण, धारण करता है (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **द्व्यूध्नीः** = द्विविध ऊधन वाली, पालन, रक्षण, शब्द करने वाली (द्वि - दो, संख्या, उ–अव – सुखाना, शोषण करना, उ–अव - पालन करना, रक्षा करना, शब्द करना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **उरुः** = निरन्तर गति, विस्तार करने वाला (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **लोकः** = लोक (लोक् = देखना, प्रकाशित होना, बोलना)। **इमा** = ये (सर्वनाम)। **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **सुप्रपाणाः** = उत्तम अधिक पीने योग्य (सु - सुन्दर, अच्छा, प्र - प्रकृष्ट, अधिक,पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **स्त** = है (अस् - होना) **॥ 12 ॥**

(64) सूक्त 5

627. अग्ने आयूँषि पवस आ, सुव ऊर्जम् इषम् च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ 1 ॥ 9-66-19

मन्त्रार्थ :- **अग्ने** हे अग्नि, **आयूंषि** आयु (जीवन) को **पवस** पवित्र करो। **नः** हमारे लिए **ऊर्जम्** ऊर्जा **च** और **इषम्** गति **आ सुव** उत्पन्न करो। **दुच्छुनाम्** दुष्टों को **आरे** दूर ही **बाधस्व** बाधित करो **॥ 1 ॥**

भावार्थ :- अग्नि परमात्मा की उपासना से जीवन पवित्र हो, उससे ऊर्जा तथा गतिशीलता, कार्यक्षमता प्राप्त हो तथा दुष्ट और दुष्टता दूर ही रहे, निकट न आने पायें, इसके लिए उपाय अवश्य करें।

पदार्थ :- **अग्ने** = हे अग्नि (अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुंचना, पाना)। **आयूंषि** = आयु (जीवन) को (अय् = गति करना)। **पवसे** = पवित्र करो (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **आ** = समन्तात्, सम्पूर्ण, उपसर्ग। **सुव** = उत्पन्न करो (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **ऊर्जम्** = ऊर्जा को (ऊर्ज् = बल होना, प्राणवान् होना)। **इषम्** = इच्छा, गति, प्राप्ति को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना,

चबाना, जाना, पाना, निरन्तर देखना)। **च** = और। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा। **आरे** = दूर (अव्यय)। **बाधस्व** = बाधित करो (बाध - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **दुच्छुनाम्** = दुष्टों को (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, जलना, जलाना) **॥ 1 ॥**

628. विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यम् मधु, आयुः दधत् यज्ञपतौ अविहृरुतम्।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः, पिपर्ति बहुधा वि राजति ॥ 2 ॥ 10-170-1

मन्त्रार्थ - **बृहत्** बड़े **विभ्राड्** विशेष प्रकाशमान (परमात्मा, उपासक) **यज्ञपतौ** यज्ञ-पालन में **अविहृरुतम्** अविहृरुत (जो विहृरुत न हो) **सोम्यम्** सौम्य **मधु** मधु **पिबतु** पान करें। **आयुः** आयु (जीवन) **दधत्** धारण करे, **यो** जो **वातजूतो** वातजूत **आत्मना** आत्मा द्वारा **अभिरक्षति** रक्षा करता है, **बहुधा** बहुत प्रकार से **प्रजाः** प्रजा को **पिपर्ति** पूर्ण किया **वि** विशेष **राजति** प्रकाशित होता है **॥ 2 ॥**

भावार्थ - बृहत् विभ्राड् अर्थात् बड़ा और विशेष रूप से प्रकाशित परमात्मा ही है। उसके उपासकों को भी इस स्वरूप को धारण करना होता है, अपने भावों-विचारों को बड़ा और प्रकाशमान बनाना होता है। जैसे परमात्मा आत्मा से प्रजा का पोषण विविध प्रकार से करता है, उसी प्रकार उपासक भी करते हैं, तो वे भी विशेष रूप से प्रकाशित होते हैं।

विशेष - अविहृरुत का अर्थ है, जो विहृरुत न हो। विहृरुत शब्द में वि उपसर्ग है। हृरुत में हृ धातु सर्वाधित स्पष्ट है। इस प्रकार हृरुत को हृत का वैदिक रूप माना जाना चाहिए। यदि यह हृत न होकर अन्य शब्द माना जाये तो भी इसका अर्थ हृ (हरण करना) धातु के अनुसार ही होना चाहिए। वि उपसर्ग के साथ हृ धातु का अर्थ क्रीडा करना, खेलना होता है। अतः अ उपसर्ग लगने से इसका अर्थ हुआ खेल न करना। यजन जैसे पवित्र कार्य के पालन रक्षण में मधु का पान करना तो स्वाभाविक है, माधुर्य तो यजन का स्वाभाविक परिणाम है। यह ध्यान रखना होगा कि वह मधु सौम्य हो, तथा यजन के पालन-रक्षण में खेल न हो, पूरी गम्भीरता तथा उत्तरदायित्वबोध के साथ यजन का पालन-संरक्षण करें।

पदार्थ - **विभ्राड्** = विशेष प्रकाशमान् (भ्राज - चमकना, प्रकाशित होना)। **बृहत्** = बड़ा (बृह = बड़ा होना)। **पिबतु** = पान करें (पिब् - पीना, प्राशन करना)। **सोम्यम्** = सौम्य (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना)। **आयुः** = आयु (अय-आयुस् - जीवनम्)। **दधत्** = धारण करना (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **यज्ञपतौ** = यज्ञ-पालन में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना, पत् = जाना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **अविहृरुतम्** = अविहृरुत, जो विहृरुत न हो (हृ -पाप काटना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना, नष्ट करना, चुराना)। **वातजूतो** = वातजूत (वात् = सुखी होना, सेवा करना, जाना, जुत- बोलना, शब्द करना, प्रकाशित होना, चमकना)। **यो** = जो। **अभिरक्षति** = सब ओर से रक्षा करता हुआ (रक्ष = रक्षण करना, पालन करना)। **आत्मना** = आत्मा से। **प्रजाः** = प्रजा (जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **पिपर्ति** = पूर्ण किया (पृ-पूर्ण करना, भरना)। **बहुधा** = बहुत प्रकार से (सर्वनाम)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राजति** = प्रकाशित होता है (राज् = प्रकाशित होना, शोभित होना, चमकना) **॥ 2 ॥**

629. चित्रम् देवानाम् उदगात् अनीकम्, चक्षुः मित्रस्य वरुणस्य अग्नेः।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्, सूर्य आत्मा जगतः तस्थुषः च ॥ 3 ॥ 1-115-1

मन्त्रार्थ :- देवानाम् - देवों का, **चित्रम्** - चित्र, चेतना, **मित्रस्य** - मित्र का, **वरुणस्य** - वरुण का, **अग्नेः** - अग्नि का **चक्षुः** - दृष्टि, नेत्र, **अनीकम्** - अनीक को, प्राणमय, **उत्** - ऊपर, उच्च, उत्तम, **अगात्** - गया। **द्यावापृथिवी** - द्यावा और पृथिवी, **अन्तरिक्षम्** - अन्तरिक्ष को, **अप्रा** - पूर्ण किया, **सूर्य** - सूर्य, **जगतः** - जगत् का, **च** - और **तस्थुषः** - स्थापित का, **आत्मा** - आत्मा (है) **॥ 3 ॥**

भावार्थ :- देवों के चित्र तथा चेतना हमको प्राणवान् बनाते हैं। मित्रता तथा वरणीय का ध्यान रखने वाली दृष्टि अग्नि अर्थात् अग्रगामी, ऊर्ध्वगामी बनाती है। इससे पृथ्वी से द्युलोक तथा अन्तरिक्ष तक पूर्णता प्राप्त होती है। परमात्मा की चेतना ही सर्वत्र व्याप्त है।

पदार्थ :- चित्रम् = चित्र को, अद्‌भुत चेतना को (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार

करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **देवानाम् =** देवों का (दिव्, देव् = चमकना, तेजस्वी होना, विद्वान (विद्वान) होना)। **उत् =** ही। **अगात्** - गया (गम् - जाना)। **अनीकम्** - अनीक को, प्राणवानों को (अन् = स्पन्दन करना, हलचल करना)। **चक्षुः =** दृष्टि, नेत्र, आँख (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **मित्रस्य =** मित्र का (मिद् - स्नेह करना)। **वरुणस्य =** वरुण का (वृ - वरण करना)। **अग्नेः** - अग्नि का (अग् = गति करना, अग्रणी होना)। **अप्राः** - पूर्ण किया (प्रा = पूर्ण करना, भरना)। **द्यावापृथिवी =** आगे जाकर विस्तार करना, द्यावा और पृथिवी (द्यु = आगे जाना, प्रकाश होना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **अन्तरिक्षम् =** आकाश को। **सूर्य** - सूर्य (सुर् = प्रकाश होना, ऐश्वर्य होना)। **आत्मा** - आत्मा (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना)। **जगतः** - जगत् का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण (घर्षण) करना)। **तस्थुषः =** स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **च =** और **॥ 3 ॥**

630. आ अयम् गौः पृश्निः अक्रमीत्, असदत् मातरम् पुरः।
पितरम् च प्रयन् स्वः ॥ 4 ॥ 10-189-1

मन्त्रार्थ : अयम् यह **गौः** गतिशील, **पृश्निः** सहनशील, सींचने वाला, **अक्रमीत्** चला, (विचरण किया अथवा पराक्रम किया)। **पुरः** पहले **मातरम्** माता के पास **असदन्** गया। **च** और **पितरम्** पिता के पास **प्रयन्** जाते हुए **स्वः** ऐश्वर्य को **अक्रमीत्** गया (पाया) **॥ 1 ॥**

भावार्थ : माता-पिता का सम्मान करते हुए शुभ गुणों को अपनाने वाला ऐश्वर्य को प्राप्त करता है **॥ 1 ॥**

पदार्थ : आयम् = यह। **गौः =** गतिशील (गम्, गा = जाना)। **पृश्निः =** सहनशील, सींचने वाला (पृश्, पृष् = सींचना, सहन करना)। **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की (क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना, जानना, पाना)। **असदन्** = गया (सद् = जाना)। **मातरम्** = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करन)। **पुरः** = पहले (पुर् = आगे जाना)। **पितरम्** = पिता को (पा = पालन करना)। **च** = और। **प्रयन्** = जाते हुए (या = जाना)। **स्वः** = स्वः (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना) **॥ 1 ॥**

631. अन्तः चरति रोचना, अस्य प्राणात् अपानती।
व्यख्यत् महिषो दिवम् ॥ 5 ॥ 10-189-2

मन्त्रार्थ : रोचना प्रकाश **प्राणात्** प्राण से **अपानती** अपान तक **महिषो** पूजित, सम्मानित **दिवम्** प्रकाशमान को **वि अख्यन्** कहता हुआ **अन्तः** भीतर **चरति** विचरण करता है **॥ 2 ॥**

भावार्थ : प्राण अर्थात् चेतना शक्ति तथा ऊर्ध्वगामी श्वास-प्रश्वास से अपान अर्थात् अधोगामी वायु तक शरीर में व्याप्त पंच प्राणों के भीतर परमपिता परमात्मा का दिव्य प्रकाश ही विचरण करता है। वह दिव्य स्तुतियों का व्याख्यान भी करता है। अर्थात् पंच प्राण के संचरण के साथ परमात्मा की स्तुति करते रहें **॥ 2 ॥**

पदार्थ : अन्तः = बीच में। **चरति** =विचरण करता है (चर - जाना, आचरण करना)। **रोचना** = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना)। **अस्य** = इसका। **प्राणात्** = प्राण से (अन- चेतन होना, जीवन होना)। **अपानती** = अपान तक (अप - पालन करना, अन - जीना, समर्थ होना, जाना)। **व्यख्यन्** = कहता हुआ (वि + अख्यन्, ख्या = कहना, व्याख्यान करना)। **महिषो** = पूजित, सम्मानित (महि = पूजा करना, सम्मान करना)। **दिवम्** = प्रकाशमान (दिव् = प्रकाशित होना, स्तुति करना) **॥ 2 ॥**

632. त्रिंशद्धाम वि राजति, वाक् पतङ्गाय धीयते।
प्रति वस्तोः अह द्युभिः ॥ 6 ॥ 10-189-3

मन्त्रार्थ : त्रिंशत् तीस **धाम** धाम **वि राजति** प्रकाशित होता है। **पतङ्गाय** ऐश्वर्य के लिए **वाक्** वाणी **धीयते** धारण करता है। **प्रति** प्रति (प्रत्येक या सभी) **वस्तोः** प्रातःकाल **द्युभिः** प्रकाश द्वारा **अह** व्यापक हो **॥ 3 ॥**

भावार्थ : तीस धाम का आशय मानव जीवन या शरीर ही प्रतीत होता है। तीस संख्या से किन गुणों आदि का संकेत

है, यह विचारणीय है। हमारी वाणी ही ऐश्वर्य तथा यश का कारण होती है। वाणी में स्नेह, मधुरता हो, स्तुति करें, वेदमन्त्रों का पाठ तथा स्वाध्याय करें तो प्रत्येक प्रभात प्रकाश से व्याप्त होगा। प्रातःकाल सूर्य का प्रकाश तो फैलता ही है, उसी तरह परमात्मा की कृपा, आनन्द, उल्लास का प्रकाश भी व्यापक हो, यही भावना है ॥ 3 ॥

पदार्थ : त्रिंशत् = तीस। **धाम** = धाम (धा = धारण करना, पोषण करना)। **विराजति** = प्रकाशित होता है (राज् = प्रकाशित होना, शोभित होना, चमकना)। **वाक्** = वाणी (वच, वद - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **पतंगाय** = विद्या, ऐश्वर्य के लिए (पत् = ऐश्वर्य होना)। **धीयते** = धारण करता है (धी = धारण करना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में। **वस्तोः** = प्रातः (वस्त = प्रातः)। **अह** = व्यापक (अह् = व्याप्त होना)। **द्युभिः** = प्रकाश द्वारा (द्युः = प्रकाश होना) ॥ 3 ॥

633. अप त्ये तायवो यथा, नक्षत्रा यन्ति अक्तुभिः।
सूराय विश्वचक्षसे ॥ 7 ॥ 1-50-2

मन्त्रार्थ - त्ये = वे **अक्तुभिः** = कुटिलता द्वारा **तायवो** = विस्तार करने वाले **विश्वचक्षसे** = सबको देखने वाले **सूराय** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् के लिए **नक्षत्रा** = नक्षत्र **यथा** = जैसे **अप यन्ति** = दूर हो जाते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **त्ये** = वे (सर्वनाम)। **तायवो** = संरक्षण करने वाले, विस्तार करने वाले (ताय - संरक्षण करना, फैलाना, लम्बा करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **नक्षत्रा** = नक्षत्र (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **अक्तुभिः** = कुटिलता द्वारा, गति द्वारा (अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **सूराय** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् के लिए (सुर - ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **विश्वचक्षसे** = विश्वचक्ष, सबको देखने वाले (विश्व = सब, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 7 ॥

634. अदृश्रन् अस्य केतवो, वि रश्मयो जनान् अनु।
भ्राजन्तो अग्नयो यथा ॥ 8 ॥ 1-50-3

मन्त्रार्थ :- अस्य - इसके, **केतवो** - केतु, आमन्त्रणकारी, **वि** - विशेष, **रश्मयो** - रश्मियाँ, **जनान्** - जनों के, **अनु** - पीछे, **भ्राजन्तो** - प्रकाशमान, **अग्नयो** - अग्नियाँ **यथा** - जैसे, **अदृश्रम्** - देखा ॥ 8 ॥

भावार्थ :- परमात्मा की आमन्त्रणकारी रश्मियाँ उपासक को जनों के पीछे प्रकाशमान अग्नि की तरह दिखायी देती हैं। परमात्मा के आमन्त्रण को, उसकी दिव्य रश्मियों को हम प्रकाशमान अग्नि के समान अनुभव करते हैं। यह अनुभूति ही अध्यात्म है। वह परमात्मा हमारे लिए सूर्य के समान प्रकाशमान है। वह देवों में अन्यतम है, अत्यन्त प्रकाशमान है, हम मनुष्यों में इसी प्रकार अत्यन्त प्रकाशमान होकर जीवन-यापन करें।

पदार्थ :- अदृश्रम् - देखा (दृश् = देखना)। **केतवो** - केतु, आमन्त्रणकारी (केत -आमन्त्रण देना, बुलाना, परामर्श देना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम। **रश्मयः** = किरण (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। **जनान्** - जनों को (जन - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे। **भ्राजन्तो** - प्रकाशमान (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। **अग्नयः** = अग्नियाँ (अग् = आगे जाना, गति करना)। **यथा** = जैसे ॥ 8 ॥

635. तरणिः विश्व दर्शतो, ज्योतिष्कृत् असि सूर्य।
विश्वम् आ भासि रोचनम् ॥ 9 ॥ 1-50-4

मन्त्रार्थ- सूर्य हे ऐश्वर्यवान् उत्पन्नकर्ता, **विश्व** सब **दर्शतो** दिखाने वाले, **ज्योतिष्कृत्** प्रकाशकर्ता **तरणिः** तारने वाले, पार करने वाले **असि** हो। **विश्वम्** सबको **रोचनम्** रोचन, आनन्द, प्रकाश, प्रसन्नता, उत्साह **आ भासि** सम्यक्, समन्तात् प्रकाश करते हो ॥ 9 ॥

भावार्थ - परमात्मा ही उत्पन्न करने वाला, आनन्द तथा प्रकाश देने वाला और तारने वाला है।

विशेष - रुच धातु का अर्थ आनन्द, प्रकाश, प्रसन्नता, उत्साह करना है। भास धातु का अर्थ प्रकाश करना है।

पदार्थ- तरणिः = (तॄ - पार जाना, जाना, जल पर तैरना)। **विश्व =** सब। **दर्शतो =** (दृश् - देखना)। **ज्योतिष्कृत् =** (ज्युतृ - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **असि =** हो। **सूर्य** = सूर्ये, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। **विश्वम् =** सब का। **आ भासि =** प्रकाशित करते हो (भास-चमकना, प्रकाशित होना)। **रोचनम् =** प्रकाश को (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना) **॥ 9 ॥**

636. प्रत्यङ् देवानाम् विशः, प्रत्यङ् उदेषि मानुषान्।
प्रत्यङ् विश्वम् स्वः दृशे ॥ 10 ॥ 1-50-5

मन्त्रार्थ - **प्रत्यङ् =** प्रत्येक **देवानाम् =** देवों का **विशः =** विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **प्रत्यङ् =** प्रत्येक **मानुषान् =** मानुषों को, मनन करने वालों को **प्रत्यङ् =** प्रत्येक **विश्वम् =** सबको **स्वः =** उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि **दृशे =** देखने के लिए **उदेषि =** उत्कृष्ट प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं **॥ 10 ॥**

पदार्थ - **प्रत्यङ् =** प्रत्येक (अव्यय)। **देवानाम् =** देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **विशः =** विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **प्रत्यङ् =** प्रत्येक (अव्यय)। **उदेषि =** उत्कृष्ट प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना, आना, चाहना)। **मानुषान् =** मानुषों का, मनन करने वालों का (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **प्रत्यङ् =** प्रत्येक (अव्यय)। **विश्वम् =** सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **स्वः =** उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **दृशे =** देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना) **॥ 10 ॥**

637. येना पावक चक्षसा, भुरण्यन्तम् जनान् अनु।
त्वम् वरुण पश्यसि ॥ 11 ॥ 1-50-6

मन्त्रार्थ- वरुण हे वरुण, **त्वम्** तुम **येना** जिस **पावक** पवित्रकारी **चक्षसा** दृष्टि से, **भुरण्यन्तम्** पालन-पोषण करते हुए **जनान्** लोगों को **अनु** पश्यसि देखते हो **॥ 11 ॥**

भावार्थ - जिस प्रकार वरुण अर्थात् वरणीय तथा हमारा वरण करने वाले, अपनाने वाले परमात्मा पवित्र दृष्टि से लोगों को देखता है, हमको भी उसी प्रकार पवित्र दृष्टि से देखना चाहिए। यह भी कहा गया है कि परमात्मा भुरण्यन्तम् अर्थात् पालन-पोषण करते हुए लोगों को इस प्रकार देखता है। इसका भाव यह है कि परमात्मा की पवित्र तथा पोषक-पालक दृष्टि में रहने के लिए हमको भी लोगों का पालन-पोषण करते रहना चाहिए।

विशेष - वृ धातु के मुख्य अर्थ वरण करना, सेवा करना, नियोजित करना, आच्छादित करना हैं। वरुण अर्थात् वरण करने वाले तथा वरणीय परमात्मा में ये सभी गुण स्मरण किये गये हैं।

पदार्थ- येना = जिस। **पावक =** पावक। (पूञ् - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चक्षसा =** दृष्टि, वाणी (चक्ष् = स्पष्ट बोलना, देखना)। **भुरण्यन्तम् =** (भुरण-पालन करना, पोषण करना, धारण करना)। **जनान् =** लोग (जन - उतन्न होना, प्रकट होना)। **अनु =** पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **त्वम् =** तुमको। **वरुण =** वरुण (वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, वरण करना)। **पश्यसि =** देखते हो (पश् = देखना) **॥ 11 ॥**

638. उत् द्याम् एषि रजः, पृथु अहा मिमानो अक्तुभिः।
पश्यन् जन्मानि सूर्य ॥ 12 ॥ 1-50-7

मन्त्रार्थ - **सूर्य =** हे सूर्य, उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्यवान्, **रजः =** रज, **पृथु =** विस्तृत, **अहा =** व्यापक, **मिमानो =** प्रक्षेपण, स्थापन, रक्षा करता हुआ **अक्तुभिः =** गति द्वारा **जन्मानि =** जनन, उत्पत्ति, सृजन को **पश्यन् =** देखते हुए, **द्याम् =** प्रकाश को **उत् एषि =** उदय होता है, प्राप्त होता है **॥ 12 ॥**

पदार्थ - **उत् =** ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **द्याम =** द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे

जाना, समीप जाना, द्युत् -दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **एषि =** प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। **रजः =** रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **पृथु =** विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अहा =** व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **मिमानो =** प्रक्षेपण, स्थापन, रक्षा करता हुआ (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **अक्तुभिः =** अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **पश्यन् =** देखते हुए, देखने वाले (पश्-दृश् = देखना)। **जन्मानि =** जन्म लेने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्य =** हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) **॥ 12 ॥**

639. अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः, सूरो रथस्य नप्त्यः।
ताभिः याति स्वयुक्तिभिः ॥ 13 ॥ 1-50-9

मन्त्रार्थ - **अयुक्त =** अयुक्त, जो युक्त न हो **सप्त =** सात **शुन्ध्युवः =** शुद्ध-पवित्र कर्ता **नप्त्यः =** ज्ञानी, प्रकाशमय **सूरो =** उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् **रथस्य =** रथ के **ताभिः =** उन **स्वयुक्तिभिः =** स्वयुक्तियों द्वारा **याति =** जाता है **॥ 13 ॥**

पदार्थ - **अयुक्त =** अयुक्त, जो युक्त न हो (अ = नहीं, युज् - योग करना, युक्त करना, जोड़ना)। **सप्त =** सात (संख्या)। **शुन्ध्युवः =** शुद्ध करने वाली, पवित्र करने वाली (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **सूरो =** उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **रथस्य =** रमणीय, रथ का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, रमण करना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **नप्त्यः =** ज्ञान वाली, प्रकाश वाली (नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **ताभिः =** उनके द्वारा (सर्वनाम)। **याति =** जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **स्वयुक्तिभिः =** स्वयुक्ति द्वारा (स्व = अपना, निज (सर्वनाम), यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना) **॥ 13 ॥**

640. सप्त त्वा हरितो रथे, वहन्ति देव सूर्य।
शोचिष्केशं विचक्षण ॥ 14 ॥ 1-50-8

मन्त्रार्थ - **सूर्य =** हे सूर्य, उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान्, **देव =** हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप, **विचक्षण =** हे विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले, **त्वा =** तुम **शोचिष्केशम् =** पवित्र प्रगति को **सप्त =** सात **हरितो =** हरित **रथे =** रथ, रमणीय में **वहन्ति =** वहन करते हैं **॥ 13 ॥**

पदार्थ - **सप्त =** सात (संख्या)। **त्वा =** तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हरितो =** हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **रथे =** रथ में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वहन्ति =** वहन करते हैं (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **देव =** देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सूर्य =** हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **शोचिष्केशम् =** शोचिष्केश को, पवित्र गति को (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना, किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **विचक्षण =** हे विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) **॥ 14 ॥**

पूर्वार्चिकः समाप्तः

(65) सूक्त 6

महानाम्न्यार्चिकः

641. विदा मघवन् विदा गातुम्, अनुशंसिषो दिशः।
शिक्षा शचीनाम् पते, पूर्वीणाम् पूरूवसो॥ 1॥

मन्त्रार्थ - **मघवन्** = हे धनवान्, ऐश्वर्यवान्, **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, **गातुम्** = स्तुति को, गान, गाय, गायक, गाने वाले को **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को **अनुशंसिषो** = अनुशंसा करो, स्तुति, प्रशंसा करो, **पूरूवसो** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक, **शचीनाम्** = उत्तम वाणियों के **पते** = पति, **पूर्वीणाम्** = पूर्वियों का, पूर्ण का **शिक्षा** = शिक्षा दो॥ 1॥

पदार्थ - **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **गातुम्** = स्तुति को, गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अनुशंसिषो** = अनुशंसा करो, स्तुति, प्रशंसा करो (अनु = पश्चात्, पीछे, शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **शिक्षा** = शिक्षा (शिक्ष् - शिक्षा देना)। **शचीनाम्** = उत्तम वाणी वाला (शच- स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पूर्वीणाम्** = पूर्व, पूर्ण का (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **पूरूवसो** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)॥ 1॥

642. आभिः त्वम् अभिष्टिभिः, स्वाः न अंशुः।
प्रचेतन प्रचेतय इन्द्र, द्युम्नाय नः इषे॥ 2॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **प्रचेतन** = हे प्रकृष्ट विचारवान्, **त्वम्** = तुम **अंशुः** = अंशुमान, साथी, **नः** = हमको **आभिः** = इन **अभिष्टिभिः** = सर्वथा इष्ट, अभीष्टियों द्वारा **स्वाः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि **न** = के समान **द्युम्नाय** = प्रकाश, अग्रगामी के लिए **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए **प्रचेतय** = प्रकृष्ट चेतन करो, सचेत करो॥ 2॥

पदार्थ - **आभिः** = इन सब द्वारा (सर्वनाम्)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अभिष्टिभिः** = सर्वथा इष्ट, अभीष्टि द्वारा (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना)। **स्वाः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अंशुः** = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **प्रचेतन** = हे प्रकृष्ट विचार वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **प्रचेतय** = प्रकृष्ट विचारक (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **द्युम्नाय** = प्रकाश, अग्रगामी के लिए (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)॥ 2॥

643. एवा हि शक्रो राये, वाजाय वज्रिवः।
शविष्ठ वज्रिन् ऋञ्जसे, मंहिष्ठ वज्रिन् ऋञ्जसे, आ याहि पिब मत्स्व॥ 3॥

मन्त्रार्थ - **शविष्ठ** = हे अत्यन्त बलिष्ठ, **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त, **वज्रिवः** = वज्रयुक्त, गतिमान, **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ **एवा** = ही **हि** = निश्चय **राये** = विद्या, प्रगति, वाणी, **वाजाय** = बल, विद्या के लिए **ऋञ्जसे** = परिपक्व

करते हो। **मंहिष्ठ** = मंहिष्ठ, महिमावान्, **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त **ऋञ्जसे** = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् करते हो। **आ याहि** = आयें, प्राप्त हों, **पिब** = पीयें, पान करें, **मत्स्व** = हर्षित हों, तृप्त हों **॥ 3 ॥**

पदार्थ - **एवा** = ही (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **राये** = विद्या, प्रगति, वाणी के लिए (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वज्रिवः** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **शविष्ठ** = हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **ऋञ्जसे** = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् करते हो (ऋञ्ज - पकाना, भूनना)। **मंहिष्ठ** = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **ऋञ्जसे** = ऋञ्जस के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **मत्स्व** = हर्षित हो, तृप्त हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) **॥ 3 ॥**

644. विदा राये सुवीर्यम्, भवो वाजानाम् पतिः वशान् अनु।
महिष्ठ वज्रिन् ऋञ्जसे, यः शविष्ठः शूराणाम् ॥ 4 ॥

मन्त्रार्थ - **राये** = विद्या, प्रगति, वाणी के लिए **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **वशान्** = इच्छाओं के **अनु** = अनुकूल **भवो** = हो। **मंहिष्ठ** = मंहिष्ठ, महिमावान्, **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त **ऋञ्जसे** = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् करते हो। **यः** = जो **शूराणाम्** = शूरों में, वीरों, पराक्रमियों में **शविष्ठः** = अत्यन्त बलवान् (है) **॥ 4 ॥**

पदार्थ - **विदा** = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **भवो** = हो, होने वाले (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **वशान्** = इच्छाओं को (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **महिष्ठ** = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वज्रिन्** = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **ऋञ्जसे** = ऋञ्जस, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् करो (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **शविष्ठः** = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **शूराणाम्** = वीर, पराक्रमी में (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना) **॥ 4 ॥**

645. यो मंहिष्ठो मघोनाम्, अंशुः न शोचिः।
चिकित्वो अभि नो नय इन्द्रो, विदे तम् उ स्तुहि॥ 5॥

मन्त्रार्थ - **यो** = जो **मघोनाम्** = धनवानों, ऐश्वर्यवानों में **मंहिष्ठो** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, **अंशुः** = अंशुमान, साथी **न** = के समान **शोचिः** = पवित्रकर्ता (है), **चिकित्वो** = हे विद्वान् **नो** = हमको, **अभि** = अभिमुख, सर्वथा **नय** = ले चलो, प्रेरित करो। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **विदे** = ज़ानता है, प्राप्त करता है, **तम्** = उसको **उ** = निश्चय ही **स्तुहि** = स्तुति करो॥ 5॥

पदार्थ - **यो** = जो (सर्वनाम)। **मंहिष्ठो** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **मघोनाम्** = मघों का, धनवानों का, ऐश्वर्यवानों का (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **अंशुः** = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शोचिः** = पवित्रकर्ता (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **चिकित्वो** = हे विद्वान् (चिकित् - जानना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **नय** = ले जाओ (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **विदे** = ज़ानता है, प्राप्त करता है (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विन्द- प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **स्तुहि** = स्तुति कर (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)॥ 5॥

646. ईशे हि शक्रः तम् ऊतये, हवामहे जेतारम् अपराजितम्।
स नः स्वर्षत् अति द्विषः, क्रतुः छन्दः ऋतम् बृहत्॥ 6॥

मन्त्रार्थ - **शक्रः** = शक्तिवान्, समर्थ **हि** = ही **तम्** = उसको **ऊतये** = रक्षा के लिए **ईशे** = शासन करता है। **अपराजितम्** = अपराजित को, पराजित न हुए **जेतारम्** = जीतने वाले को **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **स** = वह **छन्दः** = छन्द, आच्छादन **बृहत्** = महान्, बृहत् **ऋतम्** = ऋत **नः** = हमको **द्विषः** = द्वेषी का **अति क्रतुः** = अतिक्रम कर, पीछे छोड़कर **स्वर्षत्** = उत्तमता से ले जाये॥ 6॥

पदार्थ - **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **शक्रः** = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **जेतारम्** = जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अपराजितम्** = अपराजित को, पराजित न हुए को (अ - नहीं, परा - अन्य, जि - जीतना, जय होना, अप = दूर, नीचे, अपकार, राज - प्रकाश होना, चमकना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **स्वर्षत्** = उत्तम ले जायें (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **ऋतुः** = ऋतु (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **छन्दः** = छन्द (छन्द् - बल-प्राण होना, आच्छादन करना)। **ऋतम्** = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)॥ 6॥

647. इन्द्रम् धनस्य सातये, हवामहे जेतारम् अपराजितम्।
स नः स्वर्षत् द्विषः, स नः स्वर्षत् अति द्विषः॥ 7॥

मन्त्रार्थ - **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **जेतारम्** = जीतने वाले को **अपराजितम्** = अपराजित को, पराजित

न हुए को **धनस्य** = धन के **सातये** = सतत गतिशीलता के लिए **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं। **स** = वह **नः** = हमको **द्विषः** = द्वेषी को **अति** = अतिक्रम कर, पीछे छोड़कर **स्वर्षत्** = उत्तमता से ले जाये। **स** = वह, **नः** = हमको **द्विषः** = द्वेषी का **अति** = अतिक्रम कर, पीछे छोड़कर **स्वर्षत्** = उत्तमता से ले जाये ॥ 7 ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **धनस्य** = धन का (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **सातये** = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **जेतारम्** = जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अपराजितम्** = अपराजित को, पराजित न हुए को (अ - नहीं, परा - अन्य, जि - जीतना, जय होना, अप = दूर, नीचे, अपकार, राज - प्रकाश होना, चमकना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **स्वर्षत्** = उत्तम ले जायें (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना) **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **स्वर्षत्** = उत्तम ले जायें (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) ॥ 7 ॥

648. पूर्वस्य यत् ते अद्रिवो अंशुः मदाय।
सुम्ने आ धेहि नो वसो।
पूर्तिः शविष्ठ शस्यते।
वशी हि शक्रो नूनम्, तत् नव्यम् संन्यसे ॥ 8 ॥

मन्त्रार्थ - **यत्** = जो **ते** = तुम्हारा **पूर्वस्य** = पूर्व का **अद्रिवो** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, **अंशुः** = अंशुमान, साथी **मदाय** = आनन्द करो। **वसो** = हे वसु, **नो** = हमारे **सुम्ने** = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक् **धेहि** = धारण करें। **शविष्ठ** = हे बलिष्ठ, अत्यन्त समीपगामी, **पूर्तिः** = पूर्ति, पूर्ण **शस्यते** = स्तुति करते हैं। **तत्** = वह **वशी** = वशी, **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ **हि** = ही **नूनम्** = निश्चय **नव्यम्** = नवीन, स्तुतियोग्य को **संन्यसे** = दान, सेवा करता है ॥ 8 ॥

पदार्थ - **पूर्वस्य** = पूर्व का (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अद्रिवो** = हे अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **अंशुः** = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **सुम्ने** = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन के लिए (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **धेहि** = धारण करें (धा-धि-धी - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **पूर्तिः** = पूर्ति, पूरित, पूर्ण (पृ - पूर् - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **शविष्ठ** = हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **शस्यते** = स्तुति के योग्य हैं (शंस - चाहना, इच्छा करना, स्तुति, प्रशंसा करने वाला, शस - मारना, दुःख देना, काटना, हिंसा करना)। **वशी** = वश में (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **शक्रो** = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान्

होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नव्यम्** = नवीन को, स्तुतियोग्य को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **संन्यसे** = दान, सेवा करो (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना) ॥ **8** ॥

649. प्रभो जनस्य वृत्रहन्, सम् अर्येषु ब्रवावहै।
शूरो यो गोषु गच्छति, सखा सुशेवो अद्वयुः ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ - **प्रभो** = हे प्रभु, **जनस्य** = जन के **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले **अर्येषु** = प्रगतिशील, ज्ञानियों में **सम्** = सम्यक् **ब्रवावहै** = बोलते हैं। **यो** = जो **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी **सखा** = मित्र **सुशेवो** = उत्तम कल्याण, सुखकर्ता **अद्वयुः** = अद्वितीय **गोषु** = शब्द करने वालों, मननशीलों, में **गच्छति** = जाता है ॥ **9** ॥

पदार्थ - **प्रभो** = प्रभु, अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जनस्य** = जन का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्येषु** = अर्य में, ज्ञानी में (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **ब्रवावहै** = बोलते हैं (ब्रू - कहना, बोलना)। **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **गच्छति** = जाता है (गम्, गच्छ् = जाना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **सुशेवो** = उत्तम कल्याण, उत्तम सुख (सु - अच्छा, सुन्दर, शेव् - सेचन, घर्षण, सेवा करना, शिव् = कल्याण होना, सुख होना)। **अद्वयुः** = अद्वितीय (द्वि = दो (संख्या)) ॥ **9** ॥

650. एव आ हि एव। एवाम् हि अग्ने।
एव आ हि इन्द्र। एव आ हि पूषन्।
एव आ हि देवाः ॥ 10 ॥

मन्त्रार्थ - **एव** = यही **आ** = समन्तात्, सम्यक् **हि** = निश्चय **एव** = ही (है)। **अग्ने** = हे अग्नि **एवाम्** = इस प्रकार **हि** = ही (**है**)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली, **एव** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक् **हि** = ही (है)। **पूषन्** = हे पोषण करने वाला, पोषणकर्ता **एव** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक् **हि** = ही (है)। **देवाः** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **एव** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक् **हि** = ही (है) ॥

पदार्थ - **एव** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **एव** = ही (अव्यय)। **एवाम्** = इस प्रकार, इस तरह (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **एव** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **एव** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **पूषन्** = हे पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **एव** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **देवाः** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ **10** ॥

इति षष्ठो अध्यायः

ॐ

स्वामी शरण कृत साहित्य

मो. 9839105629, 8687849004

1. ऋग्वेद भाष्य :- ऋग्वेद भाष्य के इस सार-संक्षेप संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार) **रु. 2000.00**

2. सामवेद भाष्य :- सामवेद भाष्य के इस सम्पूर्ण संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार) **रु. 2000.00**

3. अथर्ववेद भाष्य :- अथर्ववेद भाष्य के इस सार-संक्षेप संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार) **रु. 2000.00**

4. यजुर्वेद भाष्य :- यजुर्वेद भाष्य के इस सम्पूर्ण संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार) **रु. 2000.00**

5. वेदायन भाष्य :- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेद सूक्तों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ तथा सरस गेय पद्यानुवाद भी दिया गया है। सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

6. वेदायन प्रवचन :- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेद सूक्तों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ तथा सरस गेय पद्यानुवाद भी दिया गया है। इसके स्नाथ ही इन मन्त्रों पर विस्तृत प्रवचन भी इस पुस्तक में संकलित हैं। सन्धियों-

संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है। सभी के लिए उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

7. वेदायन (सरल पाठ, काव्यानुवाद, भावार्थ सहित):- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ, काव्यानुवाद एवम् भावार्थ। **रु. 100.00**

8. वेदायन (सरल पाठ, काव्यानुवाद) :- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ, काव्यानुवाद एवम् भावार्थ। वेदपाठ तथा उपासना के लिए। **रु. 100.00**

9. वेद सूक्तायन :- चारो वेदों से चुने हुए 15 प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ (छन्द पाठ), मन्त्रार्थ, विशेष भावार्थ-व्याख्या, व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। **रु. 100.00**

10. यजुर्वेद एकादशी :- यजुर्वेद के अन्तिम 11 अध्यायों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ दिया गया है। सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

11. चतुर्वेद सरल पाठ :- प्रथम बार प्रस्तुत सन्धियों से मुक्त चारों वेदों का सरल पाठ जन साधारण के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। (बृहद् आकार) **रु. 2500.00**

12. ऋग्वेद सरल पाठ :- ऋग्वेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। (बृहद आकार) **रु. 900.00**

13. सामवेद सरल पाठ :- सामवेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। **रु. 500.00**

14. अथर्ववेद सरल पाठ :- अथर्ववेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। (बृहद आकार) **रु. 700.00**

15. यजुर्वेद सरल पाठ :- यजुर्वेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। **रु. 700.00**

16. वैदिक धात्वादि कोश :- पाणिनि तथा काशकृत्स्न प्रोक्त धातुपाठों को समाहित कर सम्पूर्ण धातुकोश तैयार किया गया है। उपसर्ग, अव्यय, संख्या, सर्वनाम शब्द भी दिये गये हैं। इसकी सहायता से वेद सहित सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य का अर्थ किया जा सकता है। अत्यन्त उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

17. वैदिक शब्दकोश :- वैदिक पदों (शब्दों) का धातुज, व्याकरण-सम्मत प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ। इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत वैदिक शब्दकोश। (वृहद आकार) **रु. 900.00**

18. वैदिक शब्दकोश (लघु संस्करण) :- वैदिक पदों (शब्दों) का धातुज, व्याकरण-सम्मत प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ। इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत वैदिक शब्दकोश। **रु. 200.00**

19. सरल संस्कृत व्याकरण :- व्याकरण के मूल तत्वों पर आधारित इस पद्धति से शब्द रूप, धातु रूप, पाणिनीय सूत्र रटे बिना एक मास में संस्कृत पढ़ना, लिखना, बोलना सीख सकते हैं। दशकों के अनुभव के बाद प्रस्तुत उपयोगी चमत्कारिक व्याकरण प्रणाली। **रु. 95.00**

20. वैदिक इतिहास :- ब्रह्मा व मनु से आरम्भ कर बुद्ध तक का सम्पूर्ण क्रमबद्ध इतिहास एक पुस्तक में सर्वप्रथम प्रस्तुत किया गया है। सूर्यवंश की 128 पीढ़ियों का इतिहास प्रथम बार प्रस्तुत किया है। सूर्यवंश, चन्द्रवंश

की शाखाओं सहित मनु से भोज तक सम्पूर्ण वंशावली भी दी गयी है। **रु. 200.00**

21. ओम् साधना :- ओम् साधना, वैदिक संस्कृति, वैदिक आध्यात्मिक चिकित्सा, वैदिक योग साधना। **रु. 200.00**

22. चिन्तन प्रवाह :- वैदिक संस्कृति तथा जीवन दर्शन सम्बन्धी चिन्तन। **रु. 500.00**

23. वैदिक विज्ञान :- वैदिक संस्कृति, आध्यात्मिक चिकित्सा, वैदिक योग साधना। **रु. 50.00**

24. युगबोध :- प्रबन्ध काव्य। **रु. 300.00**

25. चेतना :- काव्य संकलन। **रु. 100.00**

26. नवांकुर :- काव्य संकलन। **रु. 20.00**

आगामी प्रकाशन योजना

1. वैदिक व्याकरण : पंचपाठी व्याकरण का समयानुकूल प्रस्तुतीकरण। अष्टाध्यायी सूत्रों का अनुवृत्ति सहित प्रस्तुतीकरण, जिससे प्रत्येक सूत्र स्वयम् ही सम्पूर्ण अर्थ स्पष्ट कर सके। व्यापक प्रभाव वाले सूत्रों को महत्व देते हुए, अपवादों को स्पष्ट करना तथा उनकी सीमाओं का स्पष्टीकरण करना। पंचपाठी की अन्य पुस्तकों का भी इसी भाँति सम्पादन तथा उणादि कोष आदि का अकारादि क्रम से प्रस्तुतीकरण।

2. वैदिक महापुराण : पुराण विद्या का व्यापक शोधपरक अध्ययन कर पंच-लक्षणों के आधार पर सम्पादन।

3. वैदिक जीवन : वैदिक संस्कृति तथा जीवन दर्शन के साथ ही वैदिक साहित्य का सम्पूर्ण परिचय।

❖❖ ❖ ❖❖

पालीवाल प्रकाशन

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

बेवसाईट - vedayan.simplesite.com

मो. 9839034844, 9839105629